नारी शोषण

आईने और आयाम

आशारानी व्होरा

उन सभी सवेदनशील और प्रबुद्ध महिलाओ को
जो नये समाज की,
नयी सस्कृति की रचना के लिए
चितित और प्रयत्नशील है ।

भूमिका

सचराचर तमाम सष्टि नर नारीमय है। जीव जगत ही नही, वस्तु-जगत भी जिसे निर्जीव और जड माना जाता है इस आदि द्वैत से व्याप्त है। यही द्वैत सष्टि को सचल और सक्रिय रखता ह। जिस क्षमता से नर-नारी नामक तत्त्वो का यह द्वित्व सृष्टि को धारण रख रहा है और चला रहा है उसका आधार है इस द्वैत मे व्याप्त अद्वैत, इन भिन्नो के भीतर रम्यमाण अभिन्न।

नर नारी दो है पर दो नही है। अदम्य चेष्टा है उनमे एक हो जाने की। इस प्रयास म से नाना प्रकार की परम्पराओ को जन्म मिलता है। इन सबधो म अतर्विरोधो का पार नही। यो वे प्राणी सम प्रतीत होते हैं। लेकिन क्षमता प्राप्त होती है उन्हे अपनी विषमता के कारण। सच म सम वे बना दिये जायें तो जीने का सब स्वाद ही समाप्त हो जाये। जीवन का सारा रस, उसकी लीला, उसका आनन्द, इस विषमता मे से रग रूप पाता है। विषम है, इसी से दोनो मे आकर्षण अनिवार्य है। इस बीच का व्यवधान अनत सम्भावनाओ स भरा रहता है। गहरे मे प्रेम के भीतर घृणा का बीज पा लिया गया है। आकर्षण और विकर्षण साथ चलत है। अतर्विरोधो से भरा यह बीज का द्वत क्या क्या नाटक हमारे समक्ष प्रस्तुत नही कर आयगा, कहा नही जा सकता। द्वैताद्वैतात्मक इस सृष्टि के रूप की गहनता का पार कोई नही पा सका है। उधर वस्तु विज्ञान की ओर से तो इधर अनुभूतिमय आत्म ज्ञान की दिशा से उस परम रहस्य तक पहुचने की चेष्टा की जाती रही है पर प्रतीत होता है, वह अगम ही रहेगा। जहा सब भेद-अभेद मे लीन हो जाता है वह विश्लेषक बुद्धि की पकड मे आ ही कैसे सकता है!

नर-नारी के बीच इन अगाध सबधो को लेकर तमाम काव्य दर्शन की सृष्टि हुई है और तमाम विकृतियो और विद्रूपताओ के मूल मे भी यही है। मानव प्राणी किंतु औरो से भिन्न है। शेष तो बस जीते है। मनुष्य अपने जीने के साथ जानना भी चाहता रहता है। वह प्रश्न करता हुआ जीता है और इस कारण कदाचित पूरी तरह नही जी पाता। कुछ भीतर कुरेद रहती है, कुतरन चलती है। इद्रिया हैं, पर साथ अत करण भी

है जो उन इद्रियो को खुलकर खेलने नही देता। उस कारण मर्यादाओ की सृष्टि होती है, साथ साथ उन मर्यादाओ का भग भी होता रहता है।

समस्या उत्पन्न होती है मूलत भोग और प्रेम म अतर के कारण। प्रेम आत्मिक है, भोग शारीरिक। मनुष्य न सिफ आत्मा है, न शरीर। उन दो स्तरो पर उसे जीना होता है जो बहुत हद तक समानान्तर हैं। ससार यही से उपजता है और ज्ञानीजन कह गये हैं कि बार बार इस शरीर धारण करने की विवशता से छूटना, होने और होते रहने से, भवबाधा से मुक्त होना ही मनुष्य का अतिम लक्ष्य मोक्ष है।

मनुष्य ने प्रेम के गीत गाये और भोग को अपक्षाकृत निभृत म रखा। भोग मानो दो की निजी चीज थी। और यद्यपि उसको विवाह द्वारा सामाजिक स्वीकृति ही नही दी गयी, प्रत्युत सस्कार का स्वरूप भी दिया गया। लेकिन आम चर्चा के लिए वह विषय निषिद्ध माना जाता रहा। पर मनुष्य सत्य के साक्षात्कार से मुडकर पीछे नही जा सकता। समय आगे आया है। यो तो 'कामसूत्र' के रचनाकार ऋषि वात्स्यायन यहा हुए और उसस भी पहले मनुष्य के चार पुरुषार्थों म काम की गणना की गयी। इद्र, वरुण, अग्नि की तरह काम भी दवता माने गये। कामानन्द को ब्रह्मानद सहोदर कहा गया। फिर भी उसकी खुली चर्चा अग्राह्य समझी जाती थी। किंतु यथाथ से मुह चुराना चल नही सकता और ज्ञान विज्ञान का अनुसधान कही भी अब रुक जाने को तैयार नही है।

पर उधर खतरा भी है। गीता म अर्जुन परमेश्वर के विराट दशन को प्रत्यक्ष पाकर काप आया, उस रूप को सह नही सका। कारण, वहा जो भी है अपना खेल दिखाता हुआ अत मे शून्य मे विलीन और विलुप्त हुआ जा रहा है। मानो एक मृत्यु का गह्वर ही सत्य हो शेष सब मिथ्या और क्षणिक। चद्रमा धरती के, धरती सूरज के और सौर मडल किसी अलक्ष्य ध्रुव के चारो ओर घूम रहा है और कही उसके लिए विराम नही है। इस यात्रा मे सब की कक्षाए स्थिर हैं और हेरफेर नही आ सकता। तनिक व्यतिक्रम हुआ कि भयकर विस्फोट होगा। जड माना जानेवाला वस्तु जगत इस तरह मानो प्रकृति के द्वारा सीधे सचालित होता है। जीव-जगत को प्रकृति की ओर से तनिक छूट मिल गयी है। उस के लिए अवसर है कि प्रकृति पर सशोधन लाये और अपने लिए सस्कृति की सृष्टि करे। प्रश्न और समस्याओ का जन्म इस सस्कृति की आवश्यकता के कारण होता है।

कभी स्त्री पुरुष सबधो मे खुली छूट रही होगी। दोनो के बीच लाड होगा तो लडाई भी। प्यार म से क्रूरता निकली होगी। पर मनुष्य सब भोगता और झेलता था, प्रश्न नही उठाता था। प्रकृति के हाथो आसानी से खेलता रह सकता था। पर प्रकृति पर्याप्त न हो सकी उसके लिए, न वन्य जीवन। समाज बनाना आवश्यक हुआ। भोग और भूख के अतिरिक्त भी नाना प्रकार के परस्पर आदान प्रदान की सृष्टि हुई। इसकी सुविधा के लिए पैसा जनमा और बीच मे शासन सस्था आवश्यक हुई। यही से स्त्री पुरुष सबधो म पच पडने शुरू हुए। पुरुष के हाथो स्त्री पिट लेती थी पर इस कारण प्रश्न उपस्थित नही होता था। न इसे समस्या समझा जाता था।

प्रश्न और समस्या बनाने की आदत किसी कदर नयी है। मैं मानता हू कि यह कुछ कृत्रिम भी है। बाहर बने बनाये हल कही हैं नही। नारी शोषण है, पर शोषण कहा नही है? नारी असुरक्षा का प्रश्न है, पर असुरक्षा के बोध से कौन मुक्त है? इनके लिए आदोलन खडे किये जाते हैं और कानूनो की शरण ली जाती है। पर, स्त्री और पुरुष मे अपने अपन मे स्वय और अलग होने की भावना जितनी तीव्र होगी समस्या उतनी जटिल होगी। वे उस तरह अलग हैं नही। अभिशप्त है कि लड-भिडकर भी साथ जियें। इसके सिवा कुछ कर नही सकते वे कि अपने को एक दूसर पर उडेलें और राहत पायें। पुरुष जो झेलता है उसे उतारकर फेंके तो कहा? स्त्री ही उसके लिए आश्रय का स्थल है। यही स्त्री की हालत है। यहा शिकायत का मौका नही है। असभ्य अवस्था मे आदमी के पास यह समय थी। सभ्यता ने उसका हरण कर लिया है। उसमे समाई की क्षमता कम हो गयी है।

वतमान समाज-व्यवस्था मे स्थिति गौण पड गयी है। गति को प्रमुखता और प्रधानता मिल रही है। स्थिति का केंद्र स्त्री है। लेकिन आवागमन, यातायात, सचरण और सिक्के का चलन द्रुत और तीव्र होता जा रहा है। कृषि के ऊपर उद्योग आ गया है। जीवन म यत्र बडा स्थान घेरता जा रहा है। इसलिए सबधो की सहजता, स्थिरता और स्वाभाविकता नष्टप्राय होती जा रही है। सबध औपचारिक और प्रयोजनाश्रित हो रह हैं। इस गतिवेग मे स्त्री का मूल्य घट गया है। स्त्री समाज को स्थिति देती थी, वह गृहिणी और गृह लक्ष्मी थी। लेकिन अब माग गति की है। घर मे घिरकर पुरुष अपने को साथक नही पाता। इसलिए घर के जूए म बाध रखकर चलानेवाली स्त्री से अधिक आवश्यकता है उसे उस नारी की, जिससे भोग तो प्राप्त हो पर प्रतिबद्धता नही। अर्थात मूल्य व्यक्ति से उतर कर पैसे में आ गया है। विवाह और परिवार की सस्था के आधार शिथिल बन रहे हैं। पैसे का प्रवेश हठात् सब सबधो मे जड पकडे जा रहा है। यो कुछ ऐसा नही है जो पहले न था। दासता थी, अधीनता थी बारवनिता थी। पर इस सब के साथ भीतर ही-भीतर हार्दिकता भी काम करती रह सकती थी। पैसे के चलन की तीव्रता ने इस क्रम मे बहुत परिवतन ला दिया है। स्त्री की शक्ति कम हो गयी है ऐसा नही। पर वह शक्ति सेवा सुश्रूषा की नही रह गयी है कमनीयता और रमणीयता की बन आयी है। पैसा बीच मे आकर मानो सबध को सौदा बना देता है और किसी बधन की सष्टि होने से बच जाती है। यह सुविधा अपने अपने व्यक्तित्व की रक्षा की दृष्टि से बडी उपयोगी है।

इसलिए देखने देखते नतिकता का स्वरूप ही बदला जा रहा है। स्त्री परिचित पहले भी थी अपने प्रति पुरुष के आकषण के विषय म। अब वह जग आयी है इस आकषण को नकद लाभ के सौद मे भुना सकन की सम्भावना के बारे मे। सवा से क्या हाथ आता है? जिस पद्धति से नकद आय हो, इस युग मे क्या वही अधिक साथक नही है? इस प्रकार मानो मूल्यो मे ही परिवतन आ चला है।

इसको शोपण कहा जा सकता है। पर कौन किसका शोपण कर रहा है? प्रतीत होता है कि हा, शोपण हो रहा है, पर मुख्यत पैसे के द्वारा जो सभ्यता और

सस्कृति का प्रतीक है। और शोषण उस स्त्री का हो रहा है जो धारण करती है, स्थिति देती है, और इसलिए जो वेग को अपने ऊपर लेती और सहती है। इस दृष्टि से मैं स्त्री और पुरुष की समस्या को उन उन की समस्या नही मानता, बल्कि सम्पूर्ण व्यवस्था और सभ्यता की समस्या मानता हू।

प्रश्न के सरलीकरण से काम नही चलेगा। 'स्त्री मुक्ति'—'विमेन्स लिब'—नारी सुरक्षा और समता आदि के आदोलन इसी सरलीकरण के परिणाम हैं। शनै-शनै व्यक्तित्व का एक पथ ही उभार म आ रहा है। परस्पर निभरता, जो प्रकृत और अनिवाय है, मानो अब भार लगती जा रही है। इस आपसी निभरता को वरदान बनाने की जगह यदि सभ्यता अभिशाप का रूप देने को तुली हो तो फिर क्या उपाय है?

आशारानी व्होरा ने इस गभीर समस्या का अध्ययन मे लिया और उस का गहरा विश्लेषण और मथन इस पुस्तक म प्रस्तुत किया है। प्रश्न को ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य मे देखा गया है और उसके सामाजिक परिवेश म भी। साथ ही उसके तात्त्विक आयाम का भी उसम विवेचन है। पूव इतिहास स आरम्भ करके मध्य काल, पूव आधुनिक काल और अद्यतन आधुनिक काल तक इस प्रश्न के तत्कालीन रूपो की चर्चा, व्याख्या और समस्या मननशील लेखिका ने पुस्तक म ऐसे की है कि पाठक के समक्ष समस्या का पूरा स्वरूप आ जाता है। लेखिका की दृष्टि तटस्थ, उदार, व्यापक और सारग्राही रही है। पुस्तक का अवलोकन करते जगह-जगह मुझे विस्मय हुआ है उनकी लगन, उद्यम और अध्यवसाय के प्रति। तत्सबधी उपलब्ध सामग्री और साहित्य को विशालता को उन्होने खखोला और अपने निष्कष प्राप्त किये हैं। निष्कष वे मननीय हैं और भारतीय सास्कृतिक परम्परा के अनुकूल है। उनका आशय है कि नर नारी के बीच किसी मानी हुई समानता को प्रतिष्ठित नही करना है, बल्कि उनकी परस्पर पूरकता को पहचानना है। उनकी मान्यता है कि "भारतीय सस्कारिता और नारी मानसिकता, पुरुष प्रतिद्वद्विता की अकृताथता के बोध मे कलपती रही है। स्त्रिया को चाहिए कि पुरुषो मे हीन भाव पैदा कर उन्हे पौरुष से च्युत बनाने की बजाय अपना हीनभाव दूर करें। वे स्थितिया सृष्ट करने की जिम्मेदारी स्त्रिया की है कि उन्हे पुरुषो का साथ और सहारा मिले, उनके पैर की ठोकर नही। यदि किसी कारण उन्हे यह सहारा न मिले या छिन जाय तो उन्हे अपने हाथो पैरो का सहारा लना है।' उनका मानना है कि 'इसी राह समाज की शक्ति निगाहो से उन्हे मुक्ति मिलेगी और यही भारत का सही मुक्ति आदोलन होगा, पश्चिम के 'विमेन्स लिब' की नक्ल नही।'

विदुषी लेखिका की रचना और विवेचना साधिकार और विश्वसनीय है और इस विषय पर एक अधिकृत और सर्वांगीण ग्रथ के रूप म। मुझे विश्वास है कि श्रीमती आशारानी व्होरा का यह कृतित्व हिंदी जगत मे गौरवान्वित होगा।

नयी दिल्ली　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　—जनेन्द्रकुमार
२६ अप्रल, १६८२

प्रारूप-प्रेरणा अपनी बात

नारी शोषण !

एक शाश्वत प्रश्न, लेकिन कितना जटिल, उलझा हुआ—शोषण चेतना, शोषण-शार, शोषण के खिलाफ जेहाद और शोषण के लिए प्रस्तुति भी, उसमे सहभागिता भी !

पिछले पद्रह वर्षों से मैं विभिन्न पत्र पत्रिकाओ म समस्या स्तभो के अतगत पाठको के पत्रो क उत्तर लिख रही थी और देख रही थी—

—कि समस्या पत्रो की मासिक सख्या क्रमश बढती हुई दजनो स सैकडो मे पहुच रही है।

—कि पिछले कुछ वर्षों से उनम एक अतर भी क्रमश स्पष्ट से स्पष्टतर होता जा रहा है।

—कि कच्ची उमर की बचकानी गलतिया धीरे धीरे गभीर गलतियो म परिवर्तित हो रही हैं।

—कि रोमानी प्रेम का स्थान प्राय विवाहपूर्व व विवाहेतर मुक्त यौन ने ले लिया है।

—कि इन कथित प्रेम-कहानियो के माध्यम से दिनादिन सिर उठाती हिंसा और यौन हिंसा के सकेत भी बराबर मिल रहे हैं।

—कि पति पत्नी के बीच, माता पिता-बच्चो के बीच, बहू ससुराल पक्ष के बीच सदेह, अविश्वास, असहयोग, असम्मान की खाई दिनोदिन चौडी होती जा रही है।

—कि घर परिवार की इस टूटन से आती मानसिक परेशानियो विकृतियो और व्याधियो के, यौन बीमारियो के आकडे निरतर बढ रहे है। हत्याओ और आत्म-हत्याओ के भी।

—कि इसी तरह सब चलता रहा तो नारी के प्रगति पथ पर बढते कदमो के फिर पीछे लौटने का स्पष्ट खतरा उपस्थित है।

और इस सबके पीछे दो प्रमुख कारण दीख रहे थे (१) नैतिक मूल्यो पर भोग मूल्यो के हावी होते जाने और यौन-चेतना के निरतर बढते जाने से येन केन प्रकारेण

इच्छापूर्ति की चाह से उपजा चारित्रिक स्खलन। कारण दहेज बताया जाये या कुछ और सामने आये, पत्नियो बहुओ के जलने या जला दिय जाने की, किशोर-युवा वृद्ध आत्म-हत्याओ की, बढते विलगावो तलाको की कहानियो के पीछे स्वार्थमूलक आजादी, परस्पर अहम का टकराव और निभाव की स्थितियो का बढता अकाल ही मुख्य कारण हैं। (२) सारी प्रगति के पीछे एक सुविचारित, सुनियोजित राष्ट्रीय सास्कृतिक नीति का अभाव।

स्थितिया दिनोदिन गभीर होती जा रही थी। इन नय तनावा से युवा शक्तिया कुठित हो रही थी। उनका क्षय अपव्यय देखकर हर चितनशील मस्तिष्क पर चिता की रेखाए उभर रही थी। इस सब के साथ ही बढती जा रही थी मेरी सोच कि य हालात इसी तरह चलते रहे तो आग चलकर स्थितिया और भी हाथ से निकल सकती हैं। हो सकता है कोई विस्फोट भी हो जाये।

और जैसे विस्फोट हो गया।

अपने साल दर साल के इस अध्ययन-अनुभव स प्रेरित हो एक पुस्तक 'चितन और चेतावनी' (जो नई बढिया शीर्षक से धारावाहिक लेखमाला के रूप म छप चुकी थी) तैयार करने के बाद मैंने अपने किशोर पाठको के लिए दो गाइड पुस्तकें 'अल्हड उमर', भाग १ (लडकियो के लिए) व अल्हड उमर, भाग २ (लडको के लिए) लिखी। फिर महिलाओ के लिए आत्मविश्लेपण व चेतावनी के रूप म मैंने इस पुस्तक पर काम शुरू किया हुआ था कि हर रोज अखबारो मे चारो ओर स अपहरण, बलात्कार और सामूहिक बलात्कार की ज्यादा खबरें आने लगी। नववधुओ के जलने जलाने की खबरें भी बढने लगी। 'स्कडल्स' और हत्याकाडो की खबरें भी जोर पकडने लगी। मेरी आशका प्रगटत अपना रग दिखाने लगी थी।

सब को लगा, यह क्या हो रहा है? यह गुडागर्दी एकाएक कहा से आ गयी? क्यो बढ गई? रक्षक पुलिस ही भक्षक क्यो बन रही है? क्या हो गया है कि बूढे बच्चियो से और पिता पुत्रियो तक से बलात्कार करने लगे हैं? यहा तक कि बडी बडी महिला सस्थाओ और सामाजिक सस्थाओ के पदाधिकारी भी आश्चय प्रगट करते दिखाई दिये। कही पुलिस पर दोप रखा जा सकता था, तो कही राजनीतिज्ञो पर। कही नारी शोषण को सवण दलित वग सघष के रूप मे देखा जा रहा था, तो कही दहेज समस्या की विकरालता के रूप मे। कही प्रेस को दोपी ठहराया जा रहा था कि नही, ऐसा कुछ नही है, केवल पत्रो की प्रसार सख्या बढाने के लिए बढा चढाकर सनसनीपूण समाचार दिये जा रहे हैं।

बहरहाल सडक से ससद तक एक शोर उठा। हगामे हुए। प्रदशनो और आदो लनो का बाजार गरम हुआ। महिला 'सस्थाओ और प्रतिपक्ष की ससद सदस्याओ ने नारी सुरक्षा का झडा उठा लिया और रोये बिना मा दूध नही देती कहावत के अनुसार बलात्कार सबधी कानूनी धाराओ म सशोधन के लिए विधि आयोग की सिफारिशें आ गइ। तुरत फुरत उन पर आधारित एक विधेयक भी ससद मे प्रस्तुत कर दिया गया।

और लगा, उठा उफान जसे बठ गया। तूफान शात हो गया।

लेकिन क्या समस्या हल हो गयी ? क्या समस्या एकाएक पैदा हुई थी ? क्या समस्या इतनी ही थी ? किसी मथुरा माया त्यागी या छवि रानी की ही थी ? हिंसा, बलात्कार जहा से फूटकर आ रहे हैं, उसे पूरे समाज की नही ? इस पुस्तक मे इन्ही प्रश्नो को उठाने, उनकी तह मे जा पूरी स्थितियो को उनके परिप्रेक्ष्य मे रख विश्लेपित करने का प्रयत्न किया गया है। अपने सीमित स्तर पर उनके उत्तर खोजने का भी।

स्थितिया धीरे-धीरे पकती हैं तभी उनमे विस्फोट होता है। विस्फोट दिखाई देता है। पीछे की स्थितिया साफ दिखाई न दें, फिर भी वे छिपी नही होती। उनके सावजनिक कारण भी अचीन्हे नही होते। उनका अक्स जैसे हर समय चितनशील मन मस्तिष्क पर पडता रहता है। आग दिखाई देनेवाली लपटा और धुए मे ही नही होती, राख मे दबी चिनगारिया मे भी होती है। उन धीरे धीरे सुलगती चिनगारियो को लौ बनने के लिए हवा का झोका चाहिए। कुछ बुद्धिजीवियो ने मथुरा नाम की लडकी के दबे बलात्कार-काड को हवा दी कि चिनगारी भडक उठी। इस लौ की उजास मे फिर अधेरे कोना मे दुबके बहुत से घिनौने रूप भी सामने आ गये। पर लौ अधेरे को भेदती, इसके पूव ही बुझ-सी गई और एक धुआ सारे वातावरण को विषाक्त करता हुआ ऊपर आसमान मे उठ गया। गुबारी धुए के य बादल जब तक आसमान म ऊपर नीचे होते रहेंगे, समस्या भी बनी रहेगी। हल तो इन बादला के छटने पर ही दीख सकेगा।

प्रस्तुत प्रयास इस धुए को भेदने का *एक अस्फुट प्रयास भी माना जा सके*, असफल न रह जाये, व्यापक सोच की कोई सभावना जगा सके, तो मैं अपने श्रम को साथक मानूगी। यौन-व्यवहार और यौन शोषण का विषय बहुत कठिन है। पर कितना भी कठिन काय हो, पुस्तक लेखन फिर भी उस बृहद काय का एक बहुत छोटा हिस्सा है, जो कि करने के लिए हमारे सामने है —हम स्त्रिया को तो एक नयी सस्कृति की रचना करनी है एक नये समाज का निर्माण करना है।

यह पुस्तक लिखते समय मेरे सामने कई सकट उपस्थित थे—

—विषय की जटिलता और उसके अर्तविरोधो को देखते हुए भाषा और अभिव्यक्ति का सकट।

—नारी शोषण के पीछे व्यापक आर्थिक सामाजिक स्थितिया को स्वीकारते हुए भी नारी की अपनी कमजोरी, सलग्नता और शोषण के लिए प्रस्तुत भोग्या रूप को न स्वीकारने, न क्षमा करने की निजी मजबूरी के कारण जाति सकट।

—*अपनी सस्कृति से निरपेक्ष, ऊर्ध्वमुखी व्यक्तित्व साधना से निरपेक्ष*, परिवार-निरपेक्ष, पुरुष निरपेक्ष, कतव्य निरपक्ष अधिकार प्राप्ति के किसी भी आदोलन की पक्षधरता से मेरी असहमति के कारण और कमजोरियो से मुक्ति बिना किसी मुक्ति-आदोलन को अपना समथन न दे पाने के कारण, कथित नारी मुक्ति आदोलन को शिथिल करन का आरोप झेलने का सकट।

लेकिन अभिव्यक्ति तो अनुभूति आधारित ही होगी न ! देश के कोने कोने स प्राप्त हजारा-हजार पत्रा के माध्यम से अध्ययन का एक खुला आयाम जो मेरे सामने रहा है उस लबे अनुभव की प्रामाणिकता (प्रस्तुत पत्राशो, उद्धरणा के प्रमाण मरे पास

उपलब्ध हैं) को और आयाम नही खोजना पडता। उस अनुभव म से न लिखने लायक भाषा, अभिव्यक्तियो और अश्लील विकृतियो को बचाते हुए भी, न चाहकर भी जो लिखा गया, उसके लिए सुधी पाठको से क्षमा मागते हुए मैं कहना चाहूगी कि इसका उद्देश्य कोई सनसनी फैलाना या चौंकाना नही, केवल जो है, जो घट रहा है, उसे दिखा कर समाज की आखें खोलना है। और 'सब चलता है' वाले यथास्थितिवाद को भग करना है। साथ ही विषय को तटस्थ भाव से पूरे ऐतिहासिक सास्कृतिक सदभ म रख वैज्ञानिक स्तर पर समझना समझाना भी है कि यौन व्यवहारा को मध्यकालीन विकृतिया और आधुनिक पश्चिमी प्रभावो से अलग करके फिर से अपनी स्वस्थ भाव भूमि पर टिकाया जा सके। इस उद्देश्य मे मैं कितनी सफल हुई हू, इसका निणय सुविज्ञ पाठक ही करेंगे।

इस पुस्तक पर मैंने तीन वष पूव काय आरभ किया था। सामयिक घटनाक्रम से जोडने के लिए कैसे कई अध्यायो का पुनरीक्षण, परिवद्धन, पुनर्लेखन हुआ, आकार-वृद्धि के भय से कितना छोडना घटाना पडा, पुस्तक लेखन म किन किन कठिनाइयो का सामना करना पडा—इस निजी लेखकीय पीडा की चर्चा न कर मैं उन समस्त विद्वानो, लेखको-लेखिकाओ के प्रति अपना आभार व्यक्त करती हू, जिनके ग्रथो, दस्तावेजों, आलेखो के तथ्यो विवरणो का सहारा इसमे लिया गया है। अनेक पत्र पत्रिकाओ मे समय समय पर प्रकाशित विवरणो से भी मुझे पर्याप्त सहायता मिली है, विशेष रूप से 'साप्ताहिक हिंदुस्तान', 'दिनमान और 'नवनीत' से। इसके लिए मैं सबधित सपादको की भी आभारी हू।

प्रश्न किसी एक वग का या वग सघष का नही, पूरे सामाजिक परिवेश का है, इस पर सम्मति सहमति प्राप्त करने के लिए मैंने विभिन्न क्षेत्रो के अधिकारी विद्वानो और विशेषज्ञो के पास एक प्रश्नावली भेजकर उनकी सक्षिप्त टिप्पणिया भी आमत्रित की थी। उनमे से अधिकाश ने विषय मे रुचि ली और सहयोगी रुख अपनाते हुए वाछित आकार की सीमा म अपने अमूल्य विचार दिये, जिन्हें परिशिष्ट म सकलित किया गया है। इन सभी सहयोगियो के प्रति भी आभार।

पाडुलिपि के मुख्य अशा का अवलोकन कर अपने अमूल्य सुझाव देने के लिए मैं अपने बडे भाई समान स्नेहिल अग्रज श्री विष्णु प्रभाकर की भी बहुत आभारी हू और प्रकाशक, नेशनल पब्लिशिंग हाउस के निदेशक श्री सुरेन्द्र मलिक की भी जिन्होने इस वर्जित विषय को सामने लाने म अपने साहस सहयोग का परिचय दिया है।

पुस्तक बडे पैमाने पर पढी जायेगी और आपको कुछ सोचने समझने पर विवश करेगी, इस विश्वास के साथ आपके हाथो मे—

—आशारानी व्होरा

सी ६ बी० एम० आई० जी फ्लैटस
मायापुरी नयी दिल्ली ११० ६४
१५ जुलाई १९८२

अनुक्रम

खंड एक परिप्रेक्ष्य

नारी शोषण :
आईने
और आयाम

खण्ड एक

परिप्रेक्ष्य

पूर्व इतिहास
उत्तरोत्तर जटिल होती गई युगो पुरानी समस्या

एक आम धारणा के अनुसार नैतिकता या चरित्र का नाम आते ही उसका सबध एकदम यौन सदाचार से जोड लिया जाता है, जबकि यौन सदाचार व्यक्ति सच्चरित्रता का एक अग मात्र है।

दूसरी आम धारणा है कि सीता सावित्री के इस देश म प्राचीन काल मे पति पत्नी सबधो के बाहर यौन सबधो की बिल्कुल छूट नही दी गई होगी। नारी का यौन शोषण नही होता होगा। विभिन्न अध्ययनो से सिद्ध है कि आज के अथ म यौन शोषण और यौन व्यापार तब निश्चय ही नही था। पर सुदूर अतीत मे स्त्री पुरुष सबधो को लेकर कडे नैतिक नियम भी न थे।

समय सापेक्षता वास्तव मे यौन नैतिकता के नियम सदा समय सापेक्ष रहे है। समय समय पर स्थानीय परिस्थिति के प्रभाव मे इनका रूप बदलता रहा है। आज भी जो यूरोप मे मा य है, वह हमारे यहा नही। भिन्न भिन्न जातिया, धर्मों व समुदायो वाले हमारे देश के भीतर भी सभी जगह समान नियम नही मिलते। इस तरह प्राचीन, मध्य व अर्वाचीन काल विभाजन के बावजूद कुछ मिश्रित स्थितिया—कभी आम, ता कभी अपवाद रूप मे—सभी जगह मिल जाएगी। पर यह निर्विवाद रूप से सिद्ध हो चुका है कि ऋग्वदिक काल मे हमारे यहा नारी का सामाजिक दर्जा बहुत ऊचा था।

आदिम युग मे जब विवाह-प्रथा नही थी तो छोटे कबीलो मे मातगमन, पितगमन, भ्रातृ व भगिनीगमन भी मान्य रहा। फिर दूसरे कबीला स लडाई मे छीनी स्त्रिया से विवाह के बाद प्राप्त सताना म जब गुणात्मक विकास सामने आया होगा तो कबील और गोत्र से बाहर विवाह सबधी नियम बनाय गए होगे। आज भी ये गोत्र नियम किसी न किसी रूप मे देखे जा सकते हैं। आदिम जातियो म सभ्य ससार के कानून नही, अपन गोत्र व समुदाय के नियम ही अभी भी चलत है। इनमे बहुत विभिन्नता है—कुछ वत मान समय से बहुत पिछडे लगते है तो कुछ भावी वैज्ञानिक समाज के निकट।

आगे चल कर महाभारत मे श्वेतकेतु की कथा के प्रसग से जिस 'सनातन रीति' की बात कही गई है, वह विवाह-सस्था के पूर्व की रीति ही लगती है। विवाह-सस्था उसी यौन अराजकता व यौन-उच्छ खलता के नियमन के रूप म अस्तित्व मे लाई गइ होगी। किसी सामाजिक सस्था के जड पकडकर स्थायित्व मे आने तक बीच की अवधि म उन

नियमो मे ढील एक स्वाभाविक बात है। प्राचीन आख्यानो की विचित्र व आज आपत्ति-जनक लगने वाली कहानिया इसी सदर्भ म देखी जा सकती हैं।

वेदकालीन समाज व्यवस्था इसके बहुत आगे की सभ्य-सुसस्कृत व्यवस्था है, जिसम निकट सबधो के बीच या व्यवस्था विरुद्ध यौन क्रिया ही निदित हुई मध्यकाल की तरह इस कालकी नारी भी कडे यौन नैतिक नियमो स जकडी न थी। उसे विशेष या आपात स्थितियो म अनुकूल नीति नियमो के साथ स्वतन्त्र इच्छा, स्वतन्त्र चुनाव और स्वतन्त्र अस्तित्व की मान्यता प्राप्त थी जो आग चल कर विपरीत स्थितियो म सुरक्षा कारणो स प्रतिबधित हो गई और फिर य हितकारी प्रतिबध उसक लिए अहित, शोषण और अत्याचार के पर्याय बनत गए।

अतीत स वतमान तक की काल यात्रा मे उत्पादन पद्धति और सामाजिक उप-योगिता म स्त्री के अधिक या कम महत्त्व के साथ उसके सामाजिक दर्जे म भी चढाव-उतार आते रहे है और इसी अनुसार उस पर यौन-आधार के प्रतिबन्ध भी ढीले होत या कसत रहे हैं। लेकिन काल स्थान की विभिन्नताओ के बावजूद भारतीय सस्कृति म नारी का मा और दैवी शक्ति के रूप म दर्जा हमशा ऊचा रहा है। उपासना पद्धतियो म देवी अर्चन और लगभग हर स्थिति म मा का समादर—यह समतामूलक भावना सवत्र देखी जा सकती है। **हमारी लोकसस्कृति मे सभी जगह देवी पूजा के जो विभिन्न रूप मिलते हैं, उससे यह भी सिद्ध है कि हमारे समाज मे किसी समय सवत्र मातसत्तात्मक व्यवस्था रही होगी।** कही कही वदिक, पौराणिक और महाकाव्यीय साहित्य म इसके प्रमाण उपलब्ध है और किन्ही आदिम जातियो म तो आज भी यह व्यवस्था देखी जा सकती है। पर यह निश्चित है कि देश के अधिकाश भागो म यह व्यवस्था वैदिक काल स पूव ही रही होगी, वेदकालीन समाज तो पितृसत्तात्मक समाज था।

प्राचीन काल

वैदिक साहित्य के अध्ययन से पता चलता है कि उस युग म नारी का बडा समादर था। विवाह का उद्देश्य महज काम वासना की पूर्ति नहीं, उस से ऊपर पत्नी के साथ मिलकर गहस्थ धम (यह धम ही था समझौता नही) का पालन धमानुष्ठान, यज्ञ सम्पादन और श्रेष्ठ सन्तान की प्राप्ति ही था। घर गहस्थी म ही नारी की प्रधानता न थी, स्त्री क बिना कोई धार्मिक कृत्य अनुष्ठान सम्पन्न नही हो सकता था। ऋग्वदिक काल क प्रथमाध मे स्त्रिया युद्ध द्वारा जीत कर या छीनाझपटी स प्राप्त नही की जाती थी। कन्या का पिता उपयुक्त वर खोजकर (विद्वान ऋषि को प्राथमिकता) सप्तपदी विधि स उसका विवाह-सस्कार कराता था। इस अवसर पर लडकी या दामाद का पिता की ओर स कुछ वस्तुए भेंट उपहार के रूप मे दी जाती थी। ससुराल म बडे बूढे पुत्रवधू को आदरपूवक आशीर्वाद देते थे—'श्वसुर गह की सम्राज्ञी बनो। अधिकार से रहो, अधिकार स बोलो कल्याणी सिद्धहोओ। इस तरह गृहस्थ धम की प्रतिष्ठा नारी पर ही निभर थी। इसीलिए गुणी, योग्य वधू को मात्र सुदर वधू पर तरजीह दी जाती थी। यद्यपि सुदरता का मान था, पर सुदरता का अथ शारीरिक मानसिक सम्मिलित सुदरता से ही था प्राय।

वेदकालीन समाज पितृसत्तात्मक होने से उसमे पुत्री से पुत्र को वरीयता दी गई है। पुत्र कामना का वर्णन यत्र तत्र मिलता है। श्रेष्ठ पुत्र प्राप्ति के लिए देवताओ से प्रार्थनाए ही नही की जाती थीं इसके लिए अश्वमेध यज्ञ, पुत्रेष्टि यज्ञ पुंसवन संस्कार नियोग भी कराए जाते थे। लेकिन इसका विशेष कारण था युद्धो मे पुरुष हानि की क्षति पूर्ति, जाति-वृद्धि और वंश वृद्धि की कामना। धार्मिक मान्यताओ के अनुसार पुत्र ही पिता का श्राद्ध-तर्पण कर सकता था वंश को आगे बढ़ा सकता था (आज भी यह मान्यता कम नही हुई है) तो इस कारण भी श्रेष्ठ पुत्र कामना स्वाभाविक थी युद्ध जीतने के लिए वीरों की प्राप्ति के उद्देश्य से भी।

पर पुत्र-कामना रखने पर भी पुत्री का तिरस्कार न था। पुत्र पुत्री के पालन-पोषण, शिक्षा दीक्षा मे भेदभाव न था। लडकियो को उच्च शिक्षा या वेद के पठन पाठन से वंचित नहीं रखा गया था। बाल विवाह का चलन न था। आजीवन कुमारी रहने की इच्छा रखने पर पुत्री को पिता की सम्पत्ति मे उत्तराधिकार दिया गया था, जब कि विवाहित स्त्रिया अपने 'स्त्री धन' को ही इच्छानुसार खर्च कर सकती थीं। ज्ञानार्जन मे जीवन बिताते हुए ऋषिकाए बनने वाली कुमारिया ब्रह्मवादिनी कहलाती थी। वे वेद-अध्ययन के साथ अध्यापन भी करती थी यज्ञ कर्म भी करवाती थी। ऋग्वेद के अनेक सूक्तो की रचना इन ऋषिकाओ या ब्रह्मवादिनियो द्वारा की गई है। घोषा, लोपामुद्रा, अपाला, शचीपौलोमी, वाग्भृणी, विश्वभरा आदि प्रसिद्ध नामो मे से कुछ कवयित्रिया थी, कुछ शास्त्रज्ञ।

उस समय की स्त्रिया पुरुषो की तरह शस्त्रविद्या सीख कर युद्धो मे भाग भी लेती थी। द्रविडो की हार के साथ युद्ध क्षेत्र मे पकडी जाने वाली वीर लडाकू द्रविड नारिया जब आर्य-परिवार मे दासियो के रूप मे शामिल हुई तो इनमे से योग्य, गुणी व बहादुर स्त्रियो ने आर्यों के दिल जीत लिए। उन्होने इनके साथ विवाह कर 'प्रतिलोम' विवाह-प्रथा चलाई जबकि विजेता आर्य परिवार की स्त्रिया अपनी जाति मे ही 'अनुलोम' विवाह कर सकती थी।

यही से वेदकालीन सभ्यता का द्वितीय चरण आरंभ होता है। आर्यों मे बहु-विवाह प्रथा का चलन हुआ। दासी प्रथा भी सामने आई। युद्ध विजय से बंदी बना कर लाई गई सभी दासियो से वे लोग विवाह नहीं कर सकते थे। तो राजाओ के अन्त पुर भर जाने पर ये दासिया रथ भर भर कर यज्ञ कराने वाले पुरोहितो और ऋषियो को दान मे दी जाने लगी। अनेक ऋषियो का जन्म दान दक्षिणा मे प्राप्त इन विदुषी व बहादुर स्त्रियो के गर्भ से हुआ, जिन्हे ऋषि जन्म की कई विचित्र कथाओ का रूप दे दिया गया है।

यूनान मे युद्ध से प्राप्त दासियो को रखैल की तरह ही रखे जाने का वर्णन मिलता है भारत मे आर्यों ने उन्हे वधू की संज्ञा दी। यौन-संबंध न रखते हुए भी उन्हे पूरा सरक्षण दिया। पर जो दासिया विवाह कर पत्नी बना ली जाती थी उन्हे धार्मिक अनुष्ठान द्वारा विधिवत विवाहिता आर्य-पत्नी के अधिकार नहीं दिए गए थे। धार्मिक कार्यों मे भागीदारी विवाहिता आर्य पत्नी की ही होती थी। जिन बंदी स्त्रियो [illegible] नही होता था, उन्हे तब तक संरक्षण मे रखा जाता था, जब तक कि वे अन्यत्र वि

न कर लें या विवाह न दी जाए। लेकिन दान दक्षिणा म दी जान वाली दासिया उप-पत्नी का दर्जा ही पाती थी। यह प्रथा भी किसी न किसी रूप म अभी स्वतन्त्रता पूव तक देशी रियासतो म विद्यमान रही है।

यान नैतिकता के नियम

जसा कि इस अध्याय के आरभ म कहा गया है, यौन-नतिकता के नियम हर जगह समय सापेक्ष रह है और तत्कालीन सामाजिक परिस्थितिया के अनुसार उनम फेर-बदल होता रहा है। भारत मे इस सबध म कडे नियम उत्तर वदिक काल और मध्यकाल म विदशी आक्रमणा के फलस्वरुप लडकिया व स्त्रिया की तात्कालिक सुरक्षा क लिए ही बनाए गए थ। पर धम, राजनीति व समाज क्षेत्र मे अधिकार सपन्न पुरुषा की विलासी वृत्ति और निहित स्वार्थों के कारण अन्तत य स्त्रियो के लिए स्थायी बधन बन गए और समाज मे स्त्री पुरुषो के लिए दुहरे नैतिक मूल्या की सष्टि कर गए, अन्यथा प्राचीनकाल म यौन नतिकता के नियम न स्त्री-पुरुषा क लिए भिन्न थे, न इतन कडे।

प्रेम विवाह मान्य था। लडकिया स्वयवर या अन्य विधि स पति का चुनाव स्वय करती थी। विधवा विवाह का निषेध न था। विवाह विच्छेद मान्य था। स्मृति कालतक भी विशेष स्थितिया म इसकी अनुमति थी। मनु का कथन है—उन्मत्त, क्लीव, असाध्य राग से ग्रस्त पति को त्यागने वाली स्त्री अपराधिनी नही। मनु ऐसी स्त्री को पुनर्विवाह की स्वीकृति देत हैं। सती प्रथा नही थी। इसके बदले एक प्रथा थी—पति क शव के पास से रोती पत्नी को इस उदबोधन स उठाया जाना हे नारि, उठो औरपुन सासारिक जीवन को अपनाओ। इस निष्प्राण शरीर के पास रहना व्यथ है। उठो और जो तुम्हारा हाथ पकडन को तैयार है, जो तुम से स्नह रखता है, उस नए पति के रूप म स्वीकार करो। यह नया पति उस स्त्री का देवर भीहो सकता था उसका प्रेमी भी और परिवार वाला द्वारा नियुक्त अन्य योग्य पुरुष भी।

सूत्रकाल और स्मृतिकाल इसके बाद आत है। फिर भी महर्षि अत्रि ने व्यवस्था दी है— स्त्रिया अपने जार (प्रेमी) द्वारा दूषित नही होती।'

कौटिल्य के अथशास्त्र मे व्याख्या दी गई है— जिस पुरुष पर कन्या का झुकाव हो, उसके साथ दुराचार करके पुरुष की कामना पूण ही नही हो सकती। उन्होने यहा तक लिखा है कि **उचित आयु मे यदि पिता अपनी पुत्री का विवाह नहीं करता है तो वह उस पर इस सबध मे कडे प्रतिबध लगाने का अधिकारी नहीं रहता।'** ऋतुकाल आरभ के सात महीने बाद तक कन्या को पति न मिले तो वह स्वय पर आसक्त पुरुष स भोग कर सकती है। ऐसे भोक्ता को कन्या के पिता को कुछ क्षतिपूर्ति नही देनी पडगी।' यदि रजोदशन क आरभ से तीन वष तक कन्या का विवाह नही होता तो सजातीय पुरुष उसके प्रेमी के रूप म उसके साथ समागम कर सकता है। इसस अधिक अवधि बाद विजातीय पुरुष भी इसके लिए दोषी नही ठहराया जाएगा पर वह कन्या के पिता स आभूषण आदि उपहार पान का अधिकारी नही होगा।

आज जबकि व्यभिचार औरअपहरण बलात्कार के लिए दड कानूनो को बदलन

उन्हें स्पष्ट व कडा बनाने पर विचार किया जा रहा है, इस सबध म कौटिल्य द्वारा दी गई दड व्यवस्थाए भी विचारणीय हैं। बारहवें अध्याय के ८७वें प्रकरण कन्या प्रक्रम के अनुसार—'यदि कोई पुरुष रजस्वला होने स पूव आयु की सजातीय कन्या को दूषित करे तो उसके हाथ काट लिए जाए या इसके बदले अपराधी को ४०० पण (पन्ना) का दड दिया जाए। योनि पर आघात स कन्या की मृत्यु हो जाए तो अपराधी को प्राण दड दें।' 'रजोधम के बाद कन्या पर उसकी इच्छा के विरुद्ध बलात्कार करने वाले अपराधी की बिचली या तजनी उगली काट ली जाए या इसके बदले उसे २०० पण का दड दिया जाए।' 'जिस कन्या की सगाई हो चुकी हो, उसके साथ दुराचार करने वाले अपराधी के हाथ कटवा दें या उसके बदले उसे ४०० पण का दड दिया जाए।' स्वेच्छा से, किन्तु समाज नियम के विरुद्ध व्यभिचार करने वाले पुरुष को ५४ पण का दड दिया जाए, व्यभिचारिणी स्त्री का उससे आधा २७ पण।' 'धोखे से पति का विश्वास दिला कर उसके साथ दुराचार करने वाले अपराधी को २०० पण का दड दिया जाए। कोई विवाहिता स्त्री अपनी इच्छा स व्यभिचार करे तो उसे ५४ पण का दड दिया जाए, साथ ही उस पति से प्राप्त शुल्क, धन, उपहार या विवाह व्यय भी लौटाना होगा।' 'तीसरी बार इस स्त्री के ऐसा करने पर उसे इससे दुगुना १०८ पण का दड दिया जाए। 'कोई स्त्री स्वेच्छा से बार-बार व्यभिचार करे या यही जीवन बिताना चाहे तो उसे राज दासी बना दिया जाए।' 'कोई पुरुष कन्या का अपहरण कर ले तो उस २०० पण का दड दिया जाए। अपहरणकारी एक से अधिक हो तो प्रत्येक को अलग-अलग।' 'किसी स्त्री को व्यभिचार के माग पर—भय से या फुसलाकर—डालने वाली कुटनी को उस व्यभिचारिणी स्त्री स दुगुना दड देना चाहिए।' गणिका की पुत्री से भी उसकी इच्छा बिना व्यभिचार नहीं किया जा सकता। ऐसा करने पर अपराधी को ५४ पण का दड देने के अलावा उससे उस लडकी की गणिका मा को इस राशि से सोलह गुना धन भी दिलाया जाए।'

उपर्युक्त दड व्यवस्थाओ को ध्यान से देखने पर दो बातें स्पष्ट होगी—एक, इनमे दड की मात्रा अपराध की गभीरता के अनुसार कम ज्यादा होने के अलावा पुरुष के लिए दड की मात्रा स्त्री से दुगुनी या कही उससे बहुत अधिक रखी गई है—शायद अपराध मे पहल स्त्री की ओर से बहुत कम होती होगी या शायद उसे सम्मानजनक स्थिति म रखते हुए उसका लिहाज किया जाता होगा। दूसरे, अपेक्षित वय प्राप्ति पर लडकी के लिए प्रेम-सबध स्थापित करने की छूट है और उसका प्रेमी दड मुक्त।

राहुल साकृत्यायन अपनी पुस्तक 'गगा से वोल्गा तक' म लिखते हैं, 'वदिक आय समाज की व्यवस्थाओ से पूव विवाहित स्त्री तक को यह अधिकार था कि वह अपने पूव प्रेमी या प्रेमियो से सबध बनाए रखे और पुराने प्रेमी के आन पर उस रात पति को छोड उसके साथ रहे।' सभवत इसी प्रथा ने आगे चलकर आर्यों म इस परिपाटी को जन्म दिया कि सम्मानित अतिथि के घर आन पर उसके सत्कार के लिए पत्नी को उसके साथ सोने भेज दिया जाए।

महाभारत मे श्वेतकेतु की कथानुसार, श्वेतकेतु के मामा / भी उसके

जब कोई ब्राह्मण हाथ पकडकर ले जाने लगा तो वह उस पर क्रोधित हो उठा। इस पर उसके पिता उद्दालक ऋषि उससे कहते हैं, 'हे तात, क्रोध मत कर, यह तो सनातन रीति है। इस भूमडल म स्त्रिया बिना किसी बधन के हैं।' विद्वानो के मत मे विवाह प्रथा के मूल म यही कथा है। विवाह-व्यवस्थाए और विवाह सबधी आचारसहिताए बाद मे स्थापित हुइ।

महाभारत म सूय, चद्र, इद्र आदि देवताओ द्वारा भी अवध सबधो, अपहरणो व बलात्कारो के उदाहरण मिलते हैं इद्र द्वारा गुरुपत्नी अहल्या के साथ बलात्कार व इस शाप या मानसिक आघात से उसका शिला बन जाना। सूय द्वारा कुती का कौमाय भग करना व उससे प्राप्त पुत्र कण को कुती द्वारा नदी म बहा देना। जाहिर है कि एसे कृत्य समाज नियम विरुद्ध थे इसीलिए छुपाए जाते थे और इसीलिए शापित या दडनीय थे। पर नियोग' द्वारा सतान प्राप्त करना या ऋषि वीय को किसी विधि म सुरक्षित रख यज्ञ व धार्मिक अनुष्ठान द्वारा उसके उपयोग से तजस्वी सतान पाना मान्य ही नही, प्रतिष्ठित भी था। घडे मे वीय सचित करन और उससे सतान उत्पन्न करन जसी विचित्र कथाए कुछ आलोचको को कपोलकल्पित लगती है, विशेष रूप म सहस्रा बेटों वाली प्रतीकात्मक कथाए तो अभी भी समझ से परे हैं। (हो सकता है, कभी इनके अर्थ भी विज्ञान खोल दे) पर योग्य, तपस्वी, विद्वान ऋषियो को वन से बुलाकर उनसे 'नियोग' द्वारा उत्तम सतान प्राप्ति की बात तो विज्ञानसम्मत सिद्ध हो चुकी है। इस भारतीय परपरा को आज विदेशो मे इज्जत की नजर से देखा जाने लगा है। इस पर प्रयोग प्रारभ हो गए हैं। आगे चलकर विज्ञान इस प्राचीन भारतीय नवज्ञान को पुनर्जीवित कर समाजोपयोगी सिद्ध करे तो कोई आश्चय की बात नही होगी।

तब भोग विलास से नपुसक हो गए राजा और समृद्ध लोग तो स्वस्थ, गुणी सतान से वश वद्धि के लिए इसका प्रयोग करते ही थे, सामान्य गहस्थ भी इसी उद्देश्य से ऋषि या तपस्वी को अपनी कन्या देकर अपना अहोभाग्य समझते थे, यदि वे इसे स्वीकार करें तो (आप विवाह)। ऋषियो को इसके लिए तैयार करना आसान न था। कभी अप्सराए भेजकर कभी बडी कठिनाई से उन्हे लोक हित म राजी करके लाया जाता था। रामायण म नियोग' नाम दिए बिना भी पुत्रेष्टि यज्ञ से सुयोग्य सतान की प्राप्ति और महाभारत मे सत्यवती द्वारा अपने पुत्र व्यास की भीष्म के छोटे भाई विचित्रवीय की रानियो से बिना यज्ञ ही नही उनकी इच्छा के विरुद्ध भी, पुत्र उत्पन्न करने के लिए नियुक्ति के फलस्वरूप धृतराष्ट्र व पाडु जैसी विकृत सतानो की उत्पत्ति—ये प्रमाण ही इसकी पुष्टि के लिए पर्याप्त है।

अनेक विद्वानो के मत मे महाभारत काल रामायण काल से पहले का है। इस मत के समाजशास्त्रियो के अनुसार महाभारत काल मे द्रौपदी को धमराज युधिष्ठिर जैसे पति द्वारा भी जुए के दाव पर लगा देना जो भरी सभा मे उसके चीर हरण का कारण बना, महाभारत काल की चरित्र स्खलन की अन्य अनेक कथाए और कृष्ण लीलाए (यद्यपि कृष्ण के अनेक गुणो के कारण उनके बचपन व तरुणावस्था की इन कहानियो को बाद म धार्मिक लीलाओ का जामा पहनाकर प्रेम से अपना लिया गया) जब समाज

किया गया था। इसलिए उसे राज्य मरक्षण प्राप्त था। इस
राज्य मरक्षित स्थिति म उस पर कानूनी प्रतिबध लगान य
अत निश्चय ही तब यह कानूनी सस्था नही थी।

कानूनी रूप वदिक काल के बहुत बाद सामने आया
भारत मे फल गए और इन विजेताओ ने कुछ समृद्ध राज्यो प
म इनम स कुछ राजा सुविधापरस्ती व ऐयाशी के शिकार हु
बहुत बदनाम भी हुए। एक ओर गणिकाओ को राज्य सरं
वधुओ के रूप म उन्हे समाज म सम्मानित स्थान प्राप्त था, दूर
उनके जागीरदारो अधिकारियो द्वारा उन्ह अपनी शान शौक
बनाया जाने लगा। राजसिंहासन के दोनो ओर सोने चादी
लिए सज धज कर खडी, उन पर सुनहरे पखे या रुपहले चव
के मनोहारी चित्र आज भी कुछ पुरानी तस्वीरो म देखे जा सक
यवन दासिया होती थी।

अपनी इसी महत्ता गरिमा और पीडा के साथ वेश
पतन की सभी स्थितियो स गुजरती हुई वतमान शोषण देह
बध तक पहुची है। अपने उज्ज्वल काल म इस सामाजिक
और राज्यो की छत्रछाया म फलने फूलने का अवसर मिला
जाने या दूसरे राज्य मे चले जान पर उसकी पुत्री या बह
प्रदत्त सुविधा तथा सम्पत्ति की हकदार होती थी। ये गणिका
से रहती थी शिक्षा दीक्षा और ललित कलाओ मे सपन्न
कारी के अलावा सुरुचिपूर्ण वेशभूषा और सामाजिक शिष्टाचा
होन के कारण समृद्ध कलात्मक व्यक्तित्व की स्वामिनी भी थी
कुमारियो को उनके पास शाही सभ्रात तौर तरीके सीख
राजकुमारियो को विभिन्न कलाओ म प्रशिक्षित करने के लि
भीतर भी प्रवेश वर्जित न था। राजकुमारिया उनके निवास प
थी। उनके साथ सग या सपर्क सबधी कोई निषेध नियम लाग

हमारे महाकाव्य और पुराण इन सुदरी नत्यागनाओ
पडे है। वेदकालीन मेनका रम्भा उवशी आदि अप्सराओ क
माओ के रूप म आदर के साथ याद किया जाता है। अपनी
सा रूप कहने मे किसी हीनभावना या लज्जा की नही गौ
देवताओ के दरबार म राजा इन्द्र और उनके अतिथियो का
करन के लिए इन अतीव सुदरियो के नत्य की व्यवस्था की जा
उत्सवो और मान्य विदेशी अतिथियो के आगमन पर वैजय
सोनल मानसिंह आदि नतकियो के शास्त्रीय नत्य प्रस्तुत कर
है। चूकि सुदर स्त्री पुरुष की कमजोरी रही है इसलिए कई अ
और विद्वान ऋषियो की तपस्या (साधना) की परीक्षा लेन

महाकवि कालिदास के 'अभिज्ञान शाकुन्तलम्' मे भी मेनका द्वारा विश्वामित्र की तपस्या भग करने का उल्लेख है। यही मेनका इस विश्वविख्यात महाकाव्य की नायिका शकुन्तला की मा था।

इस तरह, जब देवताओ ने ही परस्पर ईर्ष्या या प्रतिद्वद्विता के वशीभूत हो अपने प्रतिद्वद्वियो को मार्ग से हटाने के लिए स्वर्ग की इन अप्सराओ को माध्यम बनाना शुरू किया तो सभवत यही से शोषण की शुरुआत हुई होगी।

आगे चलकर ये सुन्दरिया अतिथियो के मन-बहलाव के लिए राज्य-महलो मे नियुक्त भी की जाने लगी। विजेता शासक विजित शासक से उपहार मे भी इन्हे प्राप्त करने लगे। और लडकर भी छीनने लगे। तो कई बार राज्यो के बीच युद्ध, विजय और पतन का कारण भी ये बनी।

विष कन्याए

अगले चरण मे छोटी छोटी खूबसूरत लडकिया चुनकर उन्हे शैशव से ही जहरीली जडी बूटियो से युक्त आहार पर पाल धीरे-धीरे इस जहर का आदी बनाया जाने लगा। बडी होने पर जब इन्हे विष-कन्याओ के रूप मे जासूसी के काम मे इस्तेमाल किया गया तो ये राज्यो का तख्ता पलटने मे सहायक हुई।

कानूनी स्थिति

उपरोक्त विवरणो से सिद्ध है कि जब तक समाज मे इनका अपना प्रतिष्ठित स्थान रहा, इन्हे शोषण की स्थितियो का सामना नही करना पडा, इनके लिए आचार-सहिताए बनाने की आवश्यकता नही पडी, बल्कि सभ्रात वर्ग इनसे शिष्टाचार सीखता था। लेकिन बाद मे शोषण के सकेत मिलने पर व्यवस्थाकारो का ध्यान इस ओर भी गया। स्मृति-ग्रथो मे इन प्रतिबधो का उल्लेख है। इनके साथ रमण कर अपनी साधना से विचलित होने वाले ब्राह्मणो, पुरोहितो के लिए तो विधि शास्त्रो ने भारी जुर्माने और कारावास के दड की व्यवस्था की थी। गभीर अपराधो मे नपुसक बनाने से लेकर मौत की सजा देने तक के प्रमाण मिलते हैं।

मनु-स्मृति सहिता मे गभीर यौन अपराधो के लिए जिन गभीर सजाओ का उल्लेख है, उनमे व्यभिचारी महिला पर सार्वजनिक रूप से कुत्ते छोडने और पुरुष अपराधी को चौराहे पर जीवित जला देने तक की कडी सजाए भी शामिल है। ये क्रूर सजाए किसी सार्वजनिक स्थल पर इसलिए दी जाती थी कि दूसरे लोग इन से सबक लें।

पौराणिक काल मे वर्णित महिलाओ के ये छ भेद भी उल्लेखनीय है

१ जो तन मन से अपने पति को ही समर्पित हो—पतिव्रता।
२ जिस स्त्री के अपने पति के अलावा एक और पुरुष से यौन सबध हो—कुलटा।
३ पति के अलावा अन्य दो पुरुषो से सबध रखने वाली—दर्शनीय।
४ एक साथ चार पुरुषो से सबध रखने वाली—पोगा, छलिया।

५ पाच पुरषो के साथ सबध रखने वाली—वेश्या।

६ पाच स अधिक पुरषो के लिए भोग सामग्री बनने वाली—महावेश्या।

लेकिन अगस्त्य पुराण म वेश्या स शुभ मगुन कराने का भी उल्लेख है। "तायर" इसीलिए दक्षिण भारत म अभी तक नव दुलहिनो के लिए सुहाग प्रतीक मगलसूत्र वेश्याए ही तैयार करती थी।

स्मृति काल की वेश्याए केवल युद्ध म विजित दासियो ही नही थी, वे शूद्र वग स भी आती थी। उन्हे बाकायदा नृत्य गायन म प्रशिक्षित कर राज दरबारो म नियुक्त किया जाता था। कौटिल्य के अथशास्त्र म वेश्याओ के आचार व्यवहार के लिए भी विधि नियम निर्धारित किए गए हैं। सत्ताईसवें अध्याय के ४४वें प्रकरण म गणिका अधीक्षक के अधिकारो और कतव्यो की पूरी विवेचना दी गई है। उस अधिकार था कि वह कलात्मक व्यक्तित्व और भरपूर यौवन स सम्पन्न अति सुदरी को एक हजार पण (पन्ना) वार्षिक वेतन पर मुख्य गणिका के रूप म नियुक्त कर और उसकी प्रतियोगी गणिका को इसम आधे वेतन पर। इसी तरह राजमहलो म नियुक्त नतकियो के लिए विभिन्न श्रेणिया निधारित की गई थी। वेतन, अधिकार, कतव्य भी उसी के अनुसार निर्धारित थे। यह व्यवस्था भी दी गइ है कि रूप-यौवन ढल जाने पर प्रौढ गणिका को नवनियुक्त गणिका का मात पद प्रदान किया जाए और नई गणिका को वह राज सेवा के तौर तरीको म प्रशिक्षण दे।

ये नतकिया सामान्य वेश्याओ स भिन्न थी जो अपन कला-व्यक्तित्व के कारण शाही व्यक्तियो और समाज के सुसस्कृत आभिजात्य वग का साथ देन लायक समझी जाती थी। लेकिन इनका काम केवल मनोरजन तक ही सीमित न था। इनका उपयोग राजनीतिक उद्देश्य के लिए भी किया जाता था। ईसा स तीन शताब्दी पूव रचे गए वात्स्यायन के काम सूत्र म वश्यावृत्ति की व्यावसायिक मान्यता भी मिलती है। आग चलकर मन्दिरो म देवदासी प्रथा भी पनपी। कुछ माता पिता मनौती म अपनी एक लडकी को मन्दिर के देवता के सामने नृत्य गायन के लिए आजन्म सेविका के रूप म अर्पित कर देत थ। (देखिए अलग अध्याय म देवदासी प्रकरण)। कामसूत्र के अनुसार उस काल म कुछ विशेष वर्गों की स्त्रिया को भी यौन-नैतिकता के नियमो में छूट दी गई थी। जैसे गजे व्यक्तियो की पत्निया यह छूट ले सकती थी। इसी तरह मणिकारो जस हस्तशिल्पियो की पत्निया अभिनताओ की पत्निया या उनके साथ रहने वाली नटी वेश्यावृत्ति के सीमित प्रकार थे। 'अमरकोष' के अनुसार, 'जयजीवा' नाम उस व्यक्ति को दिया जाता था जो अपनी नतकी पत्नी की कमाई पर निभर करता था।

प्राचीन साहित्य मे श्लीलता-अश्लीलता का प्रश्न

सस्कृत साहित्य लगभग सारा प्रेम आख्यानो और प्रेम प्रसगो स भरा पडा है। मृच्छकटिकम मालतीमाधव, मेघदूत अभिज्ञान शाकुन्तलम् मालविकाग्निमित्र, स्वप्न वासवदत्ता विक्रमोर्वशीय आदि। सस्कृत म यह परम्परा प्राकृत से ही विरासत म आई।

रामायण और महाभारत मे भी नारी सौंदय का सागोपाग वणन है। वेदव्यास जसे महर्षि की रस छलकाती लेखनी से नारी शरीर के अग प्रत्यग का सूक्ष्म वणन देख कर दग रह जाना पडता है लेकिन इसे भी समय सदभ मे ही देखने की जरूरत है। एक तो सारे ऋषि मुनि वनवासी ब्रह्मचारी नही थे। उनमे गहस्थ भी थे। जो गहस्थ न थ, उन तपस्विया का भी समय समय पर गाय वशवद्धि व मानव नस्ल सुधार के उद्देश्य स श्रेष्ठ सतानोत्पत्ति के लिए आवाहन किया जाता था और लोक हित मे उन्हे राजाआ का यह अनुनयपूण प्रस्ताव मानना पडता था। दूसरे, नारी-सौंदय और यौन क्रिया को धार्मिक भावना और मदिरो के साथ जोडकर देखने वाली प्राचीन भारतीय दष्टि इस चर्चा को अश्लील कसे समझ सकती थी ? इन्द्र इन्द्राणी के बीच, यम यमी के बीच, सखिया के बीच की अतरग वार्ताओ को भी हमारे प्राचीन साहित्य मे जिस खुले रूप मे कहा गया है, उससे लगता है, उस समाज मे यह चर्चा सहज ही थी, अश्लील नहीं समझी जाती थी। इस दष्टि से वेदव्यास ययाति की कन्या माधवी की कथा मे माधवी के सौदय-वणन म छ उन्नत स्थला सात सूक्ष्म स्थानो, तीन गभीर और पाच रक्तवण स्थाना का वणन जिस उन्मुक्तता स कर गए, वह कुछ आश्चय नही लगता। राजा ययाति द्वारा अपनी सुदरी कन्या को ऋषि गालव को दान म देना और गालव द्वारा उसे एक के बाद एक तीन राजाआ के पास रख दक्षिणा प्राप्त करना नारी सम्मान की दष्टि स आपत्तिजनक है, यह अलग बात है। पर यह भी उस समय की एक परम्परा थी, पुत्रिया को ऋषियो के हाथ म सौंपना। अपवाद रूप म ऋषि द्वारा उसके दुरुपयोग की यह घटना अपन आप मे सभवत अकेली ही मिलती है। लेकिन बात शरीर-सौदय के सूक्ष्म वणन मे श्लीलता-अश्लीलता की हा रही थी। उस काल मे निश्चय ही य वणन अश्लील न थे। अश्लीलता का प्रवेश इनम तभी हुआ जब इन्हे देखने वाली दृष्टि उत्तरोत्तर दूषित होती गई और आग चलकर य चर्चायें ही प्रतिबधित हो गईं। दृष्टि स्पष्ट व स्वस्थ होने पर कभी भी य प्रतिबध फिर हट सकते हैं।

लाक साहित्य के सदभ मे देखें तो वहा भी 'फला राजा के सात रानिया थी' फला राजा फला सुदर नतकी या स्त्री पर मोहित हा गया। फला सुदरी का, राजकुमारी को फला राक्षस उठाकर सात समुदर पार ले गया, पाताल ले गया नाग लोक म ले गया, फला जगह ले जा कर उसे बद कर दिया' आदि न जान कितन उद्धरण-उदाहरण लाक कथाओ म बिखरे पडे हैं। इनम से कौन-सी कथाए कितनी प्राचीन है, इस बार म कोई प्रामाणिक जानकारी उपलब्ध नही है।

मध्यकाल
स्थिति मे क्रमश गिरावट

उत्तरवदिक काल म आठ प्रकार के विवाहो म अपहरण द्वारा और खरीद कर लाई पत्नी को भी (निकृष्ट व निकृष्टतम रूप म ही सही) विवाह के प्रकारो मे मान्यता प्रदान कर दी गई थी। अजुन के कृष्ण की वहन सुभद्रा पर आसक्त होने पर कृष्ण अर्जुन को सलाह देते हैं 'क्षत्रियो म स्वयवर की रीति ही शुभ है पर उसम यह तुम्हें वरगी नहीं, अत शूरवीरो के लिए बलपूवक हरण कर ले आना भी विवाह के एक रूप म मान्य है, तुम इसी विवाह विधि का अनुसरण करो। प्रेम विवाह का रूप गधव-विवाह अपहरण विवाह से श्रेष्ठ समझा गया था पर ब्राह्म और प्रजापत्य विवाह म इसका स्थान नीचे था। समाज द्वारा अमान्य नही, किन्तु सम्मान्य भी नहीं। लडकी पिता की व पत्नी पिता की सम्पत्ति समझी जान योग्य व्यवस्थाए भी दी जा चुकी थीं। फिर भी नारी का दर्जा तब तक इतना नीचे नहीं आया था जितना कि मध्यकाल म।

यूनानियो और शको के भारत पर आक्रमण के बाद स्मृतिकारो ने समाज व्यवस्था व नारी सुरक्षा की दृष्टि स उन पर प्रतिबध लगाने शुरू कर दिए। कालान्तर म जब गुप्तो के स्थान पर हूण गुजर और अहीर आए तो आक्रमणकारियो स रक्षा म असमथ होन पर कन्या को जन्म के समय मार देन की इनकी परम्परा भारत मे भी अपना ली गइ और कई स्थानो पर जन्म लेते ही कन्या को गला घाट कर मारा जाने लगा। सती प्रथा और जौहर प्रथा ने भी इन्ही कारणो से जन्म लिया। आठवी शताब्दी के आरभ से अठारहवी शताब्दी के आरम्भ तक, यानी मुहम्मद बिन कासिम के आक्रमण से लेकर मुगल साम्राज्य के पतन तक भारत मे मुस्लिम हमलो व मुस्लिम राज्य के प्रभाव से हिन्दू स्त्रियो पर अनकानेक सामाजिक बधन लग। उन पर अनगिनत निर्योग्यताए थोप दी गइ--बाल विवाह, विधवा विवाह निषेध, विधवाओ की अमगलसूचक अभिशापित स्थिति सती प्रथा की अनिच्छुक विधवाओ को भी जबरदस्ती चिता मे झोक देना, जौहर म हजारो स्त्रियो का एक साथ चिता म कूद पडना परदा प्रथा के कारण लडकियो को शिक्षा से वचित कर दिया जाना, अशिक्षा और अधविश्वासो स जकड नारी को अधिकाधिक पुरुषो की गुलाम बना दिया जाना आदि। इसके परिणामस्वरूप पुरुष नारी के सहधर्मिणी सहकर्मी रूप से वचित हो गया और समाज उसकी सहभागिता से वचित

हो नीति नियमन व चारित्रिक निष्ठा मे गिर गया। इससब पर आगे अलग से लिखा जा रहा है। यहा इतना ही कि इस एक हजार वष की अवधि मे भारतीय समाज म नारी की सामाजिक स्थिति जितनी गिरी, उतनी इसके पूव हजारो वर्षो मे नही। भारत की इस पराजय व गुलामी का भारी मूल्य भारतीय नारी न ही चुकाया है।

मुगल हरम और मीना बाजार

मध्य काल का यह सामती युग औरत और शराब के लिए प्रसिद्ध है। मुस्लिम शासको के हरम म (अपवाद रूप म औरगजेब को छोडकर) सुदर रखैले भरी रहती थी। यूनानी आक्रमण के बाद यूनानी महलो स यह परपरा भारत आई। यवनी दासियो स राजाओ के अत पुर भरे, जिन पर पहरेदारी के लिए भी यूनानी परपरा पर आधारित प्रतिहार रखे गए। मुगल काल मे ये हरम तातारी बदियो से भर गए। किसी भारतीय नारी के रूपवती होने की बात भी उन दिनो हाकिमा के कान म पहुचना खतरे से खाली न रहा। उसके रूप को परदे मे बद रखने की जरूरत पड गई थी। फिर भी पता चलते ही उसे पकड मगवाया जाता था। रानी पद्मिनी पर अलाउद्दीन की नजर पडना ही सकडा राजपूतानियो के जौहर मे जल मरने का कारण बना। इस तरह तातारी बादिया ही नही भारतीय सुदरिया भी हरम म पहुचने लगी थी। अकेले आगरा म ही अकबर के हरम म ८०० स्त्रिया थी, जिन्ह राज्य के कोने कोने से चुन-चुन कर लाया गया था। उनकी अपनी मुस्लिम स्त्रिया तो परदे मे रहती थी। उन्हे सावजनिक स्थला पर मुह खोलन की इजाजत न थी।

महिलाओ के लिए परदे के भीतर 'मीना बाजार' लगते थे। उन बाजारा म राजा, नवाब और कुछ चुने हुए जागीरदार ही जा सकत थ और ये लोग सुदरिया के चुनाव के उद्देश्य से ही वहा जाते थे। इसी काल म अपने राज्य बचाने की गरज स राजपूतानियो के डोले भी विवाह क नाम पर मुगला के महलो मे पहुच गए। जिस आन बान के लिए राजपूती जौहर हुए, वह आन भी कही कही नारी की भेंट देकर अपने स्वाथ की भेंट चढा दी गई। यह अलग बात है कि राजपूतानी नारियो ने मुगल महलो के भीतर रह कर अलग ढग से अपने जौहर दिखाए और हिन्दू मुस्लिम एकता के रूप मे मुस्लिम अत्याचारा पर किसी हद तक रोक लगाने मे सफल हुइ। सत तुलसीदास इसी समय तत्कालीन समाज को हताशा से मुक्त करने के लिए भारतीय स्त्री पुरुषो के हाथ मे सीता राम के आदश चरित्र वाली रामायण द गए। सूरदास भी इसी काल म कृष्ण-गोपिया की रास लीलाए लिख उन्हे मानसिक विलास म उलझा कर मनोवैज्ञानिक चिकित्सा द गए।

मुगलकालीन गणिकाए व नर्तकिया

मुगल दरबारा मे नत्य-गायन के लिए बडी सख्या म स्त्रिया नियुक्त थी। य महिलाए हर किसी के साथ यौन सबध रखने को स्वतन्त्र न थी, बल्कि राज्य-सरक्षण प्रत्येक को किसी एक अभिजात पुरुष के साथ सबधित किया गया था। मुगल

ललित कलाओ के प्रशसक और सरक्षक के रूप म प्रसिद्ध हैं। उन्होने अपन दरबारो म कला प्रतियोगिताओ को बढावा देकर विभिन्न कलाओ और कलाकारो दोनो का स्तर ऊचा उठाया। मुगल सना जब अगले ठिकानो को प्रस्थान करती थी तो ये प्रशिक्षित गायिकाए और नर्तकिया वहा भी उनके साथ जाती थी। इसलिए भी भारत के विभिन्न स्थानो पर इनकी कलाओ का प्रसार हुआ। सभवत इसीलिए भारतीय शास्त्रीय नृत्य पश्चिमोत्तर भारत म मिश्रित हो कर या मिटकर केवल सुदूरपूर्व और दक्षिण मे अपना विशुद्ध स्वरूप कायम रख सका, वह भी मदिरो मे सिमटकर। उत्तर म मुगल साम्राज्य के बाद ही दक्षिण के मदिरो म नूपुरो की झकार तीव्र हो उठी थी, ऐसे प्रमाण मिलते हैं। इसके पूर्व कौटिल्य के अर्थ शास्त्र मे मदिरो मे बाहर स नृत्य करन के लिए आने वाली देव नर्तकियो का तो उल्लेख है, मदिरो मे रहन वाली देवदासियो का नही। न ही कन्याओ को देवदासी बनाकर मदिरो को मनौती के रूप म अर्पित करने का।

राजस्थान की दासी-गोली प्रथा

इसी काल म राजपूती महलो म भी रानियो के साथ दहेज म आइ या राजपूतो को युद्ध मे प्राप्त बडी सख्या मे दासियो गोलियो का उल्लेख मिलता है। राजपूती रनिवासो म इन्हे लेकर मुगल हरमो स अलग एक विशिष्ट परम्परा पनपी जिसके अपने कायदे कानून थ। राजपूतो म वीरता एक सर्वोच्च मूल्य माना जाता था तो विख्यात वीर को जामाता बनाने की जस होड लग जाती थी। यही स लडकी को विवाह के समय दिया जाने वाला उपहार वीर-जामाता को अधिक से अधिक धन देकर खरीदन के रिवाज —दहेज मे बदल गया। दहेज म हाथी, घोडे, सोना चादी और जागीरो के साथ बढ-चढकर सख्या म दासिया गोलिया भी दी जाती थी। रनिवासो मे इनका स्थान रानियो स नीचा, सेविका के रूप मे होता था, लेकिन परम्परानुसार य स्त्रिया उस राजा को ही समर्पित होती थी। इन्हे महल से बाहर जाने की इजाजत न थी। जिस पुरुष से इनका दिखावे के लिए विवाह कर दिया जाता था उस तथाकथित पति से मिलना भी उनके लिए आसान नही होता था। इन्ह महलो म कडे पहरे म रखा जाता था। लेकिन कडे पहरे और अनेक प्रतिबधो के बावजूद य कैदी स्त्रिया अपनी दमित इच्छाओ की पूर्ति के लिए तथाकथित पतियो और प्रेमियो से मिलने के लिए 'दूसरी राह' निकालने पर मजबूर हो जाती थी। इसके लिए दोनो ओर से बुने जाने वाले षडयत्रो के ताने बाने, भय आतक, खतरो परस्पर प्रतिस्पर्धाओ के लिए छल कपट, यौन दमन व यौन शोषण, और यौन अपराध म पकडे जान पर क्रूरतम सजाओ का मार्मिक चित्रण आचार्य चतुरसेन शास्त्री के उपन्यास 'गोली' और यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र' के उपन्यास खम्मा अन्नदाता' म मिलता है जो राजपूती चरित्र नैतिकता और जौहर परपरा स कही मेल नही खाता।

देह का व्यापार

मुगल शासन के पतन के बाद राज्य सरक्षण समाप्त हो जाने पर महलो मे नियुक्त उच्चकोटि की प्रशिक्षित नर्तकिया और गायिकाओ को वहा से निकल असुरक्षित

व असहाय अवस्था में आ जाना पडा। समाज ने उनकी ऊची कला को कायम रखने के लिए न उनकी कला को सरक्षण दिया, न उनके लिए दूसरे प्रतिष्ठित व्यवसाय की ही व्यवस्था की। तो मजबूर होकर उन्ह समृद्ध व्यक्तियों के हाथा बिकना पडा। विभिन्न क्षेत्रों म व्यावसायिक वेश्याओं के विभिन्न नाम व प्रकार यही से विकसित हुए।

ब्रिटिश राज्य म भी इन महिलाओं की स्थिति सुधरी नही। राज्य नियन्त्रण और उचित नीति नियमो के अभाव म वेश्यावृत्ति का बडे पमाने पर व्यवसायीकरण हो गया। ग्रामोद्योगो के नष्ट हो जान स बढी गरीबी म पहले स ही जातीय शोषण की शिकार निम्न वर्गों की महिलाए गुण्डा द्वारा देह-व्यवसाय के लिए खरीदी जान लगी या फुसलाकर उडाई जान लगी। मुस्लिम शासको की जगह जो नय सामन्त, नवाब, जमीदार, ताल्लुकेदार पदा हुए, उनके द्वारा कुछ अच्छी नर्तकियो, गायिकाओ को सरक्षण मिला। शेष इनके ही जुल्मो की शिकार हो गई। आग चलकर जमीदारी प्रथा उन्मूलन और आजादी के बाद रियासतो के विलीनीकरण म नर्तकियो, गायिकाओ शाही गणिकाओ का बचा-खुचा सरक्षण भी समाप्त हो गया। तो य अनाथ हो गई महिलाए गुडा द्वारा स्थापित चकला मे जा फसी।

इस तरह कालान्तर मे वेश्यावृत्ति समाज की मान्य सस्था नही रही। गणिकाओ की विशिष्ट सम्मानित स्थिति समाप्त हो गई। वेश्याए देह के व्यापारियो और दलालो के भ्रष्टाचार की शिकार हो स्वय भी भ्रष्ट हो गइ। अपने आभिजात्य स्तर से बहुत नीचे आ गिरी। उन्नीसवी सदी से ही देह-व्यापार की यह समस्या आरभ हो गई थी। दो विश्व-युद्धो के प्रभाव औद्योगीकरण और शहरीकरण मे नगरो म पिछडी गदी बस्तियो के विकास रीत जैसी स्थानीय परपराओ वाले और आदिवासी क्षेत्रो म गरीब महिलाओ का आसानी म शोषण भारत विभाजन के परिणाम और अन्तत समाज म नैतिक मूल्यो के ह्रास से इस व्यापार को बढने फैलने के लिए राह मिल गई। इसीलिए इसके लिए नए कानूनी नियमन की जरूरत पडी। उन्नीसवी शताब्दी के मध्य मे ही इडियन पीनल कोड में इस मामले मे जोर-जबरदस्ती करन या इस व्यवसाय के लिए स्त्रिया खरीदने बेचन पर रोक लगान के लिए सजाओ का प्रावधान कर दिया गया था। इसका सशोधित रूप सन् १९५६ म वेश्यावृत्ति उन्मूलन अधिनियम के रूप म सामन आया और पुन इस कानून का सशोधित रूप १९७८ म। इसकी चर्चा आगे अन्यत्र की जा रही है।

वेश्यावृत्ति से हटकर देखें तो राजाओ के अवैध यौनाचार की कहानिया भी यत्र-तत्र बिखरी पडी हैं। सत्ता प्रभाव से, जोर-जबरदस्ती स विशेष उत्सवो व समारोहो के बहान इसके लिए अवसर निकाल लिए जात थे। समारोहो के लिए विशेष दूत भेजकर विशिष्ट नागरिक महिलाओ को तो सीधे बुलवा लिया जाता था। स्त्री दूत या कुटनिया भेजकर नगर की अन्य सुदर महिलाओ का भीपता लगाया जाता था। फिर उन्ह लालच देकर फुसलाकर भय दिखाकर महल के बाग म आयोजित उत्सवो मे बुलवा उनम से पसद का चुनाव कर लिया जाता था।

मध्यकाल म राजा राजकुमार नवाब जो यह सब करते रह आग चलकर उनके सामन्त भी वही करन लगे। जागीरदारो, जमीदारो के उद्दड लडको न भी राजकुमारो

की नकल म खेती, सडको पर से खूबसूरत औरतें चुन चुनकर मगवाइ। उनके अधिकार क्षेत्र मे काम करन वाली ग्वालिना, मालिना, मतिहर मजदूरनिया पर तो जम उनका अधिकार मा य ही था, घरेलू दासियो या नौकरानिया पर भी। आगे चलकर ठेकेदार, प्रशासकीय और पुलिस अधिकारी, नवधनिक भी इसी लीक पर चलन लग। और नारी शोपण का यह दायरा बढता हुआ समाज क अ य वर्गो म भी फैलन लगा। वतमान स्थिति इसी का परिणाम है।

मध्यकालीन राजाओ की यह परपरा हमार देशी रियासता के राजा अभी स्व त न्तता पूव तक किसी तरह निभा रहे थ, दीवान जमनीदास की पुस्तकें 'महाराजा' और महारानी' इस पर अच्छा प्रकाश डालती है। इनक राजमहल भी कई-कई देशी विदेशी सुदरिया स आबाद थे। अग्रेज अधिकारी जान बूझकर इन राजाओ को रगरलियो म व्यस्त रख राजकाज स विमुख करत थे और इनके लिए सुदर विदशी महिला मित्र भी जुगाते थे। वे जानत थे कि भारत की आजादी राजाओ की विलासिता और आपसी फूट के कारण ही छिनी और इन्हे इन्ही दो प्रवत्तियो म उलझाकर यहा अग्रेजी राज्य कायम रखा जा सकता था। रियासतो के विलीनीकरण के बाद उस स्थिति स तो हम निकल आए, पर डर है कि वतमान भोग सस्कृति हमे फिर से न कही किसी खडड म गिरा दे।

इस प्रकार अब तक हमने देखा, प्राचीन भारत की अस्त्र शस्त्रधारी घुडसवार वीर नारी किस तरह घोडे से उतरकर पालकी और परदे मे आई। शास्त्राथ करनेवाली विदुषी महिला धीरे धीरे अशिक्षा के अधकार मे डूबती चली गई। आम स्त्री स्वत त्र प्रेम व चुनाव का अपना अधिकार खोकर मानसिक गुलामी और शारीरिक शोषण का शिकार हुई। वतमान आजादी और वधानिक अधिकार प्राप्ति के बाद भारतीय नारी को आगे की राह निश्चित करन से पहले कालक्रम के इस सोपानीकरण की ओर समाना तर चलने वाली विभि न स्थितियो का अध्ययन करना चाहिए। आज हर बडे नगर मे शास्त्रीय नृत्य गायन व अ य कलाओ मे प्रशिक्षित स भ्रात घरो की सुरुचिसम्प न युवतियों, व्यावसायिक कलाकार नारियो कबरे नतकियो और वेश्याओ काल गल्स' की साथ साथ उपस्थिति क्या उन समाना तर स्थितियो की ही परिचायक या प्रतीक नही ?

पूर्व आधुनिक काल
आधुनिक काल पर प्रभावी स्थितिया

मध्यकालीन स्थितिया म भारतीय समाज में नारी का दजा किस सीमा तक नीचे आया इसकी एक झलक सन १८३३ म तत्कालीन समाज की शैक्षणिक स्थिति के अध्ययन के लिए नियुक्त लाड विलियम बटिंग की रिपोट म देखी जा सकती है। इस रिपोर्ट मे बताया गया था 'अधिकाश हिन्दू परिवारा म यह धारणा फैली हुई है कि लडकियो को शिक्षा दिलाई जाएगी तो धम विरुद्ध इस काय स वे विधवा हो जाएगी।' पुरुष प्रधान समाज की किसी साजिश या अधविश्वासजनित इस धारणा का प्रभाव नवजागरण काल तक रहा जबकि भारत म स्त्रीशिक्षा १ ०७ प्रतिशत थी और स्वतन्त्रता पूव तक ४ प्रतिशत। स्वतन्त्र भारत का सविधान लागू होन पर १९५२ म यह प्रतिशत ८ तक पहुचा सन् १९७१ मे १८ ७ और सन १९८१ म २४ ८८। य दरें भी साक्षरता की हैं पर्याप्त शिक्षा की नही। और उसी भारतीय नारी की साक्षरता की, जो वैदिक काल म ब्रह्मवादिनी थी वेद ऋचाओं की रचना करती थी और उत्तरवैदिक काल म भी शास्त्राथ करती थी।

इस तरह शिक्षा स वचित होने पर सामान्य भारतीय नारी की सामाजिक, राजनीतिक भूमिकाओं का कोई प्रश्न ही नही उठता था। उसकी भूमिका केवल गृह-कार्यों तक सीमित हो गई। गृह मे भी मा और गृहिणी के नाते ही उसकी विशिष्ट भूमिका मानी गई। बच्चो का प्रसव और पालन पोषण तो प्रकृति से ही स्त्रीत्व स सबद्ध है। गृह कार्यों का निर्वाह उसके जिम्मे सामाजिक व्यवस्था की दन है। लेकिन मध्यकाल से लेकर अभी हाल तक स्त्रियो की यही भूमिका मान्य रही। वे चाहे खेतो म काम करें या कारखाना म अथवा सफेदपोश नौकरियो म आज भी उनकी यह कायकारी भूमिका गौण है मा और गृहिणी की भूमिका प्राथमिक और अनिवाय। आधुनिक आपत्ति इन भूमिकाओ की प्राथमिकता पर नहीं दूसरी भूमिकाए पहल काट देने व अब भी अमान्य करन पर है।

उत्तरोत्तर ह्रास अशिक्षा बाल विवाह बेमेल विवाह जैसी दुखद सामाजिक स्थितियो और परिवार म आर्थिक अधिकारहीन महत्वहीन भूमिका के कारण नारी *स्वास्थ्य भी क्षीण हुआ। प्रसवकालीन मृत्यु-दर बढी। किशोरी माताओ द्वारा* दुबल सन्ताना म बाल मृत्यु दर बढी। जीवित सन्तानें भी मा की अशिक्षा,

हीनता और मानसिक हीनता के कारण शारीरिक मानसिक दोनो दृष्टियो से गुणात्मक ह्रास का शिकार हुई। इस तरह नारी को गुलामी की जजीरो से बाधकर अज्ञानता के अधेरे मे रखने वाला पुरुष समाज भी अनजाने ही दड पा गया। जनसख्या रिपोर्टों के अनुसार शरीर, मन से अशक्त स्त्रियो की सख्या १८८१ म प्रति हजार पुरुषो के पीछे ९५२, १९०१ मे ९७२, १९४१ म ९४५, १९७१ मे ९३० और १९८१ मे ९३५ पाई गई—यानी नवजागरण काल म इसम जो थोडी वृद्धि हुई स्वतन्त्रता के बाद उसम फिर उत्तरोत्तर ह्रास आया। लेकिन अपेक्षाकृत अधिक मृत्यु दर की शिकार होकर भी नारी अपने सहनशीलता समायोजन, विनम्रता आदि अर्जित गुणो के कारण फिर भी बची रह गई, अन्यथा इस पूरी अवधि मे उस जो सहना झेलना पडा, उसके अनुसार तो स्त्री-पुरुष जनसख्या के इन आकडो म अ तर बहुत अधिक होना चाहिए था।

मेरी मान्यता मे, सरक्षित स्थिति मे होने के कारण स्त्री फिर भी उतने घाटे मे नही रही, जितना घाटा कि उसके अक मे पलने वाले पुरुष के हिस्से मे आया। माता के शिक्षित नहोने से वह बचपन के बुनियादी शिक्षण से वचित हो दिशाहीन हो गया। पत्नी की सहधर्मिणी भूमिका और मित्रवत सगति से वचित हो अकेला पड गया, भटक गया। स्त्री नियता रही हो नही थी। सस्कार की रज्जू से छूटा पुरुष नियता होकर भी अकेलेपन की भटकन मे सुसस्कृत समाज का निर्माण कसे कर सकता था ?

अनपढ मा की गोद म जसे तैसे पला, अनपढ सीधी सादी घरलू पत्नी से असतुष्ट अतप्त वह घर से बाहर सुकून तलाशने लगा। अवैध यौनाचार फैलाने लगा। राजा महाराजाओ, सामन्तो, श्रीमतो का वग हमेशा ही सामाजिक नीति नियमो की अवहेलना करता आया है 'समरथ को नहिं दोष गुसाइ'— सत तुलसीदास। निम्न वग कभी उनमे बधा ही नही। केवल मध्य वग ही सामाजिक आचार विचार का वाहक बन अपने समय के समाज को स्थिरता व व्यवस्था देता रहा है। जब भी सामाजिक स्थितियो म गहरे परिवतन हुए, मध्य वग की बदली भूमिका के कारण ही। इस काल म आकर मध्य वर्गीय मूल्य भी यो छि न भिन्न होने लगे कि सामन्ती युग मे राजाओ सामन्तो म जो कुछ खुले आम चलता रहा, वह अब मध्यवग मे भी चोरी छिपे चलने लगा। ऊपर स भलमनसाहत का मुखौटा ओढे वह सद्गृहस्थ की मर्यादाए निभाता रहा भीतर से वे ही नियम तोडता रहा, जो उसने स्वय बनाए थे और जिन्हे वह अपने परिवार की स्त्रियो पर सख्ती से लागू किए हुए था। इसी से वतमान समाज म स्त्री पुरुष के लिए यौन-नैतिकता के दुहरे मानदड स्थापित हुए।

आइए देखें नारी शोषण की वतमान स्थितिया किन धार्मिक, पारपरिक व सामाजिक कारणो की देन है।

पारपरिक और सामाजिक कारण

भारत म यौन नतिकता के मानदड काल स्थान व स्थिति सापेक्ष रहे है यह हम प्राचीन काल व मध्यकाल की ऐतिहासिक स्थितियो के सदभ म पहले देख चुके है। इतने विशाल देश म, जहा विभिन्न धर्मों जातिया और समुदायो के लोग अपनी अपनी भौगो-

लिक, ऐतिहासिक धार्मिक व सामाजिक परपराओ के साथ बसते हा, यह स्वाभाविक भी है। तदनुसार ही इनके प्रेरक कारक भी कही सयुक्त, कही समान तो कही भिन्न रहे हैं। जैस विदशी आक्रमणा के प्रभाव से पश्चिमोत्तर व मध्य भारत म परदा प्रथा बाल विवाह का प्रचलन हुआ, दक्षिण भारत आक्रमणो म बचा रहा तो इन कुरीतिया मे भी अछूता रहा। पर इसी कारण वहा धार्मिक विश्वास ब्राह्मण प्रभाव व कुलीनता मे सबधित धारणाए भी अपेक्षाकृत अधिक सुरक्षित रही। उत्तर पूव बगाल म भी इसी कारण कुरीतिया और कुलीनता सबधी धारणाआ की मिश्रित स्थितिया साथ साथ पनपी, इसीलिए नवजागरण काल वही से उदय हुआ।

आधुनिक समाज पर इन सभी प्रभावा की छाप है। प्रमुख पारम्परिक व सामाजिक कारण है

१ विशेष धार्मिक प्रथाए।
२ स्थानिक सामाजिक परपराए।
३ विदेशी आक्रमण और परिवशजनित स्थितिया।
४ जातीय व सामुदायिक रीति रिवाज।
५ अशिक्षा अधविश्वास और कुरीतिया।
६ वण, जाति और वग सघष।
७ आर्थिक या रोजगार स्थितिया।
८ अकाल, दग, युद्ध जैसी आपाद स्थितिया।
९ औद्योगीकरण के प्रभाव।
१० पश्चिमी प्रभाव।

रूढिबद्ध धार्मिक मान्यताए, सामाजिक धारणाए और महिला निर्योग्यताए

कुछ अच्छी धार्मिक परपराए भी आगे चलकर विभिन्न कारणो स किस प्रकार समाज की प्रगति म बाधक कुरीतियो रूढिया और अधविश्वासो म बदल स्त्री निर्योग्यताओ के रूप म स्थापित होती गइ, यह हम मध्यकाल के सदभ म देख चुके ह। य ही *स्त्री के सस्कारगत स्वभाव का अग बन उनके जातिगत हीन भाव और तथाकथित स्त्री*-मनोविज्ञान की सृष्टि कर गईं। सक्षेप म य निर्योग्यताए है—

—शूद्रो की तरह स्त्रिया के लिए भी वेदपाठ और विशेष धार्मिक अनुष्ठान करान की मनाही।

—तुलसीदास की पक्ति ढोल गवार शूद्र पशु नारी, य सब ताडन क अधिकारी को विवादास्पद मानकर छोड दें, तो भी मनु की दी गई व्याख्या स्त्री कभी स्वतन्त्र नही रह सकती। बचपन म उस पिता के अधीन, युवावस्था म पति के अधीन और वृद्धावस्था म पुत्रा के अधीन रहना चाहिए।

—केवल माता और पत्नी के रूप म ही स्त्री की भूमिका आदश भूमिका है। इसका अथ हुआ, हर लडकी का विवाह हाना ही चाहिए अन्यथा समाज म अनाचार

फैलने का भय है। इसका अथ यह भी हुआ कि ज्ञान विज्ञान, कला कौशल, समाजसेवा आदि उच्च ध्येय को समर्पित कुमारियां भी अन्यथा समाज म उपयोगी नागरिक या सम्मानित नही मानी जाएगी। ऐसा हुआ भी। फिर विधवा विवाह निषध के क्या मायने थे ? पर बाल विधवाओ तक को चरित्र शुद्धता के नाम पर पुर्नविवाह से वंचित कर दिया गया जो अन्तत समाज की चरित्र शुद्धता म बाधक ही सिद्ध हुआ।

—हर स्थिति मे निष्ठावान हर हालत म सहनशील पत्नी ही आदर्श पत्नी है। पति सेवा मे ही उनके सारे गुण निहित है। आज भी इसी विश्वास के आधार पर पति के सारे गुनाह माफ, पत्नी को कभी नहीं बख्शा जाएगा।

—विवाह मे कन्यादान की परपरा और पुत्री को पुत्र स अधिक महत्त्व देने क कारण हिंदू स्त्री से यह अपक्षा कि वह पति पुत्रो के कल्याण के लिए व्रत रखे। सुहाग के चिह्न धारण करे। करवा चौथ तीज आदि व्रतो और राखी, भाईदूज जस त्योहारो की *मगलभावना की कदर करते हुएभी कहना होगा कि ये अपेक्षाए स्त्री से ही क्या की गइ?* दोना को एक दूसरे की समान जरूरत होने पर भी पुरुषो को कोई विवाह चिह्न क्या नही धारण करना पडा। व्रत क्यो नहीं रखने पडे ? इसीलिए तो कि स्त्री को पुरुष की सपत्ति और पुरुष को उसका सरक्षक ही माना गया।

—वैधव्य को दुभाग्य से जोडकर देखना और उसे लेकर स्त्री पर अनेकानक प्रतिबध लगाना। ये प्रतिबध या मर्यादाए पुरुष के लिए नही रखी गईं।

—स्वास्थ्य और स्वच्छता की दृष्टि से जोडी गई पवित्रता की धारणा रजोधम और प्रसूतिकाल मे छुआछूत से जुड कर रह गई। पारसी समुदाय म तो इसके कडे नियम प्रचलित हुए। कुछ समय पूव मैंने एक पारसी घर म लकडी की सीढियो के बीचो-बीच पीतल के पत्तरे मढे देख कर उनका अथ पूछा तो उत्तर मिला था, ये मासिक धम के दिना स्त्री के पैर रखकर चलने के लिए है ताकि लकडी की सीढी अपवित्र न हो जाए। इस अवधि मे किसी मगल काय या धर्मानुष्ठान म भाग लेने की तो सवत्र मनाही है।

—जिन निम्न जातियो व समुदायो मे पहले पुर्नविवाह की अनुमति थी, दहेज नही दिया जाता था, वहा भी उच्च जातियो की देखा देखी ये प्रथाए शुरू हो गइ, क्योकि यह प्रतिष्ठा की दृष्टि से देखा जाने लगा।

—बौद्ध, जैन सिक्ख, वीरशैव आदि हिन्दू धम स फूटी शाखाओ और आयसमाज के प्रभाव से स्त्रियो के दर्जे मे कुछ सुधार आने पर भी मा का दर्जा ही पुरुष से ऊपर रहा। शेष सभी रूपो मे स्त्री की मान्यता समाज मे दूसरे दर्जे के नागरिक की रही।

विभिन्न धर्मो मे स्त्री का दर्जा

बौद्ध धम म भिक्षुणियो को स्वीकार किया गया। पर उनका दर्जा भिक्षुओ स नीचे रहा। सामुदायिक जीवन म जनियो ने स्त्रियो को उचित स्थान दिया पर धार्मिक उपलब्धि मे उनकी निन्दा की। वीरशैव धम मे विवाह विच्छेद और पुर्नविवाह की स्वीकृति थी। भक्ति आन्दोलन ने भी स्त्रियो को न केवल धार्मिक कार्यों मे शामिल किया, उन्हे धमाचाय सत व महत बनने के लिए भी प्रेरित किया। पर ये सुधार भी स्त्रियो

की आम हालत मे पुनर्जागरण के पूव तक, कोई विशेष सुधार नही ला सके।

इस्लाम म कुरान शरीफ मे स्त्रिया पुरुषो को समान अधिकार दिए गए हैं। स्त्रियो को धम के काम म बाधक नही माना जाता। उस समय के अनुसार स्त्रियो का सामाजिक दर्जा भी कम न था। पर बाद म कुरान की उन्ही आयतो की भिन व्याख्याए कर स्त्रिया का दर्जा काफी नीचे गिरा दिया गया। औरतें न मस्जिद मे नमाज पढ सकती है न मुल्ला या इमाम बन सकती है। व मजहबी काजी या विधिवक्ता भी नही बन सकती। स्त्रिया की शालीनता सतीत्व पर बराबर निगाह रखने के कारण उनके लिए धरा म पुरुषो से अलग जनानखान म रहने व बाहर बुरका पहनन के नियम बनाए गए। पहले निम्न वग मे यह प्रथा न थी। अब उच्च शिक्षित प्राय इस त्याग रहे है, निम्न वग अपनी ऊची स्थिति को दर्शान के लिए इस अपना रहे हैं।

ईसाई धम की बाइबल म स्त्री एक लुभान वाली, पथभ्रष्ट करन वाली के रूप मे चित्रित है। इस कारण पति का पत्नी व उसकी सम्पत्ति पर नियत्रण हुआ। पर पति पत्नी के बीच परस्पर सम्मानजनक स्थितियो के विकास और समान कतव्यनिष्ठा पर बल दिए जाने से ईसाई स्त्री अपक्षाकृत अधिक स्वतन्त्र हुइ। एक विवाह प्रथा और छोटे परिवार की मान्यता स भी उसकी स्थिति ऊची हुई। पर इसी अनुपात म स्वच्छदता भी उसम बढी। पर बाइबल स्त्री के एसे गुणो पर भी बल देती है जो परिवार की दखभाल के अलावा व्यक्तिगत कायक्षमता, गरीबो के प्रति दया व सेवा भावना, बुद्धिमानी और समझदारी की कदर से उनमे स्वतन्त्रचेता व्यक्तित्व का विकास करती है। विवाह उनके लिए अनिवायता या नियति नही। यही कारण है कि सेवा-क्षेत्र और रोजगार क्षेत्र मे सबसे पहले ईसाई स्त्री दिखाई दी।

पारसी धम मे, समाज म स्त्रिया का आदर है। वे धार्मिक कार्यों म भाग लेन उच्च शिक्षा व रोजगार क्षेत्र म जाने सम्पत्ति की अधिकारिणी होने का दर्जा पा सकी। विधवा पुनर्विवाह और विवाह विच्छेद की भी उन्हे अनुमति रही। पर मासिक धम सबधी निषेध और कुछ अन्य धार्मिक निषेध उन पर और सख्ती से लागू रहे। हिन्दू और मुस्लिम प्रभाव से यद्यपि इस समाज म भी बहुविवाह और बाल विवाह जैसी प्रथाए अपना ली गई थी। पर उन्नीसवी शताब्दी मे ही पारसी समाज ने इन बुराइयो से स्वय को मुक्त कर लिया था। फिर भी दहेज प्रथा स मुक्ति वे नही पा सके। यह प्रथा उनम गभीर रूप से प्रचलित रही, इसी कारण बहुत सी युवतिया का विवाह ही नही हो पाया या बहुत देर से हुआ। इस समाज म प्रेम विवाहो के बढत चलन ने ही इस प्रथा पर काबू पान मे सफलता प्राप्त की है। पर एक बाधा अभी भी मौजूद है। गर पारसी से पुरुष विवाह करे तो बच्चे वैध हैं, स्त्री करे तो नही—यह क्या ?*

लडकियो का गलत समाजीकरण

कारण विदेशी आक्रमणो के फलस्वरूप मध्यकाल में हमारे स्मृतिकारो द्वारा दी गई व्यवस्थाए हो या धार्मिक परपराओ मे समय के साथ आई विकृतियां, इसका एक

1 स्त्रियों के सामाजिक दर्जे पर 1975 के राष्ट्रीय आयोग की रिपोर्ट

बहुत बडा दुष्प्रभाव घरो मे लडके लडकी के पालन पोषण म भेद भाव के रूप म सामने आया। भारतीय सस्कृति म विवाह के धार्मिक उद्देश्यो म वश वृद्धि और पितरा के श्राद्ध तपण के लिए पुत्र कामना को वैदिक काल से ही महत्त्व दिया गया है। उस काल मे यह कामना पुत्री के विकास मे बाधक नही थी पर कालान्तर मे ह्रासोन्मुख सामाजिक स्थितिया मे यह लडकी की स्वस्थ समाजीकरण प्रक्रिया म बाधक सिद्ध हुई।

जिस क्षण से भारतीय लडकी धरती पर सास लेती है उसकी भावी जिन्दगी का स्वरूप निश्चित होन लगता है। 'हाय लडकी आ गई' की तर्ज पर शोक सभा प्रारभ हो जाती है। आगतुक बधाई दने और खुशी मनान के बजाय कन्या शिशु के माता पिता से सहानुभूति जताने लगते है। लडकी के मनोविज्ञान की नीव यही से पडती है। आगे उसके पालन पोषण म भी कदम दर कदम उसे यह अहसास कराया जाता है कि वह लडकी है इसलिए अपने भाई (लडके) से कुछ नीचे दर्जे पर है हीन है। वह बेटी है इसलिए उसे बेटे से कम सुविधाओ म सतुष्ट रहना चाहिए। खान पान, पहरावा खेल कूद पढाई लिखाई सभी मे न केवल बेटे बेटी मे भेद किया जाता है, बेटी का बराबर यह प्रशिक्षण भी दिया जाता है कि उस अपने भाई से प्रतियोगिता नही करनी चाहिए। इसका ध्यान रखना चाहिए। लडका से समानता की अपेक्षा नही रखनी चाहिए। यदि वह ऐसा करेगी तो आगे चलकर उसका जीवन दुखी होगा।

उसे हर हालत म अभिभावको के सरक्षण म रहना चाहिए। यदि वह इसका विरोध कर अपने लिए लडका जसी स्वतत्रता चाहेगी तो यह उसके लिए खतरा उत्पन्न कर सकती है। लडकी होने के नाते खानदान की, परिवार की समाज की इज्जत मर्यादा का ध्यान भी उसे रखना ही है। पुरुष जो करता है, उस करने दो। उसके कदम लडखडा भी जाएग तो उस सामाजिक आलोचना या कलक का सामना नही करना पडेगा। लेकिन वह तो स्त्री है—स्त्री मानो धरती जिसका काम सहना ही है। कष्ट सहन की यह शिक्षा उस हर समय दी जाती है, ताकि ससुराल म विपरीत परिस्थिति मिलने पर भी वह उसे सहते हुए निभा सके, क्योकि उसे हर स्थिति मे निभाना ही है।

लडकी के कदम भटकेंगे तो समाज उसे क्षमा नही करेगा। कुलटा और कलकिनी कह कर दुत्कारेगा जिससे उसका भविष्य नष्ट हो सकता है। मध्यकाल स आज तक का इतिहास बताता है कि ऐसी गलतियो पर लडकी को अनक बार गला घोटकर मार दिया गया जाति से, घर से बाहर कर दिया गया अथवा उसे इतनी मानसिक यातनाए दी गइ कि वह हार कर आत्महत्या करन पर मजबूर हो गइ या पेट की खातिर अथवा गुडो के हाथ म पडकर वेश्या बन गई। यहा तक कि लडकी निर्दोष हो और बलात्कार की शिकार हो जाए तो भी उल्टे उसे ही दोषी ठहराया जाता है—तू अकेली घर से क्यो निकली थी ? तू फला जगह क्या गई थी ? तू चिल्लाई क्यों नही ? तू मर क्या नही गई ?

ऐसी सताई लडकी को भी सहानुभूति के बजाय उस चारो ओर स समाज की उठी उगली और घर-बाहर की प्रताडनाओ की इतनी मानसिक यातना झेलनी पडेगी कि उसका जीना ही दूभर हो जाएगा। भारत विभाजन के समय पाकिस्तान से बचाई

गई सक्डो हिन्दू युवतियो और बगला देश की आजादी की लडाई मे पाक सनिकों द्वारा सामूहिक बलात्कार की शिकार हजारो मुस्लिम युवतिया मे से आधी सख्या को भी उनके माता पिता अपनाने को तयार नहीं हुए, जबकि वे सवथा निर्दोष थीं और अपने देश की आजादी की भेंट चढी थीं। इस सदी की य दो मार्मिक घटनाए ही लडकी के अभिशापित जीवन के प्रमाण के लिए काफी ह।

लडकी की इस नियति के कारण ही इस काल मे भारतीय नारी कही सम्मानित होती है तो मा के नाते वह भी बेटे की मा के नात। बेटी और पत्नी के रूप म वह पुरुप के अधीन सरक्षित स्थिति म ही मान्य है। अविवाहित रह कर या पति म अलग रह कर वह अपनी बुद्धि प्रतिभा, योग्यता, साहित्य कला ममज्ञता, काम कुशलता नेतत्व आदि अर्जित गुणा से समाज के लिए, राष्ट्र क लिए अन्यथा कितनी ही उपयोगिता सिद्ध करे, समाज उस इज्जत की नजर से नही देखेगा।

इस तरह जब शैशव से लेकर युवावस्था तक निरन्तर नारी मे हीनता ग्रथि और पुरुप म श्रेष्ठता ग्रथि का विकास किया जाएगा और इस विकास म परिवार की स्त्रिया ही अधिक भागीदार हागी, तो पुरुप को दोषी ठहराना व्यथ है। दोप तो बेटे बटी के पालन-पोषण की पद्धति मे बुनियादी रूप से विद्यमान है। इसी भेदभाव से लडकी के समाजीकरण की प्रक्रिया गलत हो जाती है। इस प्रक्रिया मे शुरू मे ही जब मानव मनोविज्ञान के बजाय नारी मनोविज्ञान और पुरुष मनोविज्ञान की अलग-अलग सष्टि होने लगती है, तब नारी मानवी कैसे बनेगी? वह भी स्वय को उसी रूप म ढालने और समझने लगती है जैसी कि समाज उससे अपेक्षा रखता है। फिर यह हीनता कुठा उसे निरुपाय के हथियार रूप म या समय समय पर होने वाल कुठा के विस्फोट रूप मे कहीं अधिक वाचाल रोने धोने वाली, कलह करने वाली, 'त्रिया चरित्र' जैसे छलछदम करने वाली, दूसरे ढग से पति को नीचा दिखाने पर उतारू ईर्ष्यावश आगे बढी अपनी ही दूसरी बहनो की टाग खीचने वाली, परनिन्दा मे रस लेने वाली ओछी मानसिकता स भर दे तो क्या गलत विकास या अपरिपक्वता मे उपजी इन प्रवत्तिया का भी नारी-मनोविज्ञान का नाम दिया जाएगा?

नारी के गह कार्यों की भूमिका भी यही स निर्धारित होती है—बटे ने जरा घर का कोई काम किया कि उस यह कहकर मना कर दिया जाता है, 'तुम क्या लडकी हो? छोडो, यह काम तुम्हारा नही है।' और अपन हाथ स पानी का गिलास भर कर पीने म भी लडके अपनी हेठी समझने लगत है। बहन छोटी हो या बडी, उससे अपन छोटे मोटे काम कराना अपने कपडे धुलवाना, उस पर रोब डालना भाइयो का जन्मसिद्ध अधिकार बन जाता है। घर के काम लडकिया ही करेंगी, लडके बाहर का काम करेंगे या बहन के सरक्षक बनकर साथ चलेंगे—य अलग-अलग भूमिकाए जब बचपन मे ही तय कर दी जाएगी, तो बडे हो कर पुरुष अपने अहम का विकास कर लें, स्त्री के सरक्षक बनकर ही तुष्ट हो और स्त्री के सिर उठान पर उस नीचा दिखाने के लिए किसी निकृष्ट स्तर तक भी उतर आए तो क्या केवल उन्ह ही दोष देना होगा? हमारी वतमान व्यवस्था इसके लिए उत्तरदायी नही है?

बदलती स्थितियो मे नारी के निक्षित अनिक्षित हो समाज के विभिन्न क्षेत्रों म अपनी उपयोगिता सिद्ध करने पर भी क्या ये ही पुराने मूल्य उस पर थोपे जायेंगे? पारपरिक मूल्या को जब तक सशोधित, परिष्कृत कर नई आवश्यकताओं के अनुरूप नही ढाला जाएगा, वतमान स्थिति मे क्या स्त्री-पुरुष प्रतिद्वन्द्विता, नारी के विद्रोह, पुरुष के दमन तथा पारिवारिक विघटन की विकृतियों को रोका जा सकेगा?

सीमित परिवार कल्पना और शक्षणिक जागृति के प्रभाव स अब नगरा म निश्चित व उदारमना परिवारा म लडक लडकी क पालन पोषण, शिक्षा-दीक्षा के बीच भेद भाव कुछ कम हो चला है। पर अभी एस परिवारा की सख्या बहुत कम है। जो हैं उनम म भी जिन परिवारा म लडकिया लडका के समान स्वतत्रता व सुविधाए देकर पाली जाती है वे भी नारी सुलभ गुण व गहणीत्व के उचित प्रशिक्षण के अभाव म ससुराल म अपनी पटरी नही बठा पाती। क्योकि प्रगतिशील कहे जाने वाले अधिकाश पति भीतर स वस ही रूढ मान्यताओ वाले होत है। बदली स्थितिया म भी नारी सुलभ गुण ता चाहिए ही, अन्यथा परिवारा की टूटन को रोका नही जा सकता। यौन नतिकता के दुहरे मानदडा के साथ अब तो आधुनिक प्रगतिशीलता के दुहरे मानदड भी मिल गए हैं। नारी स्वय भी फशन व शिष्टाचार क ऊपरी तौर तरीका म ही आधनिक हो पाई है, विचारो म नही।

लडको का महत्त्व सवत्र

जनगणना के अनुमानो के अनुसार भारत म पुरुषा की सख्या स्त्रिया म कुछ अधिक है। फिर भी यहा पुत्र जन्मपर ही खुशिया मनाई जाती है। क्यो? इसलिए कि लडकी की सुरक्षा की जिम्मेदारी दहेज की समस्या ससुराल म उसके ठीक सामजस्य व निभाव की चिंता आदि कारणो के अलावा माता पिता की बुढापे की सुरक्षा की दृष्टि से लडको का महत्त्व आज भी कम नही है। यह महत्त्व तब तक कम नही होगा, जब तक कि हर नागरिक के लिए बुढापे की सुरक्षा की गारटी सरकार न दे। तब भी पितृऋण व पुत्र के अभाव मे मरणोपरात गति की पारपरिक धारणा जब तक हमारे यहा मौजूद है पुत्राकाक्षा भी बनी रहगी।

परपराओ की भिन्नता क कारण लगता है, यह स्थिति भारत म ही है। पर ऐसी बात नही है। अनक सर्वेक्षणो स सिद्ध हुआ है कि कम या अधिक लगभग सभी देशो म ऐसी धारणाए व आकाक्षाए विद्यमान हैं और लडको पुरुषो का महत्त्व लडकियो, स्त्रियो मे अधिक कूता गया है। समान नागरिक अधिकारो की दृष्टि स तो भारत अन्य देशो से कही आगे ही है, पीछे नही।

जापान म पाच मई को लडका का दिन और तीन माच को लडकियो का दिन कहा जाता है। पर लडका का दिन मनाया जाता है लडकिया का नही जस आज भी हमारे यहा लडकियो की वषगाठ प्राय नही मनाई जाती, लडका की मनाई जाती है। जापान मे लडको के दिन सरकारी छुट्टी रहती है। उस दिन माता पिता उतनी सख्या मे मछलीनुमा पतगें उडाते हैं जितने कि घर म लडके होते है। पतग की पेंग बढाते हुए कहा जाता है कि लडका का जीवन भी इसी तरह हर विपदा का सामना करते हुए आगे बढता

जाना चाहिए। दनिक परपराओ म भी कई जगह लडका को प्राथमिकता मिलती है जैसे सावजनिक स्नानगहो मे लडको के नहा चुकने के बाद ही लडकिया नहाने जा सकती है।

ईरान म लडकेपैदा करना पुरुपत्व की निशानी माना जाता है। जमनी मे लडका को 'स्टेमर हाल्टर' या वश बढाने वाला कहा जाता है। अफ्रीका म उत्तराधिकार कवल लडका को ही मिलता है। थाईलड म लडकिया बौद्ध प्रचारक नही बन सकती यह धार्मिक अधिकार उन्हे नही दिया गया है। बच्चा गोद लेने के लिए लगभग सभी एशियाई देशा म लडको को ही प्राथमिकता दी जाती है। लडकिया कवल वही गोद ली जाती है, जहा कि उनकी शादी पर ससुराल पक्ष स पैसा लेन की परपरा हो।

यूरोपीय देशा मे यद्यपि बुढापे की सुरक्षा योजनाओ के प्रभाव से यह भेदभाव कम हो गया है, होता जा रहा है, पर एक सर्वेक्षण रिपोट के अनुसार वे लोग औपचारिकतावश ऐसा कह देते है कि लडके-लडकी मे हम कोई भेद नही करत वास्तविक व्यवहार म करते हैं। अगर अनौपचारिक रूप से राय ली जाय तो अधिकाश अग्रेज माताए लडकिया पसद करती है अधिकाश पुरुप लडको के लिए आकाक्षा प्रगट करते है, विशेप रूप म व्यवसायी वग तो व्यवसाय मे हाथ बटाने के लिए लडके ही चाहता है। लेकिन तीन लडकिया हो जाने पर लडके की लालसा म परिवार बढाना उन्हे पसद नही, जब कि भारत मे आज भी कुछ पढे लिखे समझदार लोगो को छोड एक पुत्र की आकाक्षा मे परिवार की सख्या काफी बढा ली जाती है। महगाई के दबाव से अब स्थिति धीरे धीरे भारत म भी बदलती जा रही है। लेकिन अभी तो यह प्रभाव शिक्षित उच्च व मध्य वग म ही अधिक दिखाई देता है। गरीब निम्न वर्गों और अल्पसख्यको पर नही।

इस तरह सारी आधुनिकता फिलहाल दो नावो पर सवार है। वतमान समाज की सारी गडबडी के मूल मे ये दुहरे मूल्य भी है। इम सोच मे बुनियादी परिवतन किए बिना कोई भी कानूनी या प्रशासकीय व्यवस्था वाछित सामाजिक परिवतन नही ला सकती।

अन्य स्थानीय व जातीय प्रथाए

भारत के कुछ भागों मे जाति या वश परपरा भौगोलिक स्थिति व अन्य कारणा स कुछ ऐसी प्रथाए भी प्रचलित रही है, जो समाज म यौन नैतिकता के नियमो को शिथिल करन म सहायक हुइ। आदिवासियो की अनेकानक अनोखी प्रथाओ के अलावा य विशप प्रथाए है

नायक समुदाय की विशेप प्रथा

इस समुदाय म एक कुप्रथा प्रचलित रही परिवार की लडकियो को बाकायदा प्रशिक्षण देकर वेश्यावृत्ति के व्यवसाय मे भेजना। उत्तरप्रदेश के नैनीताल जिले अल्मोडा और गढवाल के जिला मे बसने वाले नायक समुदाय मे यह कोई शम की बात नही समझी जाती थी। यह उनके पारिवारिक रोजगार का अग थी। यही कारण है कि यहा की लडकिया, स्त्रिया देश के सभी भागो मे फैले वेश्यावृत्ति व्यवसाय म शामिल रही है।

इनके परिवार सगठन की प्रक्रिया भी विचित्र रही। बडी बहन या बडी लडकी घर की कमाऊ सदस्य या मुखिया होती और पुरुष उसकी जीविका पर आश्रित। सामान्यत ये खस राजपूत परिवारो मे अपने लिए पत्नी खरीदते थे, जहा कि वेश्यावृत्ति परपरागत व्यवसाय नही बनाया गया था। लेकिन इनकी लडकिया आगे वेश्यावृत्ति म जा सकती थी।

जौनसार बावर की खस जाति मे बडा भाई ही विवाह करता है। उसकी पत्नी सभी छोटे भाइयो की पत्नी कहलाती है। परिवार मातसत्तात्मक नही, फिर भी माता, पत्नी के अधिकार अधिक होने से मातप्रधान है। इनका मुख्य तक होता है, 'हम पाडवो के वशज है। फिर सभी भाइयो का अलग विवाह होने म जमीन टुकडो म बट जाएगी और गरीबी बढ जाएगी। यह तक स्थानीय भौगोलिक स्थिति और ऐतिहासिक परपरा की उपज हो सकता है लेकिन ध्यान से देखें तो इसके पीछे यही मुख्य कारण मिलता कि लडकिया वेश्यावृत्ति के लिए बाहर भेज दी जाती हैं तो स्थानीय युवको के लिए उनका अकाल हो जाता है। इसीलिए इनमे ब्याह कर लाई स्त्रियो को पीहर जाने पर निजी सबध रखने की छूट दी गई है और इन्हे कुछ अधिक सुविधाए, कुछ अधिक अधिकार दिए गए है कि वे ससुराल मे टिकी रह। **खस लडकिया मायके मे 'ध्याति' और ससुराल मे 'रयाति' कहलाती हैं। रयाति सभी भाइयों की पत्नी होकर भी ससुराल मे अपने पतियो के साथ बधी वफादार रहती है। पर पीहर जाकर वह फिर से ध्याति बन अपने मित्रों व पूर्व प्रेमियो से मेलजोल के लिए पर्याप्त स्वतंत्र हो जाती है।** लडकी इनमे मूल्यवान सम्पत्ति है। इसलिए यहा 'वधू-मूल्य' प्रथा है—विवाह म वर यात्रा नही वधू यात्रा निकलती है। भाइयो के सबध म प्रथा है—बडे भाई के घर रहने पर पत्नी उसी क पास रहेगी। उसकी अनुपस्थिति मे उससे छोटे भाई के पास। दोनो की अनुपस्थिति म अन्य छोटे भाइयो से वह चोरी छिपे ही मिल सकती है। बाहर टोपी रखी मिलने पर दूसरा भाई पत्नी के कमरे मे प्रवेश नही कर सकता। पहली सतान बडे भाई की, दूसरी दूसरे भाई की इसी क्रम स अन्य भाइयो की कहलाती है।

सुधार प्रयत्न लेकिन खस समुदाय म वेश्यावृत्ति पारपरिक व्यवसाय नही वह नायको म ही है। नायक समुदाय की इस कुप्रथा के खिलाफ सबसे पहले १८५७ म स्थानीय सहकारी निकाय का ध्यान आकर्षित किया गया। मजिस्ट्रेटो द्वारा लडकियो को वेश्यावृत्ति के लिए भेजने वाले व्यक्तियो पर २०० रुपये तक जुर्माने और एक साल तक की कैद की सजा दी जाने लगी। लेकिन इन सजाओ का इस प्रथा को रोकने पर विशेष प्रभाव नही पडा। तब सरकार ने स्थानीय पचो और अधिकारियो को इसे रोकने का अधिकार दिया और नायक लडकियो के जन्म 'रजिस्टड' कराना अनिवार्य कर दिया गया। किसी लडकी के गाव स बाहर जाने या भेजे जाने की सूचना भी स्थानीय अधिकारियो को देने का आदेश दिया गया। लेकिन इन आदेशो के पीछे कानूनी बल न होने स यह योजना भी अधिक प्रभावी नही रही। माता पिता लडकी के जन्म की सूचना छिपाने लगे। निचले दर्जे के अधिकारी घूस खाने लगे। पुलिस व सरकारी कर्मचारियो द्वारा लडकियो स बलात्कार तक की शिकायतें मिली, तो उत्तर प्रदेश आय प्रतिनिधि

है। और कुछ लडकियां शिक्षा के लिए परदे से बाहर भी आ चुकी हैं। पर कुल मिलाकर आज भी लडकियों पर बड़े बड़े प्रतिबंध हैं जिनका लडकियां प्रतिवाद रूप में उल्लंघन करती है। इन लडकियों में से कुछ निश्चित प्रतिशत ही ऊपर उठ जाती हैं बाकी मजबूर हो पतन के उसी रास्ते पर चल देती हैं।

मलाबार के ही नायरों में मातृसत्तात्मक परिवार परंपरा के अनुसार वंश परंपरा घर की बड़ी लडकी के नाम से चलती है और उसके अभिभावक के रूप में उसके मामा को मान्यता दी जाती है। पति वहीं आकर रहता है लेकिन संपत्ति पर अधिकार नहीं होता। नायर लोग नम्बूदिरी को अपनी लडकी देकर प्रतिष्ठा अनुभव करते हैं। नम्बूदिरियों में केवल बड़े लडके का विवाह नम्बूदिरी लडकी से होना अनिवार्य माना जाता था। छोटे लडके नायर लडकियों से विवाह कर सकते थे।

जब एक नायर लडकी किशोरावस्था लांघकर स्त्रीत्व को प्राप्त होती तो उसके पहले मासिक धर्म के चौथे दिन एक समारोह आयोजित किया जाता। स्नान के लिए लडकी को बाजे गाजे के साथ ले जाया जाता। इस रूप में आसपास के युवकों के लिए यह सूचना होती कि फलां परिवार में फलां लडकी विवाह के लिए तैयार है। चूंकि नायर लोग नम्बूदिरी को लडकी देने में गर्व अनुभव करते थे इसलिए इस समारोह के बाद जब कोई नम्बूदिरी पुरुष [युवा या प्रौढ रोगी तक] उस नायर परिवार में आकर लडकी से यौन संबंध स्थापित करने की इच्छा जाहिर करता तो परिवार के लोग इसे अपनी प्रतिष्ठा मान उसकी इच्छा पूर्ति करते और लडकी को अपनी इच्छा के विरुद्ध जाकर भी उसे संतुष्ट करना पडता। महीना दो महीने तक यह नम्बूदिरी पुरुष उस नायर परिवार में रोज रात को ठहरकर सुबह चला जाता। फिर यदि उसका चुनाव उस लडकी के पक्ष में नहीं होता तो वह उसे छोड दूसरी नायर लडकी की तलाश में निकल जाता। और यह नायर परिवार दूसरे नम्बूदिरी पुरुष की प्रतीक्षा करने लगता।

नायर लडकियों का यह अनुभव आगे चलकर विवाह के बाद भी प्रायः उन्हें एक पति के साथ संतुष्ट नहीं रहने देता था। चूंकि पति का उस घर पर कोई विशेष अधिकार प्राप्त नहीं होता था वह प्रायः पत्नी की जिम्मेदारी से भी मुक्त रहता और पति से असंतुष्ट पत्नी के अन्य पुरुषों के साथ संबंध पर रोक लगाने में भी असमर्थ होता। यद्यपि शिक्षित परिवारों में अब यह प्रथा तेजी से विलुप्त होती जा रही है केरल के ग्रामीण मालाबारी क्षेत्र में यह रिवाज अभी भी आम है जो अवैध बच्चों की संख्या बढाने में सहायक है।

'रीत' प्रथा

हिमाचल के कई पहाडी समुदायों में जब कोई व्यक्ति पूर्व पत्नी को छोड नई लाना चाहता तो वह उसे किसी अन्य व्यक्ति को बेच दूसरी खरीद लाता था। इस 'रीत' के अन्तर्गत कभी कभी कोई स्त्री छः-सात खरीददारों द्वारा भी खरीदी जाती थी, जिससे दोनों ओर परिवारों का विघटन होता। पूर्व शिमला राज्य में सरकार ने इन सौदों पर टैक्स लगाया हुआ था, तो सरकारी कोष में आने वाली इस आय के कारण भी यह 'रीत

देर तक चलती रही। लेकिन अब इसका लगभग खात्मा किया जा चुका है।

कुलीन प्रथा

बगाल के हिदुओ मे कुलीन परिवार मे शादी को प्रतिष्ठा का प्रश्न बनाने पर भी वहा हिन्दू लडकियो को सामाजिक अन्याय का शिकार होना पडा। इस प्रथा के कारण कुलीन वर खरीदने के लिए दहेज प्रथा को प्रोत्साहन मिला और कुलीनो ने पैसे और दहेज के लालच मे इसका अनुचित लाभ उठाया। विवाह के बाद किसी बहाने पत्नी को छोड देना और दूसरी लडकियो से कई-कई बार विवाह करना मानो उनकी कुलीनता का अधिकार बन गया था। ये परित्यक्ता महिलाए मजबूरी मे अवध सबधो की ओर अग्रसर हुइ। कई बार इनके गभवती हो जाने पर इनके कुलीन पतियो को लाकर एक रात अपने घर ठहराने के लिए माता पिता को बहुत कीमत चुकानी पडती थी और यह भारी खच उस अवध गभ को वध दिखाने या उस बच्चे के भविष्य के लिए उसे सामाजिक मान्यता दिलाने के लिए किया जाता था। यद्यपि इस प्रथा की बुराइयो ने स्वय इस बगाली शिक्षित समाज मे समाप्त कर दिया है लेकिन कुछ बगाली समुदायो मे कुलीनता का यह आकषण अब भी नारी शोषण का साधन बना हुआ है।

सामान्य सामाजिक परपराए और रूढिया

बहु-विवाह प्रथा

एक पत्नी प्रथा हिन्दू समाज का आदश है। दम्पति शब्द से स्पष्ट है कि गृहस्थी के दो सयुक्त स्वामी है और वैवाहिक जीवन मे तीसरे व्यक्ति के लिए कोई स्थान नहीं। फिर भी कुछ अवस्थाओ मे हमारे यहा बहु पत्नी प्रथा प्रचलित रही है। कही कही बहु पति प्रथा भी।

व्यावहारिक दृष्टि से बहु पत्नी प्रथा समृद्ध वग मे ही पनप सकती थी, इसलिए यह राजाओ और उनके साम तो मे ही अधिक प्रचलित थी। उनके लिए अनेक पत्निया रखना उनकी सामाजिक स्थिति सम्पन्नता और प्रतिष्ठा का मानदड बन गया था। राज-महलो की इन पटरानिया बडी छोटी रानिया रखैलो और दासियो के बीच राजा का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करने उसकी कृपापात्र बनने के लिए किस तरह की प्रति-स्पधा चलती थी कैसे कैसे षडयन्त्र रचे जाते थे हरम या रनिवास की कैद मे रहते उन्हे क्या क्या यातनाए झेलनी पडती थी, बाहरी पुरुष के दासियो को अपने पति तक के सपक मे आने के लिए क्या-क्या खतरे मोल लेने पडते थे उन जुल्मो अपराधो, दुख ददों की कहानियो से हमारा इतिहास व कथा साहित्य भरा पडा है। सामतो, नवाबो, जागीरदारो जमीदारो साहूकारो की हवेलियो मे ये कहानिया छोटे स्तर पर जी गई हो, उनके भीतर की पीडा किसी भी तरह कम नही थी।

सामान्य हिन्दुओ मे दूसरा विवाह प्राय तभी किया जाता था जब प्रथम पत्नी बाझ हो। हिन्दू धम ग्रथो के अनुसार वश परपरा को आगे बढाने के लिए और धार्मिक

सस्कार कराने के लिए पुत्र आवश्यक है। तो इस उद्देश्य ने मध्य व निम्न मध्य वर्ग के व्यक्तियो को भी सतान प्राप्ति, विशेषतया पुत्र की लालसा से दूसरे विवाह के लिए मजबूर किया। फिर भी स्मतिकार मनु ने विधान किया था, 'उस प्रथम पत्नी से स्वीकृति ले लेनी चाहिए।' यह स्वीकृति बाद में केवल औपचारिकता मात्र रह गई और अधिकाश मामलो मे पत्नी पर दबाव डाल कर ली जाने लगी।

नतिक मूल्य बदलने के साथ पुरुषो ने अपने पक्ष मे इसका लाभ लिया और दूसरे विवाह के लिए सतान के अभाव की शर्त अनिवार्य नही रह गई। तलाक प्रथा से पूर्व पहली पत्नी की नापसदगी व अन्य कई कारणो से उसका परित्याग कर दूसरे विवाह या अन्यत्र सबधो के लिए आसानी से राह बना ली जाती थी।

हिन्दू विवाह अधिनियम १६५४ द्वारा हिन्दुओ मे बहु पत्नी प्रथा का सर्वथा निषेध कर दिया गया। पत्नी द्वारा ऐसी शिकायत करने पर सरकारी कर्मचारी को अपनी नौकरी से भी हाथ धोना पडता है तथा दड की भी व्यवस्था है। परतु सन् १६६१ १६७१ की जनगणना के अध्ययन से ज्ञात हुआ था कि कई समुदायो मे यह प्रथा कुछ हद तक गरकानूनी ढग से अभी भी प्रचलित है। या भी कानून से बचने के लिए कई रास्ते निकाल लिए जाते हैं। बिना विवाह के अवध सबध और विवाहेतर अवैध सबध तो आज जसे आम बात हो चली है।

'बहु पति प्रथा' भारत मे केवल अनुसूचित जातियो—नीलगिरि के टोडा, उत्तर प्रदेश के जौनसार बावर जिले की खस जाति, हिमाचल प्रदेश के लाहूल किन्नौर और स्पीति के लोगो मे प्रचलित है। हमारी स्मतिया द्वारा बहु पत्नी प्रथा तो स्वीकृत थी, बहु पति प्रथा उचित नही मानी जाती थी। महाभारत और कुछ पुराणो मे अपवाद रूप मे ही कुछ ऐसे उदाहरण मिलते हैं। पाच पाडवो की पत्नी द्रौपदी विशेष परिस्थिति की उपज होने से ऐसा ही एक अपवाद है। आज यह अपवाद जौनसार बावर मे देखने को मिलता है। महाभारत काल से पूर्व वदिक काल की आर्य सस्कृति मे इस बहु पति प्रथा का कही उल्लेख नहा है। आधुनिक भारत मे भी उच्च और मध्य वर्ग मे यह प्रथा कहीं देखने को नही मिलती। अनुसूचित जातियो से भी इसका धीरे-धीरे लोप होता जा रहा है।

बाल-विवाह

वैदिक साहित्य के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि उस युग मे बाल विवाह की प्रथा प्रचलित नही थी। ईसा से पाच शताब्दी पूर्व के गृह सूत्र के मत्र और विवाह मत्र इसकी पुष्टि करते है। जातक कथाओ के अनुसार बौद्ध काल मे भी लडकियो का विवाह सोलह वर्ष से कम आयु मे नही होता था। मनु, कौटिल्य वशिष्ठ ने भी व्यवस्था दी कि रजो दर्शन से तीन साल तक विवाह किया जा सकता है। मनु ने तो यहा तक भी कहा कि कन्या को उचित वर न मिले तो वह आजीवन अविवाहित रह सकती है। पर इस युग की अंतिम रचना 'कामसूत्र' रजो दर्शन के पूर्व और पश्चात दोनो अवस्थाओ मे विवाह की अनुमति देती है। डा० आलटेकर के मत मे मौर्य काल मे भी लडकियो के विवाह १४ १५ वर्ष की आयु मे होते थे।

प्रथम शताब्दी के बाद कई कारणों से यह धारणा दृढ होती गई कि कन्या का विवाह रजो दर्शन से पूर्व कर देना चाहिए। याज्ञवल्क्य ने बाल विवाह के इस मत को आगे बढ़ाया। फिर जब भारत पर मुसलमानों के आक्रमण से हिंदू लडकियों की सुरक्षा की समस्या सामने आई तो पर्दा प्रथा सती प्रथा, बाल विवाह, अशिक्षा जैसी कुरीतियों को बल मिला। लडकों के बाल विवाह के पीछे संयुक्त परिवार प्रणाली का संरक्षण भी एक मुख्य कारण था। देश की आर्थिक स्थिति इतनी ठीक अवश्य थी कि संयुक्त परिवार में बेरोजगार लडके के लिए अपनी पत्नी और बच्चों के पालन पोषण की चिंता न हो। दहेज प्रथा के कारण भी वर की उपलब्धि पर कन्या को जल्दी विवाह देने में आर्थिक बचत और दायित्व मुक्ति मानी गई।

पति पत्नी के परस्पर सहज अनुकूलन यौन सुरक्षा, देर से विवाह की अपेक्षा चारित्रिक स्खलन की कम संभावना आदि बाल विवाह के कुछ लाभ होने पर भी इसके हानिकर प्रभाव अधिक रहे—शिक्षा में बाधा, निर्बल संतान, छोटी आयु में मां बनने के कारण माता की रुग्णता और मातृ व शिशु मृत्यु दर में वृद्धि, अधिक संतान से गरीबी और जनसंख्या में वृद्धि की समस्या, बाल विधवाओं की समस्या आदि। इसके अलावा छोटी छोटी बच्चियों पर ससुराल के कडे बंधन, सासों की ज्यादती और मनमानी, विधवा विवाह निषेध से आजीवन लंबा कष्टप्रद जीवन यौन दमन के अभाव में वेश्या वृत्ति का ही विकल्प, कुछ स्थितियों में बाल विधवाओं का परित्याग, तीर्थ वास आदि नारी शोषण के ये नमूने भी बाल विवाह के कुपरिणाम रहे। इसीलिए नवजागरण काल में इस प्रथा के विरुद्ध आवाज उठाई गई।

सुधारक प्रयत्न सर्वप्रथम १८५६ में ईश्वरचंद्र विद्यासागर ने बाल विवाह प्रथा से उपजे विधवा विवाह को वैध कराया। १८६० में एक अधिनियम पारित कर विवाह की उम्र १० वर्ष स्वीकृत की गई। इसके ३० वर्ष बाद पी० एम० मालाबारी पत्रकार ने इस संबंध में एक पुस्तिका लिख कर एक बड़ा आंदोलन उठा दिया। फलस्वरूप १८९१ में एक अधिनियम पारित कर विवाह आयु १३ वर्ष कर दी गई। १९२५-२८ में यह प्रश्न एक बार फिर उठा। जांच के लिए एक समिति बैठाई गई। समिति की रिपोर्ट प्रकाशित होने के बाद राय हरविलास शारदा ने १९२६ में एक विधेयक प्रस्तुत किया, जो १९३१ के *'शारदा एक्ट' या बाल विवाह निरोधक अधिनियम* के नाम से प्रसिद्ध है। इस अधिनियम में विवाह आयु लडकों के लिए १८ वर्ष और लडकियों के लिए १४ वर्ष निर्धारित की गई थी। लेकिन ग्रामीण क्षेत्रों में विशेष रूप में राजस्थान में अभी हाल तक बहुत सी गोद की बच्चियां के भी विवाह होते रहे हैं।

धीरे धीरे शिक्षा और जागृति के साथ निश्चित ही ये रूढियां दूर हो रही हैं। पर अभी भी कानूनी रोक का असर गहरा नहीं हो पाया है, जबकि इधर बढ़ती जनसंख्या के समाधान के लिए और स्त्रियों को शिक्षण प्रशिक्षण के अधिक अवसर देने के लिए उपरोक्त अधिनियम में संशोधन कर विवाह-आयु दो बार बढ़ाई जा चुकी है। आजकल कानूनी विवाह सीमा लडकों के लिए २१ वर्ष और लडकियों के लिए १८ वर्ष निर्धारित है। पर बाल विवाहों पर व्यावहारिक रोक तभी लगेगी जब सभी विवाहों को

रजिस्टड करान का प्रस्तावित कानून पास हो सकेगा।

उल्लेखनीय है कि अधिकाश जनजातीय समुदायो म बाल विवाह नही होता, न ही उनम यौन नैतिकता के कडे नियमो का पालन किया जाता है। फिर भी कुछ रिपोर्टों के अनुसार, उन अनुसूचित जातियो म लडकियो के विवाह छोटी उम्र म कर देना आवश्यक माना गया है, जहा आर्थिक शक्ति रखन वाल उच्च वर्गों के पुरुषो द्वारा उनकी लडकियो का यौन शोषण होता है।

हिन्दू विधवा विवाह निषेध यद्यपि सातवी शताब्दी से हिन्दू विवाह पर लगे प्रतिबधो को १८वी शताब्दी म कानून द्वारा हटा लिया गया था, लेकिन इसे सामाजिक मान्यता बीसवी शताब्दी के मध्य तक प्राय नही मिली। सन् १९२२ की जनगणना म विधवाओ की सख्या २,२० ००,००० दज है, १९७१की जनगणना मे२,३०,००,०००। प्रति हजार विधुरा के पीछे २७७२ विधवाओं के अनुपात से विद्यमान इस सख्या स पता चलता है कि बच्चो की जिम्मेदारी व सामाजिक भय—इन दोनो कारणो स आज भी विधवा विवाह प्रथा आम नहीहो पाई है। यद्यपि, इस शताब्दी के उत्तराध मे उनके प्रति सामाजिक मनोवृत्ति मे काफी परिवतन आया है फिर भी कहा जा सकता है कि अब भी जब कि ये विवाह अपवाद नही रहे विधवाओ के पुनर्विवाह को समाज म अच्छी नजरो स नही देखा जाता।

वैदिक साहित्य के अवलोकन स स्पष्ट होता है कि उस समय विधवा विवाह प्रथा प्रचलित थी। अथववेद म विधवा स्त्री के विवाह का उल्लेख है। ईसा के ५०० वष पूव से लेकर १०० वष बाद तक भी धम सूत्रो ने इसकी अनुमति दी है। बाद म भी वशिष्ठ कौटिल्य, पाराशर और बोधायन न विधवा विवाह को वैध घोषित कर उसको स्वीकृति दी है मनु न नही। ईसा के दो सौ वष बाद से विधवा विवाह पर प्रतिबध लगने शुरू हुए छ सौ वष बाद तक विधवा विवाह विरोध प्रबल हो गया और एक हजार वष बाद तो बाल विधवाओ के विवाह का भी विरोध किया जाने लगा।

अभी कुछ वष पूव तक भी हमारे हिन्दू समाज म विधवाओ की क्या स्थिति थी, यह किसी से छिपी नही है। बगाल म बाल विधवाओ को काशी लाकर छोड देना, दक्षिण भारत और महाराष्ट्र मे विधवाओ का सिर मुडा कर उनका सौदय छीन लेना और लगभग पूरे भारत म उन्हे बिना आभूषण बिना शृगार, बिना रगीन वस्त्र तक धारण किए, एकदम सादे कही कही कुरूप वेश मे रहन के लिए मजबूरकरना आम प्रथा रही ह। यही नही पारिवारिक मागलिक अवसरो पर भी उनकी उपस्थिति को अप शकुन मान उन्हें वहा से दूर रखा जाता था। ऐसे समय उपस्थित रहने या किसी चीज का छूकर अपवित्र (?) कर दिए जाने पर उन्हे सावजनिक अपमान और ताडना का शिकार भी होना पडता था।

बगाल बिहार मद्रास म तो उनकी स्थिति बहुत दयनीय रही। उनके अच्छा खाने पीने पर भी प्रतिबध रहा—अधविश्वासी परिवारो मे उनके हाथ का छुआ खाने पर भी। यदि विधवा के कोई सतान रही, वह भी पुत्र तो लोग उसे फिर भी कुछ सम्मान देते थे नि सतान के सुख दुख की चिता करने वाला कोई न था। उसके लिए एक

ही माग था रूखा-सूखा खाये, फटा पुराना पहने और अपमान सहती हुई दासी बनकर श्वसुर-गृह का काम करे। य सब यातनाए इसलिए कि उसके पाप-कर्मों के कारण उसक पति की मृत्यु हुई। उसके लिए सहानुभूति नाम की कोई चीज न थी। विधवा जीवन पर इन कठोर प्रतिबधो के कारण ही अनक स्त्रिया न यह यातनामय जीवन व्यतीत करने की अपेक्षा पति के साथ जल कर मर जाना श्रेयस्कर समझा और इस तरह मरने को सामाजिक सराहना मिलने पर 'सती प्रथा प्रचलित हो गई।

प्राकृतिक और मनोवैज्ञानिक नियम से जब घर स कोई सहानुभूति नही मिलती तो कष्टो स तग व्यक्ति म बाहर स सहानुभूति की माग जोर पकडती है। इस माग ने शारीरिक माग के साथ मिलकर चोरी छिपे अवध सबधो को जन्म दिया। लेकिन ये अवध किसी तरह खुल जाने पर उन्हे और अधिक नारकीय जीवन का अभिशाप ढोना पडता था। तब उनक सामने आत्महत्या, अवैध भ्रूण हत्या और पैदा होन वाले बच्चो को इधर-उधर नालियो, गटरो या अनाथालयो म फेंक दिए जाने के अलावा और कोई चारा न था। नवजागरण काल स लेकर आधुनिक काल तक के हमारे साहित्य म इस समस्या का मार्मिक चित्रण यत्र-तत्र बिखरा पडा है।

सुधारकों के प्रयास हिन्दू विधवाओ की इस दशा को देख कर देश क महान शिक्षाशास्त्री और सुधारक ईश्वरचन्द्र विद्यासागर का हृदय द्रवित हो उठा। उनके साहस भरे सद्प्रयत्नो के फलस्वरूप १८५६ म विधवा विवाह का अधिनियम पारित हुआ। आचाय कर्वे, पडिता रमा बाई, रानाडे और मालाबारी आदि के प्रयत्नो से बबई प्रान्त म, दक्षिण भारत म व अन्य जगहो पर विधवा विवाह को प्रचलित करने के लिए क्रान्तिकारी कदम उठाये गए। आय समाज ने भी इसके देशव्यापी प्रचार म बहुत योग-दान दिया है। अनक समाज-सुधारको न विधवाओ को आत्म निभर बनाने के लिए विधवा आश्रम और शिक्षा सदन खोले। लेकिन कालान्तर म इनमभी असामाजिक तत्त्वो के प्रवेश कर जाने म इनम से कई व्यभिचार के अड्डे बन गए।

सती-प्रथा

सती-प्रथा का प्रारभ कब हुआ, इस बारे मे कोई निश्चित प्रमाण नही मिलते। पर इसका उल्लेख कही कही प्राचीन हिंदू ग्रथो म है। वेदकालीन सभ्यता मे सती प्रथा की प्रेरक दुरन्त स्थितिया नही थी। अत किसी भी वैदिक ऋचा म सती का उल्लेख नहीं मिलता। सती प्रथा उन्मूलन बिल के समय यह विवाद उठा था कि इस वैदिक मान्यता प्राप्त थी या नही? 'इमानारीर विधवा सपत्नीरा जनेन सर्पिणा सविशन्तु। अनश्रवोडनमीपा सुरत्ना अरोह तु जनयो यानिमग्रे'—इस ऋग्वेदीय ऋचा को अक्सर सती प्रथा के पक्ष म उद्धृत किया जाता है। पर डा० आल्टेकर की पुस्तक 'दि पोजीशन आफ वीमन इन हिन्दू सिविलाइजशन म इस ऋचा की व्याख्या की गई है—इस म प्रत्यक्ष रूपसे नारी क जल मरने का उल्लेख नहीहै। इसमे इतना ही सकेत मिलता है कि सधवा स्त्रिया शव के सस्कार के लिए जाती थी। अथववेद के अनुसार भी एक रीति थी, जिसके अनुसार विधवा को पति की चिता पर चढा कर उसमे धनधान्य और सतति स पर्ि

जीवन बिताने के लिए चिता से उतर आने की कुटुम्बी जनों की ओर से सामूहिक प्रार्थना की जाती थी। विधवा पुनर्विवाह के प्रमाण भी इन ग्रन्थों में मिलते हैं तो वैदिक काल में विधवा के लिए सती होने के कारण भी न थे।

बौद्ध साहित्य में भी इसका उल्लेख नहीं है। तब यदि सती प्रथा रही होती तो पशुबलि के भी विरोधी और अहिंसा पर बल देने वाले महात्मा बुद्ध इस नर बलि का विरोध क्योंकर न करते। बौद्धकाल में विधवाओं को संघ में या संघ के आदेशानुसार बाहर सेवा कार्य मिल जाता था। कौटिल्य ने अर्थशास्त्र और यूनानी इतिहासकार ने भी इसका उल्लेख नहीं किया है। पर महाभारत में राजा पांडु की पत्नी माद्री और रामायण में मेघनाथ की पत्नी सुलोचना के सती होने का उल्लेख है। इन इक्का दुक्का उदाहरणों से लगता है कि उत्तरवैदिक काल से स्वेच्छया सती होने का कुछ चलन शुरू हो गया होगा। ये छिटपुट उदाहरण ३०० ईसापूर्व से मिलने लगते हैं पर इनका विस्तार मध्यकालीन स्थितियों की ही देन है।

विशेष रूप से मुस्लिम आक्रमण में लाज बचाने के लिए वीर राजपूत पत्नियां सती होने लगीं। राजपूती परंपरा में हार की संभावना होने पर भी दुश्मन को पीठ दिखाना कायरता व शर्मिंदगी की निशानी समझी जाती थी तो उन्हें अपनी वीरता सिद्ध करने के लिए प्राणों पर खेल जाना होता था। इस सशक्त परंपरा में पत्नियां तक उन्हें पीठ दिखाने के बजाय युद्धभूमि में शहीद होने की ही प्रेरणा देती थीं। ऐसी वीर पत्नियों ने स्वयं भी दुश्मन के हाथ पड़ने के बजाय व्यक्तिगत रूप से सती होने और दुश्मन की फौज के हाथों सामूहिक बलात्कार से बचने के लिए सामूहिक रूप से 'जौहर' दिखाने में ही अपनी आन निभाई। इस तरह मध्यकाल में सती प्रथा का प्रसार नारी की असुरक्षित स्थितियों की ही देन कहा जा सकता है। बंगाल में चूंकि विधवा और बाल विधवा समस्या अपेक्षाकृत अधिक रही, सती प्रथा भी बंगाल में अधिक फैली—राजस्थान से भी ज्यादा। शायद इसीलिए इसके उन्मूलन का आन्दोलन भी बंगाल से ही उठा।

इस तरह जिन कारणों से बाल विवाह, स्त्री शिक्षा निषेध जैसी प्रथाएं प्रचलित हुईं सती प्रथा भी उन्हीं कारणों से फैली और उन्हीं प्रदेशों में अधिक फैली जहां स्त्री निर्योग्यताएं अधिक उग्र रूप में सामने लाई गईं और जहां उनकी असुरक्षा बढ़ी। आज भी सती प्रथा के अलावा भी देखें तो जहां स्त्री द्वारा स्वयं लाज बचाने का प्रश्न आता है वहां लुटने के बजाय ऊंचाई से छलांग लगा कर कुएं में गिरकर, जल कर या जहर पी कर मर जाना अच्छा समझा जाता है। कलकत्ता का रवीन्द्र सरोवर कांड दिल्ली में नर्सों की चलती बस से छलांग जैसी वारदातें यदाकदा घटती ही रहती हैं जो इस भावना की पुष्टि करती हैं। अतः यह असुरक्षा इज्जत पर हमले के कारण हो या असुरक्षित व अपमानजनक स्थितियों में जीने के कारण आत्महत्याओं को बढ़ावा देती है। सती प्रथा भी आत्महत्या का ही एक रूप था तो इसे भी बढ़ावा दिया विदेशी आक्रमणों के अलावा जाति प्रथा कुलीनता की धारणा धार्मिक अंधविश्वासों और अपमानजनक स्त्री निर्योग्यताओं ने। विशेष रूप से विधवाओं की तत्कालीन समाज में जो स्थिति थी, उस जीवन के बजाय वे मर जाना बेहतर समझ सकती थीं।

फिर जब इस मरन को गौरवान्वित किया जाने लगा तो सती प्रथा को प्रोत्साहन मिलना स्वाभाविक ही था। पर कोई परपरा जब रूढ़ि बन जाती है तो क्रूरतम रूप भी अख्तियार कर सकती है। जीते जी मरना सभी के लिए आसान नहीं होता। निष्ठा रहने पर भी नहीं। इसलिए समाज भय से पहले तयार होकर भी कुछ स्त्रियां जब समय पर इनकार करने लगीं तो उन्हें जबरदस्ती चिता मे धकेला जाने लगा या मादक चीजें खिलाकर राजी किया जाने लगा। बहुत बार जब 'स्त्री बचाओ बचाओ कह कर चिल्लाने लगती तो चारो ओर खड़ी भीड़ मे ढोल नगाडे बजाकर उस आवाज को दबा दिया जाता था। साथ ही सती की जय बोलते हुए लोग उसे मानसिक रूप से तयार करते रहते थे कि कहीं वह निकल न भागे। इस तरह कालान्तर मे इस स्वेच्छिक दाह को क्रूर हत्या मे भी बदला जाने लगा।

उन्नीसवी शताब्दी के आरभ म ऐसी क्रूरता की चरम सीमा पर बगाल मे राजा राममोहन राय न सती प्रथा के विरुद्ध अभियान छेडा। तब सन १८२९ म लार्ड विलियम बण्टिक न इस प्रथा को एक अधिनियम मे समाप्त किया। हस्तक्षेपनीय व दडनीय अपराध घोषित किए जान पर इस पर कडी कानूनी रोक लगी। फिर १८५६ के विधवा पुनर्विवाह बिल के पास हो जान पर सामाजिक रोक लगान मे भी सहायता मिली। तब भी यह बिल्कुल बद तो नही हुई लकिन धीरे धीरे शैक्षणिक जागृति और सुधार आन्दोलनो द्वारा अब लगभग समाप्तप्राय है। फिर भी सस्कारो की गहरी जडें लिए सामाजिक मन पूरी तरह नही बदला जा सकता। इसीलिए पुलिस की नजर बचा कर छिटपुट घटनाए कभी कभी घट ही जाती हैं क्योकि सती मदिर और उनकी पूजा परपरा से जुडी भावना अभी भी इसे श्रद्धालु मना म जीवित रखे हुए है। दाह स्थलो पर सती-मेले उसी प्रकार भरते रहते हैं। पर इधर १९८० म कई स्थानो पर सती होन की घटनाए पुन प्रकाश म आई हैं और नय मदिर भी बन हैं। बीसवी सदी के नौवें दशक म प्रवेश के समय यह बात अजीब लग सकती है। पर गावो म अन्य कई रूपा म भी नव सामन्तवाद के सिर उठाने के उदाहरण देखत हुए यह आशका बलवती होती है कि कही मध्यकालीन इतिहास को दुहराने और नारी के प्रगति पथ पर बढते पैरा को फिर पीछे लौटाने की शुरुआत तो नही हो रही ?

दिसबर, १९८० म राजधानी दिल्ली म चार शताब्दी पूव झुझुनू की राणी सती के मदिर की प्रतिष्ठापनापर उठा विवाद इस आशका के फन उठाने की ही प्रतिक्रिया है। एक ओर एक सामाजिक रूढिको गौरवान्वित करने के प्रयत्न का विभिन्न महिला सस्थाओ द्वारा विरोध, दूसरी ओर धार्मिक मामला मे सरकारी हस्तक्षेप का विरोध। इसे लेकर सती मदिर काड ने तूल पकडा। सस्थाओ द्वारा सम्मिलित विरोधी प्रदशनो और प्रधानमन्त्री को ज्ञापन दिए जान पर मदिर निर्माण अस्थायी रूप से रोक दिया गया। लेकिन मूल प्रश्न लौटकर वहा आता है कि आज इस युग मे य लौट की प्रवत्तिया क्यो सिर उठा रही हैं ? क्या फिर से बढती हुई नारी असुरक्षा के कारण ही तो नही ?

के साथ कर दिया जाता था।

उन दिनों दक्षिण के चोल राजाओं का व्यापार विदेशों तक फैला हुआ था। हो सकता है तजौर और मीनाक्षी के मंदिरों में देवदासियों के लिए वैसी कोठरियां बनाने की प्रेरणा सिकंदरिया से ही ली गई हो? भारत की देवदासी प्रथा पर सिकंदरिया की इस प्रथा का कितना प्रभाव पड़ा, यह एक अलग शोध का विषय है।

पुर्तगालियों का उपनिवेश गोआ भी देवदासी प्रथा से अछूता नहीं है। गोआ के मगेश मंदिर में आज भी एक देवदासी रहती है। तमिलनाडू में तजौर, कांचीपुरम, चिदम्बरम, मदुरै, मीनाक्षी आदि सैकड़ों भव्य मंदिरों में इस प्रथा को प्रश्रय मिला। केरल, आन्ध्र, मैसूर के मंदिरों में भी। मीनाक्षी मंदिर में भी तजौर के वृहदेश्वर मंदिर की तरह देवदासियों की कोठरियों का संदर्भ अभिलेख में मिलता है।

विदेशों में तो देवदासियां बहुत पहले से ही भोग विलास का साधन बन चुकी थीं। धर्म प्रधान प्राचीन भारत की देव नर्तकी प्रथा में किसी अनैतिकता को प्रवेश नहीं मिल पाया था। लेकिन मध्यकाल में अन्य क्षेत्रों में आए सांस्कृतिक ह्रास के साथ ही यहां भी राजाओं, सामंतों और पुजारियों ने मिलकर इस प्रथा में व्यभिचार का बीज बोया। देव-नर्तकियां देवदासियां बनीं और फिर 'देवदासी' शब्द 'वेश्या' का पर्याय बन गया।

इस तरह देवदासी प्रथा हमारे यहां कब शुरू हुई, पश्चिमोत्तर भारत से मिटकर पूर्वोत्तर भारत और दक्षिण भारत में कैसे सिमटी, इसका कोई प्रामाणिक इतिहास नहीं मिलता। केवल इतना कहा जा सकता है कि यह प्रथा हमारे यहां शताब्दियों तक अस्तित्व में रही है। भविष्य पुराण में सात तरह की देवदासियों का जिक्र है। मध्ययुग में तो यह प्रथा इतनी बढ़ी कि कुछ जातियों में घर की एक लड़की देवी देवता को अर्पित की जाने लगी। धर्म व ईश्वर के नाम पर बचपन से ही लड़कियों को वेश्या वर्ग में शामिल करने के लिए तैयार किया जाता था। आज भी सीमित रूप में यह प्रथा विद्यमान है। उड़ीसा में इन्हें महारिस' और गोआ में 'भावीण' नाम दिया गया था।

कानूनी प्रतिबंध इस कुप्रथा का अंत करने का पहला प्रयास मैसूर नरेश ने किया। जांच के लिए बनाई गई शास्त्रीय पंडितों की एक कमेटी ने निर्णय दिया कि हिंदू शास्त्र में इस प्रथा का कोई आधार नहीं है। तब मैसूर सरकार ने १९१० में इस पर कानूनी रोक लगा दी। श्रीमती मुत्तुलक्ष्मी रेड्डी के प्रयत्नों से १९२२ में मद्रास में देवदासी प्रथा उन्मूलन बिल पास हो गया। १९२४ में बाबा साहिब अम्बेडकर ने भी इस प्रथा के खिलाफ आवाज उठाई। १९३० में गोआ की पुर्तगाली सरकार ने, १९३२ में केरल, उत्तरप्रदेश आदि राज्यों तथा कुछ रियासतों में भी देवदासी प्रथा निरोधक कानून बनाए गए। बम्बई सरकार ने भी देवदासी संरक्षण कानून पास किया। अमृतलाल नागर के उपन्यास सुहाग के नूपुर में देवदासियों की पीड़ा को ही अभिव्यक्ति दी गई है।

इनकी आधुनिक व्यथा-कथा इन सब बातों के प्रभाव व कानूनबंदी होने पर भी विगत ८० सालों में, एक अपवाद छोड़कर इनके दलालों पर कोई मुकदमा नहीं चला। धीरे धीरे सामाजिक जागृति से यह प्रथा अब स्वयं ही मिटती जा रही है। लेकिन कानून इसे पूरी तरह बंद करने में असफल रहा है। महात्मा फुले प्रतिष्ठान, लीग ऑफ सोशल

पूरी तरह विलीन नही हुई हैं, कानूनी भय से मिट कर धम-भीरु भारतीय मन की सस्कारिता म कही गहरे दबी हुई है और खुदाई के प्रयत्नो से बाहर आ सकती हैं। सामाजिक असुरक्षा की नई उभरती स्थितिया मे साम ती सोच से जुडी ऐसी सभी सभावनाआ की आशका निर्मूल नही है।

वधू-मूल्य और वर-मूल्य प्रथा

वधू की कीमत चुकान का रिवाज जन जातिश मे और गैर जन जाति के निम्न व निम्न मध्य वर्गो म ही अधिकतर पाया जाता है। यह अदायगी स्त्री पर अधिकार प्राप्त करने के बदले मे इसलिए की जाती है कि उन समुदाया मे लडकिया उत्पादक वग हैं, परिवार पर भार नही। घर के एक उत्पादक कायकर्ता के चले जाने की क्षति पूर्ति इसका सैद्धान्तिक पक्ष है।

इस प्रथा म पत्नी के पक्ष म एक अच्छी बात यह थी कि पति द्वारा दुर्व्यवहार करने पर हर्जाना देकर पत्नी उसे छोड सकती थी। फिर भी इस प्रथा का दुरुपयोग किया गया। पति द्वारा दूसरे पुरुप से हर्जाना लेकर स्त्री उसे सौंपी जाने लगी, तो इस तरह एक स्त्री कई बार खरीदे बेचे जाने की वस्तु बन गई। हिमाचल प्रदेश मे 'रीत' और मध्यप्रदेश म नतरा जैसी प्रथाए इसी का कुपरिणाम थी। इन कुप्रथाआ के विरुद्ध बाद म काफी रोप जागत हुआ और अब ये समाप्तप्राय है।

वधू मूल्य प्रथा के कुछ अ य कुपरिणाम भी सामने आए। चूकि वधू मूल्य देकर पत्नी खरीदी जाती है तो पति उसका आदर भी नही करता, उसके साथ खरीदी दासी जैसा व्यवहार करता है। यही कारण है कि निम्न वर्गो मे लगभग सभी पत्निया परिवार की कमाऊ सदस्य होन पर भी पति के हाथा पिटती रहती हैं। गरीब समुदायो म वधू मूल्य प्रथा उनकी ऋणग्रस्तता का कारण भी बनी। तो इस वजह से भी पत्नी को दुर्व्यवहार मिला। यही नही, महाजनो को पैसा चुकाने म असमथ हो ऋण मुक्ति के एवज म पत्नियो को उनके पास भेजा जाने लगा और यह प्रथा स्त्रियो के यौन शोषण का एक माध्यम बन गई।

आज भी शहरी पिछडी बस्तिया, ग्रामा और अचला मे महाजनो और ठेकेदारो के ऋण से ग्रस्त खदान व बिल्डिंग मजदूरो खेतिहर मजदूरा और अ य दलित वर्गो म स्त्रिया का इस रूप मे यौन शोषण आम बात है। फिर दलित वर्गो के सिर उठान पर उन पर कई तरह से जुल्म ढाए जात हैं जिनम व्यक्तिगत और सामूहिक बलात्कार की दुर्दांत वारदातें भी शामिल हैं। इन्हे इस कुप्रथा के कलक रूप म भी देखा जाना चाहिए।

वर-मूल्य या दहेज प्रथा वर मू य प्रथा अधिकतर उच्च व मध्यवर्गो म ही प्रचलित रही है। पर वधू मूल्य प्रथा की उपराक्त वर्णित परिणति दखकर मध्य वर्गो के समकक्ष आन क लिए निम्न वग भी अब वधू मूल्य प्रथा का छोडकर मध्य और उच्च वर्गो की तरह वर मूल्य प्रथा को अपनान लग हैं। इसे वे अपनी प्रतिष्ठा की बात मानते है।

वर मू य प्रथा या दहज प्रथा के विभिन्न प्रदशो म विभिन्न रूप दखन को मिले हैं। सैद्धातिक रूप म इसकी परिभाषा गलत नही थी। वधू के पिता या उसके निकट

सबधी अपनी लडकी से प्रेम के कारण स्वेच्छा से उसे विवाह के समय कुछ द्रव्य उपहार मे देते थे, वर पक्ष के दबाव मे या अनिच्छा से नही। यह हमारा शास्त्रीय विधान भी था। हिन्दू विवाह की आठ रीतिया म से 'ब्राह्म विवाह' ही सामान्य उच्च वर्गो म प्रच लित हुआ। उसमे कन्या पक्ष वालो द्वारा जामाता को विवाह के अवसर पर कुछ द्रव्य दिए जाने का प्रावधान है। धनाढय लोगो म इस प्रावधान के अन्तगत बढ-चढकर लेना देना शुरू हो गया। आय सस्कृति मे पितसत्तात्मक परिवार होन से सम्पत्ति का अधिकारी पुत्र ही होता था तो लडकी का हिस्सा आगे चलकर दहेज मान लिया गया।

लेकिन देवदासी प्रथा की तरह दहेज की कुरीति भी विदेशी देन है। पश्चिमेशियाई आक्रमणो के बाद फारसी शब्द 'जहेज' ने कब हमारे शास्त्रीय विधान के प्रेमपूण विवाहोपहार (जो केवल ४० ५० बप पूव तक हमारे गावो मे सवा रुपया व गुड की ढेली जैसे प्रतीक रूप म भी स्वीकाय रहा है) के बदले सौदेबाजी या वर मूल्य के 'दहेज' का रूप ले लिया, इस बात को उन आतककारी स्थितियो मे स्पष्ट खोज पाना सभव नही है। इसे केवल उन प्रभावो म लडकी की सुरक्षा की दृष्टि से उसे शीघ्र योग्य वर खोजकर ब्याह देने की चिंता या बाल विवाह और सती प्रथा, जौहर प्रथा जसी रीतियो के साथ जोडकर ही दखा जा सकता है।

मध्यकाल मे लडके की कुलीनता और वीरता के आधार पर जब उसे अपन जामाता के रूप म प्राप्त करने की होड चली तो यह वर मूल्य दुगुण बन गया। लडकी कम आयु की होने के कारण इसका विरोध करने मे असमथ थी और माता-पिता पर पूरी तरह आश्रित होने के कारण उनकी इच्छा के आगे आसानी स झुक जाती थी। इस तरह यह प्रथा पहले मध्यकाल म वीर राजपूत दामाद प्राप्त करन की होड मे राजपूताना म पनपी। फिर जाति-प्रथा के प्रभाव म आभिजात्य कुल के लडको की सीमित सख्या के कारण बगाल म 'कुलीन प्रथा की विकृति के रूप म सामने आई। अनुलोम विवाह' और अन्तर्जातीय विवाहो का लाप होने के कारण अपनी जाति मे ही योग्य वर खोजने की बढती प्रवृत्ति न फिर इस सभी जगह पहुचा दिया।

आधुनिक रूप आज दहेज के बारे मे विचित्र प्रादशिक विभिन्नताए देखन को मिलती हैं। कही इस वधू को दिया जान वाला वह उपहार कहत है जो पहले ही तय कर लिया जाता ह पर जिस उसकी सपत्ति नही माना जाता। कही इस वर को विवाह से पूव और वर वधू का विवाह के समय दिया जाने वाला उपहार कहा जाता है। कही इस लडकी के ससुराल वालो को दिया जाने वाला उपहार ही मानते है जिस पर लडकी का कोई हक नही समझा जाता। इस तरह थोडे थोडे रिवाज भेद के साथ यह प्रथा भारत म लगभग सभी उच्च मध्य व निम्न मध्य वर्गो म मिलती है। मुस्लिम समुदाय म मेहर' के रूप म पति की ओर से 'स्त्री धन की परपरा के बावजूद दहेज की भी स्वीकृति है।

उत्तराधिकार के नये कानून पिता की सम्पत्ति म लडकी का बराबर हक मान लिए जान के बावजूद कुछ लोग इसे आज भी वधू के मायके स मिली पिता की मृत्यु पूव विरासत मानत है, तो कुछ आपात स्थिति म लडकी के लिए एक प्रकार का बीमा समझत हैं। लेकिन आजकल अधिकतर दहेज की मान्यता वर-वधू को अपना नया घर बसान के लिए

दिय जाने वाले सामान के रूप मे ही है।

परस्पर विरोधी तक जो भी हो, यह एक वास्तविकता है कि लडकी के लिए उपयुक्त वर खोजने म दहज को आज एक आवश्यक साधन माना जाने लगा है, ताकि उसके सहारे वह ससुराल म इज्जत मान से जी सके और अपने समाज म प्रचलित जीवन स्तर का निर्वाह कर सके। इसी स्तर के अनुसार दहज लेन देने म धन की मात्रा कुछ सैकडा से लेकर लाखा रुपयो तक और कम अधिक वस्त्रा आभूषणो से लेकर सस्त महगे फरनीचर, रफ्रिजरेटर, स्कूटर कार, एयर कडीशनर तक होती है। ऊची स्थिति मे अधिकतर वच्चो की सख्या सीमित होती है और धन की मात्रा अधिक, तो उनके इस तक मे भी जान है कि 'हम अपने बच्चा को नही देंगे तो धन कमात जुटाते किसलिए हैं?' 'उच्चशिक्षित महिलाओ की इस विषय पर हुई गोष्ठियोमे भी मुझे दहज के पक्ष मे अनक तक सुनने को मिले। जैसे दहेज खत्म करके' 'स्त्री धन' खत्म किया जा रहा है तो इसम स्त्रियो का ही नुकसान है। यदि उत्तराधिकारी कानून म पिता की जायदाद म लडकी का बराबर हक उस भाइयो द्वारा नही दिया जा रहा, मागन पर भाई भाई के बीच वाले झगडेअब भाई बहन और जीजा साले क बीच भी शुरू हा गए है और गावा मे जमीन के छोट टुकडा म बट जान का खतरा है आदि व्यावहारिक तक देकर लडकी को उसके हक स वचित किया जा रहा है तो एसी स्थिति मे दहज बद करवाना क्या लडकी के हित मे जा सकेगा?' 'विवाह के बाद युवक-युवती का नया घर दहज के सामान से ही तो बनता है। यह बद होगा तो क्या वे लोग सारा सामान स्वय खरीदकर अपना नया घर जमा सकेंगे? यदि नही तो क्या बहू इसी कारण ससुराल पर देर तक आश्रित नही रहेगी या हर स्थिति मे उनके साथ ही रहन के लिए बाध्य नही होगी? और तब क्या उसका शोषण और अधिक नही होगा? उसके साथ दुर्व्यवहार की घटनाओ म और वृद्धि नही होगी आदि? य तक भी अपने आप मे कम वजनी नही हैं। फिर लोगो की आर्थिक स्थिति की इतनी भारी विषमता को कम किए बिना क्या इसकी सीमा निश्चित करना सभव है? है तो किस आधार पर?

यदि सीमा न बाधें तो जो लोग अधिक खच नही कर सकते उनकी लडकियो की शादी कम होगी? कानून सीमाबदी का हो या दहजबदी का, प्रभावशाली व्यक्ति उसम से अपनी राह निकाल ही लेते हैं। मुश्किल तो गरीबा के लिए होती है जिन्हें अधिक क्या थोडा जुटान म भी कजदार होना पडता है। कई बार घरबार भी बचना पडता है। अनेक माता पिता तो लडकी की शादी के बाद बर्बाद ही हो जाते हैं। कुछ स्थितिया म तो व दहज क्या दस बारातिया को खाना खिलाने लायक भी नही होत। दूसरी ओर दहज म हजारो का व्यय अब लाखा म पहुचने लगा है। देखा-देखी सभी इस लालच म फस जाते है कि लडकी वही से लें जहा से उनकी अपेक्षा पूरी हो। इसी अपेक्षा से प्राय लडके की शादी लडकी स पहले कर दी जाती है कि बहू का दहेज उसकी ननद की शादी म दिया जा सके। लडका आइ० ए० एस०, इजीनियर या डाक्टर है अथवा विदेश-सवा म है ता एक लाख के दहेज के साथ कार व अन्य महगे सामाना की आशा भी लगाई जान लगी है।

एसे कुछ अविवाहित युवको म वातचीत करने पर उनके उत्तर थे— दहेज नही लेंगे तो 'स्टेटस मेन्टेन' कैसे करेंगे ?' 'वेतन की वचत से तो हम कार, स्कूटर खरीदने स रहे, ससुर नही देगा तो क्या वसो पर चलेंगे ? 'पढाई मे जो इतना कर्जा मा-वाप ने सिर हो गया है उस क्या अपनी जब स देंगे ? अनेक माता पिता ने भी इसी तरह की मजबूरिया वताइ— वटी के व्याह की चिता वटे के पढाई के लिए उठाए गए कज की अदायगी इसका निर्धारण कैस होगा ?' 'जव लडकी के दहेज मे इतना खच किया है तो अब लें क्यो नही ?' 'भई, देना तो अपनी लडकी के लिए ही है। उसके सुख के लिए, ससुराल मे उसकी इज्जत के लिए ही तो देना है ! फिर जब दे सकते हैं तो क्यो न दें ? आखिर वच्चो के लिए ही तो सब कुछ है पहले दें या पीछे !' 'अजी छोडिए, ये सब बातें आपके अखबार वाला के लिए है दहेज वन्द नही होगा।'

स्वय लडकिया स वात चलाने पर भी आपको सभी तरह के उत्तर मिलेंगे। कुछ लडकिया सीधे-सीधे कहेगी, क्या न लें क्या हम अपना घर नही बनाना है।' 'पापा खच कर सकते है तो क्यो न करें हा, अपनी हैसियत से वाहर खच करने के पक्ष म मैं नही हू। 'मैं तो नौकरी ही अपना दहेज जुटाने के लिए कर रही हू। विवाह के बाद नौकरी करन का मेरा कोई इरादा नही है।' अधिकाश लडकियो का इस मामले म चुप लगा जाना भी उसकी मौन सहमति ही समझना चाहिए क्योकि लेना किस बुरा लगता है ? फिर जिस लेने के साथ ससुर गह मे सिर ऊचा उठाकर चलने की बात जुडी हो उसे बुरा कैसे कहा जा सकता है ? इसीलिए बहुत सी लडकिया ऊपर से प्रगतिशील दिखते हुए भी वक्त पर अपना लालच या स्वाथ छोड नही पाती। कुछ ही युवतिया साहस दिखाकर दहेज का विरोध करती हैं या इस विरोध मे शादी से इन्कार करती है। युवको का भी यह हाल है। माता पिता की मर्जी स शादी करें या नही दहेज के मसले पर माता पिता की मर्जी बीच म लाकर वे स्वय अपनी जिम्मेदारी स कतरा कर निकल जात है। अनेक युवक युवतिया को कालेज की गोष्ठियो म दहज विरोधी तेज तर्रार भाषण देने और दहेज न लेने सबधी प्रतिज्ञा-पत्रो पर हस्ताक्षर करने के बावजूद समय पर दहज लेते देखा गया है।

आखिर क्यो ? दहेज के पक्ष म वातावरण विपक्ष से अधिक मजबूत क्या है ? वर्षो से विरोधी आवाजें उठने, कानून बनाने व अव कानून को कडा बनाने की माग उठाने के वावजूद दहेज के लेने-देने मे वद्धि क्यो हो रही है ? महिलाओ की स्थिति की जाच करने वाली राष्ट्रीय कमेटी की रिपोट क अनुसार, न केवल यह वृद्धि ही हो रही है वल्कि ग्रामीण क्षेत्रो के ऐसे समुदायो म भी, जहा पहले दहेज प्रथा नही थी, वहा भी यह प्रथा आरभ हो गई है। केन्द्रीय समाज कल्याण बोड की सचिव श्रीमती सरला गोपालन ने बताया कि दक्षिण भारत मे भी इस प्रथा न पिछले एक दशक से जोर पकड लिया है।

दहेज के नये मुखौटे आए दिन पत्रो म इसी कारण वहुओ के आत्महत्या करने, जलने या जला दिए जाने के समाचारो के बावजूद समाज का यह कलक धुल नही सका वल्कि नौकरी वाली लडकी चाहिए लडकी के सबधी विदेश मे है तो उस प्राथमिकता समाज के प्रभावशाली व्यक्तियो के सम्पक को तरजीह ससुर द्वारा भावी दामाद को

अच्छी नौकरी दिलाने, उच्चशिक्षा के लिए विदेश भेजन आदि की क्षमता देखना लडकी के नाम सपत्ति या उसके विवाह पूव नौकरी से कमाए धन पर निगाह रखना आदि नये-नये मुखौटे लगाकर दहज नये-नय रूपो म सामने आ रहा है। दहेज को 'गिफ्टचक' के रूप म स्वीकार करना व 'गिफ्ट टैक्स' देकर कानून स बच जाना ऐसा ही एक नया रूप है।

दहेज के नये मुखौटे का एक उदाहरण है यह मुकद्दमा—सन् १९७४ मे दिल्ली के अतिरिक्त सेशस जज जगदीशचन्द्र न मुकद्दमे का निणय वादी पक्ष (पुरुष) के हक म देत हुए कहा, 'शादी के बाद प्रार्थी, जो कि प्रतिवादी का पति है, न्यायोचित रूप स यह माग कर सकता है कि प्रतिवादी अपनी शादी के पूव की आय, जो कि उसके पिता की सपत्ति खरीदने मे खच हुई है को उसके हवाल करे। यह राशि चालीस हजार थी। 'मदरलड' म छपे विवरण अनुसार, माननीय जज न प्रतिवादी (स्त्री) के अधिवक्ता स पूछा, 'मान लीजिए कि एक पुरुष ने विवाह के पहले कमाया अपना धन अपने माता पिता को दे दिया और शादी के बाद उसकी पत्नी इस आय का हिसाब किताब तय करने की माग करे तो क्या यह निदयता होगी ?'

उपरोक्त निणय के बाद जब प्रतिवादी पत्नी ने वादी पति की इस माग की भारी धनराशि देने की परवाह नही की तो पति पत्नी क बीच मतभेद पदा हुए और वे अलग रहन लग। पत्नी न निदयता का आरोप लगाते हुए यह भी कहा था कि उसका पति रात को देर से नशे की हालत म लौटकर उसे मारता पीटता था और जान लेन की धमकी देता था। जिसे अविश्वसनीय मानकर न्यायाधीश ने स्वीकार नही किया। यदि यह आरोप पूरी तरह सच न हो तो भी तग करना, दुव्यवहार करना और शादी से पूव कमाई की माग कर उस मानसिक कष्ट पहुचाना क्या निदयता नही है ?

भारतीय विधि सस्थान की एक विशेषज्ञ के अनुसार ऐसी कोई कानूनी मान्यता नही है जिसके अन्तगत किसी स्त्री की शादी से पहले की आय पर उसक पति का हक बनता हो। यदि इस मत को मान लिया जाता है तो अनेक कानूनी पचीदगिया उठ खडी होगी और मुकद्दमेबाजी के नय सिलसिल शुरू हो जाएगे। इसे स्वीकार करने पर सविधान की समानता सबधी मान्यता अथहीन हो जाती है और अप्रत्यक्ष रूप स दहेज की प्रथा पुनर्स्थापित होती है। यह प्रवत्ति लडकियो को लडको के मुकाबले म कम सुविधाए देने की पूवप्रवृत्ति को जारी रखने म सहायक होगी। यदि लडकी की शादी स पूव की आय पर भी पति का अधिकार होगा तो मा बाप उसे उच्च शिक्षण प्रशिक्षण दिलान पर खच करने म आनाकानी करेंगे जैसेकि अभी भी अनेक माता पिता इसीलिए लडकी को उच्च शिक्षा नही दिला पाते कि वे उच्च शिक्षा और दहेज के दोहरे खर्चे नही उठा सकते। इसके अलावा, लडके वाले शादी तय करते समय दहेज के साथ या दहेज के बदले लडकिया की अपनी आय का आधार भी खोजने लगेंगे। तब दहेजबदी के बाद भी क्या यह अप्रत्यक्ष दहेज नही होगा ? अभी भी वह नयी किस्म का दहेज चल ही पडा है कि कमाऊ लडकी की शादी सुदरता के अभाव म भी आसानी म हो जाती है।

कानून व कानून का सशोधन उपरोक्त सारे विश्लेषण के बाद कहा जा सकता

है कि कानून मे कडाई लाने के वावजूद दहेज पूरी तरह ब द नही होगा। किसी न किसी रूप मे जारी रहेगा। पुरुपपरक इस व्यवस्था का समाप्त करने के लिए १९६१ म 'दहेज प्रथा निपेध अधिनियम' स्वीकृत किया गया था। इसकी धारा ३ मे यह प्रावधान है, 'यदि कोई व्यक्ति इस अधिनियम के लागू होन के बाद दहेज लेता या देता है या 'दहेज लेने देने के लिए किसी को प्रोत्साहित करता है तो उसे छ मास की कैद या पाच हजार रुपया जुमाना या दोनो का दण्ड दिया जा सकता है। धारा २ क अ तगत, 'दहज का अथ कोई भी सपत्ति या मूल्यवान सुरक्षा पत्र देने लेन के लिए सहमत होना भी है जिसे विवाह के एक पक्ष या किसी अ य व्यक्ति द्वारा विवाह ठहराने के लिए आवश्यक माना जाए।'

लेकिन यह अधिनियम अपन उद्देश्य मे बुरी तरह असफल सिद्ध हुआ है। इसके दो मुख्य कारण हैं—एक, दहेज के विरोध मे या दहेजवदी के पक्ष मे सामाजिक चेतना व व्यापक जनसमथन का अभाव। दूसरे, दहेज मवधी अपराध को इस कानून मे 'सज्ञेय' न बनाया जाना, यानी बिना लिखित शिकायत के पुलिस या कचहरी अपनी ओर से सीधे कायवाही नही कर सकती। इसीलिए सन १९७५ के प्रारभ म महिलाओ की स्थिति का अध्ययन करने वाली राष्ट्रीय कमटी ने सुझाया था १ इस अपराध को सज्ञेय बना दिया जाए। २ सामाजिक कानूना का प्रवतन एक अलग प्रशासन को सौंपा जाए, जिसके काय सचालन म सामाजिक कायकर्ताओ और समुदाय के प्रबुद्ध व्यक्तिया का हाथ हो ३ अधिनियम मे तीन उपव ध शामिल किए जाए—एक, वर अथवा उसके माता पिता को दी जाने वाली भेंट पाच सौ रुपय से अधिक की न हो और जिनका उपयोग वर के अपने आर्थिक दायित्वो को कम करने वाला हो, एसी भेंटो का आदान प्रदान निपिद्ध किया जाए। दो, इस प्रथा को कायम रखन और प्रोत्साहित करने मे सहायक दहेज के प्रदशन को दडनीय ठहराया जाये। तीन, सरकारी कमचारी आचरण सहिता मे जु विवाह के सबध म लागू नियम दहेज लेन पर भी लागू हा। वधू को दी जाने वाली भेंटो की उच्चतम सीमा निर्धारित कर देना एक दीघकालीन लक्ष्य मानकर इस सशोधित अधिनियम के प्रभावो का पाच वप बाद फिर मूल्याकन किया जाए।

वरिष्ठ अधिवक्ता श्रीमती श्यामला पप्पू ने प्रस्तावित सशोधनो पर 'साप्ताहिक हि दुस्तान' मे अपनी राय प्रकट करते हुए कहा था लोगो के ख्यालात धीरे धीरे वदलते ही हैं। सरकारी कमचारिया द्वारा दूसरी शादी की पाब दी भग करन पर उनकी नौकरी पर आच आती है तो इस कानून स पति की एकनिष्ठता अब आदमी की दया नही, औरत का हक माना जाने लगा है। इसी तरह दहेज पर भी यह सहिता लागू होन पर इसका असर पडेगा। दस पद्रह साल समाज की प्रकृति को वदलन मे लगेंगे, पर दहेज खत्म जरूर होगा लेकिन मेरे विचार मे, यह प्रथा इस रूप म न रहे किसी न किसी रूप म दर तक जारी रहेगी। सन १९५६ के हि दू उत्तराधिकार कानून की धाराओ को यदि ठीक से लागू न करवाया जा सका, दहेज को प्रभावित करन वाल 'कर मुक्त उपहार उत्तराधिकार आदि कानूना म अपेक्षित सशोधन न किया गया पिता क वसीहत न करने या भाई बहना के बीच झगडा न बचने के लिए खेती की जमीन व शहरी जायजाद म लडकी

को बराबर का हिस्सा न दिलाया जा सका तो दहेजबंदी में स्त्रियों ने 'स्त्री धन' पर आंच आ सकती है।

स्त्री धन का महत्व नही रहा, क्योंकि अब लडकियों को पिता की संपत्ति में से बराबर का हक मिल रहा है —यह कहना वास्तविक स्थितियों से आंख मूंदना है। कुछ अपवादों को छोड कर तो लडकियां हिस्सा मांगती ही नहीं, या मांगने पर भी उन्हें दिया नहीं जाता। हमारी लडाई का उद्देश्य दहेजबंदी होना चाहिए 'स्त्री धन' की समाप्ति नहीं। लडकियों का हक जायदाद में से दिलवाने संबंधी कानून का सामाजिक स्वीकृति दिलाई जाए या शादी के समय लडकी को मिलने वाले उपहारों की अव्यवहारिक सीमाबंदी के बजाए इन उपहारों का या दहेज का प्रदर्शन रोका जाए। लडकियों को अधिक से अधिक संख्या में आत्मनिर्भर बनाने के लिए उन्हें शिक्षित प्रशिक्षित करने व उनके लिए रोजगार के अवसरों में बढोतरी करने का भी प्रयत्न किया जाए। तब भी एक वांछित संख्या में स्त्रियों के आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर होने में समय लगेगा। दहेज का विकल्प या तो नौकरी अथवा स्वयं का रोजगार हो सकता है या पिता की जायदाद में से बराबरी का हक जो केवल कानून में नहीं, वास्तविक रूप में उन्हें मिलना चाहिए। ये दोनों विकल्प लाए बिना और प्रेम विवाहों की आम सामाजिक स्वीकृति के बिना दहेज बंद होना संभव नहीं।

वर्तमान उपभोक्ता समाज में पैसे का मूल्य बढने से अब तो दहेज और विकृतियां आ रही है। पहले तो सीधे सीधे व्यापारिक ढंग से भाव ताव व लेन देन पर ही आपत्ति थी। अब कानून से बचने के लिए मांगा गया दहेज का कीमती सामान पहले ही लडके वालों के घर पहुंच जाता है। इसके बाद यदि किसी कारण शादी न हो पाए या बदनीयती से कुछ लालची लडके वाले सामान लेकर भी शादी से मुकर जाए तो लडकी वाले कानूनी रूप से उसका कुछ नहीं बिगाड सकते, क्योंकि दहेज मांगना ही नहीं देना भी अपराध है। फिर आजकल बदले मूल्यों में जब लडकी के गुणों या खानदानी प्रतिष्ठा के ऊपर लडकी के सौंदर्य डिग्री या नौकरी और उसके पिता के धन पर निगाह रखी जाती है नवधनिक लोग अपनी असुंदर, अयोग्य लडकी को खपाने के लिए अधिक से अधिक मूल्य देकर अच्छे वर खरीदने की होड में लग जाते हैं। दिखावे या आडंबर की बढती प्रवृत्ति से दहेज कम अधिक लाने पर देवरानियों जिठानियों के बीच की पुरानी होड भी अब नई सामाजिक मानसिक विकृतियों और विघटन को जन्म दे रही है। दहेज की मांगों को छोड दें तो भी दिखावे की प्रवृत्ति परिवारों में मधुर संबंधों को कटु बनाने में कोई कसर नहीं छोडती और दुष्फल भोगना पडता है कम दहेज लाने वाली बहू को। बाहरी तानों कटूक्तियों और अपने भीतर के हीनभाव के बीच पिसने हुए वह मानसिक रूप से इतनी परेशान रहने लगती है कि कभी मानसिक या मन शारीरिक रोगी हो जाती है, तो कभी इसका अंत आत्महत्या या हत्या में होता है। लेकिन बहुओं पत्नियों की हत्या आत्महत्या की स्थितियों के गहरे विश्लेषण सर्वेक्षण से मैंने पाया कि दहेज के नाम पर जलने जलाने की सामने आने वाली सभी दुर्घटनाओं के पीछे दहेज ही नहीं होता। अधिकतर तो पति पत्नी के बीच अहम की टकराहट, दूसरे पुरुष या दूसरी स्त्री की

उपस्थिति अथवा इसे ले कर चरित्र पर स देह और दिशाहीन आजादी मे निजी स्वाथ की प्रधानता से परस्पर निभाव की स्थितियो का अभाव ही इन दुघटनाओ और बढती अलगाव तलाक की घटनाओ के पीछे होता है, जिसके लिए आज का पूरा परिवेश दोषी है।

समाधान नारी पर ही निभर लेकिन दहेज के कारण इस दुखमय जीवन की शिकार भी नारी है, शिकारी भी अधिकतर नारी ही है। मा चाहती है लडकी को अधिक से अधिक व अच्छे से अच्छा देना और सास चाहती है, बहू के पीहर से जितना अधिक खीच सके, खीचना। न लाने या कम लाने पर सास ही प्राय बहू को ताना से छेदती है व तग रखती है, ससुर नही। आजकल पति भी कम लालची नही। पर मेरा दृढ विश्वास है कि इस बुराई को कानून नही मिटा सकता। मा सास के रूप मे स्त्रिया और दहेज पाने वाली लडकिया ही मिलकर इस समस्या का समाधान कर सकती हैं। अन्य क्षेत्रो की तरह यहा भी नारी ही नारी के माग मे सबसे बडी बाधा है। इसलिए कानून मे सशोधन के साथ इस दिशा म व्यापक सामाजिक जागृति लाने के लिए स्त्रिया और स्त्री सगठनो को अहम भूमिका निभानी चाहिए। प्रचार माध्यमो से भी इसम पूरा सहयोग लिया जाना चाहिए।

क्रमिक सफलता लेकिन सफलता के लिए कानूनी झटके से नही कदम दर-कदम चलना होगा। दहेज के सामाजिक कारको का अध्ययन कर उन स्थितिया म सुधार के प्रयत्न ही शनै शनै इस समस्या का समाधान प्रस्तुतत करेंगे। भारी आर्थिक विषमता से भरे इस समाज मे एक करोडपति से यह आशा करना कि वह उपहार सीमा के भीतर चलेगा, व्यथ है। इसलिए सवप्रथम लेन देन की प्रदशन प्रवृत्ति पर ही रोक लगाने की जरूरत है। साथ ही महिला सस्थाओ द्वारा यह व्यापक प्रचार हो कि माता पिता द्वारा अपने बच्चो को दिए जाने वाले उपहारो को किसी भी अवसर पर देखने दिखाने पर रोक हो और उन पर सावजनिक चर्चा करने की आदत पर महिलाए काबू पाए। दिखावे की प्रवृत्ति और दबे-ढके दहेज पर चर्चा या कानाफूसी बद होने म ही पहला मोर्चा तो जीता जा सकेगा। दूसरा कदम होना चाहिए स्वय युवक युवतियो द्वारा लिए गए सामूहिक सकल्प कि वे दहेज ले देकर शादी नही करेंगे। उनके द्वारा दृढ रुख अपनाने पर माता पिता स्वय ही झुकेंगे। और यह होने पर बहू का दहेज बेटी को देने व उसे लेकर कटुता उत्पन्न होने की नौबत ही नही आएगी, क्योकि बेटे के ब्याह म दहेज का घाटा बेटी के ब्याह म दहेज न देने के कारण पूरा हो जाएगा। माग और प्रदशन ही रोकने की बात है, अन्यथा हर मा बाप अपने बच्चो को इच्छानुसार व शक्ति भर उपहार धन जायदाद देना ही चाहेगा, फिर वह चाहे किसी भी रूप म हो और पहले हो या पीछे। इस सबध में मिले कुछ ये सुझाव भी विचारणीय हैं—लडकी को विवाह के समय दिए गए उपहारो की अदालती स्टाम्प फाम पर घोषणा हो। सभी विवाह रजिस्टड हो कि विवाहो में धोखाधडी रोकी जा सके। लडकी का पूरा हिस्सा उसे विवाह के समय ही दे दिया जाए, बाद में भाई लोग दे न दें। मूल बात यह कि अतर केवल लडके लडकी को दिए जाने वाले हिस्से में मिटाना है, न कि लडकी को माता पिता की देन से या 'स्त्री धन' से

वंचित करना है।

असुंदर लडकियां भी अपने सौंदर्य की कमी को अपने व्यक्तित्व के विकास अपने गुणों में वृद्धि, कला कौशल और स्वभाव की मृदुता से पूरा करने की कोशिश करें तो इससे उनमें जो आत्मविश्वास व साहस आएगा, वह इस बुराई को दूर करने में सहायक होगा। क्या उनकी सौंदर्य की कमी से माता पिता को उनके लिए भारी मूल्य चुका कर योग्य वर जुटाना पडे? या क्यों वे इसी कारण अविवाहित रहें ? क्या पुरुष अपनी खूबसूरती पर तरक्की करते हैं ? माना, स्त्रियों के लिए सुंदरता की प्राकृतिक देन हर क्षेत्र में सुविधा प्रदान करती है। पर यह सुविधा न मिली हो तो क्या उसे व्यक्तित्व की साधना से अर्जित नहीं किया जा सकता ? करके देखें, गुणों के पारखियों की भी कमी नहीं रहेगी।

संबंधित बुराइयां जिस विधवा विवाह निषेध के कारण बाल विधवाओं तक से अमानुषिक व्यवहार और विधवाओं के कष्टमय जीवन ने पारंपरिक धार्मिक विश्वासों के साथ मिलकर विधवा को मृत पति के साथ जबरन जला देने जैसी क्रूर 'सती प्रथा' को जन्म दिया था, उसी तरह दहेज की बुराई ने 'हर लडकी का विवाह होना ही चाहिए' जैसी सामाजिक अंध धारणा के साथ मिलकर बेमेल विवाहों को प्रश्रय दिया है और दहेज के अभाव में योग्य वर की अनुपलब्धि से लडकियों के देर तक अविवाहित रह जाने की विवशता को बढाया है। दहेज जुटाने के लिए पिता द्वारा रिश्वत लेने, लडकी द्वारा गलत रास्तों पर भटक जाने जैसी संबंधित बुराइयां भी इससे पनपती हैं।

स्वयं संकल्प लेकर किसी महत् उद्देश्य के लिए अविवाहित रहने की बात और है, दहेज न जुटा पाने या लडकी की नौकरी पर परिवार के आश्रित होने की मजबूरी से विवाह न होना दूसरी बात है। पहली स्थिति समाज के लिए वरदान सिद्ध होती है दूसरी घरेलू अशांति, मानसिक तनाव, अवैध संबंधों, यौनाचारों, यौन शोषण और इन मिश्रित कारणों से मानसिक विकृतियों तथा सामाजिक विकृतियों के लिए राह बनाती है।

इस तरह स्त्रियों की सुरक्षा, उनके मानसिक स्वास्थ्य और समाज के स्वास्थ्य इन तीनों दृष्टियों से दहेज की वर्तमान कुरीति का बंद होना आवश्यक है। कानून को संशोधित कर कडा बनाने के लिए कार्यवाही चल रही है। कानूनी व अन्य सहायता के लिए अनेक संस्थाएं भी सामने आ रही हैं। पर समस्या से निजात पाने के लिए कानून और संस्थाओं का केवल सहारा ही लिया जा सकता है इसे मिटाया नहीं जा सकता। इसलिए व्यापक जन समर्थन चाहिए जो अभी दहेज विरोध को नहीं मिल पाया है इसी लिए कानून की रोज खुल्लमखुल्ला अवहेलना की जा रही है। सामाजिक जाग्रति के लिए स्वयं स्त्रियों का संकल्प चाहिए। स्त्री संगठनों का समन्वित प्रयास चाहिए। साथ ही चाहिए प्रचार माध्यमों का पूरा उपयोग व सहयोग। शनैः शनैः ही वातावरण इसके लिए तैयार होगा। इसलिए कार्यक्रम को किस्तों में बांटकर प्रभावी ढंग से चलाने की जरूरत है। और इससे भी पहले यह तय करने की जरूरत है कि क्या इसे पूरी तरह खत्म करना संभव है ? नहीं तो इसे युगानुरूप आवश्यकता व अच्छाई में बदलने के लिए सर्व सम्मत संशोधित रूप क्या और कैसे दिया जाये, इस पर सोचा जाना चाहिए।

अधविश्वास और यौन-नैतिकता

कई बार यह अधविश्वास भी कि किसी कुमारी मे सहवास के बाद यौन रोगी पुरुप का रोग दूर हो जाता है, यौन अपराधी को भोली भाली लडकिया को फुसला कर उनके साथ अनतिक सबध स्थापित करने या बलात्कार करने के लिए प्ररित करता है, यद्यपि इस विश्वास म इतना ही दम है कि इनस निरोग लडकिया म भी रोग फनन लगता है।

वदिक काल मे निस्सतान महिलाओ को 'नियोग प्रथा' द्वारा ऋपियो से श्रेष्ठ सन्तान उत्पन्न करने की अनुमति रही है। जनसख्या-कमी के उस युग मे अपनी जातीय वृद्धि के लिए पुत्र-कामना के रूप मे ही नहीं, मानवता के गुणात्मक विकास की दष्टि से भी इस प्रथा का निश्चय ही महत्व था। यह प्राचीन भारत मे नारी स्वातन्त्र्य की भी सूचक मानी जा सकती है। आधुनिक विज्ञान भी 'सुपरमन' की प्राप्ति के लिए क्या इस ओर सचेष्ट नहीं ? एक समाचार के अनुसार, एक अमेरिकन उद्योगपति नोबल पुरस्कार विजेता विद्वान पुरुषो का वीय एक बक म सुरक्षित रखन म लगा है जहा से साक्षात्कार द्वारा चुनी गई सुदर स्वस्थ, प्रतिभा और अर्जित गुणो से सम्पन्न युवतियो को वीय दान कर उनसे श्रेष्ठ सन्तति पाने के प्रयोग शुरू कर दिए गए ह। यहा इनके सभावित लाभो और खतरो की विवेचना से हट कर इन्ह प्राचीन भारत की विज्ञानसम्मत नियोग प्रथा का आधुनिक रूप कहने मे सकोच नही होना चाहिए। क्या हमारे प्राचीन व्यवस्थाकारो ने इसी आधार पर कलियुग के बाद फिर सतयुग लाने की कल्पना नही की होगी ?

पर सस्कार रूप मे पैठी इस प्रथा ने आगे चलकर बदली स्थितियो म उद्देश्य स भटक कर अधविश्वास का रूप धारण कर लिया और सबधित पक्षो ने धम की आड म इसे अवैध यौनाचारो के लिए एक अपेक्षाकृत सुरक्षित बद दरवाजा बना लिया। यही धार्मिक अधविश्वास अब भी किसी न किसी रूप मे हमारे यहा कायम है, विशेप रूप मे अशिक्षित स्त्रियो मे। 'पहुचे हुए' महात्मा की महानता पर विश्वास कर श्रद्धा भावना से उनके सान्निध्य म पूजा अनुष्ठान कर श्रेष्ठ सतान पान की आकाक्षा लिए न जाने कितनी भोली भाली स्त्रिया उन तथाकथित महात्माओ की एपणाओ का शिकार होती रहती हैं। तन्त्र-साधना की आड म तो यह कुचक्र अधिक ही चलता है।

यह नही कि सभी सत महात्मा आजकल ऐसे हो गए हैं। ऐसा मानना या कहना उनके प्रति अन्याय होगा और विद्वत्ता, भक्ति, आध्यात्मिक साधना, तपश्चर्या के प्रति अश्रद्धा या अवज्ञा। लेकिन अप्सराए तो महान ऋषि मुनियो की भी तपस्याए भग करती रही हैं। फिर आज के अधिकाश महन्त और वैरागी जिस तरह गद्दी के मालिक बन शाही ठाट-बाट से रहते हैं और बढिया पकवानो का भोजन करते हैं, उनम से कुछ का वासनाओ के वशीभूत हो भटक जाना कोई अनहोनी बात नही। आज ढोंगी साधुओ की एक पूरी जमात खडी हो जाने, उनके द्वारा श्रद्धालु महिलाओ को सब्ज बाग दिखाकर, बहका फुसला सम्मोहित कर उनकी अस्मत से खेलने और उन्हे प्रसाद रूप म सतान बाटने की कहानिया आए दिन पढने सुनने म आती रहती हैं। बडे-बडे तीर्थो पर स्थित

माधुओ, महन्ता के कुछ समद्ध डेरा पर घर त्यागकर आई स्त्रिया के शोषण-उत्पीडन की कहानियो और इन डेरा पर पनप अनेक भ्रष्टाचार के अड्डा पर अलग स शोध की जरूरत है, जो एक अलग ग्रथ का विषय हो सकता है। यहा मैं अपन सीमित प्रयत्ना पर आधारित एक सर्वेक्षण प्रस्तुत कर रही हू।

तीर्थों पर नारी-शोषण

तीथ-यात्रा हमारे यहा आध्यात्मिक विकास और राष्ट्रीय एकता की दष्टि से एक महत्त्वपूण अवधारणा रही है। यातायात के साधनो के अभाव मे सैकडो स्त्री पुरुपा द्वारा पैदल चलकर, बैलगाडी से यात्रा करके दुगम स्थला और पहाडिया पर स्थित मदिरो तक पहुचने मे जो कष्ट उठाया जाता था तथा घरबार का, सुख सुविधा का मोह छोड कर पवित्र नदियो म स्नान दव दशन और मानसिक शाति के लिए देश के कोने-कोन से आने वाले ये लोग जब परस्पर मिलते थे, तो वहा जातीयता, प्रातीयता और छोटे-बडे, ऊच नीच के सारे भेद मिट जाते थे। एक सामूहिक भावना ही सब को आलोडित करती थी—उपासना, ध्यान और साधु सता के सान्निध्य मे ज्ञानाजन द्वारा सासारिक कष्टा से मुक्ति या निर्वाण कामना।

'तीथ पर किसी से जाति पाति पूछना अधम है' 'तीथ पर झूठ नही बोलेंगे। गलत काम नही करेंगे'—इस तरह हमारे तीथ भावात्मक एकता, मानसिक व चारित्रिक शुद्धि का बहुत बडा सकल्प लपेटने वाले थे। मानव के भीतर के सर्वोत्कृष्ट को प्रोत्साहित कर समाज को नतिक माग पर डालने की परपरा का निर्वाह करने वाले थे। दुख है कि उन्ही तीर्थों पर आज धम की आड मे अधम या दुराचार के अड्डे मिलते हैं। जहा से आलोक निकलना चाहिए, जहा से मानवीय सदवृत्तिया का प्रसार होना चाहिए वही समाज के दूषित या त्याज्य माने जाने वाले तत्त्वा का सकलन हो, नारी देह का व्यापार निकृष्ट स्तर पर चले, तो इस बात पर सहसा विश्वास नही होगा न ? लेकिन हमारे विश्वास को डावाडोल करने वाली इस कलक कथा को न केवल सामने लाना होगा, आस्था के इन आगारो को अधविश्वास, पाखड व दुराचार के गढा मे बदलने वाले असामाजिक तत्वो का सफाया करने की दिशा मे भी अविलम्ब ठोस कदम उठाने होगे। अत पहले व्यापक अध्ययन या सर्वेक्षण की, फिर कानूनी सस्थात्मक व प्रशासकीय तीनो स्तरा पर इस गम्भीर समस्या से निबटन की जरूरत है।

मदिरो आश्रमा, साधुआ के डेरो और धमशालाओ की अनगिनत सख्या से सपन्न उत्तर भारत के प्रसिद्ध तीथ हरिद्वार मे मुझे एक भी ऐसा आश्रम या 'गह' नही मिला जहा घर छोडकर आन वाली बेसहारा महिलाओ को सुरक्षित रूप मे शरण दी जा सके। एक ओर भूतपूव महारानिया और समृद्ध सभ्रात घरा की महिलाओ के लिए आधुनिक ढग के आलीशान आनदमयी आश्रम जसे आश्रम हैं आय समाज द्वारा स्थापित पुरुषा और महिलाओ के लिए निमल वातावरण से युक्त वाणप्रस्थ आश्रम जैसी सस्थाए हैं दूसरी ओर साधुओ के विशाल डेरा आश्रमो और धमशालाओ मे घर से लाए पैसे द्वारा अपने-अपने कमरे बनवाकर रहने वाली और घर से प्राप्त सहायता या निजी आय साधन

से जीविका चलान वाली महिलाआ के अलावा अन्य साधनहीन स्त्रियो के लिए सुरक्षित निवास की कोई जगह नही है।

अब तीर्थ-वास के लिए केवल विधवाए नही आती। परिवारा के विघटन, घरा की कलह, टूटन और मानसिक अशाति की शिकार महिलाओ का तीर्थो पर आगमन निरतर जारी है। प्राय घर मे दुखी य महिलाए, जिनम किशोरिया से लेकर वद्धाओ तक सभी उम्र की महिलाए शामिल हैं, शाति की खोज म, कभी खाली हाथ, तो कभी पैसे-आभूषण साथ लेकर तीथ मे बसन के लिए आ जाती हैं। कुछ जीवन का अत करन के निश्चय के साथ गगा की गोद म शरण पान के लिए भी।

हर की पौडी पर स्काउट व गाइड द्वारा स्थापित कार्यालय म एक विशेष विभाग केवल गगा म छलाग मार आत्महत्या करन वाले स्त्री-पुरुपा को बचाने के लिए ही है। स्वयसेवी कायकर्ता पौडी पर बने पुल पर व उसके आसपास निरतर निगरानी करते रहत हैं। अक्सर छलाग लगाते ही आत्महत्या म प्रवत्त महिलाआ को निकालकर बचा लिया जाता है। कभी वे आत्महत्या के प्रयत्न म ही पकडी जाती हैं। लकिन बचाए जाने के बाद वे महिलाए समझान बुझान पर भी जब घर नही लौटना चाहती तो इन कायकर्ताआ के सामन एक दुविधा खडी हो जाती है कि इन्ह कहा रखें ? कहा भेजें ?

वही कुछ कायकर्ताआ, दुकानदारा और आसपास के स्थायी निवासिया से पता चला कि असामाजिक तत्वा के गिरोह बस अड्डे और स्टेशन से ही उन लडकियो, युवतिया और सपन्न दिखन वाली महिलाआ की टोह म रहत हैं, जिनमे आभास हो कि वे अकेली हैं और घर छोडकर आई है। उन्ह रहन की अच्छी जगह दिलाने, सत महात्माआ से मिलाने का झासा देकर दुराचार के अड्डा पर ले जाया जाता है। और जब वे लौटने की स्थिति म ही नही रहती, तो य नारी देह के व्यापारी उन्ह देश के विभिन्न भागा म स्थित दूसरे गिरोहो के हवाले कर देत हैं। सुना गया कि बाहर स तपो वन दिखन वाले साधुआ के अनेक डेरे और आश्रम भी दुराचार के अड्डे बने हुए हैं। उनके एजेंट नवागन्तुक स्त्रिया से सम्पक कर उन्ह इन पाखडी साधुओ से मिलात है। घर से लाया हुआ उनका धन आश्रमा म कमरे बनवाने, भडारे खोलने या अन्य कार्यो मे पुण्याथ खच करवा दिया जाता है। तब तक उन्ह इज्जत और सुविधाआ म रखा जाता है। उनका विश्वास जीतने और पैसा खच करवा लेने के बाद ही उनकी करुण-कहानी शुरू होती है। तब वे साधु (?) अपने असली रूप म प्रकट हो, न केवल उनका सतीत्व हरण करते हैं उन्ह तरह तरह की यातनाए देकर, तहखाना की कैद मे डालकर, इतना भयभीत और निरुपाय कर देत हैं कि वे न वहा से मुक्त हो सकें न बाहर अपनी व्यथा-कथा कह सकें। अत म उनमे से कुछ वही आश्रम की सेवा मे नौकरानिया का सा जीवन व्यतीत करने के लिए बाध्य हो जाती हैं। कुछ नियमित रूप से साधुओ की सेवा मे नियुक्त रहती हैं और शेष बाहर भेज दी जाती हैं।

लगभग हर बडे आश्रम म एक गुरु कुछ उनके चेले और गुरुआनी के स्थान पर आश्रम की सचालिका एक प्रमुख स यासिनी देखन को मिली। ऐसी ही एक स्वस्थ सपन्न दीखने वाली आश्रम के महिला विभाग की सचालिका स यासिनी स जब पूछा कि जिनके

पास आश्रम मे लगाने के लिए पैसा नही है या जिनके भरण पोषण के लिए घर से पैसा नही आता उनके लिए आपके आश्रम म क्या व्यवस्था है, तो उत्तर मिला, 'देखिए यह अनाथाश्रम नही है। यहा आकर रहने वाले हर स्त्री पुरुष को किसी न किसी रूप म आश्रम की सेवा करनी पडेगी। फिर चाहे वह तन मन से हो, या धन से। 'तन' स उनका क्या अभिप्राय है यह पूछने पर उनका गोलमोल सा उत्तर था, 'पैसा नही खच कर सकतीं तो आश्रम की सेवा करें और भडारे से खाए। इस सेवा मे झाडू सफाई, खाना बनाना और बतन माजने से लेकर सभी सेवाए शामिल हैं।' और 'सभी' का अथ पूछने पर वह निलज्जता से मुस्करा दी 'आप चाहे जो समझें, सतो की सेवा भी आश्रम की सेवा ही है।'

यह भी सुना गया कि ऐसे आश्रमा और तहखानो की जाच की जाए तो न जान कितने सनसनीखेज मामले प्रकाश म आएगे। शायद देश मे दबे काले धन का एक बहुत बडा हिस्सा भी यहा मिल जाएगा। एक समाजसेवी ने मुझसे कहा, दिल्ली का एक कुख्यात गिरोह यहा से प्रति वष सैकडो की सख्या मे लडकियो को अरब देशो मे भेजने की तस्करी म लगा है। आपने केरल की ईसाई भिक्षुणियो के बारे मे ही ऐसी कहानी पढी सुनी होगी, तीर्थों की इन कहानियो को भी प्रकाश मे लाने की जरूरत है। सरकार को इनकी रोकथाम हेतु कडे कदम उठाने के लिए बाध्य करना ही भी।'

उन्होंने मुझसे यह भी कहा, 'घर छोडकर तीथ पर बसने के लिए आने वाली महिलाओ की स्थितिया का आप अध्ययन कर रही हैं। उद्देश्य अच्छा है। पर बिना साधन और बिना किसी अधिकार या सरकारी सरक्षण के आप अपने इस उद्देश्य मे सफल नही होगी। इन गिरोहो की बाह बहुत लबी हैं। आपका इस तरह अकेले इन आश्रमो म घूमना खतरे से खाली नही। स्थानीय स्काउटो या अन्य कायकर्ताओ के साथ तो आपकी खोजी वृत्ति के पहचान जान का और भी भय है, अत किसी स्थानीय काय कर्ता को तो हरगिज साथ न लें। कही ऐसा न हो कि उनके एजेण्टो को पता चल जाए और फिर आपका पता भी न चले कि आप कहा ह !

इस चेतावनी के बाद मुझे अपना यह अभियान अपने तई समेटना पडा। फिर भी सीमित स्तर पर मैंने जो खोज की उसकी कुछ बानगिया प्रस्तुत है

पौडी पर भिखारिनो की पगत मे बैठी एक जीर्णकाय प्रौढा (जिसे ध्यान से देखने पर लगता, अपनी युवावस्था म यह अतीव सुन्दरी रही होगी) की ओर इगित कर एक कायकर्ता ने मुझे बताया, यह एक बहुत बडे घर की समृद्ध महिला थी। दरिंदो ने इसकी धन सपत्ति अस्मत सभी कुछ लूटकर इसकी यह हालत कर दी है। अब तो यह अपनी स्मृति भी खो बैठी है। आपको ठीक से कुछ बता नही पाएगी।

एक आश्रम निवासिनी से, जो वहा खाना बनाने से लेकर बतन माजने तक का काम करती है को कुछ दान दक्षिणा के लालच के बहाने आश्रम से दूर ले जाकर बात चीत की। वह घर से अधिक पैसा नही लाई थी। केवल पति की मार पीट स दुखी होकर निकल आई थी। उसके अनुसार भक्ति भावना भी उसे यहा खीच लाई थी। शायद इसी भावना श्रद्धा के वशीभूत हो साधु सता की सेवा म लग गई। जब पास का पैसा बिलकुल खत्म हो गया, घर से भी किसी ने सुधि नही ली, तब उसके पास भडारे के

भोजन पर निमर रहने के अलावा और चारा न रहा। अब आश्रम की नौकरी पर जिन्दगी बसर कर रही है और सभवत गुर के योग्य न समझी जाने पर उनके चेला की इच्छा-पूर्ति का साधन बनी हुई है।

एक धमशाला के बाहर खिचडी के सदावत और जल के प्याऊ पर सेवा काय करन वाली ३०-३२ वर्षीय युवती से बातचीत का सार है 'पिता को मैंने नही देखा। मा के साथ जब यहा आई, तब दो साल की थी। यहा गुरु शरण मे रहन वाली मा के साथ पली, बढी। बचपन से ही मा ने इच्छाओ के दमन और आत्मसयम की शिक्षा दी। कुछ सत्सग का फल रहा, कुछ यह भी कि ससग अधिकतर स्त्रिया का ही मिला। इस लिए मैं कटु अनुभवा से बची हू। फिर भी आपने जो पूछा, उसके उत्तर म केवल यही कहूगी, घर हो या बाहर, सासारिक जीवन हो या आध्यात्मिक जीवन, स्त्री को पिता, पति, गुर मे से किसी एक का तो पल्ला पकडना होगा। स्त्री अपनी रक्षा आप नही कर सकती। उस किसी एक का बनकर रहना पडेगा और सेवा करके या श्रम करके खाना पडेगा। हमारे यहा मुफ्त खाने वाली के लिए जगह नही। सेवाभावी हो तो निराश्रित को भी जगह देंग।'

एक प्रसिद्ध आध्यामिक सस्था मे यद्यपि सस्थापक-मचालक पुरुष स यासी थे। सस्था का सारा सचालन उनकी सहयोगिनी (किसी रिश्ते के बिना) सन्यासिनी ही करती थी। सस्था मे नीचे, ऊपर सभी जगह विशाल दीवारा पर उन सन्यासिनी की तस्वीरें ही तस्वीरें लगी थी। जिनम उ ह विभि न समारोहो म विभि न नेताओ व विद्वानो के साथ दिखाया गया है। पूछा स यासिनी होकर इतना विज्ञापन क्यो ?' उत्तर मिला 'मैं तो नही चाहती, मेरा इतना प्रचार किया जाए। लेकिन गुरु महाराज नही मानते। यह सब उनकी कृपा है।'

पौडी पर भिखारिना की पगत म गेरुए वस्त्र धारण किए माथे पर तिलक लगाए, गले मे माला डाले कुछ स यासिनी भी बैठी थी। वे स यासिनी हो कर भिखारिना की पक्ति मे क्यो ? यह जिज्ञासा लिए मैंने कुछ मन्यासिनियो को वहा से उठाकर स्काउट कायालय मे ले जा उनसे बातचीत करनी चाही। मैं देखकर हैरान रह गई कि बुलान पर न केवल चेहरे पर भय की रेखाए लिए उ हाने साथ आने म आनाकानी की, उनके साथी भिखारी स्त्री पुरुषा ने भी इसका विरोध किया, 'मत जाना फुसलाकर आश्रम म ले जाएगी। आश्रम के नाम पर यह डर देखकर मेरी जिज्ञासा और बढी। पर काफी सम झाने और विश्वास दिलाने पर भी केवल प्रौढ और वृद्ध तीन महिलाए ही साथ आने को तैयार हुई, जवान स्त्री एक भी नही।

इन मे से दो लक्ष्मी नरसिंघम (उम्र ५५ वप) और देवी सीताराम (उम्र ७२ वप) राजमड आध्रप्रदेश के साधुमयी आश्रम स घूमती हुई कुछ रोज पहले ही हरिद्वार आई थी। उ होने गरीबी के कारण ही घर छोडा था। इसके पूव एक महिला गोबर थापने का काम करती थी, दूसरी फूल बेचने का। पति नही रहे। घर म खाने का कुछ न था। तभी चलते फिरत एक गुरु मिल गए व उनके उपदेश स वैरागी बन घर स निकल पडी। बच्चे ?' 'भगवान भरोसे।' 'अभी खाने, रहने का क्या ठिकाना है ?

'कुछ नही मा, भीख मागकर खाना पडता है। इधर तीरथ पर भीख मिल जाता है। उधर देस म नई मिलता।' 'भडारे स?' 'नही मा, उधर भडार मे ओ लोग धक्का मारकर बाहर निकाल देता है। बोलता, सेवा नई तो खाना नई। क्या करना मा! किधर जाना?' 'तो यह खाना छोड मेहनत-मजदूरी क्या नही करती?' 'काम मिलता मा तो इधर काहे को आता! तुम काम दिलाओ, हम यह काम (?) छोड देगा।' 'रात को किधर रहती हो?' 'हम इकला नइ रहता मा, एक जगहा भी नइ रहता। माई लोग मिलकर कबी किधर कभी किधर जा के सोता है। स्टेशन से, धम शाला से ओ लोग मार के भगा देता है तो दूसरी जगहा जाकर सोता है, फिर तीसरी जगहा। पर हम दस माई का टोला था, अब चार रह गया तो जगहा बोत मुश्किल से मिलता।' क्या?' 'ज्यादा माई लोग होने स हमको भगा नई सकता, अब मार के भगा देता है।' 'नइ काम नइ छोडेगा, और माई लोग का टोला बनाएगा।' अबी बोला था ठीक, पर अब बुढाप म मजदूरी कस होएगा, अब तो बाकी जिन्दगी तीरथ तीरथ घूमकर ही काटेगा।'

७५ वर्षीय शरबती बाई ने कहा, 'हम अठारह बाई लोग साथ रहती हैं, साथ घूमती है। साथ सोती हैं, दिन म बिखरकर रात को फिर हम लाग एक जगह पर मिल जाती है। दिन म तय कर लेते हैं कि कहा मिलना है। जत्थे की ताकत से अब कोई डर नही। नही तो कौन रहने दे? कौन सोने दे?' 'नही, य आश्रम हमारे लिए नही हैं। वहा तो हम लोगा को फटकने भी नही दिया जाता। वहा बडे लोगा के लिए जगह है या' 'और वह एकाएक फूट फूटकर रोन लगी, 'मत पूछो बाई, कुछ मत पूछो।' फिर जरा ठहरकर स्वय ही बतान लगी, 'तीरथ पर आकर भी शाति कहा मिली बाई! जवानी मे ही पति छोडकर चला गया। एक लडका था। वह भी मर गया, तो सोचा, अब घर म रहकर क्या करना! शाति के लिए तीरथ पर चली आई।'

वह फिर रोने लगी थी, 'कुछ मत पूछो बाई, कैसे कैसे दिन गुजारे हैं। यहा साधू नही, सुस्वादु रहत हैं, जिन्ह खाने को बढिया भोजन और भोगने को स्त्रिया चाहिए। हम कुछ बहनें स्टेशन पर जाकर सोती थी तो वही पुलिस वाले और साधुआ के आदमी पहुच जाते थे। डडा मारकर उठाते और डरा धमकाकर पकड ले जाते। इस तरह जिस दिन मेरी एक साथिन ले जाई गई बचन के लिए मैंने तुरत एक तरकीब खोज निकाली, मैं पगली बनकर अभिनय करने लगी और हाथ पकडने वाले को काट खाया। वह डरकर छोड गया। दूसरे दिन स मैंने हर रात अपनी रक्षा के लिए चेहरे पर कीचड-कालिख पोतना बाल बिखराना और पगली का अभिनय शुरू कर दिया। दिन मे भी वे लोग दिख जाते तो मैं फिर वैसा ही करने लगती। फिर कुछ दिन बाद हम लोग जत्था बना कर तीरथ तीरथ घूमने लगी। न अकेली रहती थी न किसी एक जगह टिकती थी।'

खान पीने, दवा दारू का प्रबध? 'बस तीरथ यात्रियो के भरोसे ही जिन्दगी कट रही है। आइ थी शाति के लिए रोटी की चिन्ता से मुक्त हो यहा किसी मदिर आश्रम म बठ राम भजन करने क लिए। पर अब लगता है कुछ नही सब जगह सारा पेट का धधा ही है। वो बठी हैं हमारी और बहनें। पूछो उनसे, सभी पेट के लिए ही

यहा आई हैं और पट के लिए ही इधर-उधर भटक रही है। कोई सहारा होता तो हम सन्यासिनें होकर भी यहा भिखारियो की पगत मे क्यो बैठती ? बीमारी मे, दुख-तकलीफ म हम जत्थे की बहनें ही अब एक दूसरी का सहारा बन गई हैं। बीमारी के कारण कोई एक दो दिन इधर आकर न बैठ सके तो हम लोग मिल-बाटकर खा लेती हैं। क्या करना, कोई घर-बार तो है नही, किसके लिए जमा करना ?'

हरियाणा बागण मे गोरखनाथ गद्दी पर स्थायी रूप से निवास करने वाली और इधर तीर्थाटन के लिए आई दो सन्यासिनियो से स्नान घाट पर भेंट हो गई। उन्होने बताया, 'हमारा तो यहा एक स्थान है। भिक्षा हम नही लेती। भगवान का दिया जो मिल जाए, उसी मे सतोष है शाति है।' वहा के अन्य साधुओ और आश्रमो का नाम लेने पर उन्होने चेहरे पर पूरी घणा भरकर जो 'रिमाक' उछाला, उसकी भाषा लिखने लायक नही है।

प्रौढ आयु की ही एक बेहद सुदरी सन्यासिनी से एक धमशाला की तीसरी मजिल पर उन के एकान्त साधना कुटीर म वार्तालाप का अवसर मिला। उनके इस साधना मदिर के शान्त वातावरण म थोडी देर चित्त को शान्ति मिली, उनसे ज्ञानाजन का लाभ भी। लेकिन मेरी जिज्ञासाओ का उत्तर नही। नाम पूछने पर उन्होने कहा, 'साधु का कोई नाम नही होता।' 'घर छोडकर कितनी आयु मे, कैसे आइ ?' 'साधु का कोई अतीत नही होता। जो छोड दिया उसे क्या याद करना ?' 'नही, मेरी कोई चेली भी नही।' 'गुरु ?' 'वही सच्चिदानद।' सुना, चौदह साल तक यह सुदर युवती मौन रही थी इसीलिए इन्हे मौनी बाई के नाम से जाना जाता था। इतनी लबी अवधि म किसी से बोली नही। किसी से स्पश नही किया। अब भी एकान्तवास ही करती है और भक्ति के आनन्द म डूबी रहती हैं। जो थोडा बहुत चढावा उनके इस तीसरी मजिल वाले एक कमरे के मदिर म आ जाता है, उसी पर गुजर चलती है। गगा स्नान के लिए बाहर जाती है फिर अपनी इसी एकान्त कुटिया मे दिन भर, रात भर। 'उन्हे कभी अकेलापन नही लगा ? कभी अकेले रहते डर नही लगा ?' उत्तर मे फिर वही मौन और ऊपर उगली कि वही रखवाला है और मुझे एकान्त साधना ही रास आती है। उनकी साधना की ऊचाई मेरी पहुच से बाहर थी। उनके घनघोर एकान्त व मौन का रहस्य मेरी समझ मे नही आया।

आय समाज द्वारा स्थापित वाणप्रस्थ आश्रम म बने छोटे छोटे कुटीरो मे रहने वाली मध्य व निम्न मध्य वग की कई महिलाओ से भेंट करने पर पता चला कि सभी के पास अपनी निजी आय के साधन या पेंशन या घर से मिलने वाली नियमित सहायता का सहारा था। यह आय या सहायता खच के लिए पूरी न पडने पर वे आसपास की बस्तियो मे जाकर श्रम के कुछ काय कर लेती हैं। वहा से लाकर सिलाई-बुनाई का काम कर लेना, कुछ महिलाओ द्वारा मजबूरी मे घरो का चौका बतन तक कर लेना। इनम सभ्रान्त घरो की प्रौढ व वद्ध महिलाए ही अधिक है। उनकी कहानियो स जो दबा स्वर निकला, वह आज हमारे समाज की नई उभरी समस्या की ओर इगित करता है।

बदलते मूल्यो के साथ अब खाते पीते घरो म भी वृद्ध माता पिता के लिए र

दिनो दिन सिकुडता जा रहा है। जाहिरा माताओ के मुह से 'वैराग्य भावना खीच लाई की ध्वनि ही निकली। पर यह कहते हुए उनके चेहरे की उदासी, छलछलाई आखें और बुझी आवाज वह सब कुछ बता गई, जिसे उन्होने कस कर बद किए होठो के भीतर भीच लिया था। शायद यह पिछली पीढी के सस्कार हैं जो घर की इज्जत को बाहर उछालने मे अभी भी हिचक महसूस करते हैं। घर मे कुछ भी हो, बाहर ये सभ्रात बुजुर्ग महिलाए आज की बहुओ की तरह मुहफट नही हो सकती। लेकिन दुख कही दवा रह सकता है ? आपस मे वे उसे बाटती ही हैं। तभी तो अलग-अलग कुटीरो मे स्वय उनके मुह से उनकी नही, एक दूसरी की कहानी बयान कर दी गई।

वहीएक कुटीर मे एक वृद्ध महिला बीमार पडी थी। दूसरे कुटीर म ११३ वर्षीय स्वतत्रता सेनानी माता सुखदेवी थी, जिन्हे ताम्रपत्र' और सरकारी पेंशन तो प्राप्त थी लेकिन इस अवस्था म भी देख रेख करने वाला कोई अपना उनके पास न था। कमर से लगभग दुहरी झुकी वह गडमड सी बैठी थी। उनकी बातचीत भी ठीक स सुनाई नही देती थी। फिर भी उन्होने वतन पर मरने वालो का यही बाकी निशा होगा' पक्ति सुनाइ। उनकी साथिनो ने बताया अभी हाल तक यह अपना खाना खुद बनाती थी, अब बिलकुल असमर्थ हो गई हैं। उनकी व दूसरी बीमार पड जाने वाली वृद्ध अशक्त महिलाओ की देखरेख वे लोग ही आपस म करती हैं। असहाय अवस्था म आश्रम स थोडी सहायता मिल जाती है। लेकिन आर्थिक स्थितिया सबकी भिन्न होने पर भी सुरक्षा की दृष्टि से यहा जीवन शात और परस्पर निर्भरता के कारण ऐक्य भावना वाला मिला।

मथुरा, वृन्दावन की कुछ प्रवासी बहनो, सन्यासिनियो और कीर्तनिया से भी भेंट हुई। इनम ८० प्रतिशत बगाली विधवाए और बाल विधवाए हैं, जो मथुरा के बजाय वृन्दावन म अधिक रहती है—काशी की विधवाओ की तरह ही गरीबी, बीमारी अभाव, कष्ट का जीवन जीती हुई। फिर भी ससुराल का जो नारकीय जीवन छोडकर आई है, उससे यहा सतुष्ट हैं— कोष्ट ही कोष्ट खान का कोष्ट दवा दारू का कोष्ट बाबा लोग का कोष्ट पर उदर ससुराल म और भी ज्यादी कोष्ट बोत कोष्ट। इसी से बगाल मे विधवा जीवन का अन्दाजा लगाया जा सकता है।

गर बगाली महिलाओ मे से भी अधिकाश अपनी घरेलू स्थितियो से पीडित होकर ही यहा बसने के लिए आई है। एक महिला के पति अप्राकृतिक मैथुन के शौकीन थे। पत्नी म रुचि नही लेते थे। उसके समझाने पर उसके साथ दुर्व्यवहार करते थे। दूसरी महिला का परिवार गाव की बाढ मे बह गया था। एक मात्र जीवित बची पुत्री को लेकर वह वृन्दावन आ गई। गरीबी मे इलाज न हो पाने से वह भी बीमारी म चल बसी। फिर वह अकेली ही भजनाश्रम म कीर्तन करने लगी। यहा स जो इन कीर्तनिया को मिलता है, वह पेट भरने के लिए काफी नही है। घर पर खेती की जमीन जिन लोगो ने सभाली है व कभी-कभी कुछ मदद करते रहते है। शेष कीर्तनियो को गुजारे के लिए छोटे मोटे अन्य काम भी करने पडते हैं। तीसरी महिला ने बताया पति के रहते उन्हे सब सुख प्राप्त थे। पर उनकी मृत्यु के बाद दोनो लडको न जायदाद अपने नाम

करवा ली और उनकी उपेक्षा व बेइज्जती करने लगे। तो एक दिन सपन मे मोर मुकुट धारी कृष्ण के आह्वान पर हाथ में कुल तेरह रुपये लिए वह यहा आ गई। कुछ समय कष्ट व चि ता-उदासी मे बिता कर अब सह गई हैं व अपेक्षाकृत शा त है।

ये तीन उदाहरण अनेक तीथवासी महिलाआ का प्रतिनिधित्व करते है, जि हे अपनी पीडा, आर्थिक मजबूरी या घर की कलह यहा खीच लाई। अ त प्रेरणा स आने वाली महिलाओ की सख्या इनमे बहुत कम है। इसीलिए यहा आकर अपने आपको भजन कीतन म खपा कर भी उ हे मन की शा ति नही मिल पाई है, न जीविका के लिए आर्थिक समस्या का हल ही। एक बडी सख्या भीख मागकर पेट भरती है। इसलिए भ्रष्ट बाबाओ व असामाजिक तत्त्वो की भेंट भी चढती है। 'भूखे भजन न होई गोपाला।' इनमे मे एक महिला के हाथो मत्यु शया पर पडे एक अग्रेज बालक के अकस्मात ठीक हो जाने पर उस अग्रज सज्जन द्वारा उ हे एक छोटा आश्रम बनवाकर दे दिया गया है, जिससे उनकी निवास व भरण पोषण की समस्या हल हो गई है। कुछ अ य महिलाए भी दानियो द्वारा प्रदत्त नि शुल्क आवास मे रह रही है। पर इनकी सख्या बहुत कम है। अधिक वृद्धावस्था मे एकदम अशक्त हो गई महिलाआ के लिए भी भजनाश्रम जैसी सस्थाए निवास व सेवा सुश्रूषा का कोई प्रबध नही करती। भजनाश्रम के सैकडो कमरे किराये पर चढे हुए है जिनकी आय से सस्था इन महिलाओ की आशिक सहायता ही करती है।

मीरा नाम की एक स्थानीय लडकी (जो शायद उसका असली नाम नही है) को केसरिया धोती ब्लाउज म नगे पाव रोज मथुरा के एक मदिर मे कृष्ण-प्रतिमा के सामने भजन कीतन करत व अपार जन समूह को आकर्षित करते देखा। उसके पिता ने बताया, 'इसकी सगाई के समय इसे देखने आए लोगा के सामन ही पाव मे बिछुए पहन इसन बेझिझक कहा मेरा विवाह कृष्ण के साथ हो चुका है मैं शादी नही करूगी।' तब से इसी वैरागिनी रूप म कृष्ण मदिर को समर्पित है। इसकी भक्ति भावना देख पुजारी इसे मूर्ति के समीप जाने देते है। हर रोज सध्या को यह पूरा शृ गार कर मदिर म अपने प्रियतम कृष्ण की प्रतिमा के पास कुछ समय रहती है और गाती है।' यद्यपि यह नत्य नही करती पर इसे देख मदिर की किसी 'देवदासी का स्मरण हो आता है। बाडमेर जिले से आई एक महिला अपनी मदभरी रतनारी आखा म एक चमक व होठा पर हर समय थिरकती एक मुस्कान लिए अपन क हया की खोज म हाथ के एक थल के साथ यहा-वहा कइ बार मिली। पूछने पर उसन बताया, दिन भर क हैया की खोज म भट कती हू। वह नटखट मुझे बहुत तग करता है। कभी मेरा हाथ पकड मुझे यमुना म डुबकी लगाता छोड लुप्त हो जाता है कभी मेरे साथ आख मिचौली खेलता है। रात्रि मैं धमशाला मे या साधु स यासियो की टोलिया म बिताती हू। बडा आन दमय जीवन है यहा।' व्रजवासियो के अनुसार इस अध चैत य महिला को गोवधन परिक्रमा माग म, म दिरो मे कीतन करते या इधर से उधर घूमते अकसर देखा जाता है।

काशी की विधवाआ का एक अध्ययन श्री शिव शकर दुबे द्वारा 'रविवार म प्रकाशित किया गया था जिसम उनकी दयनीय आर्थिक स्थिति का मार्मिक दिग्दशन

था। सामाजिक विडम्बना की शिकार य महिलाए अधिक्तर बगाल, बिहार, नेपाल से आती हैं। कुछ महाराष्ट्र मध्य प्रदेश, तमिलनाडु, आध्र और मैसूर से भी। यद्यपि काशी म भारत के सभी राज्यो के साधु सायासी, उनके मठ और अखाडे विद्यमान हैं, फिर भी जम्मू कश्मीर, पजाब, गुजरात, पश्चिमी उत्तरप्रदश और हरियाणा की विधवाए यहा नही आती। अपवाद रूप मे इक्का दुक्का ही मिलेंगी। इसका कारण है। इन प्रदशा मे विधवाओ की वेशभूषा, भोजन व्रत उपवास आदि के कठोर बधन नहीं हैं। न ही उनके प्रति इतनी उपेक्षा बरती जाती है, न उनके साथ पिछले पापा का फल या अप शकुनता जैसा भाव ही जुडा है। बगाल मे कुलीन प्रथा ने ही महिलाओ पर जुल्म नही ढाए, बाल विधवाओ को काशी छोडने की प्रथा न भी न जाने कितनी कलिया को खिलने से पहले ही मसल दिया। उहु कठोर तापस जीवन के नियमा का पालन करन या अप राध की गलिया म भटक जान के लिए मजबूर कर दिया गया।

यद्यपि शैक्षिक जागति के साथ पुरानी परपराओ प्रथाओ के बधन टूट रहे हैं। विधवा पुनर्विवाह को सामाजिक मायता मिलने लगी है। विवाह आयु भी आठ दस वप से बढ कर अटठारह चौबीस वप हो गई है। इन सब कारणा से काशी म बगाली विधवाओ का आगमन क्रमश घटता गया है। फिर भी इस समय काशीवास करन वाली कुल विधवाओ मे आधी सख्या इही की मिलेगी। देश विभाजन, समय समय पर पूर्वी बगाल मे हुए साम्प्रदायिक दग भी इस बडी सख्या के पीछे हो सकते हैं। लेकिन मुख्य कारण उनके विधि निषेध ही है। नेपाली, बिहारी, मैथिली, भोजपुरी, काय कुब्ज ब्राह्मण और मारवाडी समाजो की विधवाओ की सख्या यदि दूसरे नम्बर पर है तो इसके पीछे भी उनके आचार व्यवहार सबधी कडे नियम और निषेध ही है।

तमिलनाडू, मैसूर महाराष्ट्र और केरल की विधवाए भी पहले यहा काफी सख्या म निवास करती थी। अब सामाजिक जागति के साथ इनकी सख्या क्रमश घटती जा रही है। श्री दुबे के अध्ययन के अनुसार वतमान म इनकी कुल सख्या तीन से चार हजार के बीच म होनी चाहिए। लेकिन मेरे अनुमान म, आज भी काशी म विधवाए छ सात हजार अवश्य होगी। पौराणिक विश्वास के अनुसार काशी उत्तर भारत का पवित्रतम क्षेत्र माना जाता है तो यहा विधवाओ का आगमन चाह पूव सामाजिक कारणो से कम हो रहा हो, नई स्थितियो म विभिन कारणो से घर छोडकर आने वाली अकेली महिलाओ की सख्या इधर बढ ही रही है। जरूरी नही कि वे विधवाओ के लिए नियत विभिन टोले या बस्ती मे ही मिलें।

मेरे सर्वेक्षण के अनुसार ३२० विधवाओ और २ [illegible] परित्यक्ता या स्वय घर छोडकर आई महिलाओ मे से [illegible] वारिक [illegible] केर ११२ परि वार के अभाव मे, ७४ दगा से प्र[illegible] ६ [illegible] शकार होकर किसी तरह उनके चगुल से छूटे [illegible] गुढ [illegible] से यहा आई थी।

जहा तक व [illegible] बिहार मे [illegible]
जिक निर्योग्यताअ [illegible] वधवा

क्त मुक्त पाती हैं। इसलिए यहा सतुष्ट हैं। वापस जाने की बात उनके मन मे नही उठती। बल्कि जैसे-जैसे ये वृद्धावस्था की ओर बढती हैं, काशी मे ही देह त्याग की बलवती इच्छा इन्हें यहा से जोडे रखती है। धार्मिक क्रिया-कलापो की सलग्नता और सादे रहन-सहन के कारण ये सवेगात्मक पीडाओ से भी अधिक ग्रस्त नही लगी। लेकिन जहा तक गरीबी मे जीने और अकेलेपन की पीडा भोगने का प्रश्न है, इनमे और दूसरे प्रदेशो की महिलाओ मे कोई विशेष अन्तर नही मिला। लौटने की स्थितिया इनके लिए बहुत कम बच रहती हैं। इसलिए अभाव, कष्ट इनके जीवन का अग बन गए हैं। अधिकतर विधवाए अत्यन्त गरीबी और अभाव का जीवन जी रही हैं—तग, अधेरी कोठरियो म जीवन की बुनियादी सुविधाओ से वचित, रोग और बुढापे की मार सहती हुई। कुछ हैं, जो बाहर के अपने श्रम पर जीवित हैं।

कुछ को सरकारी पेंशन मिलती है जो चालीस रुपये से अधिक नही होती, इसमे से भी कुछ अश इन्हे पेंशन दिलाने वाले एजेंट या दलाल झटक लेते हैं। धार्मिक ट्रस्टो से मिलनेवाली मासिक वृत्ति तो पाच से दस रुपये तक ही होती है। कुछ लोग दान-दक्षिणा से भी सहायता करते हैं। लेकिन यह सहायता भरण पोषण के लिए ही पूरी नही पडती, दवा-दारू की बात करना ही व्यर्थ है। इनके हाथ म श्रम के काय भी ऐसे है, जिनसे आय बहुत कम होती है। घरो म छोटे मोटे काम या यज्ञोपवीत बटना, दीया-बाती बनाना आदि। बीमार पडने पर धर्मार्थ ट्रस्टो स कोई दवा की पुडिया मिल जाए या आपस मे ये एक दूसरी की देखभाल कर लें। इसके अलावा न इलाज की सुविधा, न तीमारदारी की।

आजकल घरो म ही वृद्धाओ की उपेक्षा है बाहर कौन देखेगा! केवल मदर टेरेसा का 'निर्मल हृदय' ही एक ऐसी सस्था है, जहा बीमारी और बुढापे की असमर्थता म शरण मिलती है।

जाहिर है कि भक्ति भावना और काशी म मरकर मोक्ष पाने की कामना रखने वाली विधवाए ही इतना कष्ट सहन करेंगी। बदली स्थितियो मे घर की परिस्थितियो से पलायन कर तीर्थ की ओर आने वाली युवा महिलाए नही। इनम से बहुत कम ऐसी हैं, जो केवल भक्ति म रमकर सादा, अभावमय जीवन स्वीकार कर सकती हैं। शेष के सामने जब घर लौटने के रास्ते बद होते है या एक बार परिवार वालो की इच्छा के विरुद्ध घर छोडकर फिर स सकोचवश नही लौट पाती तो वे अपनी जीविका आप तलाश करने के लिए बाध्य हो जाती है। घर स लाया हुआ पसा अधिक दिन नही चलता। फिर उनम मे कुछ तो अपने लिए सम्मानजनक जीविका की राह चुनने मे सफल हो जाती हैं। शेप जीविका की तलाश मे या उसके अभाव मे असामाजिक तत्वो के हाथ पड जाती हैं। वाराणसी म भी भ्रष्टाचार के अडडो की कुछ कहानिया सुनने मे आईं, लेकिन हरिद्वार स कम। जब तक इस दिशा म कोई विधिवत् विस्तृत अध्ययन न किया जाए इस बारे म निश्चित रूप से कुछ कहना कठिन है। शायद भाग, गाजे धतूरे की रौ मे औघड शिव की साधना करने वाले हिप्पी युवक युवतियो के बीच का मुक्त यौन व्यवहार भी विश्वनाथ की इस नगरी मे चरस, गाजे की तस्करी और यौन भ्रष्टाचार फैलाने मे सहायक हुआ हो!

दिनाक ६ जनवरी, १९८१ मे प्रकाशित एक समाचार के अनुसार, अयोध्या म तीर्थ करने के उद्देश्य स आई एक गुजराती युवती का यहा क एक कथित पुजारी न अपहरण कर लिया, फिर उस कुछ धनराशि क एवज म एक शातिर बदमाश को सौंप दिया। कई सगीन अपराधो के लिए कुख्यात यह गुडा उस युवती स बलात्कार के बाद पुलिस की गिरफ्त म आ गया था, पर इस घटना स सिद्ध है कि अन्य तीर्थों की पवित्र स्थलिया मे भी तीर्थयात्री महिलाओं के अपहरण शोषण की य गतिविधिया जारी हैं।

जैन साध्विया पर शोध कर डाक्टरट की उपाधि पाने वाली श्रीमती हीराबाई बोडिया के अनुसार, 'या जैन मठो व उपाश्रया म साधुआ पर श्रावक और साध्विया पर श्राविकाए पूरी निगरानी रखती हैं। फिर भी कभी-कभी इक्का दुक्का ऐसी घटनाए घट ही जाती हैं। जैस किसी साध्वी का गर्भ रह गया या कोई किसी के साथ कही चली गई। पर पता चलन पर इन्हें वहा रखा नही जाता। या तो व स्वय वापिस गृहस्थ जीवन म लौट आती हैं या उनके साधु वस्त्र उतरवा उन्ह जबरदस्ती वहा स निकाल गृहस्थ जीवन म भेज दिया जाता है।' पर श्री चूनीलाल वधमान शाह न जैन साधु व साध्वियो पर लिखे अपने गुजराती ग्रथ, 'जिगर अन अमी' के दूसरे भाग म उपाश्रयो की भ्रष्ट कहानिया पर अच्छा प्रकाश डाला है।

एक धार्मिक वृत्ति की बुजुर्ग सिक्ख महिला स मैंने डरते डरते यह प्रश्न किया था कि कही वे भडक न उठें, पर मुझे जानकर आश्चय हुआ कि उन्होन गुरुद्वारो क कुछ भाइयो व महन्ता के बारे मे भी कई ऐसी कहानिया सुना डाली। फिर गुस्स म भर गाली की भाषा म उन्होन स्त्रिया पर ही दोष रखा, 'क्या व उनके चरण व घुटन दबाती हैं? क्या घर छोड वहा घटो घुसी रहती हैं? मैं तो साधुआ, गुरुओ, भाइया के पैरा पर मत्था टेकन के भी विरुद्ध हू। स्त्रिया का मदिर, गुरुद्वारो म मूर्ति या ग्रथ साहब के आगे ही झुकना चाहिए, बस।

आधुनिक काल विघटनकारी स्थितिया

आधुनिक युग म सामाजिक विघटन द्वारा नारी शोषण को प्रभावित करनेवाली ० मुख्य स्थितिया हैं

औद्योगिक सभ्यता और उपभोक्ता संस्कृति का प्रभाव

भारत मुख्यत कृषि प्रधान देश है। आज भी यहा श्रम शक्ति का लगभग तीन चौथाई भाग कृषि क्षेत्र म बसा है। यहा औद्योगीकरण यूरोप से बहुत बाद म उन्नीसवी शताब्दी के उत्तराध म ही आरभ हुआ। फलस्वरूप धीरे धीरे बम्बई कलकत्ता, मद्रास, अहमदाबाद, कानपुर, जमशेदपुर जैसे औद्योगिक नगरो का विकास हुआ। स्वतन्त्रता के बाद सरकारी पचवर्षीय योजनाओ क प्रभाव म तथा निजी क्षेत्र मे भी औद्योगीकरण की गति तीव्र हुई। इससे एक ओर देश का धन बढा, अनेक क्षेत्रो मे राष्ट्र की आत्मनिभरता बढी, दूसरी ओर ग्रामीण आत्मनिभर उत्पादक समाज टूटने लगा और उसकी जगह नागरिक उपभोक्ता समाज विकसित होने लगा, जिसने आधुनिक भारतीय समाज मे अनेक नई समस्याओ को जन्म दिया।

सामाजिक पारिवारिक आर्थिक, राजनीतिक सभी क्षेत्र औद्योगिक प्रगति से प्रभावित हुए। पुराने अर्थ-नैतिक समाज नैतिक मूल्य टूटने लगे। पारपरिक मान्यताए बदलने लगी। इस सब से परिवार, समाज मे स्त्रियो की स्थिति म भी बुनियादी परि वतनो को राह मिली। शिक्षण प्रशिक्षण वधानिक समानता और औद्योगिक विस्तार मे रोजगार के नये अवसरो के साथ मध्यवर्गीय स्त्रियो का स्थान भी घरो तक सीमित नही रह गया।

औद्योगीकरण का पहला प्रत्यक्ष परिणाम होता है, अधिकाधिक सख्या म नगरो की उत्पत्ति और विकास। और इसके साथ ही गावो से शहरो की ओर निष्क्रमण। भारी उद्योग गावो मे नही चलते। उनके लिए बहुत से मजदूरो, सगठित व्यापार-क्षेत्रो और अनेक साधनो व सस्थाओ की आवश्यकता होती है। धीरे धीरे ये साधन एक जगह जुटने लगते है और जहा जुटते हैं उस स्थान का नागरीकरण हो जाता है। उद्योगो की उन्नति के लिए यातायात साधनो की भी उन्नति की जाती है। उद्योगो के कारण ही गावो के छोटे काम धधे ठप्प होने लगते हैं और खेती पर जनसख्या का दबाव बढने लगता है।

तब खेती मे ही सबका गुजारा नही हो पाता और बचे लोग रोजगार की तलाश म शहरा मे आकर मजदूरी करने लगते हैं।

बडे नगरो म कल कारखाना के अलावा सरकारी कार्यालया, रोजगार के अय क्षेत्रो, शिक्षण सस्थाना और सिनमा, दूरदशन आदि मनोरजन के साधना की उपलब्धि स नौकरी, व्यापार, शिक्षा, आमोद प्रमोद की सुविधाए अधिक मिलती हैं। तो मजदूरा के अलावा व्यापारी सफेदपोश लोग और शिक्षार्थी भी वहा आ बसते हैं। शिक्षा प्राप्ति के उद्देश्य से छात्र तो आते ही हैं नगरीय चकाचौंध से खिचकर खेती घरेलू धधा, पढाई व घरो से उखडे सैकडा हजारा अनपढ ग्रामीण किशोर भी गावा से भागकर शहरा म आ जाते हैं, जिनम से कुछ मजदूरी मे या छोटी मोटी नौकरियो म खप जाते हैं, शेष बेरोज गारी व आवारागर्दी के आलम म असामाजिक तत्वा के हत्थे चढ जाते हैं। य घर-परिवार स टूटे किशोर पहले मजबूरी स व फिर पैसे के लाभ म या गलत सगति के शिकार हो अपराधी जीवन की ओर अग्रसर होने लगते है।

औद्योगीकरण का दूसरा प्रत्यक्ष परिणाम होता है शहरा मे घनी आबादी व भीडभाड स निवास-स्थाना की कमी। मकाना की कमी के कारण बडे शहरो की स्थिति यह है कि एक चौथाई से लेकर एक तिहाई तक आबादी गदी बस्तियो में रहती है। शहरा मे आबादी का घनत्व आज दस हजार व्यक्ति स लेकर तीस हजार तक प्रति वग किलो मीटर है। कानपुर जसे कुछ नगर तो लगभग पूरे ही गदी बस्ती म शुमार हो गए हैं। औद्योगीकरण की गति बढने पर गावो म रोजगार की सभावनाए तेजी से समाप्त हुइ और गावो से शहरो की ओर भगदड सी मच गई। पिछले एक दशक मे शहरों की गदी बस्तिया मे बसी यह सख्या ढाई करोड स दस करोड तक पहुच गई है एसा अनुमान है।

समाजशास्त्रियो के अनुसार, विश्व के सभी देशो मे औद्योगीकरण के साथ यह समस्या आई। लेकिन वहा नये आर्थिक जीवन के अनुकूल नई व्यवस्थाओ का विकास भी किया गया, जो अभी यहा न के बराबर हुआ है। देश को विज्ञान, तकनीक, उद्योगो मे जल्द स जल्द उन्नत देखने की आकाक्षा रखने वाले स्वप्नदर्शी श्री जवाहरलाल नेहरू ने एक बार गदी बस्तियो के निरीक्षण के बाद रोष भरे शब्दो म अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त की थी—'ये गदी बस्तिया मानवीय पतन की चरम सीमा का प्रतिनिधित्व करती हैं। इसके लिए उत्तरदायी व्यक्तियो को फासी पर लटका देना चाहिए।' पर गदी बस्तिया की समस्या सुलझने के बजाय दिनोदिन उलझती ही चली गई।

प० राजाराम शास्त्री के अनुसार 'यदि किसाना को गाव छोडकर शहरो मे मजदूर बनना पड रहा है तो उनके लिए शहरा मे स्वच्छ व स्वस्थ जीवन का प्रबध भी होना चाहिए। कष्टपूण निवास के साथ इन क्षेत्रो के निवासियो मे पुरानी मान्यताओ का सहारा भी टूट गया है और नई मान्यताओ का उदय नही हुआ है जिससे इनके जीवन म एक रिक्तता आ गई है। मनुष्य के सहज पतन के लिए यह रिक्तता भी बहुत कुछ उत्तरदायी है। इन स्थितियो से बचने के लिए हम इस सक्राति का नियोजन करना होगा और देखना होगा कि आर्थिक शक्तियो का विकास इस रूप मे न हो कि हमारी सास्कृतिक शक्तिया उनसे विच्छिन्न हो जाए।

वास्तव मे मुख्य समस्या आर्थिक सास्कृतिक शक्तियो के इस असमायोजन से ही पैदा होती है ।

इस तरह औद्योगीकरण का प्रत्यक्ष परिणाम है, नगरो का विकास, गावो के घरेलू उद्योग धधो का नष्ट हो जाना,गावो से शहरो की ओर निष्क्रमण, शहरो मे भीड भाड के कारण मकानो की कमी और गदी बस्तियो का विकास। इसका अप्रत्यक्ष परिणाम है, पुरानी मा यताओ के टूटने व सामुदायिक नियत्रण से मुक्ति के बाद कष्टपूण जीवन मे मनुष्य की मूल प्रवृत्तियो को खुलकर खेलने का अवसर मिलना।

नगरो मे मकानो की कमी से उनके किराये बहुत होते है। साथ ही रहन सहन का अन्य खच भी गावो से बहुत ज्यादा होता है। तो अधिकाश ग्रामीण अपने परिवार अपने साथ नही लाते। अपने घर, परिवार और स्त्री मे दूर नगरो मे अकेले रहने वाले पुरुष जुआ, शराब, वेश्या गमन जैसी प्रवृत्तियो मे सलग्न हो जाते है। कुछ जो परिवार के साथ रहते हैं वे भी एक एक छोटे कमरे मे रहने को बाध्य होते हैं, जहा विवाहित सदस्यो के लिए गोपनीयता का सवथा अभाव रहता है और छोटे अविवाहित सदस्या पर इसका दूषित प्रभाव पडता है। इसीलिए ये बस्तिया—जिन्हे बम्बई मे 'चाल', कानपुर मे 'अहाता', कलकत्ता मे 'बस्ती', मद्रास मे 'चेरी' और दिल्ली मे 'पिछडी बस्ती' कहत हैं—यौन अपराधो और यौन रोगो का गढ बन जाती हैं। बाल अपराधियो और स्त्री अपराधियो की भी अधिक सख्या इन बस्तियो से ही सबधित होती है।

जगह की कमी से रहन सहन के कष्ट और बच्चो पर इस दुष्प्रभाव के अलावा इसके अन्य कारण हैं ग्रामीणो का अपने जातीय व सामाजिक सगठनो से टूट जाना। उन पर जातीय पचायतो, पडोसियो और घर के बुजुर्गों का नियन्त्रण समाप्त हो जाना। उनका अपनी पारपरिक रीति नीति से कट जाना। परिजनो से दूर सुख दुख म अकेला पड जाना। और इस सबके साथ दूषित वातावरण के प्रभाव मे उनके समाज-व्यवहार मे अनुशासनहीनता की वद्धि। इन्हीं बस्तियो मे अवध शराब के अडडे, तस्करो के फलाए जाल, शहरी गुडो के गिरोहो के सदस्य, जेबकतरे आदि भी शरण पाते हैं। इस कारण यहा पुलिस के छापे भी अक्सर पडते रहते हैं, जिससे चोरबाजारी, अपराध और व्यभिचार के अलावा रिश्वत का बाजार भी गम रहता है और शक्तिशाली द्वारा गुडा या पुलिस की शह से गरीब व असहाय को यक्सूर सताया भी जाता है। इसलिए कभी कभी दलितो का दबा हुआ गुस्सा भी विस्फोटक रूप धारण करता रहता है।

इस समस्या को सभी समाजशास्त्रियो न गभीरता से देखा, समझा और अपनी चिन्ता व्यक्त की। डा० राधाकमल मुखर्जी के शब्दो मे, भारतीय औद्योगिक केन्द्रो की इन असख्य गदी बस्तियों मे मनुष्यता का निदयता के साथ गला घोटा जाता है। यहा नारीत्व का खुलेआम अपमान होता है और बचपन को आरभ से ही गलत सस्कारो का विष पान कराया जाता है।' इसम आग चलकर अस्वस्थ समाज का रोग असाध्य नही, तो कठिनसाध्य अवश्य हो जाता है। परन्तु औद्योगिक उन्नति के जोश मे गरीबो के पक्ष मे निरतर बोलते हुए भी हमारे नेता इस आर्थिक सास्कृतिक वैषम्य को गहराई न नही देख पाए। हमारी नीतिया इस समस्या को सुलझानेमे लगभग असफल रही हैं। और अब

जो रोग कठिनसाध्य होकर हमारे सामने है, उसका परिणाम हम आज देख ही रहे हैं। जरूरत है, इस कठिनसाध्य रोग को असाध्य रोग में बदल जाने से पहले ही इसका जमकर इलाज करने की ओर अप्रभावित या कम प्रभावित अंगों को स्वस्थ बनाए रखने की।

विज्ञान तकनीक की उपज होने से औद्योगीकरण का एक और अप्रत्यक्ष परिणाम है धर्म में विश्वास की कमी। धर्म में विश्वास की कमी से नैतिक मूल्यों में विश्वास की कमी। नैतिक मूल्यों में विश्वास की कमी से जीवन में ही विश्वास की कमी। इससे मनुष्य की सहनशीलता घटती है। पारिवारिक विघटन को बढ़ावा मिलता है। आध्यात्मिकता के स्थान पर भौतिकता और भोग प्रवृत्ति बढ़ती है और चरित्र स्खलन को राह मिलती है। इसीलिए संयुक्त परिवारों का विघटन हुआ। धार्मिक व सामाजिक रीति नीति का नियंत्रण शिथिल हुआ। मनुष्य आजाद हुआ, पर आजाद होकर बहुत कुछ झेलने के लिए अकेला पड़ गया। भीड़भाड़ में रहकर भी अकेला, क्योंकि पुराने मूल्यों के स्थान पर अभी तक कोई नए मूल्य सामने न आने और सभ्यता संस्कृति के बीच की रिक्तता भरी न जा सकने के कारण वह भीतर से खिन्न हो गया है।

नगरों में कारखानों में कार्यालयों में साथ-साथ काम करने, कालेजों में सह शिक्षा पाने तथा अन्य क्षेत्रों में स्त्री पुरुष मेलजोल के अवसर बढ़ने से भी पुराने यौन नैतिकता के बंधन ढीले पड़ते हैं। पाश्चात्य सभ्यता के प्रभाव भी नगरों से ही प्रसारित होते हैं। बदले समय में नैतिक मूल्यों पर भोग मूल्यों के हावी हो जाने से भी समाज के सामूहिक चरित्र में गिरावट आती है। यह गिरावट नवजागरण के बाद आई स्त्रियों की शिक्षा-दीक्षा, आत्म निर्भरता और उनकी विधानसम्मत ऊंची सामाजिक स्थिति में भी फिर से गिरावट लाने लगती है। उन्हें फिर से 'भोग्या' बना शोषित करने लगती है। पहले पश्चिम में यही हुआ, जिसकी 'अति' का परिणाम है, वहां का अतिवादी 'नारी मुक्ति आन्दोलन, अब हमारे यहां भी यह स्थिति एक ओर नारी के परों में भटकन भर उसे भोग सामग्री के रूप में प्रस्तुत कर रही है, दूसरी ओर इस अपमान शोषण से मुक्ति के लिए आन्दोलन को जन्म दे रही है। (व्यक्तिगत विघटन वाले प्रकरण में इस पर अलग से प्रकाश डाला जा रहा है।)

महानगरों की कोठियों, बंगलों पॉश फ्लैटों में पड़ोसियों से अजनबी उच्च मध्यवर्गीय जीवन में भी चारित्रिक स्खलन का यही कारण है कि लोग अपनी जाति बिरादरी की रीति-नीति, अपने पड़ोसी और प्रायः अपने घर के बड़े बूढ़ों के भी नियंत्रण से मुक्त हो गए हैं। औद्योगिक समाज में जीवन स्तर की प्रतियोगिता ने विलासिता और भोग मूल्यों को इतना बढ़ावा दिया है कि थोड़े में संतोष, एक दूसरे के लिए त्याग, अपरिग्रह और अतिरिक्त धन के सार्वजनिक कार्यों में उपयोग पर बल देने वाले भारतीय समाज में आज इस होड़ में लोग अपनी एषणाओं को आगे—और आगे बढ़ाते जाते हैं। और एषणाओं की कोई सीमा नहीं होती।

इस तरह बढ़े धन का जब समाज में उचित वितरण नहीं होता—गरीब और गरीब होते जाते हैं, अमीर और अमीर होते जाते हैं—तो यह आर्थिक विषमता एक ओर

बीच सम्पन्नता, दरिद्रता के आर्थिक भेद ही नही, ऊचे वर्गों की शैक्षिक, सामाजिक ऊची स्थिति के कारण य भेद सास्कृतिक स्तर पर भी स्पष्ट हुए।

मध्ययुगीन सामती समानता मध्ययुगीन यूरोप म वर्ण व्यवस्था सगठित वर्गों की सुव्यवस्थित राष्ट्रीय सभाओ के रूप म देखने को मिलती है। उस काल मे अग्रेजी विधान म चार वग थे—पुरोहित जमीदार, किसान, नागरिक। इनम स प्रथम तीन भूमि की सपत्ति पर प्रतिष्ठित थ। पुरोहितो का राजा पर प्रभाव था। राजा पुरोहित की आज्ञा की अवहलना नही कर सकता था। पुरोहितो के पास दान स प्राप्त सपत्ति और जागीरें थी वे धार्मिक कर भी लेते थे। जमीदार वैसे ही जमीनो के मालिक थे। किसान भूमि पर निभर होते हुए भी अ य पक्षो के नागरिको म ही शुमार थ। इगलड की इस पुरानी परपरा को आज भी वहा 'लार्ड सभा और हाउस आफ कामस' के रूप मे देखा जा सकता है। फ्रास म पुरोहित, जमीदार और जनसाधारण य तीन वर्ण थे और तीनो की अलग अलग सभाए थी।

भारत मे राज्य-सत्ता पर ब्राह्मणो के प्रभाव और जमीदारो, जागीरदारो के पास शक्तियो का केन्द्रीकरण देखते हुए इस मध्ययुगीन सामती प्रथा म सवत्र समानता मिलती है। इस तरह मध्यकाल म भूमि स्वामित्व ही सारी प्रतिष्ठा और शक्ति का प्रतीक था। इस शक्ति के मद म विलासी सामतो न निचले वर्गों और स्त्रिया पर क्या क्या जुल्म ढाए, उन दर्दीली कहानियो से हमारा इतिहास और साहित्य भरा पडा है उन्हें यहा दुहराने की आवश्यकता नही।

औद्योगीकरण से पैसा भूमि से अलग होने लगा। अब भूमि के स्थान पर पूजी को जो महत्त्व मिला, उससे सामती व्यवस्था टूटने लगी। इस नई वग पद्धति म भूमि स्वामित्व के लिए उच्च जाति मे जन्म जरूरी नही रहा। पूजीवाद मे उत्तराधिकार व धन की सुरक्षा होने पर भी भूमि की तरह पूजी की स्थिरता नही थी। यत्र-तकनीक म परिवतन व्यापारी दिमाग की कुशलता अकुशलता व भाग्य की अस्थिरता से व्यापार म तेजी मदी तथा सभी के लिए आगे बढने के अवसरो की छूट से समाज की स्थिरता भग हुई। तकनीक की मदद से किसानो और निचले वर्गों म भी कुछ समद्धि आई। गावो से शहरो की ओर निष्क्रमण हुआ। तब पुरानी वणव्यवस्था हिल गई। और उसके स्थान पर रूसी साम्यवाद से प्रेरित मालिक मजदूर के बीच नया वग सघष उत्पन्न हुआ।

आजादी के बाद जनतत्रीय शासन पद्धति म निचले वर्गों को भी न केवल वैधानिक समानाधिकार मिले, दलितो, हरिजनो की शक्षिक सामाजिक उन्नति के लिए आरक्षण के रूप मे उन्हे कुछ विशेषाधिकार भी मिले। इस तरह वैधानिक समता तो आई, लेकिन सस्कारो मे वण व वग भावना बनी रही। सस्कार धीरे धीरे ही बदलते हैं —सास्कृतिक परिवतन वैधानिक परिवतन के साथ ही नही हो जाते। वधानिक समानता और हरिजनो को प्राप्त विशेष सुविधाओ क बावजूद योग्य व्यक्ति उच्च वर्गों म ही अधिक मिलते हैं क्योकि उन्हे सस्कारगत व अथगत सुविधाए अधिक प्राप्त होती है। आरक्षण और वोट पर आधारित राजनीति समाज की पूव व्यवस्था म बुनियादी परिवतन लाने के बजाय वर्गों के बीच असतोप क्षोभ और वैमनस्य ही पैदा करती है। एक

ओर सवर्ण अपने अधिकारों पर चोट सहन नहीं करते, दूसरी ओर दलितों में जागृति आने से वे सवर्णों का दबाव सहने से इनकार करते हैं और एक नया वर्ग संघर्ष खड़ा हो जाता है।

नये गठबंधन सामंती युग में भूमि स्वामित्व और जन्म-आधारित जातियों में ऊंच नीच की भावना से यह संघर्ष पैदा हुआ लेकिन दलितों को कोई वैधानिक या विशेषाधिकार न मिलने से वे दबे रहे शासित रहे। आज स्थिति बदली है। लेकिन सांस्कृतिक स्तर पर समाज में बुनियादी परिवर्तन लाने की ओर ध्यान नहीं दिया गया, निचले वर्गों का आर्थिक व सांस्कृतिक स्तर उठाने के लिए उन्हें प्रशिक्षित नहीं किया गया। परिणामस्वरूप आज हम गावों से लेकर शहरों तक दलित वर्गों के खिलाफ एक नया सामंती गठबंधन पाते हैं---गावों में वैज्ञानिक खेती द्वारा संपन्न हुए किसानों, स्थानीय प्रशासन और पुलिस का गठबंधन। नगरों में उद्योगपतियों, बड़े व्यवसायियों, सत्ताधारी राजनीतिज्ञों, नौकरशाहों और पुलिस का गठबंधन, जिनमें नव धनिक गुण्डे और तस्कर भी शामिल हो गए हैं।

आज का वर्ग संघर्ष दरिद्रता और मध्ययुगीन सामंती प्रथाओं के पुनर्जागरण का सम्मिलित परिणाम है। यह केवल गरीबी और उसके निराकरण के प्रति दलितों की जागृत चेतना के कारण ही नहीं पैदा हुआ। इस तरह यह नया वर्ग संघर्ष केवल आर्थिक नहीं है, इसमें सांस्कृतिक वैषम्य भी पूरी तरह शामिल है। दलितावस्था के खिलाफ समृद्धि ही नहीं, नई सामंती व्यवस्था भी सिर उठा रही है। दलितों के सिर उठाने पर ये ही दोनों सिर भिड़ते हैं और दलितों पर अत्याचार होता है।

स्त्री सामंती युग में इस अत्याचार की इतनी शिकार रही कि इसका असर उसके जीवन के सभी पक्षों पर पड़ा और वह अधीन या गुलाम हो गई। उसके लिए प्रगति के सारे मार्ग अवरुद्ध हो गए। आज शिक्षा, वैधानिक समानता, अपेक्षाकृत ऊंची सामाजिक स्थिति पाकर भी स्त्रियों की इज्जत सुरक्षित नहीं है और दलित वर्ग की स्त्रियां व्यक्तिगत व सामूहिक बलात्कार के रूप में दुहरे अत्याचार की शिकार हो रही है तो इसके पीछे सामंती व्यवस्था के पुनः सिर उठाने का खतरा स्पष्ट दीख रहा है।

स्त्री पुरुष की सम्पत्ति है उसकी इज्जत है, इसलिए उस पर हाथ डालना शत्रु पुरुष को या विपक्षी पुरुष वर्ग को नीचा दिखाना है इस रूप में उससे बदला लेकर संतुष्टि पाना है---यह सोच किसी भी तरह वर्तमान जनतंत्रीय समानाधिकार और नारी-जागरण की भावना से मेल नहीं खाती। इसलिए समाधान केवल निचले वर्गों का आर्थिक स्तर उठाने, नारी शोषण संबंधी पुराने कानूनों में संशोधन करने या स्त्रियों को अधिक अधिकार या विशेषाधिकार के रूप में कुछ सुविधाएं देने से ही नहीं निकलेगा। इस फन उठाती विषमय सामंती सोच का सिर पूरा उठे, इसके पूर्व ही इसे कुचलने की जरूरत है। संचार व प्रचार माध्यमों को इस ओर सक्रिय होना होगा और इस कठिन समस्या को कठिनतर बनाने वाले राजनीतिक हस्तक्षेप को रोक केवल सामाजिक आर्थिक स्तर पर इसका हल खोजना होगा।

लेकिन वर्ग संघर्ष की यह समस्या गंभीर होने पर भी समस्या का एक अंश है,

पूरी समस्या नहीं। रोगी समाज शरीर का एक रोगी अग है। केवल इस अग का इलाज करने से ही सामाजिक स्वास्थ्य की बात बनने वाली नहीं है। रोग की जड पूरे समाज मे व्याप्त है—अपने देश की सामाजिक-आर्थिक स्थितियो व सोच से भिन्न पश्चिमी ढाचे की उपभोक्ता सस्कृति के विकास और उससे उपजे भोग मूल्यो की व्यापकता के रूप मे। पूरा परिवेश दोषी है, जिसमे सामाजिक, पारिवारिक, व्यक्तिगत विघटन को राह दे मनुष्य को मूल्यहीन, आस्थाहीन शून्यता, निरर्थकता और अकेलेपन की स्थितिया मे धकेल दिया गया है।

पश्चिमी प्रभाव और हमारी आधुनिकता

समाजशास्त्रीय नियम से सामाजिक सास्कृतिक परिवर्तन या प्रगति का कोई महत्त्वपूर्ण कदम तभी उठता है जब कोई भिन्न समुदाय मिलकर एक-दूसरे को प्रभावित करते है चाहे यह सपर्क युद्धजनित हिंसात्मक हो या शातिमय। आदिम अवस्था मे भिन्न मानव समूहो का सपर्क सूत्र मात्र युद्ध ही था। शक्तिशाली कबीले निर्बल कबीला पर हमला कर उनकी खाद्य सामग्री, औजार, पशु, स्त्रिया तक छीन लेते थे। भारतीय शास्त्रो मे वर्णित आठ विवाहो मे से अपहरण द्वारा विवाह ही सर्वाधिक प्राचीन है, जो आदिम समूहो मे प्रचलित था। लेकिन विजित स्त्रियो ने शत्रु समुदायो मे जाकर अपने विजेताओ को अपने कबीले या जाति की सस्कृति से परिचित भी कराया। इससे आदिम समाज मे रीतिजन्य विवाह का आरभ हुआ और स्त्री पुरुषो के बीच श्रम विभाजन के आधार पर परिवार की स्थापना भी हुई।

द्विपक्षीय परिणाम इस तरह भिन्न मानव समूहो के सम्मिलन के हमेशा अच्छे बुरे द्विपक्षीय परिणाम होते हैं, इसकी जानकारी हमे मानवजाति के इतिहास की आदिम व्यवस्था से मिलती है। आदिम व्यवस्था से निकलने के बाद कुछ विजेता जातिया अपनी परिस्थितिजन्य सुविधा और अपने जातीय व मानवीय गुणो के कारण ज्ञान विज्ञान मे उन्नति कर आगे निकल जाती हैं कुछ पीछे छूट जाती हैं। आर्यों के उदय के साथ भारत का वैदिक काल तो स्वर्ण युग कहा ही जाता है, इसके पूर्व सिंधु सभ्यता के अवशेष भी हमारे प्रागैतिहासिक काल की गौरव गाथा कम नही सुनाते। एक पाश्चात्य विद्वान के अनुसार सारी पाश्चात्य सभ्यता, सस्कृति और शालीनता उन ओजस्वी विचारो के अतिरिक्त कुछ भी नही है जो उसे एशिया और मिस्र से प्राप्त हुए हैं। यानी आज की पश्चिम की सारी प्रगति पूर्व के ज्ञान विज्ञान पर आधारित है, यह पश्चिमी विद्वान भी खुलकर मानते है।

प्राचीन काल मे जो बडे-बडे उन्नत जातीय सघ थे—भारत, चीन, मिस्र—वे अपने निजी साधनो पर आश्रित रहने के कारण अपनी सस्कृतिया का अच्छा विकास कर सके उन्हे दीर्घकाल तक या स्थायी भी रख सके पर इसी कारण स्वय से सतुष्ट रह कालातर मे प्रगति मे पिछड भी गए। अपनी उच्चता के अहम् मे निर्बल बन गुलाम भी हो गए।

आक्रमणकारी विजेता जातिया मे से जिन्होने अपनी भिन्न सस्कृति हम पर थोपने

म जार-जबरदस्ती की, इसी उद्देश्य स लूट, मारकाट, स्त्री-अपहरण, धम पर आघात जैसे अत्याचारो का सहारा लिया उनसे अपने को, अपने धम को, सस्कृति को बचाने के लिए हमने अपने जातीय, धार्मिक बधन और कठोर कर लिए। स्त्रियो को घरो म बदकर सुरक्षित कर लिया। उनके आतक व अपनी जातीय सस्कारगत उदारता से उन्ह अपने यहा स्थापित होने दिया। पर सास्कृतिक आदान प्रदान के सामान्य प्रभाव के अलावा उनस रोटी-बेटी के सबध नही बना पाए बल्कि उन्ह ही यहा बसने के लिए इस देश की अपेक्षाकृत उच्च सस्कृति को अधिक अपनाना पडा। लेकिन जिन पश्चिमी जातियो न आतक स नही, अपने आधुनिक उन्नत ज्ञान विज्ञान और बुद्धि कौशल से हम पर शासन किया, उनकी सस्कृति से हम अधिक प्रभावित हुए। मानव समूहो के आदान प्रदान का यह एक सामाजिक नियम है, इसलिए इसे कुछ अस्वाभाविक नही कहा जा सकता। इसके उभयपक्षीय परिणामो से बचना लगभग असभव ही था। सक्षिप्त सी इस पृष्ठभूमि से हमारे पश्चिमीकरण व उसके अच्छे-बुरे प्रभावो को समझने म आसानी रहेगी।

लेकिन गुलाम भारत पर अनक दबाव होने पर भी हम अपनी जीवन पद्धति मे, रहन सहन और आचार व्यवहार म उनम कम प्रभावित रहे। आजाद होने के बाद क्या उस धारा म अधिक बहने लगे, इतना कि आज यह हमारा सबसे बडा सास्कृतिक सकट बन गया है, इसे समझने के लिए भी एक पृष्ठभूमि मे जाना होगा।

अप्रभावित जन-प्रवाह कोई भी बाहरी प्रभाव हो, हमारी ६५ प्रतिशत से अधिक जनता हमेशा उससे अप्रभावित रही है। पहले मुट्ठी भर राजा, नवाब, जागीरदार, जमीदार, साहूकार जो करत रह उसे अपनी सतोषी, अपरिग्रही वत्ति के कारण 'बडे लोगो की बडी बातें' कहकर आम भारतीय जन न केवल उसे नजरअदाज करत रहे उनकी दृष्टि मे वह क्षम्य भी रहा, सम्माननीय भी। आम जन प्रवाह उस सबसे अप्रभावित, लगभग अछूता रह अपनी धार्मिक, पारपरिक रीतियो नीतियो म लीन व तुष्ट रहा। तुलसीदास जी न भी इस आम जन प्रवृत्ति को कोई नप होय, हमे का हानि' कह कर अभिव्यक्ति दी है। स्वामी विवेकानन्द ने भी आम जनता की प्रतिक्रिया इन शब्दो मे व्यक्त की है, 'सत्तादड खडित हुए है। सत्ता का भिक्षापात्र एक से दूसरे हाथ म फिरता रहा है। पर भारत मे राजाओ अथवा राजसत्ता का प्रभाव अति अल्प वग पर रहा है। प्रजा अपने जीवन माग पर चलती रही है। राष्ट्रीय जीवन का यह प्रवाह कभी सवेग, तो कभी मद रहा है। पर जब भी मद हुआ, तुरत ससार को आलोकित कर देने वाली कोई प्रतिभा भी चमक उठी है। इसलिए भारत अजर अमर रहा है, आगे भी रहेगा।

मध्यवग का उदय

इस युग म सामतवाद का अवसान और औद्योगीकरण के फलस्वरूप पूजीवाद का उदय हुआ। इस कारण ऊपर के वर्गों क कुछ लोग भूमि-सपत्ति खोकर नीचे आ गए और निचले वर्गों के कुछ लोग उद्योगो द्वारा सपन्न होकर अपने स्तर से ऊपर उठ गए। इस तरह सभी जगह जिस मध्यवग की उत्पत्ति हुई, भारत उसका अपवाद नही है। यहा औद्योगीकरण की गति पहल मद रही, आजादी के बाद तज हुई, इसलिए औद्योगी

करण के प्रभाव भी पहले कम दिखाइ दिए, बाद म अधिक। किसी हद तक ये प्रभाव अवश्यम्भावी थे। पर बात इतनी ही नही है।

उनीसवी सदी के प्रथमाध म भारत म सामाजिक नतत्व गारा के भूमिपतिया के पास था जो अपनी भाषा म काम करते थे। इसलिए व जनता से अलग रहकर भी उनसे दूर नही थे। नेतत्व स्थानीय प्रथा और उनकी सत्ता की शक्तिया थी लोक रीतिया और लोक नीतिया। व्यक्तिगत प्रशसा निदा और परपरासिद्ध समाज स्वीकृत नियम व्यक्तियो को बाहर से ही नही, अपने भीतर स भी नियत्रित-अनुशासित रखत थे। पश्चिमी प्रभाव एक प्रतिशत शहरी लोगो पर भी न था। बल्कि यहा तक अपन जातीय और धार्मिक नियमा की कट्टरता थी कि पश्चिम से लौटे व्यक्तिया को जाति-बहिष्कार व धार्मिक शुद्धता के कमकाड स गुजरना पडता था। गाधी जी न भी अपनी आत्मकथा म इसका उल्लेख किया है।

नेतृत्व मुट्ठी भर अग्रेजीदा लोगो के हाथ मे उ नीसवी शताब्दी क उत्तराध मे सामाजिक नेत व गावो मे निकलकर पश्चिम म शिक्षित शहरी अग्रेजीदा लोगा के हाथ म आ गया। ये लोग स्वय को आम जनता से अलग व ऊपर रखने के लिए पश्चि मो मुख रहे। आज सौ वष बाद भी यह नेतृत्व उ ही के हाथ म है। यद्यपि मध्य वग की सख्या धीरे धीरे बढ़ती गई है पर भारतीय इतिहास और सस्कृति के प्रवक्ता डा० नीहार रजन रे के अनुसार 'आज भी यह अग्रेजी बोलने वाला वग देश की कुल आबादी का तीन प्रतिशत स अधिक नहीं है। और देश के राजनीतिक सास्कृतिक, बौद्धिक क्षेत्रा के नेतत्व की बागडोर इसी वग के पास है। किसान और श्रमिक सघा के नतत्व की भी। राष्ट्रीय भावनाओ और देशभक्तिपूण विचारधारा के बावजद हमारा अपना इतिहास भी पश्चिम की ओर अभिमुख है और अग्रेजी म लिखा गया है। भारत के आधुनिकीकरण का श्रेय भी इसी मध्य वग को है। अग्रेजी इस आधुनिकीकरण की भाषा है और विज्ञान व प्रौद्योगिकी माध्यम। गाधी जी ने इस समझा था, इसलिए पाश्चात्य प्रजातत्रीय धारणा अपनाकर भी उ होन आजाद भारत की नीव हिन्दुस्तानी तालीम और कुटीर उद्योगो पर रखनी चाही थी। लेकिन आजादी के बाद पश्चिम म शिक्षित नेतृत्व ने पश्चिमी विज्ञान और प्रौद्योगिकी को तो सामने रखा भारतीय स्थितियो व भारतीय मानस की उपेक्षा कर दी।

गाधी जी की राजनीतिक धारणा जो एक जीवनपद्धति भी थी, अस्वीकृत हो गई और विदेशी भारत का चुनाव कर लिया गया। परिणामस्वरूप औद्योगिक प्रगति से गरीब अमीर के बीच खाई ही नही बढी, आम भारतीय और सामाजिक नेतत्व सभाले थोडे से अग्रेजीदा लोगो के बीच विभेद की सास्कृतिक खाई भी बढती गई।

राजा काल का कारण महाभारत के शातिपव म युधिष्ठिर द्वारा दडनीति के विषय म एक प्रश्न है, 'काल राजा का कारण है या राजा काल का कारण ?' और भीष्म द्वारा शका समाधान के रूप मे उत्तर है 'राजा ही काल का कारण है, क्योकि उसे समाज के नियत्रण की शक्ति प्राप्त है।' आधुनिक पश्चिमीकरण को, आजादी के बाद के नेतृत्व और नीतियो के प्रभाव को इस ऐतिहासिक सदभ मे समझना चाहिए—केवल औद्योगीकरण प्रक्रिया की गति मे आजादी के बाद आई तीव्रता ही मात्र इसका

कारण नहीं है।

व्यक्तियों का निर्माण सामाजिक रीतियों-नीतियों के अनुसार होता है। इसीलिए किसी कालावधि के व्यक्तियों को उस समय विशेष के समाज के स्वरूप से समझा जा सकता है। व्यक्ति सहज रूप से प्रकृति का अंश है, सभ्य व विशिष्ट रूप में समाज का। समाज व्यक्ति पर शासन करता है, उसके हितों की उपेक्षा भी करता है, साथ ही व्यक्ति को शक्ति भी प्रदान करता है, क्योंकि समाज के साथ चलकर ही व्यक्ति में साहस, आत्मविश्वास और सुरक्षा की भावना पैदा होती है। मनोविज्ञान की भाषा में यह समाज तत्व ही व्यक्ति में आत्मा के रूप में अवतरित होता है। आत्मा की आवाज समाज द्वारा स्थापित विधि निषेधों से प्रभावित होती है। इन में से कुछ नियम सार्वभौम, सार्वकालिक होते हैं, कुछ तात्कालिक प्रभाव से निर्मित होते हैं, जिन्हें उस काल में स्वीकृति कम ही मिलती है। इसलिए अंतर्विरोध और अंतर्संघर्ष उपजता है।

बहुत कम लोग होते हैं जो समाज के अंतर्विरोधों व अपने आंतरिक संघर्ष से ऊपर उठकर कीचड़ में उगे कमल की उपमा साकार कर पाते हैं। शेष सब लोग उस दलदल में फंसे उसे ही अपनी जीवन-पद्धति व नियति मानकर चलते रहते हैं। और दल दल को सुखाकर जल की धारा मोड़ने वाले तो कोई विरले ही कभी कभी पैदा होते हैं, लेकिन होते जरूर हैं। वह दिन दूर नहीं, जब प्रकाश फिर पूर्व से निकल पश्चिम की ओर फैलेगा और विश्व में एक नई विज्ञानसम्मत आध्यात्मिक क्रांति होगी। पश्चिम के विज्ञानी इस ओर उन्मुख हो चुके हैं। ईसाई मत में आत्मा की खोज में शरीर का जो तिरस्कार किया गया था, उसकी प्रतिक्रिया पश्चिम में खूब हुई। इतनी कि शरीर प्रधान हो गया, आत्मा गौण। लेकिन हर अति विकृति तक पहुंचने के बाद फिर नई रचना करती है। शरीर का तिरस्कार कर नहीं, उसके भीतर से, उसके माध्यम से आत्मा की, अंतश्चेतना की, अलौकिक आनन्द की या ईश्वरीय साक्षात्कार से परमानन्द की कल्पना को प्राचीन भारत हजारों वर्ष पहले साकार कर चुका है। इस साधना से श्रेष्ठ संतति या 'सुपरमैन' की प्राप्ति भी संभव बना चुका है, आज का पश्चिमी विज्ञान भौतिक समृद्धि और असीमित उपभोग के विनाशकारी परिणाम देख उसी की खोज में फिर से प्रवृत्त हुआ है—नई सृष्टि, नये समाज की रचना के लिए।

निश्चय ही यह मूल प्रेरणा भारतीय है, जो निकट अतीत की तरह आज भी भारत से बाहर अपने प्रस्फुटन की राह खोज रही है। इसलिए कि वर्तमान भारत तथाकथित आधुनिकता के मोह में, उपभोग सामग्री के लालच में पहले उसी प्रक्रिया से गुजरने की कोशिश में है और पश्चिम से लौटकर फिर अपनी ओर देखना चाहता है। यद्यपि भारतीय उच्च वर्ग में लौटने के कुछ संकेत भी स्पष्ट हो चले हैं, लेकिन वहां भी ये अति और विकृति की प्रतिक्रिया की उपज हैं, सोच में किसी बुनियादी परिवर्तन के या स्पष्ट चिंतन के परिणाम नहीं इसीलिए भारतीय 'योगा' और 'इम्पोर्टेड' दोनों के मोह में अभी यह अन्तर्विरोध बरकरार है।

अनुकरण की सस्तरित प्रक्रिया समाजशास्त्रीय नियम में ही जीवन स्तर में ऊपर के लोग जो कहते हैं, खाते पहनते हैं, उनका जो आचार व्यवहार है उनसे निचले

स्तर के मध्यवर्गीय लोग उन्ही बातो का अनुकरण करत है और फिर निम्न वग के लोग मध्य वग के लागा का। लेकिन जब तक उसका चलन नीचे पहुचता है, ऊपर के लोग उस छोडकर नये तौर तरीके अपना चुके होते है, क्याकि वे स्वय को आम लोगा से पथक व ऊचा रख अपनी पहचान बनाए रखना चाहत हैं। किसी भी समाज म यह साइक्लि प्रक्रिया देखी जा सकती है। इस प्रक्रिया म बहुत बार नीचे की चीजें, बातें भी घूमकर ऊपर पहुचती है। ऊचे तबको मे आचलिक और आदिवासी फैशन, हिप्पी तौर-तरीक या 'माड' व्यवहार इसके उदाहरण ह।

यही हाल विकसित, विकासशील व अविकसित राष्ट्रा का भी होता है। विकास शील राष्ट्र विकसित राष्ट्रो की और अविकसित राष्ट्र विकासशील राष्ट्रा की नकल करत है। किसी हद तक यह प्रक्रिया मानव स्वभाव का अग होन के कारण सहज है। अतर पडता है, केवल विकास की परिभाषा के कारण। वतमान युग म जब विज्ञान व प्रौद्यो गिकी पर आधारित भौतिक प्रगति को ही मानव विकास और समाज विकास मान लिया गया है तो विकासशील राष्ट्रो द्वारा विकसित राष्ट्रा के इस दिशा मे अनुकरण को भी इस प्रक्रिया के अग के रूप म समझा जा सकता है। विशेष रूप से तब यह प्रक्रिया और भी प्रभावी होती है जब राष्ट्रीय नीतियो के निधारण मे भी यह अनुकृति पूरी पूरी उपस्थित हो।

विकसित पश्चिमी राष्ट्रा के अनुकरण की यह प्रवृत्ति भारत मे हर क्षेत्र म देखी जा सकती है पर यहा हमे मुख्यत वतमान सास्कृतिक सकट के रूप म यौन सम्ब धी आजादी की चचा ही करनी हैं। इसलिए कि इस क्षेत्र म अनुकरण करते समय हम ठोस वचारिक भूमि पर टिकी अपने देश की परपरा और मानसिकता को भूल जाते हैं। शायद यह भी नही जानते कि यूरोप की इस मानसिकता के पीछे उनका सास्कृतिक इतिहास क्या है ?

भि न पृष्ठभूमि अनुमान लगाइए कि हमारी सभ्यता हजारा वष पुरानी है जबकि आज से केवल कुछ सौ वष पूव यूरोप म लोग जगलिया की तरह रहते थे। कुछ लोग लूट खसोट से भमिपति बनकर बहुत अमीर थे शेष बहुसख्यक लोग बहुत गरीबी मे दयनीय जीवन बिताते थे। अमीरो मे अमीरी के कारण घोर विलासता थी गरीबों म बहुत गरीबी के कारण नैतिक नियमा की औपचारिकता न थी। और मध्य वग कोई था ही नही। आम जन जीवन मे जब लोग—स्त्रिया, पुरुष, बच्चे, बूढे जवान सब अस्त व्यस्त म भेड-बकरिया की तरह भरे रहते थे तो परिस्थिति न उ हे कई बाता को नजर अदाज कर देने पर विवश किया। इन परिस्थितिया म से गुजर कर उनकी परपराए विकसित हुई हैं। और नये बसे अमेरिका म कौन लाग थे ? यूरोप से आए ये लोग ही न। प्रारम्भ म अमेरिका म उन्ह इसस भी अधिक कठिन परिस्थितियो म स गुजरना पडा था। आज अमेरिका समद्ध है तो इसलिए कि उन लोगो ने खून पसीना एक कर हाड तोड मेहनत ही नही की एक धुन म लगकर ज्ञान विज्ञान की उन्नति पर भी ध्यान दिया। इस उन्नति की धुन में उन्होने नैतिक बधनो की अधिक परवाह नही की। आज भी अमे रिकन मूल चरित्र म यह लगन, मेहनत की आदत आगे—और आगे बढने की धुन और

बधनविहीन खुलापन देखा जा सकता है—केवल यौन-व्यवहार में नहीं, सभी प्रकार के व्यवहार में।

पश्चिमी टोटल चरित्र की नकल नहीं लेकिन उनके अतीत की इस पृष्ठभूमि को ही नही, उनके वतमान टोटल चरित्र को भी अनदेखा कर हम भारतीय केवल उनके चरित्र के यौन नैतिक अग की ही नाप जोख मे लग गए। दूसरे क्षेत्रो में उनकी चारित्रिक ईमानदारी और व्यवहार के खुलेपन को नजरअदाज कर गए। हमें अमेरिका जैसी समृद्धि तो चाहिए, पर जिस मेहनत-ईमानदारी के चरित्र से यह समृद्धि लाई गई, वह नही, जो चरित्र उनमें समृद्धि आने के बाद उभरा, उसकी नकल चाहिए।

हमारी राष्ट्रीय नीतिया और नेतत्व के चरित्र ने भी जिस पैमाने पर इसमें योग दिया, उसी गति से हमारी यह नकल प्रवृति व अधोगति बढी। आजादी के पहले सामती पृष्ठभूमि वाले ऊपर से सभ्य, उदार, व्यवहार की औपचारिकताओ में शालीन अग्रेजो के चारित्रिक मानदड और अपने राष्ट्रीय नेताओ के चारित्रिक आदश हमार सामने थे तो हमारी स्थिति भी लगभग उसी के अनुरूप थी—देश के लिए त्याग, बलिदान की भावना से उत्सग होन वाली आदर्शोन्मुख। आजादी के बाद अमेरिकन प्रभाव और पश्चिमोन्मुखी देशज नेतत्व के कारण हमारी स्थिति दूसरी हो गई और पिछले दस बारह वर्षो मे राजनीतिक नतिकता म क्रमश ह्रास के कारण तीसरी। वतमान यौन नैतिकता भी हमारे आज के समाज के टोटल चरित्र का ही एक अग है।

आधुनिकता के आयात की यह सौगात हमारे यहा अभी कुछ वष तक किसी लडकी के नाम विशुद्ध शरदचन्द्रीय साहित्य छाप कोई रूमानी प्रेम-पत्र आ जान का अथ था, एक भूकम्प आ जाना। पर अब 'ब्वाय फ्रेंडस' की डेटिंग 'नौकिंग', 'डास-पार्टी', डिस्कोथेक मीट के बिना शहरी लडकिया जैसे पिछडेपन मे शुमार मानी जाने लगी हैं। 'स्लीवलेस' 'लो कट, बैकलेस', 'सी थ्रू', 'बिकनी' शब्द आधुनिक फैशन की पाशाको म आम हो चले हैं विशेष रूप से सम्मोहन का जाल फेंकने वाली स्त्री-पुरुषो की क्लब-पार्टियो और बिजनेस की काकटेल पार्टियो मे।

लगता है, सम्पन्नता के बाद पिछले दो-तीन दशक से पश्चिम मे आई मुखर यौन क्राति का भी हमने, केवल एक तबके की सम्पन्नता को ही राष्ट्रीय सम्पन्नता समझ, अपने यहा आयात कर लिया है। लेकिन यहा वह उस छोटे म तबके के बाहर मुखर रूप म नही चल सकती तो उसे छदम व भ्रष्ट रूप मे फलाने का जैसे अभियान शुरू कर दिया गया है। यह अलग बात है कि शिक्षा, साहित्य, कला, राजनीति वेशभूषा, रीति रिवाज, वतन व्यवहार सभी म वहा जो इस वक्त 'आउट-आफ-डेट' हो चुका है, वह भारत की नई पीढी म 'अप-टू-डेट माना जाए। पर यह सच है कि आज इस सबके चलते हमारी अपनी कोई पहचान या अस्मिता नही बची है। जो है, वह या तो नकल हैं या खिचडी। हमारा पूरी तरह सास्कृतिक अवमूल्यन हो चुका है।

सबसे बडा सकट चारित्रिक सकट अग्रेजी की एक कहावत है अगर धन गया तो कुछ नही गया, स्वास्थ्य गया तो अवश्य कुछ गया, परतु चरित्र गया तो सब कुछ गया।' आज हमारे देश के सामने बहुत से सकट हैं। पर अनेक सकटों की जड यह

चारित्रिक सकट सबसे बडा है। 'गुलाम भारत आजाद भारत से बेहतर था'—हमारे बडे बूढे आज जब गाहेबगाहे यह बात दुहराते हैं तो इसे केवल गुजरी पीढी की बुदबुदाहट मात्र न मान, इसी अर्थ मे समझने की जरूरत है। देश के अधिकतर नागरिको के चरित्र से ही किसी देश की महानता की नापजोख की जा सकती है। मैंने कहीं पढा था कि जो काम जापान के जितने नागरिक छै सौ घटो मे करते हैं उतना अमेरिकन एक हजार घटो मे, वही काम हमारे यहा उतने ही नागरिक दस हजार घटो मे करते हैं। यह है कार्य के प्रति हमारी ईमानदारी। तो क्या प्रगति की दौड मे विजय केवल खुले फैशन, यौन-आजादी, और भ्रष्टाचार से होगी? राष्ट्रीय चरित्र के अभाव में ही हमारी प्रगति योजनाए वाछित फल नही दे रही है। कालगर्ल्स' और कालाबाजारी के धधे इसीलिए बढ रहे हैं। कानून और व्यवस्था की स्थिति इसीलिए बिगड रही है। और सुरक्षा या निश्चितता नाम की कोई चीज नही रह गई है।

लौटकी चक्रिक प्रक्रिया जैसा कि पहले कहा गया है कि स्थितियो मे अनुकरण या परिवर्तन की प्रक्रिया मे नीचे से ऊपर की ओर सस्तरण ही नही होता, एक 'साइक्लि' या चक्रिक प्रक्रिया भी चलती है। किसीभी चीज की 'अति' और 'विकृति' की ही अगली प्रतिक्रिया होती है घूमकर पीछे लौटना और लौटते हुए फिर से कल्याणकारी रचनात्मक दिशाओ की खोज करना। पश्चिम के युवाओ मे 'बीटनिक' और 'हिप्पी आदोलन' के माध्यम से प्रतिक्रियात्मक विद्रोह के उदाहरण है तो आधुनिक दार्शनिको व विज्ञानियो द्वारा विज्ञान के माध्यम से 'आत्मा की खोज' के प्रयत्न फिर से रचनात्मक व आध्यात्मिक दिशा की ओर बढने के। भारत मे इन दोनो प्रयत्नो की नकल 'माड फैशन', डिस्को कलचर, 'नशाखोरी', मुक्त यौन और आधुनिक योगियो, बाबाओ के पीछे भागने की प्रवृत्ति मे देखी जा सकती है। पश्चिम मे अभी हमारी दृष्टि अधिकतर समृद्ध अमरिका पर केन्द्रित है अत उसी की बात करें।

आज का अमरिका एक ऐसा व्यापारी देश है जहा करोडो की पूजी वाली सैकडो कपनिया रोज उभरती है और इतनी ही दिवालिया हो जाने की घोषणाए करती रहती हैं। हत्याओ और धोखाधडी के समाचार रोजाना छपते है। खोए हुए लोगो के भी। कहीं पिता लापता है, कहीं माता, कहीं किशोर कहीं किशोरी। खोए हुए बच्चे प्राय मिल नहीं पाते। परिवार पर परिवार विलुप्त होते रहते हैं। माध्यमिक शिक्षा पूरी न करने से पहले ही किशोर किशोरिया प्रेम (?) की खोज मे भटकने लगते है।

उन्नत औद्योगिक समाज की यान्त्रिकता मे मानवीय सवेदना खोकर इस सदी के पाचवें दशक मे वहा कुछ नवयुवको ने 'बीटनिक' आदोलन शुरू किया। समृद्धि से ऊबे ये युवा कोई काम धधा न कर समाज का कोई नियम कायदा न मान निरुद्देश्य घूमने लगे और कहने लगे, 'हम इस युग के बौद्ध भिक्षु हैं।' साठी मे से फिर नव वामपथियो की एक पीढी उभरी जिसने वियतनाम युद्ध विरोध जैसा राजनीतिक विरोध का मार्ग अपनाया। फिर आए हिप्पी जिनमे बीटनिको के नैतिक विरोध और नव वामपथियो के राजनीतिक विरोध दोनो के लक्षण मौजूद थे। इनमे बीटल्स गायको के प्रेमी फैशनपरस्त और स्वय को विद्रोह मानने वाले ब्रितानी 'रोकर्स' और 'माड्स' भी शामिल हो गए। फिर भी

वे देह पर चन्दन और मौरे रगड़ते हैं। रविशंकर का सितार सुनते हैं। परन्तु नी-
चुना हिप्पी लोग देह पर टीका कुरता पहनते हैं। झुंड के झुंड किसी पार्क में खड़े हो
कीर्तन करते हैं—हरे रामा हरे कृष्णा। 'कृष्ण कान्सनेस' का अमेरिका में एक भाग
उन्माद खड़ा हो गया है। वहां की धनिकों को उन्होंने वृन्दावन की गलियां बना दिया
है। वे नाच-गाने मस्त। विचित्र है कि उन्होंने सारे विश्व की फिल्म कम्पनियों, विज्ञापन
कहानियों, फैशन निर्माताओं, पत्र पत्रिकाओं और समाचारपत्रों के लिए दिलचस्पी,
व्यावसायिक सनसनी और अजूबापन का मसाला जुटाया है। हालीवुड इस विद्रोही पीढ़ी
पर पचासों फिल्में बना चुका है। भारत में भी 'हरे रामा हरे कृष्णा' की लोकप्रियता
के बाद देखी गई। इनके विश्व सम्मेलन भी होते हैं जिनमें कुम्भ मेले जैसा भीड़भरा
औघड़ दृश्य होता है और उसमें होता है एल. एस. डी. तथा गांजे का बोलबाला। ये
सारी दुनिया को छोड़कर भी 'दुनिया के हर व्यक्ति से प्यार करो' का नारा बुलन्द करते
हैं। अपने को मानवीय और अतिमानवीय कहते हैं। फिर भी दुनिया इन्हें अपनाती नहीं
वरन् इनसे आतंकित है—क्यों? इसलिए कि संसार छोड़ने वाले ये लोग न साधु हैं,
न विचारक। कोई रचनात्मक विचार दर्शन इनके पास नहीं है। ये केवल 'ड्रॉप आउट'
वर्ग के हैं। समाज चिंतक नहीं, समाज विरोधी। इनका दर्शन नकार का दर्शन है और
यह नकार रूढ़िमुक्त होकर भी अपने में एक रूढ़ि बन गया है।

यों तो हर धार्मिक आंदोलन सामाजिक विकृति का अंतिम परिणाम होता है, पर
रचनात्मक उद्देश्य से प्रेरित कोई भी धार्मिक आंदोलन समाज विरोधी नहीं होता। हिप्पी
आन्दोलन समाज का ही बायकाट करता है और भविष्य की आध्यात्मिकता जिस विज्ञान
पर आधारित होने जा रही है, उस विज्ञान का भी बहिष्कार करता है। भारतीय चिंतन
ने प्रेम और सेक्स के द्वैत को समाप्त कर उसे आध्यात्मिक परमानंद में देखा था, ये प्रेम
के नाम पर खुले आम भोंडे और विकृत सेक्स का प्रदर्शन करते फिरते हैं। इसीलिए
समाज इन्हें श्रद्धा तो क्या, सहानुभूति भी नहीं देता। भारतीय युवाओं में अधिकतर वे
ही इनसे प्रभावित हुए, जो उच्च वर्ग से संबंधित हैं और समृद्धता का स्वच्छंद उपभोग
करने के साथ (बाद नहीं) 'सेंस' के लिए या अपनी अलग पहचान बनाए रखने के लिए

'माड बन गए है। या मध्य व निम्नमध्य वग के वे युवा, जा सम्पन्नता म उनकी नक्ल नही कर पाए, पर 'माड' फैशन की नक्ल जिनकी जेब को रास आ गई। भारतीय समाज म इस 'माड प्रवत्ति को अपनी मूल सादगी या अपरिग्रही वृत्ति की ओर लौट के नही, भोग वत्ति के अग के रूप म ही देखना चाहिए। ये भौतिक समृद्धि से ऊबे हुए लोग नही है मात्र पश्चिमी नक्ल या अति आधुनिकता के मोह मे विद्रोह का मुखौटा चढाए हिप्पी दीखना (बनना नही) चाहते है।

नक्ली आधुनिकता सदियो की गुलामी के बाद आजाद होकर सबसे पहले हम अपनी सुप्त विलुप्ता चेतना को झक्झोर कर जगाना था। अपने खोए 'स्वत्व' को पान का प्रयत्न करना था। अपनी पहचान लेकर आगे नव-निर्माण की राह म बढना था। अपन स्वर्णिम अतीत, जो बहुत पीछे छूट गया था, की थाती लेकर उस प्रकाश की बुझी बाता को नये ज्ञान विज्ञान की ज्योति से पुन दीप्त करना था। इस तरह सही माने म आधुनिक होना था। हमारी विशाल जनसख्या की गरीबी व पिछडपन का उपाय उसे शिक्षित प्रशिक्षित कर उस अपार जनशक्ति द्वारा ही उसकी अपनी सीमाओ के भीतर किया जाना था। पश्चिमी ढग की प्रगति हमारे लिए एक ऐसी छलाग थी, जिसमे असमथ हो बहुसख्यक वग औंधे मुह गिर गया और जो अल्पसख्यक वग इससे लाभान्वित हुआ, वह भी इस चकाचौंध मे अपनी राह से भटक गया। परिणामस्वरूप मुट्ठी भर अग्रेजीदा लोगो द्वारा लाई गई यह पश्चिमोन्मुखी नक्ली आधुनिकता आज हमारे समाज के हर क्षेत्र मे व्याप्त है।

कुठा साहित्य मात्र पैसे के लिए लिखे गए घटिया साहित्य की बात जान दें, तब भी पिछले दो दशको म हमारे रचनाकारो ने यौन क्रान्ति के नाम पर जो लिखा, उस दिमागी दासता और मात्र दिमागी विलासिता की क्लई भी अब खुल चुकी है। लेकिन साहित्य समाज का दपण है या समाज साहित्य का दपण है ?' की बहस को उस साहित्य नेएक निणायकमोड अवश्य द दिया है। हमारे समाज मे जो नही था, उसे आयातकरके, ओढकर, अपना बनाकर कुठा मनास मे लपटकर समाज को दे दिया गया। अब हम गिन्सबग (?) का साहित्यही मगाकर नहीपढते, ब्लू फिल्म'भी मगाकर देखतेहैं। फूहड ढग के कैबरे भी पसद करत हैं। नौकरी मे पदोन्नति के लिए अफसर को अपनी पत्नी भेंट करने मे भी नही हिचकिचाते। आखिर जीवन-स्तर जो बढाना है! साहित्य म से श्लील (शोभा और सौंदय) तथा प्रेम (शक्ति और विश्वास) को बहिष्कृत कर मात्र सेक्स को स्थान द झूठी आधुनिकता ओढने व प्रदर्शित करने का ही यह नतीजा है। हमारा लगभग यही हाल कला फैशन रहन सहन के तौर तरीका मे भी रहा।

धम निरपेक्षता या धम विमुखता दो भिन्न सस्कृतियो के सम्मिलन के जो अच्छे बुरे द्विपक्षीय परिणाम होते हैं आग की राह भी उन्ही अनुभवो स निकलती है। यह हम पर निभर था कि हम उन प्रभावो को अपने ऊपर कितना हावी होने देते कितना उनसे लाभ उठाते! मानवीय स्वतत्रता उदारता प्रजातत्रीय धारणा की पुन -स्थापना के लिए हम पश्चिम के ऋणी है धम निरपेक्षता के रूप म धम विमुखता के लिए नही। धम हमारे लिए साप्रदायिकता नही जीवन का सचालक-सूत्र था—गहस्थ

धम, पडोस धम, समूह धम, व्यक्ति धम के नाते जीवन के हर कदम पर हर व्यक्ति को उसका कतव्य बोध कराने वाला। समय के साथ उनमे आई विकृतियो का ही परिष्कार करना था, समूचे धम को जीवन से बहिष्कृत नही करना था। धमप्राण किन्तु बहुधर्मी बहुभाषी इस देश मे एक समन्वयवादी धम एक समतावादी स्वतन्त्रता का दृष्टिकोण प्रगति मे सहायक होता। पर अपने धम, अपनी सस्कृति मे विमुख हो आज हम न इधर के रहे है न उधर के। ओढी हुई चीज जब न हमारे जीवन का अग बन पाती है, न हमारे भीतर मे स्वीकृत होती है तो हम अपने से ही उखडने लगते है। अपने से उखडन की यह प्रक्रिया ही फिर अपनी ओर लौटने की प्रक्रिया को जन्म देती है। मैं समझती हू अभी अस्पष्ट रूप मे सही, यह प्रक्रिया प्रारभ हो चुकी है और भविष्य की आशा इस आरभ पर ही टिकी है।

लौटता हुआ चक्र

लौट के सकेत स्पष्ट हो चले हैं पर लौटन के लिए यह दबाव अभी यौन क्रांति के नाम पर आयातित यौन उच्छ खलता के दुष्परिणामो—सामाजिक विकृतिया और पारिवारिक टूटन से उपजा है। उखडे पैरो के फिर पीछे मुडकर देखने की प्रवत्ति से ही उपजा है। इसलिए उस चक्रिक प्रक्रिया का ही अग है। जब यह प्रक्रिया हमारे यहा निम्न आकडा और समय समय पर प्रकाशित ऐसी रिपोर्टों की तुलनात्मक विवेचना को चेतावनी रूप मे ग्रहण कर अपने भीतर स दबाव अनुभव करेगी और अपने सुविचारित निणय से समय के चक्र को अपनी ओर घुमाएगी, तब यह लौट अपने लक्ष्य की परिधि मे आ सकेगी और तभी यह हमारी आगामी प्रगति को निर्धारित करने मे सफल हो पाएगी।

ये रपटें सन १९६८ म श्रीवेम्स पैकाड ने अमेरिका कनाडा, ब्रिटेन नार्वे इटली, जमनी के विश्वविद्यालयो की २२०० लडकियो से मुलाकात कर जो निष्कप निकाले थे, उनके अनुसार, ६३ प्रतिशत ब्रितानी, ६० ६० प्रतिशत अमेरिकन व जमन, ५४ प्रतिशत नार्वेजियन, ३५ प्रतिशत कनेडियन और १० प्रतिशत इटैलियन लडकियो ने विवाह पूव अपने यौन सबधो के अनुभव को स्वीकार किया था। यह टोटल आकडा तब ४३ प्रतिशत बैठता था। इसके पूव १९४० की प्रसिद्ध किस्ले रिपोट मे यह प्रतिशत २४ था और अब १९७० ८० के दशक की कई रिपोर्टें मिलाकर ६७ प्रतिशत हो जाता है। इसमे स्कडेनेवियन देशो के और अमरिका के आकडे सर्वाधिक हैं। इससे समस्या मे दिनादिन वृद्धि स्पष्ट है। साथ ही ताजी रिपोर्टों का यह पहलू भी कि अब पहल महिलाए करती हैं और पुरुष केवल स्वेच्छा प्रकट करत है। पश्चिमी देशा मे लडकियो के लिए युवको को विवाह के लिए राजी करना पहले ही टेढी खीर था, अब उनकी यह कठिनाई और बढ गई है। उन्हे न जाने कितनी तिकडमे लडाकर, हथकडे अपनाकर पुरुपो को विवाह के लिए फसाना पडता है।

भारत मे स्थिति अभी यहा तक नही पहुची है। विवाह पूव यौन-सबधो का आकडा यहा अभी पश्चिम स एक तिहाई भी नही बैठेगा। पर इस दिशा म बढन की गति म इधर जो तीव्रता आई है उस पर क्या हमारी चिन्ता नही जागनी चाहिए?

ब्रिटेन के गृह विभाग द्वारा १९८४-८७ के दौरान सर्वेक्षण में कुल अपराधी संख्या में उल्लेखनीय अपराधियों की संख्या एक चौथाई थी। १९८९-९१ में यह बढ़कर २० प्रतिशत तक पहुँच गई—खून के जुर्म में ही पकड़े जाने वाले अपराधियों में से ४० प्रतिशत अपराधी २१ वर्ष से कम उम्र के थे। पर ये केवल अपराध के अंतिम स्तर तक पहुँचने वाले सजा के मामले थे। निचले स्तर पर अपराधों की संख्या में यह प्रतिशत काफी अधिक था। इधर के वर्षों में यह और बढ़ा है।

भारतीय किशोर भी जब धीरे-धीरे इस ओर बढ़ रहे हैं तो क्या कहीं प्रभावी 'मॉनिटरिंग' तंत्र के बारे में नहीं सोचना होगा?

मानसिक तनाव के जहर पर दृष्टि डालें तो सन् १९७२ की डा. मोतिला की रिपोर्ट अनुसार ही अमेरिका में २० प्रतिशत लोगों की मृत्यु प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से मानसिक तनाव के कारण होती है।

उसी साल की 'इण्डियन साइकियाट्रिक सोसायटी' की रिपोर्ट के अनुसार भारत में दो से तीन प्रतिशत लोग मानसिक रोगों से ग्रस्त हैं। पर यह संख्या इधर काफी बढ़ रही है। साथ ही बढ़ रहे हैं उच्च रक्तचाप और हृदय रोग। कुछ विशेषज्ञों के अनुसार इनके पीछे अति यौन का भी पूरा हाथ है। भारतीय चिकित्सा जगत इस पर चिंतित है। यह चिंता पूरे समाज की नहीं होनी चाहिए?

अमेरिका में मनोविज्ञान के एक शोध छात्र ने कुछ समय पूर्व अपना एक निबंध प्रस्तुत किया था जिसमें सबसे घृणित समझे जाने वाले यौनाचार—आत्मीयगमन के भागीदार व्यक्तियों से बातचीत का ब्यौरा प्रस्तुत किया गया था। इस शोध प्रबंध ने इसके पहले की सारी धारणाओं को झुठलाने की कोशिश की। इससे मानव-सभ्यता के सभी मानकों को आघात पहुँचा क्योंकि यह आत्मीयगमन (निकट के खून के रिश्तों में यौन संबंध) से उसके भागीदारों को किसी तरह के मानसिक आघात पहुँचने की धारणा का खंडन करता था इसलिए इसने अमेरिका में ही नहीं सारी दुनिया में खलबली मचा दी। एक तरह से यह फ्रायड के 'इडिपस काम्प्लेक्स' की ही दूसरे ढंग से पुनर्स्थापना थी, जिसका कि पहले घोर विरोध हो चुका था।

पर विरोध और कटु आलोचनाओं के साथ-साथ इस नई स्थापना ने कुछ समर्थक भी पैदा कर लिए जिनकी धारणा थी कि यह मानव विकास में बाधक नहीं सहायक ही है। इसी हलचल ने 'इनसेस्ट द लास्ट टैबू' और 'माई ईवल विद डैड' जैसी पुस्तकें भी मार्केट में ला दीं जिन्होंने 'द सेंसुअल वूमेन', 'फारबिडन गार्डन', 'जायज आफ सेक्स', 'मेन इन लव', किशोरों के लिए प्रकाशित विकृत ढंग तक यौन शिक्षा देने वाली 'द सेक्स बुक' जैसी सनसनीपूर्ण और भारी बिक्री द्वारा अपने लेखकों को मालामाल करने वाली कई पुस्तकों को पीछे छोड़ दिया। 'दाई नेबर्स वाइफ' नाम की 'स्विंगर्स' जैसे कारनामों को प्रकाश में लाने वाली पुस्तक ने भी बिक्री के नए रिकार्ड तोड़े।

पर अमेरिका जैसे देश में कोई भी नई बात चार दिन से अधिक नहीं टिकती। समृद्धि से अघाए उन लोगों को फिर कोई नई सनसनी चाहिए। इसीलिए वहाँ 'डेटिंग' में विवाहपूर्व यौन प्रयोग, विवाह संस्था की टूट, तलाक बहु प्रचलन, बिना विवाह विवा

हित जीवन, समूह विवाह ('ग्रुप मैरिज' का प्रयोग करने वाले ही 'स्विगर्स' कहलाते हैं) के प्रयोगों से ऊब लौटकर न जाने क नाम पर प्रेमम आत्मा और परमात्मा की खोज और स्थायी पतिव्रत-पत्नीव्रत की बात स्वीकार करने वाले लोगों समर्थक पैदा हो गए हैं।

'टाटास्ट द लास्ट टैबू' और 'दाई नवस वाइफ' तक कुठा मुक्ति, वर्जना-मुक्ति, यौन मुक्ति का नारा लगाने वाले समाज में इसके बाद नया ब्रह्मचर्य नाम की पुस्तक पर सनसनी फैलने लगे तो कोई आश्चर्य नहीं होना चाहिए। द न्यू सलिबसी व्हाई मोर मेन एंड वूमेन आर एब्स्टेनिंग फ्राम सेक्स एंड एन्जाइंग —यानी सेक्स नहीं' या 'ब्रह्मचर्य' के समर्थन में भी उसी तरह भेंट वार्ताएं कर अनेक समर्थक जुटा लिए गए, जिनमें डाक्टर, मनोवैज्ञानिक और विद्वान सभी थे। उनके वक्तव्य थे जब से उन्होंने ब्रह्मचर्य अपनाया है स्वयं को शुद्ध पवित्र और नैतिक शक्ति सम्पन्न पा रहे हैं विषय-वासना में लीन रहकर वे अपनी निगाहों में गिरते और हीनताबोध से घिरते चले गए थे और अब स्वयं को ऊंचाई पर स्थित तेजोमय अनुभव करते हैं आदि।

भारत में भी इधर अगम्यागमन की रिपोर्टें मिलने लगी हैं (पाठकों की समस्याओं वाले अनेक पत्र और मनोवैज्ञानिकों, मन चिकित्सकों की केस फाइलें इसकी पुष्टि करती हैं)। 'माई नेम्स वाल्फ' शीर्षक का अर्थ देने वाली कहानियों ने भी काफी संख्या में घर को तोड़ना आरंभ कर दिया है। बेशक अभी हमारे यहां यह संख्या कम है, पर इस ओर बढ़ने की प्रवृत्ति तो जारी है। तो क्या इन प्रवृत्तियों पर नियंत्रण अथवा आत्म-संयम और ब्रह्मचर्य की बात भी हम पश्चिम के 'नये ब्रह्मचर्य' से सीखेंगे ?

भारत के लिए ब्रह्मचर्य नई बात नहीं है। हमारे ऋषि मुनियों से लेकर दयानन्द विवेकानन्द, गांधी, विनोबा, जयप्रकाश, मोरारजी भाई तक इसकी वकालत करते रहे हैं। विरोध हुआ है, केवल अति-दमन की बात पर ही। और 'अति सर्वत्र वर्जयेत्' के हम सदा समर्थक रहे हैं। प्राचीन भारतीय समाज व्यवस्था किसी भी पक्ष की 'अति' से बच कर जीवन के संतुलन पर जोर देती है। चार आश्रमों में से प्रथम ब्रह्मचर्य आश्रम के लिए २५ वर्ष की आयु निर्धारित कर दी गई थी कि ज्ञानार्जन की यह अवधि ज्ञानार्जन और व्यक्तित्व निर्माण को ही समर्पित रहे और अगली गृहस्थाश्रम की २५ वर्षीय अवधि में इस संचित शक्ति का उपयोग विद्वान और बलवान संतति प्राप्त करने के लिए किया जा सके। इससे अगली वानप्रस्थ व संन्यास अवस्थाएं समाज में वृद्ध समस्या को भी एक सम्मानजनक व उद्देश्यपूर्ण हल प्रदान करती थीं।

बदले समय में आज वे ही स्थापनाएं यथावत नहीं चल सकतीं, क्योंकि ज्ञानार्जन की गति तीव्र हो गई है और भौतिक सुख साधनों ने जीवन की धारा बदल दी है। पर उपरोक्त वर्णित पश्चिम की दोनों अतियों से बचकर क्या हमारी अपनी कोई अलग राह, जिसकी प्रेरणा हमारे यहां मौजूद है नहीं हो सकती ?

कुल मिलाकर इन अध्ययनों से सिद्ध है कि अन्य क्षेत्रों की तरह इस क्षेत्र में भी अभी हम पश्चिम से काफी पिछड़े हैं। इसलिए हमारा सामाजिक व पारिवारिक ढांचा अभी विघटन की उस कगार पर है, जहां से उसे संभालना संभव है। कहीं ऐसा न हो कि हम देर कर दें और आगे चलकर समस्या—छात्रों के लिए, बेसहारा स्त्रियों के

लिए, अनाथ बच्चों के लिए, अनाथ वृद्धों के लिए कुमारी माताओं के लिए, अपराधी किशोर किशोरियों के लिए, बलात्कार की शिकार व अन्य तरीके से सताई गई महिलाओं के लिए कई अलग-अलग सहायता व पुनर्वास संस्थाएं कायम करते करते भी स्थितियां हमारे हाथ से निकल जाएं और मोह की यह पवित्र प्रक्रिया सबी हर हमारे लिए नारी पड़ जाए।

पाश्चात्य संस्कृति की हर बात आंख मूंद हमारे लिए अपनी स्वस्थ परम्पराओं की अवहेलना करना क्या ठीक होगा? दूसरों की गलतियों दुहराने से पहले क्या हम उनके परिणामों पर दृष्टि नहीं डाल सकते? भारत जैसे देश में अशिक्षा, बेकारी, गरीबी दूर करना तथा प्रतिष्ठा के लिए उत्पादन पर जोर न देकर भोग विलास की वस्तुओं और आदतों को बढ़ावा देना निरा अपराध माना जाना चाहिए।

सिनेमा प्रभाव सिनेमा के परदे की औरत

आज के युग में फिल्मों को सामाजिक बदलाव का एक अचूक अस्त्र कहा जा सकता है। इस दृष्टि से यदि हमारे नेता और फिल्म निर्माता मिलकर कोई सद्भाव नीति निर्धारित करते तो इस लोकप्रिय माध्यम से चाहे जैसा काम लिया जा सकता था भारतीय फिल्मों के आरंभिक दिनों में दुनिया न माने, अछूत कन्या, दुल्हन, 'स्वयसिद्धा' जैसी फिल्मों से कुछ आशा बंधी भी थी लेकिन बाद में यह धूमिल हो गई। हमारी फिल्म सामाजिक उद्देश्य से उत्तरोत्तर भटकती गई। इतना ही नहीं आज की जिम्मेदारीविहीन आजादी, यौन-उच्छृंखलता, हिंसा, अपहरण, बलात्कार भ्रष्टाचार वाली सामाजिक विकृतियों के लिए उन्हें बहुत हद तक दोषी भी ठहराया जा सकता है।

झूठी जिन्दगी नकली औरत दुनिया में अगर नकली औरत ढूंढनी हो तो उसे भारतीय फिल्मों के पर्दे पर खोजना बहुत आसान है। जिस तरह फिल्मों में भारतीय लड़की खेतों में, पहाड़ों पर, शहर और गांव की गलियों में, सड़कों पर किसी युवक के पीछे दौड़ लुका छिपी का खेल खेलती है क्या मन उसकी यथार्थ जिन्दगी में क्या कहीं संभव है? नहीं है पर उस क्षण सपने देखना और समाज की आंखों में धूल झोंक चोरी छिपे इन खेलों में संलग्न हो भटक जाना तो सिखा दिया गया है।

भारतीय फिल्मों में लड़कियों के माता पिता एक ओर तो बेहद दकियानूसी दिखाए जाते हैं, दूसरी ओर उन्हें यह पता नहीं चलता कि उनकी बेटियां किस तरह की तड़क भड़क वाली वेशभूषा से सज्जित किस तरह के हाव भाव लिए घर से बाहर निकलती हैं? कहां जाती हैं? कितनी देर बाहर रहती हैं? क्या करती हैं? यह सब न सामान्य भारतीय जिन्दगी में होता है, न अनदेखा किया जाता है। लेकिन कच्ची उमर की मासूम किशोरियां इतना परिपक्व मन मस्तिष्क कहां रखती हैं कि गुमराह करने वाले इस ग्लैमर की तह तक जाकर देख-सोच-समझ सकें। बेचारी वे तो एक ही बात जानती हैं कि ऐसे दृश्य उनके सपनों में आलोडन पैदा करते हैं। इनसे प्रेरित हो वे फिर न इधर की रहती हैं न उधर की बस एक भ्रम जाल के ताने बाने में उलझ कर रह जाती हैं।

फिल्मी जिन्दगी के नकलीपन से दूसरी मुख्य शिकायत है कि उसमे नारी-जीवन और स्वभाव का चित्रण एकदम अस्वाभाविक और अतिरजित होता है। वह सास है तो साक्षात रणचडी। वह है तो नितान्त गऊ और चुपचाप आसू बहाने वाली। अशिक्षिता है तो सती-साध्वी और शिक्षित या आधुनिका है तो किसी का शर्म लिहाज न करने वाली, बडे बूढो का अपमान करने वाली और प्राय चरित्रहीन। जैसे अशिक्षा और अज्ञान ही चरित्र की कसौटी हो।

फिल्मो की आदर्श नारी वह है जो पति का हर अत्याचार सह, त्याग पर त्याग करती चली जाए और बदले म पाए केवल कष्ट, ताडना और लाछना। सौतेली मा या खलनायिका है तो दुनिया भर की बुराइयो की जड, जिसमे भलापन कही कुछ भी शेष नही रहता। लेकिन अन्त मे एकदम नाटकीय तरीके से बदल कर वह भली औरत बन जाती है। और इसके साथ ही सारी गडबडिया भी ठीक हो जाती है। 'अत भला सो सब भला!'

इसी तरह कामकाजी नारी का रूप भी खूब बिगाडकर दिखाया जाता है। मानो जो स्त्रिया घरो से बाहर जाकर रोजी-रोटी के लिए खटती हैं या राष्ट्र का, समाज का काम करती हैं, वे सबकी सब पथभ्रष्ट हैं, अथवा कदम-कदम पर भूखे भेडिए उन्हे निगल जाने के लिए तैयार खडे हैं। बदलती स्थितियो म नारी की जो क्षमताए उभरकर सामने आई हैं या उसका जो मानवीय रूप उभार कर सामने लाया जाना चाहिए, सिनमाई जिन्दगी म उसका नितान्त अभाव है।

दोगलापन सिनेमा वाले औरत से दो ही काम लेना चाहते है। वह पर्दे पर अपने शरीर के उठाना, चाल ढाल की हरकतो और आखो की चचल चितवनो से लोगो का ध्यान का काम भी करे और साथ ही सती-साध्वी भी हो, ताकि हमारी मध्यवर्गीय नतिकता को किसी तरह की चोट न पहुचे। अधनग्न रखने वाले 'माड' वस्त्र पहन, अपने उभारो का आमन्त्रण देते से ढग के साथ खुल्लमखुल्ला प्रदर्शन करने और प्यार किया तो डरना क्या की शैली म सरे आम प्यार का इजहार करने वाली पर्दे की नायिका जब अन्त म आदर्श भारतीय नारी (?) की तरह या तो मा-बाप की आज्ञाकारी बेटी बन उनके द्वारा चुने वर स शादी कर लेती है या पहले की सारी खुराफातें त्याग कर सीधी-सादी भारतीय ललना बन जाती है, तो कहा खोजेंगे उसका अपना व्यक्तित्व दर्शन ?

प्रेम को एक भावभरी चितवन या स्निग्ध मुस्कान से अभिव्यक्त करती, सघर्ष स जूझती, विभाजित मन की उथल पुथल से कसमसाती और मनोवेदना को छिपा ऊपर से सहज बन व्यावहारिकता निभाती आधुनिक भारतीय नारी का तो फिल्मो मे नामो-निशान नहीं मिलता। न ही हमारे गावो, अचलो की प्रतिनिधि सीधी सादी, लेकिन लोक व्यवहार मे प्रशिक्षित आम भारतीय नारी का।

कुछ अपवाद छोड दें तो नारी का यह कृत्रिम रूप हमारी फिल्मो म दादा साहब फालके के जमाने से चला आ रहा है। देश की आजादी, शक्षणिक उन्नति और सामाजिक आर्थिक परिवर्तनो से लेकर महिलाओ के बडे बडे ओहदो पर पहुचने तक, एक शक्तिशाली महिला के प्रधानमन्त्री होने तक भी, पर्दे की औरत के इस रूप पर कोई

खास असर नहीं पडा है। कुछ असर आया है तो केवल इतना कि फैशन के तौर-तरीके कुछ अधिक 'मार्डन' हो गए हैं। मारधाड़ की अलग पहचान वाली फिल्मों की हिंसा अब सर्वव्यापी हो गई है और यौन हिंसा की मिलावट इस हिंसा में लगभग जरूरी मान ली गई है।

यह मानने के बावजूद कि हमारी फिल्मों ने सामाजिक कुरीतियों के निवारण में अपना एक महत्त्वपूर्ण रोल अदा किया है, भारतीय नारी के इस पतली, दोगले रूप की शिकायत रही बरकरार है। जब भारत में सिनेमा आया तो उस जमाने में एक भी भारतीय स्त्री उस में काम करने के लिए तैयार नहीं थी। कुछ समय पुरुषों ने स्त्रियों का रूप धारण कर काम चलाया। धीरे धीरे फुसला कर, लालच देकर स्त्रियों को रुपहले पर्दे के मायाजाल में फसाया गया। फिर वह नारी जागृति के नाम पर स्वयं ही आग बढ़ इस रूमानी व इन्द्रिय जाल में उलझती चली गई। पुरुषों के हाथ का खिलौना बन कर उनके हाथों खेलती रही और छली जाती रही।

फिल्मी नारी की विडंबना फिल्मी कहानियों में शहर के छैला-बाबू गावों अल्हड, पहाडों की भोली किशोरियों को मीठी बातों में फुसला, झूठे सपने दिखा उनका सर्वस्व लूटते रहे। फिर वे रफूचक्कर हो गए और पेट में पलते पाप की गठरी लेकर उन किशोरियों को किसी चोटी से कूदना पडा। यदि वे शहरी आधुनिका रहीं तो उन्हें शराब पीकर पुरुषों के साथ नाचना पडा। बिकनी पहनकर पराए मर्दों के साथ जल क्रीडा करनी पडी। पोशाकों में बेशर्मी के रिकार्ड तोडने पडे। प्रेमी के साथ चोरी छिपे भागकर या परिवार वालों के सामने ही उनके गले में बाहें डाल सारी मर्यादाओं को उठा कर ताक पर रखना पड़ा। घरों में भारतीय युवतियां यह सब कभी नहीं करती थी, लेकिन अब देखा देखी करने लगी हैं।

यहां जो नारी नायिका है उसका जिन्दगी मे एक ही काम है इश्क करना। दिन में कई-कई बार पोशाकें बदलना और किसी भी तरह बाहर निकल नायक के साथ बगीचे में, पेडों के इर्द गिर्द भागना दौडना या गाने गाना। फिर पीछे पडे रहने वाले खलनायक से बचाव के उपाय खोजते रहना, किसी स्थल पर उसकी पाशविक हवस और बलात्कार की शिकार होना और ऐन मौके पर सारी बाधाएं पार करके, निहत्थे दस गुंडों से निपटने वाले नायक द्वारा बचा लिया जाना। भला बताइए वास्तविक जीवन में क्या ऐसा होता है? इधर इतने बलात्कारों की खबरें आ रही हैं, कितने हीरो पहुचे उन्हें बचाने? थाने में मथुरा के साथ बलात्कार होता रहा और उसका प्रेमी अशोक असहाय बाहर खडा रहा।

प्रतिबिंबित समाज

लेकिन इन कहानियों इन दृश्यों और इनमे दिखाए जाने वाले भारतीय नारी के इस रूप का असर तो नासमझ उम्र के किशोर किशोरियों पर पडता ही है। किशोर-किशोरियों पर ही क्यों समाज पर व्यापक रूप से भी। फिल्मों के इस नकली जीवन, ग्लैमर और दोगलेपन की चाह आधुनिक समाज में यहां वहां, लगभग सर्वत्र देखी जा

सकती है। परिपक्व उम्र व समझ वाला पति भी अपनी पत्नी को सजने संवरने वाला सामान खुशी-खुशी लाकर देगा। अपने मित्रों के सामने उसे आधुनिकतम फैशन में सज्जित फिल्मी हीरोइन सा देखना पसंद करेगा। लेकिन वह कभी बर्दाश्त नहीं करेगा कि उसकी वह पढ़ी लिखी, सुंदर, आधुनिक पत्नी अपने दिमाग का उपयोग कर कोई स्वतन्त्र निर्णय ले या उसके मित्रों के साथ सहज मानवीय स्तर पर मिले जुले।

फिल्मी सितारे जो परदे पर ही नहीं, अपने सामाजिक जीवन में भी अनेक महिलाओं से इश्क फरमाते फिरते हैं विवाह के बाद अपनी प्रतिभाशाली हीरोइन पत्नी को फिल्मों में काम करने की छूट नहीं देते। और उसे घर बिठा लेते हैं। इन्हीं कारणों से राज विवाह, रोज तलाक इनमें आम बात हो गई है। तमाम फिल्मी पत्रिकाएं केवल इन्हीं झूठी सच्ची कहानियों, किस्सों स्कैंडलों से भरी पड़ी हैं। प्रतियोगिता में पीछे छूट रहे नायक-नायिकाओं द्वारा स्वयं भी केवल 'पब्लिसिटी स्टंट' के लिए बहुत से स्कैंडल प्रचलित किए जाते हैं।

ये ही पढ़ना सुनना, इन पर चर्चा करना आज की युवा पीढ़ी का आम शौक है। इसलिए दैनिक अखबार भी ये सुर्खियां समेटे हैं और पारिवारिक साहित्यिक पत्रिकाएं भी इनसे अछूती नहीं। जब फिल्मी कहानियों में भी यही दोगलापन है आज के युवा युवतियों के आदर्श हीरो फिल्मी नायक नायिकाओं के जीवन में भी, तो फिल्मों से सामाजिक बदलाव की आशा की भी कैसे जा सकती है? नारी मुक्ति के तमाम नारे भी इस स्थिति में नारी को 'वस्तु' से 'व्यक्ति' नहीं बना सकते।

उत्तरोत्तर हिंसा और यौन हिंसा—एक चिंताजनक स्थिति लेकिन सबसे अधिक चिंताजनक बात है हमारी फिल्मों में दिनादिन अधिक सेक्स और सेक्स हिंसा का प्रवेश। एक दौर था नायिका को अकस्मात आंधी तूफान के बाद मूसलाधार वर्षा में भिगोकर उसके शरीर-उभारों को भीगे कपड़ों के भीतर से दिखाना। सेक्स दिखाने के लिए नायक नायिका के समीप होते ही उनके बीच की संभावित क्रिया को किसी ओट में लेकर प्रकृति में युगल पक्षी की किलोल या किसी अन्य प्रतीक के माध्यम से सांकेतिक रूप में दर्शाना। अब इन दृश्यों का स्थान कैबरों और बलात्कार दृश्यों ने ले लिया है। पहले मार धाड़ वाली फिल्में धार्मिक फिल्में और सामाजिक फिल्में अपनी अलग अलग पहचान के साथ भिन्न भिन्न रुचि के लोगों के लिए प्रस्तुत थीं। सभ्रांत और बुद्धिजीवी वर्ग में मार धाड़ वाली, सेक्स की सस्ती रुचि प्रदर्शित करने वाली 'स्टंट' फिल्में देखना अप्रतिष्ठा का द्योतक था। कुछ मनचले युवक उन्हें चोरी छिपे देखते थे। बहू-बेटियों के लिए तो वैसी फिल्में देखने का निषेध ही था। अधिकतर वे निम्न वर्गों की रुचि की फिल्में मानी जाती थीं। कोई मध्यवर्गीय गृहस्थ अपने परिवार के साथ उन्हें देखना पसंद नहीं करता था। गृहणियां और बड़ी उम्र की स्त्रियां मिलकर प्रायः धार्मिक फिल्में देखने जाती थीं और घर के मुखिया परिवार के साथ केवल सामाजिक फिल्में देखते थे।

लेकिन फिल्मों में व्यावसायिकता बढ़ने के साथ निर्माता इन तीनों वर्गों के बीच की खाई पाटने के नए नए उपाय सोचने लगे। पहले धार्मिक फिल्मों (हर-हर महादेव, पाताल विजयी हनुमान आदि) में मार धाड़ के दृश्य भरे जाने लगे। फिर सामाजिक

फिल्मो म भी यह दौर शुरु हो गया। इसके बाद इस शताब्दी के आठवें दशक तक आते-आते तो निर्माता इस सोच के शिकार हो गए कि फिल्मो से अधिक स अधिक मुनाफा कमाना है तो उसम ज्यादा बिकने वाला 'माल' सेक्स और हिंसा भरें। सुना है कि किसी फिल्म को खरीदने के पूर्व दरात समय वितरक सबसे पहले 'चेज' या 'रप' के दृश्य देखते है और फिर उसी अनुपात से उनम खरीद की प्रतिस्पर्धा लग जाती है।

हैरत तो तब होती है जब मार धाड और नगईपन वाली इन फिल्मो को देखने के लिए महीने के आखिरी दिनो म भी टिकट खिडकी पर भीड टूट पडती है। इस भीड म अधिकाश चेहरे होते हैं पेट काटकर भी जिंदगी की घुटन, ऊब और कष्टो के दबाव से ढाई तीन घटो के लिए छुटकारा पाने वाले श्रमिक वग के, निम्न मध्य वग के या दूसरों को मार कुचल, ठेल घसीट कर आगे बढने वाले नवधनाढ्य वग के। फिल्मी हीरो सबसे ज्यादा इस नव धनिक वग के आदश हैं, क्योकि इनके माध्यम से आज की फिल्में यह बेहूदा प्रचार करती रहती हैं कि 'बाजुओ म ताकत हो और दिमाग म तिकडम तो दुनिया की हर चीज हासिल की जा सकती है—सुरा, सुदरी धन दौलत प्रतिद्वद्वी को नीचा दिखाना और छाती फुला शान स चलना आदि।' आम आदमी चूकि यह तिकडम और ताकत से हासिल नही कर सकता, उसके लिए यह सब देख पाना स्वप्नलोक म विचरण के समान तो हो ही जाता है।

इस तरह आज के समाज म समृद्ध वग जो सचमुच हासिल करता है समृद्धि की ओर अग्रसर वग के लिए उसे आदश और अभावग्रस्त वग के लिए सपना बनाकर छोड देता है। यह तथाकथित आदश और आत्मघाती सपना बाटने के कारण ही इन फिल्मो के मायाजाल और भ्रमजाल का विस्तार होता जाता है। फिर कोई उसके प्रति समर्पित हो जाता है, तो कोई उसमे पलायन खोजने लगता है और यह दुष्चक्र आगे—और आगे चलता रहता है।

पोस्टर-सस्कृति गलियों मे शहरो, कस्बो और चौराहो पर लगे फिल्मो के विज्ञापन पट सभी का ध्यान दूर से खीच लेते है। लगभग हर पोस्टर में आजकल य दिल दहलाने वाले या बीभत्स दश्य दिखाई देते हैं—कही नायक या खलनायक क हाथ म चाकू, पिस्तौल राइफल या स्टेनगन, तो कही नायिका या खलनायिका क हाथो मे। कही यह निशाना अपने दुश्मन या विरोधी पर तना दीखता है तो कही ऐसा लगता है कि देखने वाला पर ही निशाना साधा जा रहा हो। कोई हथियार नही है तो नायक या खल नायक गुडे की तरह तनकर खडा या प्रतिद्वद्वी पर झुका, मुटिठया ताने आक्रमण मुद्रा मे टूट पडने के लिए तयार। नही तो बगल म खडी नायिका की घबराई दहशत भरी अस्तव्यस्त स्थिति म उसे बलात्कार के लिए दबोचता मनुष्य के रूप म कोई खूखार दरिंदा, या किसी कॅवरे लडकी की अश्लील हरकतें।

मुमकिन नही कि राह चलतो का ध्यान चौराहा पर लगे य बडे बडे पोस्टर अपनी ओर आकर्षित न करें। आखिर इन्ह मुख्य स्थला पर इसीलिए तो लगाया जाता है कि अधिक से अधिक लोगो की निगाह इन पर पडे। इसका एक दुखद पहलू यह भी है कि इन पर निगाह टिकाए ड्राइवरों के स्टीयरिंग पर रखे हाथो का सतुलन गडबडा जाता

है और वाहनों की टक्कर से दर्दनाक घटनाएं घट जाती हैं। जैसा कि कई जांच रिपोर्टों से सिद्ध हो चुका है।

लेकिन इससे भी अधिक दुखद व शोचनीय स्थिति तब पैदा होती है, जब यह पोस्टर संस्कृति चौराहों से निकल घरों और गलियों कूचों में फैलने लगती है। आए दिन समाचारपत्रों में छेड़खानी, अपहरण, बलात्कार व अन्य अपराधों की खबरों के विश्लेषण से अनेक बार यह तथ्य प्रकाश में आया है कि सिनेमा के पर्दे पर घटित इन दृश्यों की पोस्टरों के माध्यम से दैनिक पुनरावृत्ति ने अपराधियों के मस्तिष्क पर घातक प्रभाव डाला और वे अपने उत्तेजित संवेगों की अभिव्यक्ति के लिए वैसे ही प्रयोगों में जुट गए। छाती के बटन खोल झूमकर चलते हुए उनका 'गब्बर सिंह' आज यहां-वहां देखे जा सकते हैं।

विशेष रूप से अपरिपक्व मस्तिष्क वाली किशोर पीढ़ी का अपराधी वर्ग तैयार करने में इस अतिरंजित सिनेमाई जिंदगी और उत्तेजक पोस्टर संस्कृति का विशेष हाथ है—पाठकों की समस्या स्तंभ के माध्यम से प्रति मास किशोर-युवा पीढ़ी के सैकड़ा पत्रों से गुजरते हुए मैं यह बात अधिकार के साथ कह सकती हूं। अधिकांश पत्रों में लड़के लड़कियां ठीक वैसे ही प्रयोग करते दिखाई देते हैं, जिनकी प्रेरणा उन्हें सिनेमा के पर्दे पर मिलती है। मनोवैज्ञानिक नियम से पोस्टरों पर उन दृश्यों की पुनरावृत्ति इस मनोवृत्ति या मानसिकता को पक्की करती चलती है। कम उम्र के ये अनाड़ी अपराधी अक्सर जल्दी पकड़ में भी आ जाते हैं। लेकिन मूल प्रश्न फिर वहीं आता है कि **एक पूरी की पूरी पीढ़ी को गुमराह कर उसकी रचनात्मक शक्तियों को कुंठित कर देश के भविष्य को धूमिल करने वाली इस फिल्मी हिंसा और यौन हिंसा को रोकने के लिए अब तक क्या किया गया? इसे बढ़ने फलने की छूट क्यों दी गई?** अब यदि नारी जागृति के बाद भी उसके यौन शोषण की घटनाएं घटती हैं और चारों ओर से सुरक्षा की मांग आंदोलन के स्तर तक उठाई जाती है, तो इसका दोष क्या मात्र वर्ग-संघर्ष को ही दिया जाएगा? धीरे धीरे राह देते हुए लाए गए इस आम माहौल को नहीं?

ढाक के तीन पात सरकारी स्तर पर कई बार यह बात उठी और उठाई गई कि फिल्मों में दिखाई जाने वाली अतिशय हिंसा और सेक्स की रोकथाम के लिए कुछ किया जाना चाहिए। कई बार यह आश्वासन भी मिले कि शीघ्र ही कुछ किया जाने वाला है। लेकिन बात उठती रही और बढ़ती रही। परिणाम के नाम पर वही 'ढाक के तीन पात'। सन १९७५ के आपातकाल में जबकि सरकार के हाथ में असीम शक्तियां केंद्रित थीं, यह आशा कुछ जोर से बंधी। कुछ कदम उठाए गए, कुछ प्रयत्न भी हुए। *'दिनमान', २८ सितम्बर १९७५ में छपी रिपोर्ट के अनुसार, 'भारतीय फिल्म महासंघ' के उपाध्यक्ष श्री सुंदर लाल नाहटा ने पत्र प्रतिनिधियों को बताया कि केंद्रीय सूचना* व प्रसारण मंत्री (तत्कालीन) फिल्मों में हिंसा और बलात्कार के दृश्यों में पौरुष और सेक्स का दुरुपयोग करने के विरुद्ध कड़ी कारवाई करने वाले हैं। यह भी संभव है कि इनके प्रदर्शन पर प्रतिबंध लग जाए। इस संदर्भ में निर्माताओं को सुझाव भी दिया गया कि वे निर्माणाधीन फिल्मों को सेंसर की तगड़ी काट से बचाने के लिए ऐसी फिल्मों की पटकथा का पुनर्लेखन करवा लें या उन्हें दोबारा फिल्माएं।

दिसम्बर, १९७५ में अन्तर्राष्ट्रीय महिला वर्ष की समाप्ति पर दिल्ली फिल्म सोसाइटी और शिक्षा मन्त्रालय के सम्मिलित तत्त्वावधान में एक 'महिला वर्ष फिल्म समारोह' का आयोजन किया गया था। २८ दिसम्बर को इस फिल्म समारोह का उद्घाटन करते हुए तत्कालीन उपराष्ट्रपति श्री बासप्पा दानप्पा जत्ती ने कहा था, ऐसी फिल्मों का निर्माण होना चाहिए, जो समाज के सभी वर्गों को प्रभावित और तुष्ट करने वाली हों, शिक्षाप्रद और मनोरंजक होने के साथ वे जन जागरण की भूमिका भी अदा करें। स्वाधीनता संग्राम में और आजादी के बाद जीवन के अनेक महत्त्वपूर्ण क्षेत्रों में भारतीय स्त्री ने जो सराहनीय भूमिका निभाई है, वह भी फिल्मों में प्रतिबिंबित हो कि आज की सभी स्त्रियों को उससे प्रेरणा मिले।

इस अवसर पर समारोह की मुख्य अतिथि श्रीमती नरगिस दत्त ने स्थिति का बेबाक विवेचन करते हुए कहा था, अब तक १६ भारतीय भाषाओं में लगभग १४००० फिल्में बनीं। उन सभी में विषयवस्तु तथा अभिनय की दृष्टि से स्त्रियों की प्रमुख भूमिका रही। लेकिन प्रश्न उठता है कि अपने ७५ वर्ष के इतिहास में भारतीय फिल्म उद्योग ने राष्ट्र के राजनीतिक, सामाजिक आर्थिक आदि क्षेत्रों में स्त्रियों की अग्रवान भूमिका पर कितनी फिल्में बनाई ?

इस अवसर पर और इसके शीघ्र बाद बंबई में हुए अंतर्राष्ट्रीय फिल्म समारोह में भी 'सिनेमा में नारी' पर अच्छी बहस हुई थी। इस बहस से जो बातें छन कर आईं, उनके निष्कर्ष हमारे इस लेख के पूर्वार्ध में उठाए गए प्रश्नों से भिन्न नहीं हैं। जैसे अधिसंख्य फिल्में स्त्री के रमणी रूप को ही प्रस्तुत करती हैं, उसके पूर्ण नारीत्व को, उसके मानवीय रूप को नहीं। यहां तक कि उसके रमणी रूप को भी एक नकली दागले रूप में ही प्रस्तुत किया जाता है वास्तविक या सहज रूप में नहीं। व्यावसायिक सिनेमा ने स्त्रियों का बिकाऊ माल के रूप में ही इस्तेमाल किया। उनके प्रेमिका, पत्नी या मां के प्यार को भुनाया ही, उनके प्रति पुरुषों की गैरजिम्मेदारी पर भी उन्हें दया-करुणा का पात्र ही बनाया। उन्हें देवी या दानवी रूप में ही प्रस्तुत किया मानवीय रूप में नहीं। कमाल अमरोही के निर्देशन में २५ वर्ष पूर्व बनी 'दायरा' फिल्म की कहानी आज चौथाई शताब्दी बाद भी भारतीय नारी के लिए वही दायरा बनी हुई है। आदि।

'अन्तर्राष्ट्रीय महिला वर्ष' के दौरान भी यह दायरा बरकरार रहा, इससे अधिक विडंबना क्या होगी। यद्यपि महिला वर्ष फिल्म समारोह में तथाकथित दृढ़ प्रतिवाद की द्योतक मदर इंडिया, साहब बीबी और गुलाम, चारुलता'(बंगला)' कुंकु, (मराठी) जैसी फिल्में भी प्रदर्शित की गईं। लेकिन फिल्म और फिल्म में नारी पर सारी बहस बेकार रही। दायरा न तोड़ पाने पर इस बहस से किसी भारी फेर बदल की आशा भी नहीं लगाई गई थी।

सन् १९८० के चुनाव के बाद नए केन्द्रीय सूचना एवं प्रसारण मंत्री ने एक बार फिर हमें यह आशा दिलाई कि इस दिशा में सार्थक बदलाव के लिए कुछ ठोस कदम उठाए जाने वाले हैं। ७ जुलाई, १९८० को मद्रास में हुए फिल्म फेयर पुरस्कार समारोह' के अध्यक्ष न्यायाधीश श्री भगवती ने भी निर्माताओं को संबोधित करते हुए कहा कि वे

जीवन का सही चित्रण करने वाली फिल्मे बनाए। विभिन्न नारी सगठनो की ओर से *भी अब जोरदार आवाज उठ रही है कि फिल्मो मे नग्नता व हिंसा और विज्ञापनो मे* नारी शरीर का प्रदर्शन रोकने के लिए कड़े कदम उठाए जाए। १६८० मे डा० कान्त की अध्यक्षता म गठित मिन अध्ययन दल न भारतीय सिनेमा उद्योग के स्वरूप, लक्ष्य, विकास आदि के बारे म कई महत्वपूर्ण सुझाव प्रस्तुत किए जिनमे इस उद्योग को केन्द्रीय देख रेख मे रखने, समवर्ती सूची म शामिल करन चलचित्र अकादमी बनाने के सुझाव भी शामिल हैं कि सिनमा को सुरुचि और सस्कृति की अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया जा सके। लेकिन सास्कृतिक बदलाव के इस महत्त्वपूर्ण साधन को केवल सरकारी नियत्रण मे लान म ही समस्या सुलझने वाली नही है जब तक कि उसम योग्य ईमानदार निष्पक्ष व्यक्ति न बैठाए जाए और उन पर भी सामाजिक सुरुचि का दबाव व नियत्रण न हो। यह तो भविष्य ही बताएगा कि क्या फलिताथ सामन आएगे। शायद वतमान आदोलनो म उठी सशक्त नारी-आवाज ही कुछ रग लाए।

फिल्म क्षेत्र मे नारी शोषण

फिल्मी कहानियो मे प्रदर्शित नारी-रूप और हिंसा यौन हिंसा के सामाजिक कुप्रभाव से हट कर एक अन्य गभीर प्रश्न पर विचार किए बिना भी यह आलेख अधूरा रहेगा। आए दिन समाचारो मे यह बात सवविदित है कि फिल्म-क्षेत्र के ग्लैमर से खिच कर देश के कोने कोने मे लडके-लडकिया अपना भाग्य आजमाने यहा आते हैं। लडके कुछ अधिक सख्या म लडकिया कुछ कम सख्या मे। पर जहा तक शोषण का सवाल है वहा तो नारी ही अधिक शिकार होगी।

बडे-बडे सपने सजोए बडी-बडी आशाए लिए ये महत्वाकाक्षी ग्लैमर-सम्मोहित युवतिया प्राय परिजनो की अनुमति बिना घरो स भागकर आती हैं कभी अकेले, तो कभी सब्जबाग दिखाकर भगा ले जान वाले अनुभवहीन प्रेमियो या असामाजिक तत्वो के एजेंटो के साथ। फिल्मो मे काम दिलाने के चक्कर मे इन्ह कहा कहा ले जाया जाता है, इनकी क्या गत बनती है, इन पर क्या बीतती है ये दुख भरी कहानिया रोज पढन सुनने को मिलती हैं। प्राय वेश्यालय और सुरक्षा सदन ही फिर इनके पनाह-स्थल बनते हैं। या ये इसी तरह की अपमानजनक जिन्दगी जीती हुई 'एक्स्ट्रा' के रूप मे छोटे मोटे 'रोल' करती रहती हैं। विधिवत प्रशिक्षण लेकर या नामी फिल्मी हस्तियो के सहारे फिल्मो मे काम पाने वाली युवतियो की सख्या कम होती है, उनमे भी सफल होन वाली सख्या बहुत कम। लेकिन सुना जाता है कि अपने प्रारभिक सघष-काल मे प्रशिक्षित युवतियो को भी बहुधा ऐसी स्थितियो का सामना करना पडता है और कइयो को आगे आन की कीमत भी चुकानी पडती है। अब तो २७ जुलाई १६८० को नवभारत टाइम्स' रवि वार्ता मे छपी एक परिचर्चा म कुछ अभिनेत्रियो ने स्वय इस बात को स्वीकारा है कि 'मजिल पर पहुचने से पहले उन्ह बिस्तर की सीढियो से गुजरना पडता है।' और फिर पद्मिनी कोल्हापुरे द्वारा आगे बढ कर भारत मे आए मान्य विदेशी अतिथि प्रिंस चार्ल्स

का सार्वजनिक चुम्बन क्या प्रदर्शित करता है, इस क्षेत्र की युवतियां के किस दिशा म जाने की ओर सकेत करता है ? शायद यही कारण है कि इस क्षेत्र म दिखत रूप मे देह-व्यापार, सबधा की छूट तलाक और पुनर्विवाह आम बात है। नारी शोषण के खिलाफ आवाज उठाने वाले नारी-सगठना को इस आर भी ध्यान देना चाहिए।

पारिवारिक और व्यक्तिगत विघटन

औद्योगीकरण और पश्चिमी प्रभावो का एक मुख्य परिणाम है—पारिवारिक विघटन। यह प्रक्रिया भारतीय सयुक्त परिवार प्रणाली म विघटन के बाद अब एकाकी परिवारो मे और व्यक्तिगत स्तर पर भी चल रही है। गावो से शहरो तक और शहरो से गावो तक। गावो म कुछ कम, नगरो म कुछ ज्यादा, महानगरो म सबसे अधिक। परिवेशजनित कारण भिन्न भिन्न हैं इसलिए इसका स्वरूप भी गावो, कस्बो, नगरो, महानगरो म भिन्न है। लेकिन मनुष्य का अपने सास्कृतिक मूल्यो की धुरी से उखडना और इस उखडन को अपने भीतर से स्वीकृति न पाना सभी जगह समान है इसलिए समस्या भी लगभग समान ही है।

इस विघटन की हम सयुक्त परिवार के विघटन, एकाकी परिवार के विघटन और व्यक्तिगत विघटन—इन तीन स्तरो पर चर्चा करेंगे। पहले गाव और शहर के विघटन के मुख्य अन्तर को लें

शहरी व ग्रामीण विघटन मे अन्तर गावो म विघटन है तो वहा मूल कारण आर्थिक है। भाई भाई के बीच जमीन का बटवारा है। जनसख्या वृद्धि से खेती पर भार है तो बटवारे से जोत के छोटे टुकडो मे बटने की भी समस्या है और खेत उपज से परिवार का पेट न भरने से गरीबी की भी। इसके अलावा औद्योगीकरण से गावो के छोटे उद्योग धधे नष्ट हो जाने से बेकारी है तो रोजगार की तलाश मे और नगरो की चकाचौंध मे प्रेरित हो शहरो की ओर प्रस्थान है। इन आर्थिक मूल कारणो से ही फिर सामाजिक सास्कृतिक समस्या उत्पन्न होती है। गावो म बटवारे के कारण या भूमि झगडा के कारण रिश्ता म दरार आती है पर शहरो की तरह वहा तटस्थता या कटाव भी सभव नहीं है। तब या तो मेल जरूरी हो जाता है या फिर शत्रुता पनपने लगती है और हका की लडाई मुकद्दमबाजी मे घर फूकने के अलावा कभी-कभी भयकर रूप भी धारण कर लेती है।

ग्रामीणा के शहरा म निष्क्रमण के बाद वहा उनके सामने दूसरी समस्याए है। निवासस्थान की कमी के कारण परिवारा को साथ न रख पाने की मजबूरी है। असख्य परिवार पीछे गाव म ही छूट जाते हैं। एकाकी विस्थापित ग्रामीण शहरा मे भी पूरी तरह खप नही पाते। गरीबी के साथ अपमान की भी जिन्दगी जीते है। सुख दुख मे अकेले पड

जाते है तो घर से भी विरक्त होने लगते हैं, पर घर की चिंता से मुक्त नही हो पाते। अपनी जाति बिरादरी या समुदाय के नीति नियमो से तथा घर के बड़े बूढ़ो के नियन्त्रण से मुक्त लेकिन घर की चिंता मे लिप्त व अशिक्षित या अर्धशिक्षित लोग किसी वैचारिक मूल्य संकट से घिरकर नही मूल्यहीनता व धुरीहीनता के शिकार हो प्राय भ्रष्ट जाते हैं। कभी कभार ही घर जा पाने के कारण जब उनकी सहज शारीरिक माग की भी पूर्ति नही हो पाती तो वे वेश्यावृत्ति और यौन रोगो मे फस जाते हैं। गाव लौटकर पत्नियो म भी ये रोग बाटते हैं। फिर शहर से लौटकर वे गाव के वातावरण म फिर भी नही हो पाते और रिश्तो के बधन ढीले पड़ने लगते है।

नगरो मे सयुक्त परिवार बहुत कम रह गए हैं। अधिकतर पति पत्नी व कुछ बच्चो के परिवार ही हैं। पर विघटन की प्रक्रिया पति-पत्नी के बीच, माता पिता-बच्चो के बीच भी चल रही है। कथित सुशिक्षित, सभ्य पति-पत्नी ही अधिकतर कानून की मदद से अलग हो रहे हैं। यहा विघटन का कारण गरीबी कम, निवास-स्थान की कमी और सोच म बदलाव अधिक है। और भी अनेक कारण हैं, पर पश्चिम से हमने जो ग्रहण किया उसमे अच्छाई के बदले बुराई का अधिक चुनाव मुख्य है। समस्या इसी से अधिक उलझी है। साहित्य सिनेमा रेडियो, दूरदर्शन, समाचार-पत्र आदि उस प्रभाव को लगातार हम पर थोपकर हम तथाकथित आधुनिक बनाने म लगे हुए हैं। और हम हैं कि भीतर से वही पुराने भारतीय हैं। वैचारिक मूल्य क्रान्ति के नाम पर मूल्यो की दुविधा मे घिर आए है और मूल्य सकट या सक्रान्तिकाल के नाम पर बरसो से सक्रान्ति ही बनाए हुए हैं। इस सक्रान्तिकाल से पार पाने या नई स्थितियो के अनुरूप, नई आवश्यकताओ के अनुसार नए मूल्य गढने की रचनात्मक सोच अभी उभर ही नही पाई है। पुराने मूल्यो से विद्रोह है इसलिए उनकी टूटन है। पश्चिमी मूल्यो का जो प्रभाव हमारे सामने है, वह भी हम भीतर से स्वीकार नही। नए मूल्य क्या हो जो इस विघटन इस समस्या को समाधान दें, यह भी अभी तक किसी के सामने स्पष्ट नही है। इसलिए रिश्तो की टूट ही नही मन की टूट भी है। यह विभाजित मन लेकर हम भीड म भी अकेले है। मनोरजक पार्टियो म भाग लेते हुए भी भीतरी गहरे अवसाद को धो नही पाते तो खोखला अट्टहास करते है या विद्रूप की हसी हसते है। स्वय बेवकूफ बनते है और दूसरो को बेवकूफ बनाने म रस लेते हैं। प्रतियोगिता म पिछडकर कठित होकर ऊपर से रिश्तो का मित्रता का सबधो की मधुरता का, औपचारिक शालीन व्यवहार का मुखौटा लगाए हुए भी भीतर से सबधो की जडें काटने मे लगे रहते हैं। इन्ही कारणो से मानसिक रोग और मानसिक विकृतिया पाल लेते हैं। यौन उच्छ्खलता भी मन की इस खोखली स्थिति म उत्तेजना भरने का एक असफल प्रयास कही जा सकती है।

इस तरह टूटन गाव शहर दोनो जगह है। उनके कारण और लक्षण भिन्न भिन्न है।

पहली प्रक्रिया सयुक्त परिवार का विघटन

सयुक्त परिवार भारतीय जीवन की एक विशेषता रही है—सारे ससार मे

बेजोड। इसका उद्देश्य परिवार के सभी सदस्यो का सवतोमुखी विकास था, व्यक्तिगत स्वत त्रता के नाम पर व्यक्ति का एकागी विकास नही। इसम परिवार का कोई बडा बूढा सारे परिवार का मुखिया होता है जो परिवार का सचालन करता है। सारे काय कलापा की देख रेख करता है। समस्त कुटुम्ब का एक साझा कोष होता है सयुक्त सम्पत्ति होती है। सामा यत सबका साथ रहना अच्छा समझा जाता है, पर यह प्राव-धान भी रहता है कि सदस्य साथ न रहना चाह तो बटवारा कर सकत है। परिवार का हर लडका ज म मे ही सयुक्त सम्पत्ति का हकदार और साझीदार माना जाता है। पर पिता की सम्पत्ति पर अधिकार उसे पिता की मृत्यु के बाद ही मिलता हे। यही मिता क्षरा और 'दायभाग' कहलाता है।

इस सयुक्त परिवार की सबसे बडी विशेषता यह होती है कि इसम कायशील व बकार सभी सदस्या को समान सुरक्षा मिलती है। सभी के बच्चो को समान पालन पाषण मिलता है। स्त्रियो के अधिकार सयुक्त परिवार म सीमित होते है, पर वही जहा उनम आपस म फूट होती है। जहा उनमे एकजुटता होती है, वहा न उनके अधिकार कम होत है न उन्हें हानि अपमान या अ याय का शिकार होना पडता है, न इसी कारण परिवार की शान्ति भग होती है। फिर सयुक्त परिवार म सबके साझे हित मे कुछ निजी अधिकार कम भी हो तो उसके बदले मिलने वाले लाभ अधिक है। स्त्री कामकाजी हो या गहिणी सधवा हो या विधवा या परित्यक्ता, परिवार म सभी को सुविधाए व सरक्षण मिलता है। इसलिए सभी की व्यक्तिगत आय और परिवार की पैत्रिक सपत्ति से या अ य स्रोत स प्राप्त आय परिवार के मुखिया के पास सयुक्त खाते मे जमा होती है और सब पर समान रूप मे खच होती है। परिवार का मुखिया ही सब सदस्या की देखभाल करता है और वही सबके अनुचित, असामाजिक या अनैतिक काय व्यवहार पर निगाह रख उस नियन्त्रित करता है।

सुरक्षा का बीमा प्राचीन सयुक्त परिवार परपरा म पति पत्नी, माता पिता चाचा चाची, पुत्र पुत्रवधुए, भतीजे, नाती अविवाहित पुत्रिया, पोतिया आदि सभी शामिल रहते थे। आज यह परपरा गावो मे भी कम देखन को मिलती है। पर दादा दादी, माता पिता, पति-पत्नी व बच्चे, कोई अकेला चाचा, विधवा बुआ, चाची आदि से बना सयुक्त परिवार अभी भी मौजूद हैं—गावा मे बहुतायत स, शहरा म कही कही। सयुक्त परिवार भारतीय समाज-व्यवस्था मे परिवार के सभी सदस्या के लिए सुरक्षा का एक बीमा' है, जिसमे शारीरिक व मानसिक दृष्टि से अशक्त लागा के लिए भी सुविधा से जीने की गारटी होती है। सुरक्षा के इस गढ म आपत्ति के समय प्रत्येक व्यक्ति की रक्षा होती है। किसी सदस्य के बीमार पडने पर उसकी सवा सुश्रूपा का ध्यान सभी मिलकर रख लेते है। वद्धो, अशक्ता, बेकारो और दुघटनाग्रस्त या सकटग्रस्त सभी व्यक्तिया को आश्रय मिल जाता है। पति की मृत्यु क बाद पत्नी क लिए बच्चा के भरण पोषण की चिन्ता नही होती। मृत व्यक्ति की पत्नी और बच्चा का पूरी सुरक्षा—आर्थिक व सामाजिक—मिलती है। यहा तक कि इस व्यवस्था म पागल और अपाहिज व्यक्ति के लिए भी जीने की सामा य स्थितिया उपलब्ध होती हैं। उत्पादन की

दृष्टि से व्यापार की दृष्टि स भी, सयुक्त परिवार एक लाभकारी सस्था है। धन की बचत की दृष्टि स भी। यदि सदस्य लोग ईमानदारी से मिल जाटकर चलें तो परिवार की धन-सपत्ति लगातार बढती है और साथ ही बढ़ती जाती है सभी की सुविधाए और सामाजिक सुरक्षा।

टूट के कारण लेकिन परिवार के सदस्यो की आर्थिक, सामाजिक सुरक्षा की दृष्टि से लाभकारी मानत हुए भी इसे व्यक्तिगत विकास की दृष्टि म बाधक माना गया। इसलिए कि यदि परिवार का मुखिया पुरान विचारो के लिए कट्टर या निरकुश शासक हो जाए तो नई पीढी के उदीयमान सदस्यो का विकास कुठित होन लगता है। स्त्रियो की एकजुटता के अभाव से जो अक्सर होती ही है या मुखिया की तानाशाही स स्त्रियो के अधिकार सयुक्त परिवार म सीमित होत हैं जिसस कभी-कभी उन्हें काफी हानि उठानी पडती है। कायरत और बेकार, कायकुशल और कामचोर सदस्यो को समान सुविधाए मिलन से परिवार के कुछ व्यक्ति आलसी और गैर जिम्मेदार हो जात हैं और इस रूप मे परिवार पर बोझ बनते हैं। कुछ चालाक चूहे बन उसे भीतर ही भीतर कुत रने लगते हैं। और इस प्रकार परिवार को हानि पहुचाते हैं तथा कुछ जो मेहनती और ईमानदार रहकर परिवार को निरन्तर लाभ पहुचात रहते हैं, वे भी इस प्रकार अपना शोषण होते देख अपने काय व ईमानदारी से मुह चुराने लगते हैं। इस तरह काय कुश लता घटने और निजी स्वाथ बढने स परिवार को निश्चय ही हानि पहुचती है।

जहा अकेला व्यक्ति कमाने वाला व अनेक खाने वाले होते हैं वहा कमाऊ मुखिया श्रम और चिन्ताओ के बोझ से दब जाता है। सपत्ति के बटवारे को लेकर भी अनेक झगडे होत हैं। पर जहा परिवार की स्त्रियो मे एक दूसरे को सहन करने की स्थिति नहीं बन पाती वहा ता छोटे मोटे घरेलू दैनिक झगडो से साथ रहना ही दूभर हो जाता है। अब यही प्रवत्ति ज्यादा उभर रही है। परिवार के हर सदस्य मे निजी अधिकार-चेतना और पैसे के मामले म स्वाथ भावना सिर उठाने लगे तो ऐसी उपयोगी सस्था को घुन लगना स्वाभाविक है। परिवार की स्त्रिया अपनी चीजें गहने आदि अपने पास रख सयुक्त परिवार की सपत्ति मे से छल-बल से, चोरी तक से, अधिक से अधिक भाग अपने व अपने बच्चो के लिए हथिया लेना चाहती हैं। अधिकार खूब जताती है, कत्तव्य के नाम परवात एक दूसरे पर दाषारोपण से तय करना चाहती हैं। कूटनीति और त्रियाचरित्र स अधिक से अधिक काम लिया जाने लगा है। तो सबधो की मधुरता और उपयोगिता खत्म होगी ही। इस तरह स्वार्थनीति और कहीं-कहीं 'लाठी म स' वाली जोर जबरदस्ती से परिवार भीतर ही भीतर जजर होकर जब टूटता है तो भावुक व इमानदार सदस्य खाली हाथ मलते नजर आत हैं और जबर व चालाक सदस्य उनकी कमजोरिया पर व्यग्य करत स। यहा यह उल्लेखनीय है कि परिवार को जोडकर भी स्त्रिया ही रखती हैं और उसे तोडती भी प्राय वे ही है। और इस टूटन की पीडा झेलते है पुरुप, जो भाइयो से अलग हो स्वय को बाजू विहीन अशक्त और टूटा हुआ पाते हैं। फिर यह टूटन पति पत्नी के बीच भी दरार डाले बिना नहीं रहती। तो अतत सयुक्त परिवार की सुविधाओ और सुरक्षा से वचित होने के बाद पति के पूववत प्यार से भी वचित हो स्त्रिया घाटे मे ही

रहती है यदि वे न सम्भल सकें तो।

संयुक्त परिवार के टूटन उभरने से और गांवों से नगरों की ओर निष्क्रमण से यह उपयोगी सम्पर्क नहीं रहा है। नगरों में निवास स्थान की कमी और मंहगाई भी इसके लिए उत्तरदायी है।

दोष संस्था में निहित नहीं, लेकिन दोष इस संस्था का पतन में निहित रहा है। परस्पर सहयोग के स्थान पर निजी स्वार्थों के उभार और उनके टकराव से ऐसा है, अन्यथा गांवों में शहरों की ओर प्रस्थान में भी संयुक्त परिवार प्रथा टूटती नहीं चली रहती है। उत्सवों, त्योहारों पर, शादी-ब्याह के अवसरों, बीमारी, मृत्यु और दुर्घटनाओं के समय परिवार के सभी सदस्य आपस में मिलते जुलते रहते हैं। नौकरी बाहर व परिवार घर होने पर भी घर की खोज-खबर रख ली जाती है। परिवार शहर में साथ ले जाकर भी प्रायः बीमारी, खुशी के मौका पर घर आना जाना बनाए रखते हैं। सम्बन्ध न केवल बने रहते हैं, देर से मिलने पर अधिक मधुर भी बनते हैं। घर के प्रति जिम्मेदारी समझने से दूर रहकर भी संयुक्त परिवार की सुरक्षा मिली रहती है। बदली परिस्थितियों में साथ रहना सम्भव नहीं, आवश्यक भी नहीं। पर इस भावात्मक लगाव व जिम्मेदारी के साथ इस सुरक्षा को बनाए रखना सम्भव भी है, आवश्यक भी।

जहां तक व्यक्तिगत विकास की बात है, यहां भी देखा जाए तो संयुक्त परिवार की टूटन ने व्यक्तियों को विकास नहीं, व्यक्तित्व को टूटन ही दी है। परस्पर सहयोग, एक-दूसरे के लिए त्याग, सहानुभूति, वृद्धों, अशक्तों, असहायों की सेवा, मिल बांटकर खाना, परस्पर मानसिक चिंताएं बांटना, संयुक्त परिवार के सामूहिक मनोरंजन में भाग लेना, अनुशासन और शिष्टाचार की शिक्षा पा अच्छी नागरिकता ग्रहण करना आदि गुण ही व्यक्तित्व बनाते हैं और ऐसे व्यक्तित्व समूहों से ही शिष्ट समाज का निर्माण होता है। ऐसे वातावरण में अकेलेपन के अहसास, अनावश्यक भय तनाव, असुरक्षा से मुक्ति मिलती है तो मानसिक विकृतियां, मनोरोग, और अपराध कम पनपते हैं। फिर देश सेवा, समाज-सेवा के लिए भी तो परिवार का कोई व्यक्ति घर की चिंताओं से मुक्त होकर ही अधिक समय या सारा जीवन दे सकता है और यह अवसर संयुक्त परिवार में ही संभव है।

संशोधित रूप में पुनर्स्थापन की मांग भारतीय संयुक्त परिवार प्रथा उद्देश्यों व हितों की एकता पर कायम रह तथा प्रतिद्वंद्विता के स्थान पर परस्पर त्याग, सहयोग की भावना पर बल दे तो एक शिष्ट, सभ्य, अनुशासनबद्ध, स्वस्थ व नैतिक समाज के निर्माण के लिए आदर्श व्यवस्था बन सकती है। इसके इन्हीं गुणों के कारण आज विदेशियों की प्रशंसक दृष्टि इस ओर लगी है और वे इसे संशोधित रूप में अपनाने की बात सोचने लगे हैं। किंग जार्ज मेडिकल कालेज के एक प्रसिद्ध मनोचिकित्सक ने पेरिस में किए अपने गहन अध्ययन के आधार पर जो निष्कर्ष अपने निबंध में प्रस्तुत किए, उनमें मानसिक स्वास्थ्य की दृष्टि से संयुक्त परिवारों की महत्ता पर विशेष ध्यान आकर्षित किया गया है। अन्य भारतीय व विदेशी समाजशास्त्री और मनोविज्ञानी भी समय समय पर इसके पक्ष में राय जाहिर करते रहते हैं। भारतीय शहरी कामकाजी युवतियों के एक सर्वेक्षण में मेरे सामने भी यह बात पूरी तरह स्पष्ट हुई कि घरों में पीछे बच्चों को अब भी

छोडने की समस्या उन्हे सबसे अधिक परेशान करती है और माताए नौकर, आया के भरोसे या शिशु-गृह मे बच्चा छोडने के बजाय घर की बडी-बूढी के पास रखना अधिक पसद करती है। इसलिए सत्तर प्रतिशत कामकाजी माताओ ने फिर से सयुक्त परिवार की हिमायत की। सामान्य अध्ययन से भी यही निष्कर्ष निकला कि सयुक्त परिवार प्रथा की आज भी बहुत आवश्यकता है। केवल उसे वर्तमान आवश्यकताओ के अनुरूप सशोधित रूप दिया जाना चाहिए।

कुछ मुख्य सुझाव थे

बाहरी सस्थागत व्यवस्था हमारी मानसिकता और आर्थिक स्थितियो के अनुकूल नहीं है इसलिए उसका सहारा मजबूरी की हालत मे ही लिया जाना चाहिए। छोटे बच्चे घर मे ही सुव्यवस्थित सुरक्षित ढग से विकसित होकर स्वस्थ विकास पा सकते हैं। वृद्ध माता पिता भी सस्थागत जीवन की अपेक्षा घरो मे ही इज्जत से जीना चाहते हैं भले ही सुविधाए कम मिलें उनके सम्मान की रक्षा होनी चाहिए। फिर हमारे यहा सुविधाए प्रदान करने वाली सस्थाए हैं भी कहा ? हैं तो कितनी ? जो थोडी हैं उन्हे भी भ्रष्टाचार ने ग्रस लिया है। अत छोटे बच्चो व बडे बूढो की समस्या का समाधान सयुक्त परिवार मे ही एक साथ सभव है कि बच्चे बडो की लाड प्यार भरी गोद मे सुरक्षा पाए और बूढे भी उनसे अपने जीवन का सहारा पाए।

अवध सबधो, यौन उच्छृ खलता, किशोर अनुशासनहीनता और किशोर अपराधो की रोकथाम के लिए सशोधित रूप मे सयुक्त परिवारो की पुनर्स्थापना आवश्यक है।

नई स्थितियो मे जनतत्रीय पद्धति के अनुकूल परिवार के मुखिया के हाथ मे सारी शक्तिया केन्द्रित करने के स्थान पर परिवार के छोटे-बडे सदस्यो की राय मे एक सामूहिक नीति का निर्माण हो। इसमे किशोरो नवयुवको, बडे-बूढो, स्त्रियो, पुरुषो का समान प्रतिनिधित्व होने से जो सामूहिक निर्णय लिए जाएगे, उस पर सभी अमल करेंगे और व्यवस्था व अनुशासन को बल मिलेगा।

वद्धो व किशोरो को पारिवारिक जीवन की सुरक्षा व शिक्षा देने के लिए सस्थाए सामने आए, न कि इन्हे पहले विस्थापित होने दिया जाए और फिर उनके पुनर्स्थापन के उपाय सोचे जाए। सस्थात्मक प्रयत्न विकृतियो और अपराधो के निरोध की ओर मोडे जाए, उपचार की बात बाद मे आती है। किशोरो के लिए सेक्स शिक्षा भी इसी पारिवारिक जीवन की शिक्षा का एक अग होनी चाहिए अलग से नही।

हमारी आर्थिक, पारिवारिक, सामाजिक सुरक्षा का हल इस सयुक्त परिवार प्रणाली के पुन सशोधित रूप मे विकास पर ही निर्भर है। हमारे परिवेश के कुछ निश्चित मानदड थे। समय के साथ व्यक्तिगत विकास के नाम पर व्यक्तिगत स्वार्थो पर बल दिए जाने से जो बुराइया इसमे घर कर गई हैं उन बुराइयो के निराकरण के उपाय सोचे जाने चाहिए। उन मूल्यो मानदडो मे समयानुकूल परिवर्तन के लिए रचनात्मक तरीको पर विचार किया जाए ताकि आधारहीनता मे पूरा ढाचा लडखडाने से पूर्व ही उसे सभाला जा सके।

दूसरी प्रक्रिया: एकाकी परिवारों में विघटन और तनाव

केन्द्रीय शिक्षा और समाज कल्याण मंत्रालय की ओर से आई० डब्ल्यू० सी० ए० द्वारा किए गए एक सर्वेक्षण के अनुसार, नगरों में विघटन की प्रक्रिया अधिकतर पति-पत्नी के बीच ही हो रही है। केवल दिल्ली की अदालतों में ही १९७० में तलाक के जो १७० मामले दर्ज थे, उनकी संख्या १९७६ में १० की सीमा पार कर गई थी। (१९८० में तो यह ३००० के आसपास हो गई)। जनसंख्या बढ़ी है, पर उसके बढ़ने का अनुपात इतना हरगिज नहीं हो सकता।' संयुक्त परिवार इसीलिए टूटे कि परिवार के प्रत्येक सदस्य में परिवार के हित के बजाय अपने हित की भावना प्रधान हो गई थी, अन्यथा न गांवों से शहरों की ओर निष्क्रमण विशेष बाधा उपस्थित करता, न निवास-स्थानों की कमी। एकाकी परिवार भी अब इसीलिए विघटन के पथ पर है कि पति पत्नी के भी निजी स्वार्थ परस्पर टकराने लगे हैं। विवाह की धारणा अब धर्म का बंधन नहीं रही एक समझौता हो गई है, जो कभी भी टूट सकता है। तलाक को कानूनी मान्यता मिल गई है सामाजिक स्वीकृति उसे नहीं मिली अभी। आगे भी स्वीकृति मिल पाएगी, इसे इज्जत की नजर से देखेजाने की संभावना नहीं दिखाई देती। पश्चिमी जगत में छोटी-छोटी बातों पर तलाक होते हैं हमारे यहां भी कुछ वर्गों में, विशेष रूप से अभिनेता-अभिनेत्रियों में यह दर काफी ऊंची है। पर इसे कहीं भी अच्छी नजर से नहीं देखा जाता न कभी देखा जाएगा।

सरल तलाक की मांग क्यों तलाक की कानूनी मान्यता के पीछे उद्देश्य यही था कि साथ रहना दूभर हो जाए तो घुट-घुटकर मरने के बजाय अलग हो जाना बेहतर होगा। इसीलिए तलाक की शर्तें भी कठिन रखी गई थी कि मजबूरी की हालत में ही इसका उपयोग किया जाए। जब तलाक-अधिनियम पर पुनर्विचार कर इसे कुछ सरल बनाने की मांग उठ रही थी तो मैंने 'अखिल भारतीय महिला परिषद्' की तत्कालीन अध्यक्षा के मुंह से सुना, 'हम ने दुखी स्त्रियों के हित में यह बिल बड़ी मुश्किलें उठाकर पास करवाया कि उन्हें राहत मिले। तलाक की शर्तें कठिन रखवाईं कि पुरुष लोग आसानी से पत्नियों को छोड़ दूसरे विवाह का रास्ता न खोज लें, क्योंकि विवाह का स्थायित्व पत्नी के हित में है और सर्वाधिक बच्चों के हित में है। विवाह संस्था भी पत्नियों की सुरक्षा के लिए है, क्योंकि पत्नी को मां भी बनना होता है। और प्रसव कालीन सुरक्षा तथा बच्चों के उचित पालन पोषण की व्यवस्था के लिए, [illegible]

मानसिक विकास के लिए माता पिता दोनो का होना आवश्यक है। इसीलिए उनमे परस्पर सहयोग उससे भी अधिक आवश्यक है। पर अब हम देख रही हैं कि सदा स्वच्छंदता चाहने वाले पुरुष ही तलाक की मान्यता का अधिक या अनुचित लाभ ले रहे हैं। कानूनी अलहदगी और तलाक प्रक्रिया की लबी अवधि से बचने के लिए व नकली धर्म परिवर्तन के अलावा पत्नी पर दुश्चरित्रता के लाछन लगाने के लिए उनके नकली प्रेमी भी खडे करने लगे है। यदि जल्दी तलाक पाने के लिए ऐसे हथकडे अपनाए जाने हैं तो बेहतर है तलाक प्रक्रिया को ही सरल बना दिया जाए।'

अधिक देर हो जाने से पति, पत्नी के पुनर्विवाह मे भी अडचन आती है, क्योकि आयु बढ चुकी होती है। पर स्त्री के लिए यह अडचन ज्यादा होती है। या तो वह बच्चो की खातिर पुनर्विवाह करना ही नही चाहती और देर तक झगडे का बना रहना बच्चो पर कुप्रभाव डालता है, या आयु अधिक हो जाने पर अथवा बच्चो के साथ उससे विवाह कोई करना ही नही चाहता। जिस समाज मे प्रौढ कुमारियो की ही नई समस्या पैदा हो रही हो, वहा परित्यक्ता या तलाकशुदा का विवाह हो पाना या भी कोई आसान बात नहीं। गलती पति या पत्नी किसी की भी हो, पत्नी पर दोष पहले आएगा। दुश्चरित्रता का तो विशेष रूप से। इन्ही सब कारणो से तलाक की पूर्व शर्तें कुछ घटाई जा चुकी हैं। जैसे कानूनी अलहदगी की अवधि दो वर्ष से घटाकर एक वर्ष कर दी गई है। तलाक के बाद पुनर्विवाह के बीच की अवधि की शर्त भी हटाई जा चुकी है। अब पति-पत्नी दोनो की सहमति पर ही तलाक सरलता से हो जाने का सशोधन आ जाने से इनकी सख्या तेजी से बढने की सभावना प्रकट की गई है। साथ ही लबी प्रक्रिया मे लटके लोगो को राहत मिलने की भी।

मुख्य कारण सदेह और अविश्वास निश्चय ही तलाक की प्रक्रिया सरल हो जाने से तलाक-आकडे बढेंगे और इस सुविधा का दुरुपयोग भी होगा। पर बच्चो की समस्या सदा ही इसमे आडे आती है। इसीलिए भारतीय माताए अधिक सख्या मे तलाक की ओर बढेंगी यह आशका निराधार है। पति पत्नी के बीच तलाक की नौबत आने की अनेक स्थितिया है। पर मेरे विशेष अध्ययन मे इसके लिए सबसे बडा कारण परस्पर विश्वास की भावना मे कमी और गैरवफादारी या चरित्र के सदेह का बीजारोपण है।

इसमे सदेह नही कि शहरी उच्चशिक्षिता कामकाजी व महत्वाकाक्षी स्त्रियो मे पति की इच्छाओ के आगे न झुकने की जो प्रवत्ति उभरी है, उससे दोनो के अहम मे सीधी टक्कर भी इसका एक बडा कारण है। पहले पत्नी कम उम्र की अशिक्षित या कम शिक्षित होती थी। परिवार मे उसे हर स्थिति मे समायोजन की शिक्षा भी मिलती थी। इसलिए वह अपनी कोई व्यक्तिगत महत्वाकाक्षा या अलग पहचान नही रखती थी। अब शिक्षा के आधुनिकीकरण के साथ स्वत्व के अस्तित्व का अहसास बढ गया है। व्यक्तिगत रुचिया व महत्वाकाक्षाए उभर आई हैं। निजी हित की सोच बढ जाने से त्याग की जगह निजी स्वार्थ ने ले ली है। दूसरी ओर समस्त प्रगतिशीलता के बावजूद पति पुरुष भीतर से वही पुराना भारतीय पति है, जिसके आगे पत्नी अपनी अहमियत बढाकर नही रख सकती। यदि वह ज्ञान विज्ञान, कला-कौशल, शिक्षा-दीक्षा या पद-ओहदे मे पति से

आगे है तो पति उस पर उसी तरह गव नही करेगा, जैसा कि पति के समाज मे आगे बढने पर पत्नी करती है। उल्टे वह हीन भावना से घिर जाएगा और किसी न किसी तरह पत्नी के माग मे रोडे अटकाएगा या उसे जाने अनजाने मानसिक यातना देकर संतोष पाएगा।

घरो म सास बहू के झगडे भी अब पुराने झगडे नही रहे, जहा सासा की अधिकार भावना ही प्रमुख रूप स इसका कारण होती थी। गावो, कस्बो मे अभी भी किसी हद तक यह कारण मौजूद हो, शहरी शिक्षित वग मे हर जगह केवल पुराने व नय विचारो का टकराव ही नही है, इस परपरागत कारण के अलावा बदली स्थितिया म दोनो के अहम् का टकराव ही मुख्य है। नई बहुआ म अब अधिकार भावना इस कदर बढ रही है कि वे आते ही पति के अलावा अ य किसी को कुछ नही समझती। पति की कमाई पर परिवार का,कुछ भी हक मानन से लगभग इकार करती है—कही सीधे सीधे तो कही छद्मवेश मे षडयत्र रचकर। और ससुराल मे आकर एक झटके से ही सास के हाथ से सारे अधिकार छीन अपने पास कर लेना चाहती हैं। मा जो अपने बेट के लिए एक सु दर सी बहू लाने का सपना साला से मन मे सजोए न जाने क्या क्या मनौतिया मानती रहती है, बहू पर न जाने कितना प्यार लुटाने के मनसूबे बाधती रहती है और बदले मे चाहती है, केवल इज्जत और जि दगी भर थकने के बाद बूढे शरीर के लिए थोडी सी राहत। ये ही दो चीजें उसे नही मिलती। उस पर जिम्मेदारी विहीन नई अधिकार चेतना से ग्रस्त बहू पहले उस घर के तौर तरीके सीखने या सास के अनुभव, उसके मातवत प्यार से कुछ लाभ उठाने के बजाय आते ही घर भर पर शासन करना चाहने लगती है। नही तो मनमानी के लिए अलग रहने की इच्छा जाहिर करने लगती है, जिसकी पूर्ति म देर सहन न कर वह त्रियाचरित्र पर उतर झूठ, षडयत्र का सहारा ले सास और परिवार के अ य सदस्यो पर लाछन लगा-लगा कर पति का मन उस ओर से फेरने लगती है। तो उसकी 'दूसरी मा' बनने की साध रखने वाली चोट खाई सास के भीतर भी समय समय पर परम्परागत सास सिर उठाने लगती है और झगडा पारिवारिक विघटन का रूप ले लेता है।

बहुओ द्वारा अपमानित सासो पर अलग स सर्वेक्षण करने पर पता चलता है कि आज सही स्थिति क्या है ? सासो की यह प्रताडित सम्या केवल वृद्धाश्रमा मे खोजन से ही नही मिलेगी, घर घर मे ये दुखद कहानिया दुहराई जा रही हैं। अतर इतना है कि नई पीढी असहनशील है और मुहफट भी, इसलिए उनकी शिकायतें सामन आ जानी हैं जबकि पुरानी पीढी की सासें आज भी अपनी पीडा से 'घर की इज्जत' को अधिक महत्व देती हैं और घर से तभी निकलती हैं, जबकि स्थिति एकदम यातनामय व असह्य हो जाए। सर्वेक्षणो से ज्ञात होगा कि दहेज के नाम पर होने वाली मौता के पीछे भी कारण दहेज कम और यह असहनशीलता, असमायोजन की स्थितिया चरित्रहीनता, सदेह दृष्टि और बदले की भावना अधिक हैं। आज की अनेक आत्महत्याए इसी असहनशीलता एमी असमायोजन का परिणाम हैं और उनके पीछे कही सबक सिखाने' और 'आसँ खोलन की भावना भी काम करती है। फिर चाहे ये आंकडे पुरुषो के हो या स्त्रियो के। पुरुषों

मे भी यह आत्महत्या सख्या कम नही है बल्कि स्त्रिया से अधिक है। पर वहा दहेज को माध्यम नही बनाया जा सकता। मैं यह नही कहती कि दहेज की समस्या हल हो गई है या उस कारण आज भी बहुओ को सताया नही जा रहा। पैसे का मूल्य बढने, खानदान की इज्जत का मूल्य घटने या बदनामी का भय मन से निकलने से इन घटनाओं म भी जरूर वृद्धि हो सकती है। मेरा मतव्य केवल इतना है कि ऐसी मौतो के मामले म छान बीन सतकता से होनी चाहिए कि कही भली व निर्दोष सासें भी (जो वसे ही आजकल दडित और प्रताडित हैं मानो पुरानी पीढी का बदला चुका रही हो) अकारण न फास ली जाए।

अहम की टक्कर के अलावा दूसरी मुख्य बात जो मैं विशेष बल देकर कहना चाहती हू, जिसके लिए मैंने पहले भी सकेत दिया है कि विघटन या तलाक के मामला म छानबीन की जाए तो अधिकाश के मूल म पति-पत्नी के बीच सदेह का वह बीज ही मिलेगा, जो उनकी चरित्रहीनता के साथ जुडा है। वास्तव म वह चरित्रहीनता हो या नही आज पूरा वातावरण इस कदर असहज और विषाक्त हो उठा है कि मनुष्य मनुष्य के बीच से विश्वास नाम की चीज उठती जा रही है।

कोई कमचारी रिश्वत नही लेता तो भी आज उस पर विश्वास नही किया जाता। कोई समाजसेवी कितनी ही लगन से काम करे और नि स्वाथ भाव से जुट कर दिन रात होम कर दे अपने स्वास्थ्य तक की परवाह न करे, उस पर केवल इसीलिए पूरा विश्वास नही किया जाएगा कि आसपास एसे अनेक लोग हैं जो समाज सेवक का मुखौटा लगाए जनता को बेवकूफ बना कर अपना घर भर रहे हैं या अन्य किसी राज नीतिक स्वाथ सिद्धि म लगे हैं। उसे इस तरह धुन से काम करता देख कर या तो उसे पागल की सज्ञा दी जाएगी तो फिर कानाफूसी होगी, 'जरूर कोई स्वाथ होगा वर्ना कौन इस तरह काम कर सकता है। उन्हें यह समझ पाना मुश्किल होगा कि अपने जीवन की किसी कमी पूर्ति के लिए यदि कोई समाज सेवा मे ही सतोष पाता है तो यह भी एक तरह का स्वाथ ही है। पर कितना भिन्न ! दुखी व्यक्ति प्राय दो प्रकार की प्रतिक्रियाए व्यक्त किया करता है—दूसरा को सताकर अपने दुख का बदला ससार से लेना या दूसरो का दुख बाट कर, उन्हे सेवा सद्भावना की, आत्मनिभरता की राह पर चला कर उनका दुख बाटना। पहली राह मे निर्दोष को सजा देना है, क्योकि जिसके हाथों उसे कष्ट पहुचता है, उनका तो वह कुछ बिगाड नही सकता तो अपनी पीडा का बदला दूसरे निर्दोष व्यक्तियो से ले कर उसे क्या मिलेगा ? सिवाय उल्टे नए दुख या आत्मग्लानि के, जबकि दूसरी राह मे दूसरा का दुख बाट कर उन्हे शक्तिभर सहायता पहुचा कर उसका स्वय का दुख हलका होगा और इससे मानसिक सतोष मिलेगा।

इसी तरह कोई कितना ही विद्वान, तपस्वी साधु हो आसपास ढोगी पाखडी साधुओ के रूप म ऐसे असामाजिक तत्व आज साधु समाज मे प्रवेश कर गए हैं कि सच्चे साधुओ पर से लोगो का विश्वास उठ गया है। सच्चे साधु जानते हैं कि आसान कमाई के लिए, काली कमाई को छिपाने के लिए काले कारनामो पर अच्छाई का परदा डालने के लिए, साधु वेश म भोलीभाली श्रद्धालु स्त्रियो को फसाने के लिए और कही-कहीं

अपने जघन्य अपराध को छिपाकर सजा से बचने के लिए भी य असामाजिक तत्व उनकी दिव्य जमात मे घुसपैठ कर गए हैं। पर उनके पास उन्हे अपने बीच म से निकालन का कोई उपाय नही है। और फिर वे तो अपनी साधना अपने भक्ति रस म इस तरह डूबे हैं, तटस्थ हैं कि उन्हे इन बातो म कोई लेना देना नहीं है। सच्चे साधक लोग इन तत्वो मे निबट भी नही सकते। उनसे निबटने का काम तो जाग्रत समाज चेतना ही कर सकती है और आज वही शक्ति भ्रमित है। जब तक यह पहचान नही जागती यह चेतना नही जागती, सदेह से विषाक्त यह वातावरण शुद्ध नही हो सकता।

पति-पत्नी सबधो म भी सदेह का यह विष-बीज इसीलिए उग आता है कि आस-पास देखने सुनने पढने म यही कुछ मिल रहा है। बेशक एक कार्यालय की पूरी महिला-कमचारी जमात म कोई एक या दो महिलाए ऐसी हो, जो नौकरी, तरक्की या अन्य सुविधाओ के लिए अथवा अपने मन का सूनापन भरने के लिए ही मर्यादाए तोड इस राह पर चलती हो, 'एक मछली से सारा तालाब गदा' कहावत के अनुसार उन कानाफूसियो और कुचर्चाओ से सारा वातावरण तो विषाक्त होता ही है। फिर अपने काम स काम रखने वाली वफादार कामकाजी पत्नी पर भी उसका पति सन्देह करने लगे तो क्या केवल पति को ही दोष दिया जाएगा ? उसे यदि दोष दिया जा सकता है तो इतना ही कि पुरुष के नाते वह स्वय तो छूट चाहता है, पर पत्नी पर केवल शक म भी जुल्म ढाता ह। इतना कि कभी-कभी इस मानसिक यातना की प्रतिक्रिया मे न चाहते हुए भी पत्नी उसी राह पर चल देती है और घर टूटने की नौबत आने लगती है।

अक्सर देखा है और अधिकाश अच्छी लडकियो को शिकायत करते सुना है, महानगर म किसी दिन घर देर से पहुचने के कई कारण हो सकते है, कभी बस का न मिलना तो कभी कुछ और, लेकिन हम कितना ही समझाए, माता पिता यकीन ही नही करते।' क्या नही करते भला ? इसीलिए न कि वे रोज आसपास की चर्चाओ म सिनमा की कहानिया दुहराने वाले लडके-लडकियो के बारे मे जो सुन रहे है वह पूर्वाग्रह उन पर हावी है।

दोषी अभिभावक नही पूरा परिवेश है, जिसम हवा ही सदेह से भरी बह रही है। यह हवा न केवल कानाफूसी फैलाती है, छिपाव दुराव के ये रिश्ते भी बाटती चलती है। सिनेमा देखते, साहित्य पढते, चर्चाए सुनते कुछ ऐसी जिज्ञासा ऐसी उत्तेजना उभर कर हवा म फैलने लगती है कि जो बचे हैं, वे भी इसमे बहकर प्रयोग के तौर पर उसे सूघना चखना चाहने लगते हैं। 'देखें तो सही, इसम क्या है ?' और बस तलाश शुरू हो जाती है। उसका अत क्या होगा ? मजिल मिलेगी कि जहाज बीच म ही डूब जाएगा ? इसकी परवाह तब कहा होती है ? वह तो तब जागती है जब चारो ओर से सदेह के काटे उगकर उन्हे गडने लगते हैं। कुछ काटे ऐसे आ गडते हैं कि उनकी फास फिर जिन्दगी भर नही निकलती। जो काटो को आराम से सहन कर लेते हैं व प्राय इसके आदी भवरे बन जाते हैं। यहा वहा से मकरद चुराना और कलियो को मसलकर फेंक देना उनकी आदत म या शौक मे शुमार हो जाता है। और वातावरण सदेह से आगे बढ अपराध के विष से भरने लगता है। आखिर गुडे और बलात्कारी भी कहा से आते

इसी समाज म से ही न ! कौन जाने उनका बचपन किन दमित इच्छाओ और गलत ढग के पालन पोषण म बीता कि कुसगति और नमिन मिलते ही वह दबा जहर तल से उभरकर ऊपर आ गया !

पूरा परिवेश ही दोषी समस्या की जड जब पूरे परिवेश म ही व्याप्त हो गई है तो किसी भी एक पक्ष को दोषी ठहराने से काम नहीं चलेगा। जब तक पुराने पड गए मूल्यो मे समयानुसार अपेक्षित सशोधन नहीं होगा, नई आवश्यकताओ के अनुरूप नई स्वस्थ परपराओ का निर्माण नहीं किया जाएगा, चोरी छिपे के य अवध सबध चलते रहेगे और जहा नहीं चलेंगे, वहा भी सदेह का विष फलता रहेगा। इस विष के रहते एकाकी परिवारो म भी, पति-पत्नी के बीच हो या माता पिता-बच्चो के बीच, इस विघटन को रोका नहीं जा सकता।

ये सर्वेक्षण समाजशास्त्री श्रीमती प्रमिला कपूर के कामकाजी महिलाओ पर किए गए सर्वेक्षण बताते हैं कि नागरिक सभ्यता एव पश्चिमी मूल्यो से प्रभावित प्रेरित होकर पढी लिखी नौकरीपेशा स्त्रियो का दृष्टिकोण एक दशक म ही प्रेम, विवाह और सेक्स को लेकर कितना बदल गया है। ये निष्कर्ष उन्होंने सन् १९५९ और १९६९ म दो बार सौ पढी लिखी नौकरीपेशा हिन्दू विवाहित और अविवाहित महिलाओ के साथ बातचीत करके निकाले थे। विभिन्न कालेजो के सर्वेक्षणो म भी सिद्ध है कि आज नई पीढी प्रेम, विवाह व सेक्स के पुराने मूल्यो को उसी रूप म न मानने को तैयार है न उन नियमो से बधकर चलने को ! लेकिन साथ ही एक सुखद आश्चय की बात यह भी है कि मुक्त-यौन के परिणाम देखकर विचारवान युवक-युवतिया फिर से अपने भारतीय मूल्यो की ओर लौटने की इच्छा व्यक्त करने लगे है। समय समय पर विभिन्न पत्र पत्रिकाओ के लिए किए गए मेरे इन सर्वेक्षणो के अलावा मेरे पास अध्ययन का एक खुला व विस्तृत आयाम भी रहा है—पाठकीय समस्या-पत्रो के माध्यम से सही स्थिति जानने की सुविधा, जो शास्त्रीय ढग के सर्वेक्षणो से सुलभ नहीं हो सकती।

प्रत्यक्ष बातचीत मे ८० प्रतिशत शिक्षित लडके लडकियो न माता पिता द्वारा तय विवाह के बारे म इच्छा प्रकट की, जिसम उनकी राय भी ली गई हो। कामकाजी माताओ की लडकिया मे से ६५ प्रतिशत ने विवाह के बाद नौकरी न कर घर म रहने की इच्छा प्रगट की तथा कामकाजी माताओ के लडको मे से ८५ प्रतिशत ने नौकरी करने वाली पत्नी के प्रति अनिच्छा जाहिर की। घरेलू माताओ के लडके लडकियों म यह प्रतिशत ४५ व ५० के बीच था।

अप्रत्यक्ष रूप म पत्रो के माध्यम से मालूम होता है कि अधिक देर से विवाह युवक युवतियो मे कुठाए व समस्याए पैदा कर रहा है। माता पिता जल्दी विवाह नहीं करते, यह शिकायत प्रौढ होती जा रही युवतियो से लेकर किशोरियो तक अपने पत्रो म करती हैं। विशेष कारण है घर म असुरक्षित वातावरण या बाहरी उत्तेजक माहौल म बढी सेक्स माग के कारण वैवाहिक जीवन म सुरक्षा या सुकून की तलाश। छुटपुट फिसलनें— गल-ब्वाय फ्रेंडशिप विवाह पूव यौन सबधो के कारण उपजी अपराध चेतना, भविष्य के प्रति भयभीत, शकित भावना जो कभी-कभी मानसिक विकारो मे भी बदल

जाती है—ही अधिकतर इस मांग के पीछे होती हैं। प्रश्न लडके-लडकियों के अपने कैरियर का हो या मा-बाप की किसी मजबूरी का या देश की जनसख्या समस्या का, बिना सोचे समझे जल्दी विवाह की स्थितियां आज सभव नहीं हैं। तो बदली स्थितिया म इस समस्या का समाधान क्या हो, वतमान वातावरण का सुधार कैसे हो इस पर विचार करने का समय आ गया है। यदि हल जल्दी न खोजा गया बदलाव को दिशा न दी गई तो हालात और बिगड सकते हैं। अपनी सस्कृति पर आधारित व्यापक जन शिक्षण ही इस दिशा म उपयोगी काय कर सकता है। य हालात कहा तक पहुचे है आग और कहा पहुच सकते हैं, इसका सकेत आगे व्यक्तिगत विघटन के प्रकरण म कुछ केस हिस्टरिया, पत्र-नमूना के साथ एक खुले सर्वेक्षण के रूप म दिया जा रहा है। साथ ही लडके लडकियो म मेलजोल विषय पर कुछ छात्र छात्राओ म प्रत्यक्ष बातचीत का साराश भी। (सक्षेप म इस सर्वेक्षण के निष्कष २८ दिसम्बर १९८० के अक 'धमयुग म भी प्रकाशित हुए थे।)

एक समाजशास्त्री गिरिजा खन्ना और दूसरी डाक्टर मरिअम्मा ए० वर्गीज ने भारतीय नारी पर एक विस्तत सर्वेक्षण करके जो निष्कष प्रस्तुत किए हैं उनका सार है—६० प्रतिशत महिलाए नौकरी न कर घर मे रहना चाहती हैं। २५ की आयु के पूव लडकी का विवाह अवश्य हो जाना चाहिए, यह राय शत प्रतिशत थी। स्वच्छद प्रेम व प्रेम विवाह की वकालत न कर उतर माता पिताकी मरजी से विवाह के पक्ष मे लडके-लडकियो का स्पष्ट बहुमत है। यह सर्वेक्षण दश को पाच भागो मे बाटकर प्रत्येक भाग से दो सौ—कुल एक हजार स्त्रिया म साक्षात्कार करके किया गया था। जिन प्रदेशो मे नौकरी के पक्ष मे अधिक राय बनी, वहा भी अधिक समथन परपरागत व्यवसायो—अध्यापन, क्लर्की, नर्सिंग, मेडिकल के पक्ष म था। कामकाजी स्थिति के साथ भी गृहकाय व बच्चो की देखभाल उनकी पहली जिम्मेदारी है, कुछ अपवाद छोड, आम राय यही थी। पजाब, उत्तरप्रदेश और मध्यप्रदेश मे निम्न मध्यवग भी सिवाय मजबूरी के नौकरी पसद नही करता। पजाबी स्त्रिया प्रगतिशील होने हुए भी नौकरी के बजाय घरेलू उद्योग धधा को तरजीह देती है। केवल दक्षिण, महाराष्ट्र और पूर्वी भारत मे ही, जो क्षेत्र बाहरी हमला से अपेक्षाकृत बचे रहे और जहा आज भी वातावरण मे सदेह कम जागति ज्यादा है, वही नौकरी के पक्ष म अधिक राय बनी।

कुल मिलाकर इस सर्वेक्षण निष्कष म आज भी परपराबद्ध मध्यवर्गीय और उच्चवर्गीय समाज मे स्त्रिया का नौकरी करना बहुत सम्मानजनक नही समझा जाता—आर्थिक दबावो के बावजूद। स्त्रिया की महत्वाकाक्षा, प्रतिभा प्रगति कही पर पुरुषा के अहम पर चोट करती है, जिससे प्रबुद्ध, प्रगतिशील और उच्च पदो पर आसीन युवतियो के विवाह म या तो बाधा आती है या विवाह हो जाता है तो सफल दाम्पत्य मे इससे दरार पडती है शायद इसलिए भी।

महत्वाकाक्षा और पत्नीत्व

महत्वाकाक्षा किसी युग की बपौती नही, मानव स्वभाव का एक सहज गुण है।

लेकिन गुणो के विकास के लिए परिस्थिति की अनुकूलता तो चाहिए ही।

कहा जाता है कि आजादी के बाद भारतीय नारी के लिए परिस्थिति इतनी अनुकूल अवश्य है कि जिसमे उसकी महत्वाकाक्षाओ को सहज विकास का अवसर मिल सके। सिद्धात मे यह बात ठीक लगती है। व्यवहार मे इस कथन की सत्यता सिद्ध करने के लिए शायद अगले दो दशक भी कम पडें। अभी तो वैधानिक स्थिति और सामाजिक परिस्थिति मे मेल बैठाना एक समस्या बनी हुई है। या तो महत्वाकाक्षाए ही अधूरी रह जाती हैं या बदले मे न जाने कितनी भारी कीमत चुकानी पड जाती है। विश्वास न हो तो ज्ञान, कला प्रशासन, समाजसेवा आदि क्षेत्रो मे बढी चढी कुछ प्रौढ कुमारियो से मिलकर देखिए एक सीधे से प्रश्न के उत्तर मे इतनी व्याख्याए सुनने को मिलेंगी कि आपको अपने देश मे अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता के बारे मे ही भ्रम होने लगेगा। 'विवाह' जैसे एक बिल्कुल निजी मामले के बारे मे पूछने पर ऐसा होना शायद स्वाभाविक भी है। फिर भी कुछ महिलाओं मे सही बात कहने का साहस मिलता है। कुछ बानगिया

कुमारी क' (आयु लगभग ४२ वर्ष) एक सगीतज्ञ, चित्रकर्त्री और लेखिका है। एक दिन सुबह आठ बजे उनके घर गई तो पता चला कि वे अपनी आध्यात्मिक साधना और योगाभ्यास से नौ बजे बाद खाली होगी। बाद मे लगभग दो घटे की आध्यात्मिक चर्चा और बहस के बाद वे मुझे इतना ही समझा पायी कि विवाह करना उनके ईश्वर से साक्षात्कार मे बाधक न होता, और शारीरिक सम्मिलन और आत्म मिलन मे रुकावट न डालता तो वे अवश्य विवाह कर लेती। शरीर की माग को स्वाभाविक मानते हुए भी उन्होने कहा, 'इन भीतरी रासायनिक परिवर्तनो को योगाभ्यास से वश मे किया जा सकता है। पर उनकी सारी आध्यात्मिक साधना और कला साधना भी उनके इस अभाव को भर सकी है बातचीत के समय ऐसा नही लगा। हा, इसे विवशता की पीडा न कह कर भावो का उदात्तीकरण कह सकते हैं।

कुमारी स (आयु लगभग ४६ वर्ष) सेना के एक सहायक कार्यालय मे मेजर रैंक के बराबर एक उच्च पद पर काम कर रही थी। विवाह प्रश्न पर उन्होने कहा, 'दुनिया मे और बहुत-से काम हैं करने के लिए। विवाह उनके लिए अनिवार्य होता है जिनके लिए अपने जीवन का कोई लक्ष्य नही होता।' प्रकृतिदत्त शारीरिक माग के प्रश्न पर यह सब हमारे सोचने के ढग पर निर्भर करता है। व्यस्तता हो और जीवन मे करने के लिए कुछ ठोस काम, तो ये सारी बातें नही सताती। हा, अभी हमारे यहा अकेले रहना असुविधाजनक है।' इसीलिए वे सदा किसी न किसी रिश्तेदार को साथ रखती हैं। अकेले क्षणो मे मनबहलाव के लिए उन्होने अपने घर मे एक दर्जन प्यारे प्यारे कुत्ते भी पाल रखे हैं और उन्हें ही अपने बच्चे समझती हैं।

कुमारी 'ग (आयु लगभग ४४ वर्ष) एक सामाजिक कार्यकर्त्री हैं। एक लख पति की बेटी होने के कारण परिवार की ओर से उन्हें यह सुविधा प्राप्त है कि वे अपने समय, अपनी गाडी और अपने शौक के लिए मिली जेब खर्च की धन राशि को गरीब या दुखी महिलाओ की सेवा मे लगा सकें। वे काफी सुन्दर हैं और ऐसे उदाहरण कम ही मिलते हैं कि एक सुन्दर और साधनसम्पन्न लडकी का विवाह न हो। पूछने पर पहले तो,

लेकिन गुणो के विकास के लिए परिस्थिति की अनुकूलता तो चाहिए ही।

कहा जाता है कि आजादी के बाद भारतीय नारी के लिए परिस्थिति इतनी अनुकूल अवश्य ह कि जिसमे उसकी महत्वाकाक्षाओ को सहज विकास का अवसर मिल सके। सिद्धात मे यह बात ठीक लगती है। व्यवहार मे इस कथन की सत्यता सिद्ध करने के लिए शायद अगले दो दशक भी कम पडें। अभी तो वैधानिक स्थिति और सामाजिक परिस्थिति म मेल बैठाना एक समस्या बनी हुई ह। या तो महत्वाकाक्षाए ही अधूरी रह जाती है या बदले मे न जाने कितनी भारी कीमत चुकानी पड जाती है। विश्वास न हो तो ज्ञान, कला, प्रशासन, समाजसेवा आदि क्षेत्रो मे बढी चढी कुछ प्रौढ कुमारियो स मिलकर देखिए एक सीधे से प्रश्न के उत्तर म इतनी व्याख्याए सुनने को मिलेंगी कि आपको अपने देश मे अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता के बारे मही भ्रम होने लगेगा। विवाह' जैसे एक बिल्कुल निजी मामले के बारे मे पूछने पर ऐसा हाना शायद स्वाभाविक भी है। फिर भी कुछ महिलाओ मे सही बात कहने का साहस मिलता है। कुछ बानगिया

कुमारी 'क' (आयु लगभग ४२ वर्ष) एक सगीतज्ञ, चित्रकर्त्री और लेखिका ह। एक दिन सुबह आठ बजे उनके घर गई तो पता चला कि वे अपनी आध्यात्मिक साधना और योगाभ्यास से नौ बजे बाद खाली होगी। बाद मे लगभग दो घट की आध्यात्मिक चर्चा और बहस के बाद वे मुझे इतना ही समझा पायी कि विवाह करना उनके ईश्वर से साक्षात्कार मे बाधक न होता, और शारीरिक सम्मिलन और आत्म मिलन म रुकावट न डालता तो वे अवश्य विवाह कर लेती। शरीर की माग को स्वाभाविक मानते हुए भी उन्होने कहा, 'इन भीतरी रासायनिक परिवर्तनो को योगाभ्यास से वश मे किया जा सकता है।' पर उनकी सारी आध्यात्मिक साधना और कला साधना भी उनके इस अभाव को भर सकी है, बातचीत के समय ऐसा नही लगा। हा इसे विवशता की पीडा न कह कर भावो का उदात्तीकरण कह सकते हैं।

कुमारी 'ख (आयु लगभग ४६ वर्ष) सेना के एक सहायक कार्यालय म मेजर रैंक के बराबर एक उच्च पद पर कार्य कर रही थी। विवाह प्रश्न पर उन्होने कहा, 'दुनिया मे और बहुत-से काम है करने के लिए। विवाह उनके लिए अनिवार्य होता है जिनके लिए अपने जीवन का कोई लक्ष्य नही होता।' प्रकृतिदत्त शारीरिक माग के प्रश्न पर यह सब हमारे सोचने के ढग पर निर्भर करता है। व्यस्तता हो और जीवन म करने के लिए कुछ ठोस काम तो ये सारी बातें नही सताती। हा, अभी हमारे यहा अकेले रहना असुविधाजनक है।' इसीलिए वे सदा किसी न किसी रिश्तेदार को साथ रखती हैं। अकेले क्षणो म मनबहलाव के लिए उन्होने अपने घर मे एक दजन प्यारे प्यारे कुत्ते भी पाल रखे हैं और उन्हे ही अपने बच्चे समझती हैं।

कुमारी 'ग' (आयु लगभग ४४ वर्ष) एक सामाजिक कार्यकर्त्री हैं। एक लख पति की बेटी होने के कारण परिवार की ओर स उन्हे यह सुविधा प्राप्त है कि वे अपने समय अपनी गाडी और अपने शौक के लिए मिली जेब खर्च की धन राशि को गरीब या दुखी बहनो की सेवा म लगा सकें। वे काफी सुन्दर हैं और ऐसे उदाहरण कम ही मिलते हैं कि एक सुदर और साधनसम्पन्न लडकी का विवाह न हो। पूछने पर पहले तो,

क्यों नही हुआ ? जरूर लडकी मे खोट होगा कोई ! क्या इतनी उमर तक वह यू ही बैठी होगी ? वह कुमारी हो ही नही सकती—वही संदेह का विष-बीज। फिर अपनी निजी पहचान रखने वाली प्रगतिशील नारियां और समाज मे ऊंची स्थिति प्राप्त महिलाओं के सामने मे तो इसके साथ पुरुष की अहम भावना भी आकर जुड जाती है। अपने से ऊंची स्थिति म होने के कारण पुरुष उन्ह सहन नही करते और प्राय वे कुमारी रह जाती हैं। कही मरजी से, तो कही मजबूरी से। आज औसत युवक फिर से कुछ कम उमर की घरेलू लडकी की माग पत्नी के रूप मे करने लगे हैं तो इसके पीछे भी वही संदेह का विष-बीज है या उनकी अपनी हीनभावना या दोनो। आर्थिक कठिनाई के बावजूद कुछ पति अपनी पत्नी को नौकरी नही कराना चाहत या विवाह के बाद नौकरी छुडवा देते हैं तो यहा भी वही संदेह का विषधर कुडली मारे बैठा होता है। कामकाजी पत्नियो के घर म कलह का अमगल राग अक्सर इसी से फूटता है। बेशक आर्थिक मूल्य भी इसमे अपनी खासी भूमिका निभाते है। पर आर्थिक झगडो की बात प्राय समझौतो से सुलझा ली जाती है। जो नहीं सुलझती और अक्सर उलझती ही जाती है कभी कभी जिसका अन्त अलहदगी या तलाक म ही नही, आत्महत्या या हत्या तक मे हो पाता है, वह मूल बात यही है—परस्पर सबधो म सदेह व अविश्वास की दरार आ जाना। यह दरार अब चौडी होती हुई अकामकाजी गृहणियो के घरो म भी पहुच गई है।

नए मुखौटे पुरानी सोच यह कहना कि यौन नैतिकता सबधी हमारी बदली हुई सोच इसके लिए जिम्मेदार है, गलत होगा। नही सोच बिल्कुल नही बदली है। मेरे अध्ययनो मे प्रगतिशील कहे जानेवाले और ऊपर से बराबर अपनी उदारता जाहिर करने वाले वर्ग मे भी यौन नैतिकता सबधी दुहरे मूल्य बाकायदा उपस्थित हैं। उनमे भी यह सोच इतनी ही बदली है कि स्वय चाहे जितनी छूट ली जाए, नारी किसी भी तरह कोई छूट नही ले सकती। अत्यधिक समृद्ध नवधनिक, वह सस्कारहीन वर्ग, जो खानदानी अमीर नही है काले धधो स एकाएक अमीर हो गया हैऔर पश्चिमी मूल्यो से बेहदप्रभावित हो वहा से केवल भोग मूल्य लेकर ही गर्व से फूला नही समाता उस वर्ग म, उनके क्लब जीवन म 'परमिसिव सोसाइटी' की तर्ज पर पत्नियो को साथ लेकर भी मुक्त-यौन के कुछ प्रयोग चल रहे है पर वहा भी यह खेल ऊपरी दिखावे या अत्याधुनिक बनने की शान म ही चलता है। भीतर से स्वीकृति कही नही है। इसलिए घर मे कलह है टूटन है। उनके बच्चे भी इसका अनुचित लाभ ले कुमार्ग पथ पर आसानी से चल निकले हैं। ये ही आज के नए सामन्त और सामन्ती बेटे हैं, जो पैसे के बल पर सब कुछ हासिल कर लेना चाहते हैं।

हमारी नैतिकता जब तक केवल यौन शुचिता के आसपास ही घूमती रहेगी, तब तक परस्पर सहमति के निर्दोष प्रेम-सबधों मे भी सदेह का यह विष-बीज उगता रहेगा और चोरी छिपे अवैध सबधों का बाजार भी गर्म होता रहेगा। भोग मूल्यों पर कोई रोक न होने पर यौन-अपराध भी होते रहेंगे। क्या झूठ-पाखड, रिश्वतखोरी, भ्रष्टाचार, कालाबाजारी, मिलावट, प्रतिद्वद्वी को रास्ते से हटाने के लिए उचित-अनुचित तरीको का प्रयोग, दादागीरी के हथकडे आदि अनैतिक कार्य नहीं ? इन अपराधियों पर भी

सरलता से लगाया जा सकता है।

स्थितिया आज पर्याप्त स्पष्ट है। हर समय चर्चित है। हर स्तर पर एक ददभरी विवशता के साथ महसूस की जा रही है। इनके पीछे व्यक्तिगत विघटन ही तो है भले ही उसकी जड आज की सामाजिक व्यवस्था व पारिवारिक विघटन म हो। किसी राष्ट्र के चरित्र का सीधा सबध उसके निवासियो के चरित्र से ही होता है। इस चरित्र म ही राष्ट्र की उन्नति, उसकी अस्मिता उसकी साख जुडी होती है। गलती कही भी हो, किन्ही व्यक्तियो या व्यक्ति-समूहो से हो, उस राष्ट्रीय चरित्र की खामी मे शुमार कर लिया जाता है। राष्ट्रीय चरित्र यानी व्यक्तियो का औसत समूह चरित्र। हमारे वर्तमान राष्ट्रीय चरित्र का यह विषय इतना विस्तृत है इतना गभीर कि इस पर अलग से एक बडे ग्रथ का कलेवर भी छोटा पडेगा। यहा केवल इस पुस्तक के मूल विषय यौन व्यवहार और यौन शोषण से सबधित व्यक्तिगत विघटन की चर्चा ही की जा रही है जिसम वेश्यावृत्ति, मुक्त यौन प्रयोग, सेक्स को लेकर किशोर युवा पीढी के अतद्वद व तनाव, आत्महत्या तथा इनस सबधित समस्याए और अपराध शामिल है।

वेश्यावृत्ति

आधुनिक सभ्य कहे जानेवाले समाज मे वेश्यावृत्ति एक गरकानूनी यौन व्यापार है। इसका आधार यौन सबधो की बहुलता और इस माध्यमसे धनोपार्जन है। भावनाओ के लिए इसम कोई स्थान नही होता। यह प्रथा हमारी विवाह सस्था और परिवार सस्था की जडो पर कुठाराघात करती है इसलिए आज अन्य प्रभावको की अपेक्षा सामाजिक विघटन के लिए अधिक जिम्मेदार है। सामाजिक तिरस्कार की दृष्टि से व्यक्ति के विघटन के लिए भी। लेकिन जसा कि पूव इतिहास म बताया गया है, प्राचीन काल म इसका यह स्वरूप न था। इसे एक सस्था के रूप मे सामाजिक मान्यता और राज्य सरक्षण प्राप्त था। वेश्याओ का आचरण भी कुलीन परिवारो की स्त्रियो के समकक्ष ही नही, उन्हे सभ्रात तौर तरीको म प्रशिक्षित करन लायक उनसे ऊचे स्तर का था। कलाओ की पडितहुए बिना उनके लिए राजाश्रय मे नय नये पदो की रचना करना सभव ही न होता, न कला प्रतियोगिताओ मे भाग लेना। पर भारत मे मुगल साम्राज्य के अत के बाद की स्थितिया मे इस एक व्यवसाय का रूप दिया जाने लगा, तो इनकी कला, इनके स्तर म भी गिरावट आई। फिर दस-बीस नाच गाने सीखकर सस्ते अश्लील ढग का मनोरजन करना और देह बेचना ही इनका काम रह गया।

इस व्यवसाय का वाणिज्यीकरण तो हाल ही की घटना है। जब इसे असामाजिक तत्वो द्वारा एक लाभकारी उद्योग बना कर लडकियों की खरीद बिक्री या उनके साथ जबरदस्ती कर उनका शोषण करन की प्रवृत्ति फैलाई गई, तो सन् १९५६ म स्त्रिया और लडकिया के अनैतिक व्यापार के उन्मूलन का अधिनियम पास हुआ। प्रसिद्ध सामाजिक कार्यकर्त्री श्रीमती सावित्री निगम द्वारा दो सौ वेश्या परिवारो का जब सर्वेक्षण किया गया था तो यह तथ्य सामने आया था कि चकला मे फसी साठ प्रतिशत वेश्याए अपने इस धधे स नफरत करती थी। आमदनी का दूसरा उपयुक्त जरिया मिलने

पर इस छोडने की इच्छा रखती थी। कुछ का विचार था—यह भी अन्य व्यवसायो की तरह एक व्यवसाय है, जिसे अपनाना युक्तिसगत है। लेकिन यह व्यक्तिगत इच्छा पर निभर हो, इसे हेय दृष्टि से न देखा जाए, इस म मालिका और उनके दलालो द्वारा शोषण और दमन न हो तो यह वग समाज से पृथक रह कर भी समाज के लिए श्रेय ही है। अनेक सामाजिक कायकर्ता आज भी समाज मे व्यवस्था बनाए रखने के लिए इसकी उपयोगिता मानते है, क्योकि कानूनी बधन लगने पर वेश्याए अड्डो स उठ कर घरो और गलियो कूचो म बिखर गई है।

लेकिन इसे लाभकारी व्यवसाय मान इसके व्यवसायियो और दलालो द्वारा परपरागत व आर्थिक दृष्टि से पिछडे क्षेत्रो की स्त्रियो—जौनसार बावर की खस युवतियो, नायक और नायर लडकियो, आदिवासी युवतियो तथा अन्य असहाय महिलाओ—को इस अनैतिक व्यापार मे लाने के लिए अनेक हथकडे अपनाए गए, उनका शोषण किया गया तो कानून बना कर इस व्यापार का उन्मूलन जरूरी हो गया।

'लडकियो व स्त्रियो के अनैतिक व्यापार उन्मूलन अधिनियम' म वेश्याओ को दडित करने अथवा वेश्यावत्ति को नष्ट करने का प्रावधान नही था। केवल उस स्थिति म ही किसी वेश्या को कानूनी दड दिया जा सकता था, जब वह अपने उस व्यवसाय को सावजनिक या धार्मिक स्थलो के आसपास चलाती पाई जाए। लेकिन यह अधिनियम उन व्यापारियो और दलालो, जो इस व्यापार से लाभान्वित हो रहे है, को अवश्य दण्डित करता है। कानूनी दृष्टि से स्वय वेश्याए अपना नाच-गाने का व्यवसाय चला सकती ह। कोई बिचौलिए या सबद्ध व्यापारी इन से लाभ नही उठा सकते यानी लडकियो की इस उद्देश्य से खरीद-बिक्री, उन्हे फुसलाना, उडाना, उनके साथ जबदस्ती करना, चकले खोलना व चलाना ही अवैध घोषित हुआ, वेश्यावत्ति नही।

लेकिन असामाजिक तत्व हमेशा ही कानून तोडते हैं और कानून की कमियो का लाभ उठाते हैं। इसलिए यह अवैध व्यापार चोरी छिपे ढग से आज भी खूब चल रहा है। चकले टूटे और वेश्याए गलियो मुहल्लो मे फैल गइ। पहले कम से कम एक जगह स उन्ह पकडना, पहचानना आसान तो था, अब वे छद्म वेश म सभ्रात बस्तियो म भी फल गई हैं जहा से न उनकी पहचान सरल है न धर पकड। कभी किसी की शिकायत पर कुछ छापे पडे तो कुछ वेश्याए और दलाल पकड लिए गए, लेकिन कानून की कमी का लाभ उठा कर वे प्राय छूट गए। पुलिस अधिकारियो के अनुसार छापो क दौरान महिला गवाहो की उपस्थिति की आवश्यकता ने इस व्यापार के उन्मूलन की शक्तियो को प्रतिबधित किया। फिर इसके दलालो की बाह भी बहुत लबी होती हैं वे प्राय उन्ह छुडाने म सफल हो जाते है। इसलिए सन १६७८ के अत मे सामाजिक कायकर्ताओ की माग पर 'स्त्रियो, लडकियो के अनैतिक व्यापार उन्मूलन अधिनियम को फिर से सशोधित किया गया है। कुछ धाराए स्पष्ट की गई हैं, कुछ को कठोर बनाया गया है। फिर भी असामाजिक तत्व उनमे से अपनी राह निकाल ही रह हैं।

वतमान सामाजिक आर्थिक स्थितियो मे सुधार बिना इस पर नियत्रण पाना कठिन है। ग्रामाचलो मे तजी स बढती दरिद्रता और शहरो के आकषण क चलते प्रति-

दिन हजारो युवक ही नही, औरतें भी नौकरी की तलाश म गाव छोड शहरा म चली आ रही है। मद सभी तरह का काम कर लेते है। नही मिलता तो भी इधर उधर भटक लते है। पार्कों मे फुटपाथा पर कही भी रह सो लेत हैं। पर बकार औरतो की दशा दयनाय हो जाती है। कही रिश्ते के लोगा या गाव की अय बाराजगार औरतो का सहारा मिल गया तो ठीक, वर्ना वे दर दर की ठोकरें खात हुए भी वापिस घर कम ही पहुच पाती हैं।

काम की तलाश मे भटकते पुरषो को कोई सहारा मिले न मिले, एस मददगार (?) स्त्रियो को जरूर मिल जाते हैं। अधिकतर तो इन्हें गावा म काम दिलान के बहाने फुसला कर ही शहर लाया जाता है। ये बेचारी अनपढ सीधी सादी गरीब औरतें जल्दी ही उनके झासे म आ जाती हैं। फिर काम की तलाश म इन्हें कहा-कहा ले जाया जाता है इन पर क्या बीतती है यह अनुमान से ही समझा जा सकता है। जब य अपना सब कुछ गवा बठती है, तो उन गुडो का अगला कायक्रम होता है, इन्ह 'ब्लकमेल' करन का। तब लाख चाहने पर भी ये घर नही लौट पाती और तथाकथित सरक्षको के चगुल म फस वेश्यावृत्ति अपनाने के लिए मजबूर हो जाती हैं।

सुरक्षा सदन यहा तक कि पुलिस के छापा व सामाजिक कायकर्ताओ द्वारा बचा कर जो स्त्रिया उद्धार गहो व सुरक्षा-गृहा म रखी जाती हैं वहा भी अनेक जगह इन सस्थाओ के अधिकारिया व पुलिस की मिलीभगत मे यह अवैध व्यापार चलता रहता है। पहले कुछ विधवा आश्रम इसी कारण बदनाम हुए थे, आज य सुधार-गह भी इसी कारण अविश्वसनीय बन गए हैं। इन स्त्रिया के तथाकथित अभिभावक, जिनका इनसे दूर का भी सबध नही होता, इन्ह यहा से रिश्वत देकर और अदालतो से कानूनी दाव पच लडाकर या जमानत देकर छुडा ले जाते हैं। इन आश्रयगृहा की अनक आवासी महिलाओ से जो कहानिया मुझे समय समय पर सुनने को मिली उनम से कुछ तो रागटे खडे कर देने वाली है—कुत्सित और घिनौनी। कवयित्री कथाकार अमृता प्रीतम को भी उन्हाने साक्षात्कार मे बताया था, 'वे हम किराए के तबुओ और किराए की दरियो की तरह इस्तेमाल करते हैं।' आश्चय होता है सुनकर कि बिना कोई मुआवजा दिए इनकी देह का शोषण करने वाला मे पुलिसकर्मी, सस्था कमचारी, कुछ अधिकारी ही नही, समाज के सफेदपोश लोग व कुछ नेता (?) तक शामिल होते हैं। राजधानी के सुप्रसिद्ध सुरक्षा सदन 'नारी निकेतन की अधीक्षिका के अनुसार इस तरह की अफवाहें (?) एकदम निराधार हैं।' पर ६ मई ८१ क एक समाचार के उच्चतम न्यायालय के एक आदेश से नारी निकेतन' के विरुद्ध आरोपो की जाच के लिए एक समिति (पनल) की नियुक्ति की गई है।

अधीक्षिका ने यह भी बताया कि निम्न व निम्न मध्य वग के मामले ही वहा ज्यादा आत हैं मध्य वग से बहुत कम। "मध्य वग की जो लडकिया आ भी जाती हैं, इज्जत बचाने के नाम पर (इज्जत क्या गरीब लडकी की नही होती!) पैसे व ताकत का इस्तेमाल कर उनके मामले प्राय जल्दी ही रफा दफा हो जाते है। अधिकतर गरीब लडकिया ही अपराध करती हैं और वे ही शोषण की शिकार भी होती हैं। उनकी घरेलू सामाजिक-आर्थिक स्थितिया ही इसके लिए जिम्मेदार हैं। लेकिन कानून की कमजोरी

से अक्सर अनैतिक धंधे म लगी इन लडकियो के तथाकथित 'अभिभावक' (गैरकानूनी 'अंडरग्राउड' दलाल) उन्हें छुडाने मे सफल हो जाते हैं। पिछले चार साला म केवल दो-तीन मामलों मे ही दो दो साल की सजा हुई—इसी से अदाजा लगाइए।

"लडकिया स्त्रिया के अनैतिक व्यापार-निरोध अधिनियम मे दोबारा सशोधन तो इसलिए लाया गया है न कि इस धधे स लाभ कमान वाले बिचौलिए या दलाल कानून की पकड स छूट न पाए और उन्ह सजा दिलाई जा सके। मैं जानना चाहूगी कि इसके बाद स्थितियो मे कितना सुधार हुआ ? अपराधिया को गिरफ्त मे लेन मे कितनी सफलता मिली ?" मेरे इस प्रश्न के उत्तर मे अधीक्षिका हसने लगी, "सुधार ही समझ लीजिए। अतर यह आया है कि कभी-कभी धर पकड तो होती है लेकिन 'केसेज' यहा कम आ रहे हैं। हम पपर मे पढते है, फला होटल मे या फला जगह छापा पडा और इतनी 'काल गर्ल्स' पकडी गईं। लेकिन उन्ह पकडे जाने के बाद जिन सस्थाआ मे जाना चाहिए, वहा वे पहुची ही नही।"

"वे यहा क्या नही आयी ? कहा रखी गइ ?"

"आना तो यही चाहिए था। लेकिन हर ऐसी खबर के बाद इन मामला मे पकडी गई लडकिया नही आइ। क्यो नही आईं—पता नही। सुना है, नत्य सगीत से रोजी कमाने वाली लडकियो के नाम पर वे छूट जाती हैं। कौन देखता है कि वे सगीत-नत्य जानती भी हैं कि नही ? लेकिन यह सच है कि कानून मे परिवतन के बाद हमारे पास 'केसेज' आने कम हो गए हैं। स्थितियो पर कितना, किस रूप मे नियत्रण पा लिया गया है इसका मुझे अदाजा नही।"

जब अधीक्षिका, जिन्ह इस अधिनियम के अन्तगत अनैतिक धधो मे गिरफ्त लडकिया के मामला से निबटने का रोज वास्ता पडता है, और उनकी अदालती कायवाही म भी सुरक्षा सदन की मुख्य अधिकारी के नाते उनकी भागीदारी रहती है मे यह पूछा गया कि वे पुराने कानून व नए सशोधित कानून का अतर जरा स्पष्ट करके समझाए तो मुझे जान कर आघात लगा कि वे कुछ बता नही पायी। सिवाय इसके कि सगीत नृत्य के नाम पर ये लडकिया छूट जाती हैं और उन्ह छुडान वालो की बाह बहुत लबी हैं। पूरे नियम-कानून की उन्हे जानकारी ही न थी।

इन लडकियो के पुनर्स्थापन के बारे म उनका कहना था, "जब तक वे यहा रहती हैं, उन्ह पूरी तरह सुरक्षित वातावरण मे रख कर सिखाया पढाया और सुधारा जाता है। यह ठीक है कि इन्हे जो आदतें पड चुकी होती हैं, उस कारण इन्हे नियत्रण मे रखने की काफी कठिनाई हमारे सामन आती है लेकिन प्रारभिक रूप मे ही। कुछ समय बाद वे स्वय को 'एडजस्ट' कर लेती हैं। इसीलिए इन्ह पढाई लिखाई, सिलाई-बुनाई प्राथना सगीत आदि मे व्यस्त रखा जाता है। इसके बाद केस का फसला होने पर इन्हें वापस इनके परिवारो म स्थापित करन या विवाह कर इनका घर बसाने का प्रयत्न किया जाता है। सिलाई बुनाई आदि काय उनकी व्यस्तता के लिए तो ठीक है, पर इनसे प्राप्त अल्प आय से इनके आत्म निभर होने की कल्पना ठीक नही। आत्म निभर ये तभी हो सकती हैं, जबकि इन्हें वेश्यावृत्ति माध्यम से सरलता से प्राप्त अच्छी आय के

बदले गुजारे लायक आय के साधन मिलें व उसके साथ सामाजिक सरक्षण भी मिले। अकेली ये रह नही सकती। इसलिए मुख्य जोर इन्हे परिवारो मे स्थापित करने पर ही दिया जाता है। लेकिन कई बार धोखा खाने के बाद जिनकी विवाह से अरुचि हो जाए, जो पुरुष नाम से ही घृणा करने लगें और जिन्हे अपने परिवार वाले भी अपनाने से इन्कार कर दें वे कहा जाए ? क्या सामाजिक भावना से कोई सरक्षक इनके लिए आगे नही आ सकते ? हमने कोशिश की है कि एसा हो, लेकिन यही उन पर विश्वास करने या उनकी गारटी लेने-देने की बात आडे आ जाती है। और उन्हे सब ओर से ठोकर खाकर अत मे प्राय फिर उसी गलत रास्ते पर चल पडने के लिए विवश हो जाना पडता है।"

यदि कुछ कार्यकर्ता स्वय को जोखिम मे डाल कर इन स्त्रियो को किसी तरह बचा कर घर भेजना चाहें तो अनेक कारणो से रास्ते बद मिलते हैं। पहली मुख्य बाधा होती है उन कथित अभिभावको और सरक्षको के चक्रव्यूह को तोडने की कठिनाई। फिर परिवेश मे पडी आदत से या शर्मिन्दगी से कई स्त्रिया घर लौटना ही नही चाहती। कुछ जो लौटने की इच्छा जाहिर करती है उन्हे घरो मे उनके वास्तविक अभिभावक अपनाते नहीं। कहीं अपनाते है तो उन्हें इतनी सामाजिक ताडना का सामना करना पडता है कि गरीबी के साथ उस अपमानभरी जिन्दगी म रहने के बजाय वे फिर वापिस उसी धधे म आ जाती हैं। जिन्हे आदत पड चुकी होती है वे फिर इसके बिना रह भी नही पाती। कई केस हिस्टरियो से पता चलता है कि अदालत म माफी मागकर, 'अब ऐसी भूल कभी नही होगी' 'फला मुहल्ले मे अब कभी कदम नही रखूगी।' कह कर, कसमे उठा कर छूटने वाली अनेक महिलाए छूट कर फिर वही पहुच जाती हैं। उद्धारगृहो से भी वे भागने के उपाय सोचती रहती है। कई बार भागने मे सफल भी हो जाती हैं। यहा तक कि सुधारगृह मे देर तक रहने व प्रशिक्षण पाने के बाद भी जब उनके लिए उपयुक्त वरो की तलाश कर एक सामाजिक समारोह मे उनकी विधिवत् सामूहिक शादिया कर दी जाती हैं तो उनमे से भी कुछ युवतिया फिर भाग खडी होती हैं—कभी अकेले तो कभी घर का पैसा आभूषण साथ लेकर। लेकिन प्यार, सहानुभूति व सुरक्षित वातावरण मिलने पर अनेक सफल गृहस्थिन भी सिद्ध होती है।

यौन रोग यौन रोग इनकी व इनके कारण देश की एक अन्य समस्या है। सन् १९६५ म 'भारतीय नतिक व सामाजिक स्वास्थ्य सगठन' की पत्रिका मे जो आकडे दिए गए थे, उनके अनुसार देश म चल रही छद्म वेश्यावृत्ति के कारण दो करोड व्यक्ति यौन रोगो से पीडित थे। इधर के वर्षो मे यह सख्या तेजी से बढी है। यौन रोगो की विकरालता और सहायता सरक्षण के अभाव म इन स्त्रियो का बुढापा बडे कष्ट मे बीतता है। कभी-कभी तो उनका अत खासा नाटकीय बन जाता है।

अब भिन्न कारण इस बुराइ के मूल मे पहले गरीबी की अपेक्षा धार्मिक अध विश्वासजनित देवदासी प्रथा, बाल विधवाओ को घरो से लाकर काशी छोड दना स्थानीय कुलीनता अकुलीनता जाति-बहिष्कार, विधवा पुनर्विवाह की अस्वीकृति, तलाक पर रोक जैसी सामाजिक प्रथाए अधिक रही। अब गरीबी के अलावा शहरो की

पिछडी बस्तिया, सिनेमा व सस्ते साहित्य का कु प्रभाव दहज जुटान या जीवन स्तर बढाने के लिए अतिरिक्त आय का सस्ता आकपण आदि कारण मुख्य है। आज के शहरी उपभोक्ता समाज मे भोग मूल्या की प्रधानता होने म किसी मजबूरी के बिना भी 'आसान कमाई' या मात्र एडवेंचर' के लिए यौन एपणाआ मे डूबना इसम और जुड गया है। नौकरी, तरक्की, व्यापार म सफलता या आगे निकलने के लिए या अय कोई काम निकलवाने के लिए जब नैतिक मूल्य इतन गिर जाए कि कुछ माता-पिता और पति स्वय अपनी लडकिया, पत्नियो को दाव पर लगान लगें तो उस समाज को सभ्य कहलाने का कोइ हक नही रह जाता। निम्न वर्गो मे पहले ही ये बधन शिथिल थे। गरीब किसान बधुवा मजदूर, खेतिहर मजदूर, खानो और कारखानो के मजदूर ठेकेदारो के नीचे काम करने वाले निर्माण मजदूर अपनी ऋणग्रस्तता की मजबूरी मे अपने परिवार की स्त्रिया म कभी कभी यह काम लेते रह है। कही दबाव या जोर-जबरदस्ती मे भी निम्न वग की इन स्त्रिया, जिनमें घरेलू नौकरानिया, आया आदि भी शामिल है का शोपण होता रहा है। शोपण के खिलाफ सिर उठान पर उनके साथ बलात्कार भी जिसका भयकर रूप आज के सामूहिक बलात्कारा में देखा जा सकता है।

निम्न मध्य वग मे भी पढाई का खच या दहज जुटाने या वे बाप के छोटे भाई-बहना को पालन की कुछ मजबूरिया और दबाव माने जा सकते है (यद्यपि मैं न इसे मजबूरी मानती हू, न दबाव करन के लिए काम व रास्त और बहुत म है) लेकिन मध्य व सम्पन्न उच्च मध्य वग म भी जब यह प्रवत्ति पनप रही है तो इसे किसी मजबूरी की सज्ञा हरगिज नही दी जा सकती। दबाव भी तभी जब पहले फिसलन होती है और फिर 'ब्लकमेलिग के रूप म दबाव का सामना करना पडता है। किन्ही मामला म धोखे के अलावा आम स्थितिया य ही है प्राय। मध्य वग म यह प्रवृत्ति अधिकतर शौक, अत्याधुनिक दिखन की चाह नशाखोरी, घर मे अवैध सबधा का वातावरण, पुरुषा स हर स्तर पर प्रतिद्वद्विता, आसान कमाई के लिए उचित अनुचित किसी भी साधन का प्रयोग या शारीरिक मानसिक विकृति के फलस्वरूप अत्यधिक बढी शारीरिक माग जसे कारणा स ही उभर रही है।

'काल गर्ल्स'

आधुनिक औद्योगिक समाज के भोग मूल्या ने पश्चिमी सांस्कृतिक फैशन और सह-शिक्षा कानेजा क उन्मुक्त वातावरण म मिल कर यौन की परपरागत नतिक धारणाआ में इतनी ढील की गुजाइश कर दी है कि इसस अब भारतीय समाज म वश्यावत्ति का एक 'उच्चतर वग भी पैदा हो गया है। कहा पिता पति अभिभावका की मुखर या मौन स्वीकृति स, ता कही चोरी छिपे तौर पर। 'इजी मनी के लिए वश्यावत्ति का एक 'पाट टाइम काम अनियमित व्यवसाय या अतिरिक्त आय का साधन बना लिया गया है। काल गल का मतलब ही है वक्त जरूरत पर जिन्हें निर्धारित शुल्क द कर सीध टलीफोन करके या उनके एजेंटा के माध्यम स किसी निश्चित जगह पर एक निश्चित अवधि के लिए बुलाया जा सके।

मुख्यत बडे नगरो म बडे छोटे होटलो क माध्यम स पापा यह वग अन्य इसी उद्देश्य के लिए जुटी अपनी रहस्यमयी मित्र मडली के जरिए फल फूल रहा है। इसम गरीबी या मजबूरी से कम, शौकिया वेश्यावत्ति अपनाने वाली तथाकथित सभ्रात मध्य वग की युवतिया अधिक शामिल है। कुछ सम्पन्न वग की एशपरस्त माड' युवतिया भी जो इसे हाबी (?) के रूप म, या मात्र 'एडवेंचर' अथवा 'थ्रिल' के लिए भी अपना लेने स परहेज नही करती।

रिश्वतखोरी, तस्करी, कालाबाजारी स रातोरात अमीर बनने का ख्वाब देखन वाले व्यापारी, अपने से ऊपर के अफसरो को, नताओ और मत्रियो को खुश करने क लिए उनकी चापलूसी मे लग अधिकारी और धूत राजनीतिज्ञ इनका रिश्वत सामग्री' के रूप मे या 'भेंट' के लिए धडल्ले से उपयोग कर रह हैं। कही-कही य स्वय भी मात्र परीक्षा म अच्छे अक, डिवीजन, डिग्री नौकरी तरक्की या अन्य लाभ पाने के लिए बिक रही है। ऐसी लडकियो के मुह स 'मजबूरी शब्द सुनकर विद्रूप हसी क सिवाय अन्य कोई भाव मन म नही जागता।

आधुनिक सभ्यता से आक्रान्त ससार के सभी महानगरो मे आज 'काल गर्ल्स' के इस धधे मे प्राय सम्पन्न वर्गों की लडकिया ही अधिक हैं। भारतीय परपरागत समाज म अभी कुछ वष पूव तक यह कल्पना भी असभव जान पडती थी। मगर आज यह विकृति भी हमने पश्चिम से सीधे आयात कर ली है। समाजशास्त्रियो के अनुसार, वेश्यावत्ति उन्मूलन कानून बनने के बाद आज के भारत मे वेश्यावत्ति जितनी चल रही है, उतनी मात्रा म इसके पहले कभी नही—मध्यकाल या रीतिकाल म भी नही। अतर केवल उसके जाहिरा या छिपे रूप का ही है। लेकिन इतनी अधिक मात्रा मे छद्म रूप से चलने वाली किसी स्थिति को छदम कहना क्या ठीक होगा? क्या आज यह एक जाना-माना तथ्य नही है? अब तो तथाकथित 'बोल्ड लडकिया इसे छिपाने मे अपना अपमान समझती है और बढ-चढ कर बताने मे गव अनुभव करती है। बेशक 'काल गर्ल्स' के रूप मे वे खुलकर सामने आने से अभी भी झिझकती है क्योंकि बदनामी के भय के साथ पुलिस का भी भय है। पर 'ब्वाय फ्रेंडस' की सख्या बढ चढकर बताने मे उन्हे अचेतन रूप से अपार सुख सतोष मिलता है। क्यो? यह तो वही जानें लेकिन यह नया सस्कार हमारा नही है इसलिए अस्वीकृत है—बाहर स भी भीतर स भी, इस अस्वीकृति की झलक भी उनके व्यवहार म किसी तरह मिल ही जाती है।

समाजशास्त्री श्रीमती प्रमिला कपूर ने अपने अध्ययन म 'काल गर्ल्स' का वर्गीकरण मुख्यत चार प्रकारो मे किया है—१ पारिवारिक परिस्थिति से पीडित व घरेलू प्यार से वचित होकर बदमिजाज और बदचलन हो जाने वाली लडकिया। २ अमीरो के मोह म पडी वे युवतिया, जो बिना सघष के जल्दी व आसानी से अपनी इच्छाए आवश्यकताए पूरी कर लेना चाहती हैं। ३ प्रेम मे धोखा खाने वाली या धोखे से किसी दुघटना की शिकार हो बाद म 'ब्लकमेलिंग के दबाव से समझौता कर लन वाली लडकिया। ४ जिन्हे किसी कारण अतिरिक्त कामेच्छा सताती है या जिनम कुछ दुस्साहस करने की ललक होती है या जिन्हे किसी सगति का असर अथवा इसका ग्लैमर'

इस धधे म खींच लाता है।

लेकिन अक्सर इसके पीछे पारिवारिक पृष्ठभूमि ही होती है। गलत ढग के पालन-पोषण घर म माता पिता या अन्य बडे सदस्यो का गलत उदाहरण उपेक्षा या पूरी आजादी, घर का कलहपूर्ण वातावरण, मा-बाप म तलाक या अलहदगी गरीबी के साथ महत्वाकाक्षाए, जिन्हें किसी भी उचित अनुचित साधन से पूरा करने म न मा बाप को परहेज न बच्चा को, अथवा ऐसी ही किसी स्थिति की शिकार लडकिया बाहर न जरा सी सहानुभूति, प्यार या आश्वासन, लालच पा कर इस ओर कदम बढा देती हैं। सहेलियो की दबादबी प्रतिद्वद्विता म आकर भी अमीर दोस्तो के पीछे लगन की प्रवृत्ति जागती है। ये छद्मवेश प्रेमी पहले महगे होटला, रेस्तराओ की सैर और कीमती उप हारा का लालच देत हैं। जब वे सम्मोहित हो जाती है तब अपने अन्य मित्रो स उनका परिचय करा देत हैं और इस तरह वे इस रहस्यमय भ्रष्ट मित्रमडली म शामिल हो फिर धाकायदा अपनी कीमत तय करने लगती हैं।

कई हिप्पी शैली के क्लब, डासिग स्कूल, रेस्तरा और 'डिस्कोथेक' भी इनकी प्राप्ति के अड्डे है। सुनते हैं कुछ भव्य रेस्तराओ म काल गर्ल्स के बाकायदा एलबम भी हैं जिनमे फोटो व नम्बर देख कर उनके 'रेटस' मालूम किए जा सकते है। 'कवरे गर्ल्स और निम्न मध्यवग की साधारण लडकियो के रेटस कम होते है 'एडवेंचर' के लिए आने वाली तथाकथित बडे घरो की कान्वेन्ट ऐजूकेटेड युवतिया या सुन्दर 'स्मार्ट कालेज-गर्ल्स' के अधिक। काले बाजार वाली बडी व्यावसायिक कम्पनिया मे सुन्दर स्मार्ट सेक्रेटरियो की नियुक्तिया भी बहुत बार इन एलबमो से चुन कर की जाती है। बिजनस सौदो म लाभ उठान के लिए इनका यह इस्तेमाल भी अब एक जाना-माना तथ्य है।

'ग्लमर' की दुनिया की भी इस धधे मे विशिष्ट भूमिका है। फिल्म, थिएटर गायन, नतन, रेडियो, टी० वी०, माडलिंग आदि क्षेत्रो के खुले वातावरण से कुछ लड कियां, विशेष रूप से इस क्षेत्र की कुछ विफल हस्तिया भी इस व्यवसाय म आ जाती हैं। पयटन व होटल उद्योग से सबधित युवतिया तथा कुछ 'सेल्स गर्ल्स', 'रिसेप्शनिस्ट आदि भी। लेकिन स्वयखोजी लडकियो की संख्या फिर भी अधिक नही है। अधिकतर तो ये इस धधे मे लगे लोगो के चलाए 'रैकेट' द्वारा किसी न किसी तरह बहका-फुसला कर, धोखे से और फिर 'ब्लकमेलिंग' से लाई जाती हैं। इनके क्षेत्र बदनाम बस्तिया नही सभ्रान्त बस्तिया हैं। कई पोश कालोनिया मे व्यभिचार के ये अड्डे पकडे जा चुके है। सरकारी गैस्टहाउस तक से। लेकिन न पकडे जान वालो की सख्या उनस बहुत अधिक है। पुलिस अधिकारी भी इनमे बडे-बडे लोगो का हाथ देख कर अपना हाथ डालने से घबरात है। दुखद आश्चय होता है यह जानकर कि इस धधे के लोग कुछ ट्रेंड काल गर्ल्स को स्कूलो-कालेजो म इसी उद्देश्य से 'एडमिशन' दिला देत है और फिर उनका काम होता है भोली, जरूरतमद व इस ओर जरा सा भी झुकाव, जरा सी कमजोरी प्रदर्शित करनेवाली लडकियो को फुसला कर अपने दलालो के चगुल म फसा देना। कुछ रिपोर्टो कुछ छापो स पता चला कि कई अध्यापिकाए भी इस 'रैकेट' म शामिल होती है। छात्रावासो म उन्मुक्त यौनाचार को बढावा देने के लिए नशाखोरी के साधन चरस

गाजा, शराब, एल०एम०डी० की गोलिया और उत्तेजक 'ब्लू फिल्म' नि शुल्क या सस्ती वितरित करने के पीछे देशी विदेशी कई तत्त्वों का हाथ होने के समाचार भी सामने आए ह।

कही दहेज जुटाने की आवश्यकता या परिवार की जिम्मेदारी के साथ बेकारी जसी कुछ स्थितिया भी है। इसे हम उनकी मजबूरी न माने तब भी काम की तलाश म भटकती परेशान दिमाग की लडकिया यदि अपनी इस हालत मे किसी क द्वारा सुझाए इस माग को अपना लती है तो अनिणय की उस स्थिति मे यह सभव तो है ही। अपरिपक्व समझ वाली लडकियो का इस सब्जबाग म भटक जाना आम बात है। पर कारण या स्थितिया कोई भी हो, भीतर के सस्कारो की स्वीकृति उन्ह कभी नही मिलती। इसलिए इसे सहजता स लेना या जीना उनके लिए आसान नही होता। कही प्रारभिक अवधि मे लबी मानसिक यातना से गुजर कर बाद मे धीरे धीरे सहन कर लिया जाता है तो कही प्रारभिक 'ग्लैमर' 'थ्रिल' पैसे के आकषण म रच-बस कर भी जल्दी ही इसम घृणा व ऊब होने लगती है। पैसे के बल पर इ ह बुलाने वाले नवधनिक प्राय सस्कारी या सतुलित व्यवहारवाले सामान्य व्यक्ति नही होते। फिर उनकी जिन असामान्य इच्छाओ, आदतो या व्यवहारो को घर म उनकी पत्निया नही झेल पाती अक्सर उनकी पूर्ति ही वे बाहर से चाहते ह तो कुछ 'काल गल्स' के अनुसार, उन्हे अनेक अनचाही स्थितियो का झेलना पडता है—कभी बेहद घणास्पद व्यवहारो को भी। लेकिन लौटने के रास्ते बहुत आसान नही होते। इसलिए प्राय अपने आप को दबा कर उन्ह ऊपर स मुस्कराते रहना पडता है। इसे वे व्यवसाय का एक अग मान कर ही सहती और झेलती है—अधिकतर पैसे क लिए ही।

ग्लैमर की तह मे अनकहा दद

ऊपरी तौर पर अधिकाश उत्तर होते हैं 'पसे की जरूरत है तो झेलना ही पडेगा। हमे बदले म बहुत कुछ मिलता भी तो है।' 'क्या दूसरे व्यवसायो म कुछ नही झेलना पडता ?' यहा तक कि, 'जैसे अन्य काय शरीर के अन्य अगो—हाथ पर उगलिया आदि स किए जाते है यह भी एक काय ही है जिसमे शरीर के छिपे अगो का प्रयोग किया जाता है। अन्तर इतना है कि परपरा इस मान्यता नही देती इसलिए इसके साथ शम या घणा जुडी होती है' 'क्या आत्मग्लानि और असम्मान नही ?' पूछने पर उत्तर चाहे वे कुछ भी दें, उनकी गदन अवश्य झुक जाती है और उनके चेहरे पर आते जाते रग, उभरती लकीरें आखो की झील म तैरती दद की मछलिया बिना कहे बहुत कुछ कह जाती हैं जिसे वे कहना चाह कर भी छिपा जाती हैं। कुछ तो यहा तक कह जाती है कि अगो के इस्तेमाल वाला उपरोक्त वाक्य उन्ह उनकी ट्रेनिंग के दौरान ही रटा दिया जाता है यानी यह उनका अपना कथन नहा है। काफी म खोज कर कुल नौ युवतिया और दो किशोरी छात्राओ स मेरी भेंट हो पाई। उनम मे भी चार ही खुल कर कुछ कह सकी शेष न टालमटोल कर गोलमोल उत्तर दिए। लेकिन इस व्यवसाय को ले कर मानसिक परेशानी लगभग सभी की आखो म झाक रही थी। ऐडवेंचर क

लिए हाँ' उत्तर देने वाली 'भाड' छात्रा भी इनका व्यवहार नहीं करती। एक ने कहा— 'सेक्स छोड़ना चाहती हूँ अभी तो नहीं छोड़ पा रही हूँ। हाँ उपयुक्त जीवनसाथी मिल जाने पर अवश्य छोड़ दूँगी।' फिर एक आह भर कर 'लेकिन क्या यह निश्चित' एक २४-२५ वर्षीय कुमारी तो मानसिक रूप से अर्धविक्षिप्त सी हो गयी। उसे बाहर से भी अधिक भीतर का भय !

नयी पीढ़ी के तनाव

मुक्त-यौन व पश्चिमी मूल्यों पटरी साहित्य व सिनेमाई प्रभाव ने इस प्रवृत्ति को बढ़ावा दिया है। लेकिन वास्तविक समस्या तब पैदा होती है जबकि चोरी छिपे के इस अवैध व्यापार को तो क्या निजी तौर पर परस्पर संबंधों में छिपे यौन व्यवहार को भी अपने भीतर में स्वीकृति नहीं मिलती। बाहर से तो जैसे-तैसे छुपा लिया जाता है। किन्हीं स्तरों पर झेल भी लिया जाता है। लेकिन अत्याधुनिकता का नकली मुखौटा लगा कर भी परम्पराओं में विद्रोह का तेवर दिखा कर भी, मानसिक स्तर पर इसे झेलना आसान नहीं। भारतीय संस्कारों की जड़ें इतनी उथली नहीं हैं कि मानसिक द्वन्द्व न उपजे। आज के भारतीय समाज की बहुत सी समस्याएं, विशेष रूप से युवा पीढ़ी की भटकन इन स्थितियों की भी उपज हो सकती है, इस ओर हमारे मनीषियों का ध्यान बहुत कम गया है। आज यह जानने की जरूरत है कि बाहर से पुरानी पीढ़ी को कोसने वाला विद्रोह का तेवर बरकरार रखते हुए भी हमारी किशोर व युवा पीढ़ी अपने भीतर से आत्मरति तक को नहीं झेल पाती। इसे लेकर वह किस कदर अपराध चेतना से घिर तनाव-ग्रस्त, उद्विग्न और अस्थिर हो आई है, इसकी एक झलक भर अध्ययन की निम्न प्रस्तुति में देखी जा सकती है

तने परिवेश मे कसमसाती तरुणाई
एक प्रमाणिक सर्वेक्षण

ये विज्ञापन !

प्रिय, तुम जहाँ भी हो, शीघ्र लौट आओ। तुम्हारी याद में तुम्हारी माँ रो रो कर गंभीर रूप से बीमार पड़ गई हैं। घर लौटने पर तुम्हें कोई कुछ नहीं कहेगा, तुम जैसा चाहोगे वैसा ही होगा। जल्दी लौटो या सूचना दो।'

—तुम्हारा

निराश होने की जरूरत नहीं। अपनी खोई ताकत केवल आठ दिन में वापिस प्राप्त करें। हमारी औषधि के चमत्कार से हजारों के जीवन में नई आशा का संचार। लाभ न होने पर पैसे वापसी की गारंटी।'

—हकीम

गाजा, शराब, एल०एस०डी० की गोलिया और उत्तेजक 'ब्लू फिल्में' नि शुल्क या सस्ती वितरित करने के पीछे देशी विदेशी कई तत्वो का हाथ होने के समाचार भी सामने आए है।

कही दहेज जुटाने की आवश्यकता या परिवार की जिम्मेदारी के साथ बेकारी जैसी कुछ स्थितिया भी है। इसे हम उनकी मजबूरी न माने तब भी काम की तलाश मे भटकती परेशान दिमाग की लडकिया यदि अपनी इस हालत मे किसी के द्वारा सुझाए इस मार्ग को अपना लेती है तो अनिर्णय की उस स्थिति म यह सभव तो है ही। अपरिपक्व समझ वाली लडकियो का इस सब्जबाग म भटक जाना आम बात है। पर कारण या स्थितिया कोई भी हो भीतर के सस्कारों की स्वीकृति उन्ह कभी नहीं मिलती। इसलिए इसे सहजता से लेना या जीना उनके लिए आसान नही होता। कही प्रारंभिक अवधि म लगी मानसिक यातना से गुजर कर बाद मे धीरे धीरे सहन कर लिया जाता है तो कही प्रारंभिक ग्लमर 'थ्रिल' पसे के आकषण म रच बस कर भी जल्दी ही इसम घृणा व ऊब होने लगती है। पैसे के बल पर इन्हे बुलाने वाले नवधनिक प्राय सस्कारी या सतुलित व्यवहारवाले सामान्य व्यक्ति नही होते। फिर उनकी जिन असामान्य इच्छाओं आदतो या व्यवहारो को घरो म उनकी पत्निया नहीं झेल पाती, अक्सर उनकी पूर्ति ही वे बाहर से चाहते ह तो कुछ 'काल गर्ल्स' के अनुसार उन्ह अनेक अनचाही स्थितियो को झेलना पडता है—कभी बेहद घृणास्पद व्यवहारो को भी। लेकिन लौटने के रास्ते बहुत आसान नहीं होते। इसलिए प्राय अपने आप को दबा कर उन्हे ऊपर से मुस्कराते रहना पडता है। इसे वे व्यवसाय का एक अग मान कर ही सहती और झेलती हैं—अधिकतर पैसे के लिए ही।

ग्लैमर की तह मे अनकहा दर्द

ऊपरी तौर पर अधिकाश उत्तर होते है पैसे की जरूरत है तो झेलना ही पडेगा। 'हम बदले म बहुत कुछ मिलता भी तो है।' क्या दूसरे व्यवसायो म कुछ नहीं झेलना पडता ?' यहा तक कि 'जैसे अन्य काय शरीर के अन्य अगो—हाथ पर उगलियो आदि स किए जाते है यह भी एक काय ही है जिसम शरीर के छिपे अगो का प्रयोग किया जाता है। अन्तर इतना है कि परपरा इसे मान्यता नही देती इसलिए इसके साथ शम या घृणा जुडी होती है 'क्या आत्मग्लानि और असम्मान नही ?' पूछने पर उनके चाहे व कुछ भी दें, उनकी गदन अवश्य झुक जाती है और उनके चहरे पर आते जाते रग उभरती लकीरें आखो की बीती म तरती दद की मछलिया बिना कहे बहुत सब कुछ कह जाती हैं जिसे वे कहना चाह कर भी छिपा जाती हैं। कुछ तो यहा तक कह जाती हैं कि अगो के इस्तमाल वाला उपरोक्त वाक्य उन्ह उनकी ट्रेनिंग के दौरान ही रटा दिया जाता है यानी यह उनका अपना कथन नहा है। काशिश म खोज कर कुल नौ युवतिया और दो किशोरी छात्राओ स मेरी भेंट हो पाई। उनम स भी चार ही खुल कर कुछ कह सकी शेष ने टालमटोल कर गोलमोल उत्तर दिए। लेकिन इस व्यवसाय को ले कर मानसिक परेशानी लगभग सभी की आखो म झाक रही थी। ऐडवेंचर मे

लिए ही' उत्तर देने वाली 'माड' छात्रा भी इसका अपवाद नही लगी। एक ने बताया, 'भरसक छोडना चाह कर भी अभी तो नही छोड पा रही हू। हा उपयुक्त जीवनसाथी मिल जाने पर जरूर छोड दूगी।' फिर एक आह भर कर लेकिन क्या वह मिलगा ?' एक ३४ ३५ वर्षीय कुमारी तो मानसिक रूप से अर्धविक्षिप्त सी भी लगी। वही— बाहर से भी अधिक भीतर का भय !

नयी पीढी के तनाव

मुक्त यौन के पश्चिमी मूल्या, पटरी साहित्य व सिनेमाई प्रभाव न इस प्रवत्ति को बढावा दिया है। लेकिन वास्तविक समस्या तब पैदा होती है जबकि चोरी छिप के इस अवैध व्यापार को तो क्या निजी तौर पर परस्पर सबधो मे छिप यौन व्यवहार को भी अपने भीतर मे स्वीकृति नही मिलती। बाहर स तो जैसे तैम छुपा लिया जाता है। किन्ही स्तरो पर झेल भी लिया जाता है। लेकिन अत्याधुनिकता का नकली मुखौटा लगा कर भी परपराओ म विद्रोह का तेवर दिखा कर भी, मानसिक स्तर पर इस चलना आसान नही। भारतीय सस्कारो की जडें इतनी उथली नही है कि मानसिक द्वद्व न उपजे। आज के भारतीय समाज की बहुत सी समस्याए, विशेष रूप से युवा पीढी की भटकन इन स्थितियो की भी उपज हो सकती है इस ओर हमारे मनीषियो का ध्यान बहुत कम गया है। आज यह जानने की जरूरत है कि बाहर से पुरानी पीढी का कामन वाला विद्रोह का तेवर बरकरार रखते हुए भी हमारी किशोर व युवा पीढी अपन भीतर से आत्मरति तक का नही झेल पाती। इसे लेकर वह किस कदर अपराध-चेतना म घिर तनाव ग्रस्त, उद्विग्न और अस्थिर हो आई है, इसकी एक झलक मर अध्ययन की निम्न प्रस्तुति म देखी जा सकती है

तने परिवेश मे कसमसाती तरुणाई
एक प्रमाणिक सर्वेक्षण

ये विज्ञापन !

प्रिय, तुम जहा भी हो, शीघ्र लौट आओ। तुम्हारी याद म तुम्हारी मा रो रो कर गभीर रूप म बीमार पड गई है। घर लौटन पर तुम्हे कोई कुछ नही कहगा तुम जैसा चाहोगे वैसा ही होगा। जल्दी लौटो या सूचना दो।'

—तुम्हारा

निराश होन की जरूरत नही। अपनी खोई ताकत केवल आठ दिन म वापिस प्राप्त करें। हमारी औषधि के चमत्कार म हजारो के जीवन म नई आशा का सचार। लाभ न होन पर पैसे वापसी की गारटी।'

—हकीम

ये सर्वे रिपोर्ट्स !

'अकेले दिल्ली मे पाच हजार विद्यार्थी मादक द्रव्यो का सेवन करते है जिनमे एक-चौथाई सख्या मे छात्राए भी शामिल है। आठ सौ छात्र छात्राए तो इनके गभीररूप से आदी है।'

'कालेज छात्र छात्राओ मे यौन रोगो की सख्या तेजी से बढ रही है।'

'तोड फोड की घटनाओ मे २२ प्रतिशत की वद्धि।'

'अपराध ही नही बढे, अपराधियो मे अल्पवयस्क अपराधियो की सख्या भी बढी है।'

' नगर के तीन कालेजो मे किए गए सर्वेक्षण से ज्ञात हुआ कि ७६ प्रतिशत छात्र और ८२ प्रतिशत छात्राए विवाह-पूर्व यौन-ससर्ग का अनुभव प्राप्त कर चुके थे।'

और आये दिन के ये छिटपुट समाचार !

सरोवर काड। कालेज परिसर मे बलात्कार। नर्सिंग होस्टल पर हमला और बलात्कार। अपहरण और बलात्कार के बाद किसी छात्रा की हत्या। सुरक्षा की माग लेकर छात्राओ का जलूस। घर से पलायन। होटल के कमरे मे किशोर प्रेमी प्रेमिका द्वारा सामूहिक आत्महत्या। असफल प्रेम को लेकर कोई हत्या। परीक्षा भवन मे डेस्क पर खुला चाकू रखकर खुले आम नकल या पकडने वाले निरीक्षक पर परीक्षा भवन के बाहर हमला। दुस्साहस भरी फिल्म देख कर किसी छात्र द्वारा अपने ही चचेरे भाई का अपहरण कर डाकुओ की ओर से पत्र लिख फिरौती की माग करना और फिर पैसा न मिलने पर उस भाई की हत्या आदि। तोड फोड की कार्यवाहियो द्वारा सार्वजनिक सपत्ति नष्ट करना, बसें जलाना, शरीफ लडको को दबाने के लिए दादागीरी करना, राह चलती छात्राओ की चुन्नी खीचना तो जैसे आम बात हो गई है।'

—क्या इन विज्ञापनो, सर्वेक्षण निष्कर्षों और इन समाचारो मे कोई परस्पर सगति है ?

स्वप्निलता से लेकर यथार्थ तक तरुण जीवन के विविध आयामो पर बहुत लिखा जाता है। लेकिन आज हमारी किशोर-तरुण पीढी जिस भीतरी तनाव-दबाव से गुजर रही है, इस ओर बहुत कम ध्यान दिया गया है। भ्रमित कुठित युवा मानसिकता के पीछे एक-दो नही, अनेक कारण हैं। पर एक किशोरी के ही शब्दो मे 'उसके भीतर जैसे एक जलती हुई मोमबत्ती रख दी गई है'—आज यह मोमबत्ती' यौन-तनाव का प्रतीक ही नही, एक प्रमुख कारण भी है। इसके रहते किशोर-किशोरिया तरुण तरुणियां न जाने क्या क्या कर बैठते हैं और फिर तनाव मुक्ति के प्रयत्न मे अन्य अनेक तनाव ओढ लेते हैं। फिर जब वे न इसे मन से झटक कर निकाल सकते हैं न बाहर ही इससे बचकर निकलने की राह पाते हैं तो यह उलझाव, यह आक्रोश एक ओर समाज-व्यवस्था से शिकायत के रूप मे तोड फोड मारपीट, झगडे-लडाई या पलायन के बहाने पारिवारिक-सामाजिक विघटन को राह देता है दूसरी ओर स्वय उन्हे विवशता, हताशा, हीनता बोध या अपराधचेतना मे घोट उनकी व्यक्तित्व-हानि का कारण बनता है। कभी कभी तो यह तनाव उनके मन-मस्तिष्क को इतना जकड लेता है कि वे सतुलन खोकर मानसिक

रोगी बन जाते हैं। प्राथमिक उद्विग्नता में पढाई मे पिछडने, घर से भागने या आवारा-गर्दी की भटकन जैसी प्रवृत्तिया ही सामने आती है। पर तनाव बढने पर वे मानसिक असतुलन हत्या और आत्महत्या की ओर भी अग्रसर होने लगते हैं। तो इस 'मोमबत्ती' को मैं आधुनिक समाज के लिए दोराहे की एक 'लाल बत्ती' भी कहना चाहूगी कि इसके लिए केवल तरुण पीढी को ही कोसने के बजाय यहा रुकिए, ठहर कर कुछ सोचिए, आगा पीछा देखिए, तब आगे बढिए। अपनी विकास योजनाओ मे कही यह 'स्पीड ब्रेकर' भी जरूर बनाइए कि विकास यात्रा सफल हो सके।

तरुणाई!

बचपन और यौवन को मिलाने वाला वह नाजुक पुल, जिस पर उम्र के आवेशित कदम दौडते हाफते हुए भरभरा कर चलें तो लडखडा जाते है, सपनो मे खोए-खोए बिना आगा-पीछा देखे उमग कर बढें तो फिसल जाते है, हीनता से घिरे या ठगे से ठिठक जाए तो जिन्दगी की दौड मे पिछड जाते है और ध्येय से प्रेरित उत्साही कदम दृढता से जमीन नापते हुए चलें तो भविष्य के लिए सामर्थ्य जुटा सुरक्षा की राह निश्चित कर लेते हैं। देश और समाज के लिए भी ये ही कदम वरदान सिद्ध होते है। पर हम मे से कितने हैं जो प्रतिभा क्षमता सामर्थ्य के प्रस्फुटन की, जीवन की आधारभूत तैयारी की इस उम्र के लिए चिंतित हैं? इस तैयारी की अस्थिर, अनियमित उलझी, किंतु बेहद लचीली और सभावनाओ से भरी प्रक्रिया को देख पाते हैं? इस उम्र मे भीतरी शारीरिक मानसिक उथल-पुथल, भावभीनी रगीन कल्पनाओ और बाहरी दबावो तनावो के त्रिकोण मे झूलती तरुणाई की आकाक्षाओ को समझ पाते हैं?

हमारे यहा नई उभरी समाजशास्त्रीय समस्या

दोष न उनका है, न उनकी उम्र का। यह उम्र तो बनने की, कुछ कर गुजरने की होती है। ऊचे ऊचे सपने देखने वाली आदर्श, पर धुन पर, ध्येय पर मर मिटने वाली। मुट्ठियो मे सकल्प लिए ऊर्जा और उमग से भरी भरी। समाज को पीछे नहीं, आगे ले जाने वाली।

तो?

नहीं। दोष न केवल तरुण पीढी का है, न केवल अभिभावको या शिक्षको का। यह हमारे यहा नई उभरी समाजशास्त्रीय समस्या है, जिसका समाधान भी सभी को मिलकर खोजना था खोजना है। वय सधि की यह सक्रमण अवधि पहले भी होती थी, पर हमारे यहा कितनी छोटी सीधी और सरल! लडके लडकिया १२ १६ की आयु तक पढते थे (लडकिया तो प्राय पढती ही न थी) फिर लडकियो का विवाह हो जाता था, लडके काम धन्धे मे लग जाते थे—अधिकतर पैत्रिक व्यवसाय मे ही। व्यवसाय के साथ घर गृहस्थी की जिम्मेदारिया और पुरुषोचित कार्यों की दीक्षा भी उन्हें मिलती रहती थी। लडकिया शीघ्र ही पत्नी, गृहिणी और मा का दायित्व सभालने के कारण और लडके शीघ्र ही जिम्मेदार आत्मनिर्भर पुरुष बन जाने के कारण १८ की आयु तक पहुचते-पहुचते पारिवारिक और सामाजिक जीवन के निभाव के लिए वाछित परि

पक्वता प्राप्त कर लेते थे। यही कारण है, कि हमारे यहा पहले 'टीनस लिटरेचर' जसा कोई साहित्य अलग से नही मिलता। 'टीनस पाब्लम्म' ही नही थी, तो वसा साहित्य कहा से आता ?

अब स्थिति भिन्न है। शिक्षा विज्ञान तक्नीक की प्रगति और औद्योगिक सभ्यता के विकास के साथ शिक्षा प्राप्त करने की अवधि पर्याप्त लबी खिच गई है। बेरोजगारी के इस आलम म अपने पैरा पर खडे होन लायक बनने की और भी अधिक। चिकित्सा विज्ञान की उपलब्धियो मे आई मृत्यु दर म कमी के कारण जनसख्या विस्फोट और जीवन यापन की जटिलता ने मिल कर देर मे विवाह और कम सतान की अनिवार्यता हमे समझा दी है। (यद्यपि गावो मे अभी भी बडी सख्या मे छोटी उम्र की शादिया हो रही है पर पत्नी के गाव मे रहने और युवा पति के शिक्षा या रोजगार के कारण शहर म आ जाने से इस क्षेत्र मे भी नई समस्याओ ने जन्म लिया है। घर स दूरी ही नहीं, बचपन मे ब्याही पत्नी की बाद म नापसदगी भी इसके पीछे है और ग्रामीण युवा का अपनी जमीन से उखड कर ग्रामीण व शहरी मानसिकता के द्वन्द्व मे फस जाना भी।) युगीन फ्रायडीय दशन और गभ निरोध के साधनो ने मिल कर ब्रह्मचय साधना जैसी प्राचीन भारतीय धारणाओ को व्यथ बना दिया है। दिनोदिन सिकुडती दुनिया मे आए विदेशी प्रभाव और आज की स्वतत्रता की धारणा, जिस अपनी जमीन पर टिकाने का कभी पयत्न नही किया गया भी इसके लिए उत्तरदायी है। और रही सही कसर पूरी कर दी है आज के सिनेमा और चन्द्रकिरण सौनरिक्सा के शब्दो म देह का पुलिदा भर सस्ते पटरी साहित्य ने।

साक्षरता प्रसार के साथ यह साहित्य अब गावो और कस्बो म भी प्रचुर मात्रा म उपलब्ध है। कस्बा म शिक्षा सुविधा और फुरसत के कारण शहरो मे अधिक पढा जा रहा है। सिनमा वहा है ही। सिनेमा और इस सिनेमाई साहित्य ने कस्बाई किशोर युवा मानसिकता को झकझोर कर रख दिया है और परपराओ के बधन वहा शहरो की तरह ढीले नही हुए है। तो प्रयोगधर्मी पीढी के मानसिक द्वद्व भी कस्बो और छोटे शहरा मे अधिक उभरे हैं महानगरा म कम। इसलिए घरा से भागने की प्रवत्ति भी वहा बढी है भय, पाप चेतना और अपराध चेतना से घिर कर ओढे गए काल्पनिक और मानसिक रोगा की सख्या भी, जबकि यौन रोगो के आकडे अपक्षाकृत महानगरीय क्षत्र मे अधिक है।

प्रकृति तो अपना काम करती ही है। उत्तेजक माहौल म जब इच्छाए बे लगाम हा जाए और बे पर उडने लगें तो पाव भी भटकेंगे ही। वर्जनाओ का विस्फोट भी इस कह सकते हैं। पर सस्कार इसे पचा नही पात, तो समस्या वही से गभीर होने लगती है। युवा मन ऐसे तनाव स घिरने लगता है कि ऊपर स आक्रोशी बन वह समाज को दोषी ठहराता है सब कुछ तोड फोड डालना चाहता है भीतर से स्वय को बेहद विवश और निरीह पा कभी अपन आप को भयकर रोगी समझ कर भय खाने लगता है तो कभी पापी अपराधी मान पश्चाताप म घुलते हुए, स्वय स घृणा करने लगता है और इस सब स मुक्ति के लिए छटपटाने लगता है। इस तरह दिशाहीन

पक्वता प्राप्त कर लेते थे। यही कारण है, कि हमारे यहा पहले 'टीनस लिटरेचर' जसा कोई साहित्य अलग से नही मिलता। 'टीनम प्राब्लम्स' ही नही थी, तो वसा साहित्य कहा से आता ?

अब स्थिति भिन्न है। शिक्षा विज्ञान तकनीक की प्रगति और औद्योगिक सभ्यता के विकास के साथ शिक्षा प्राप्त करने की अवधि पर्याप्त लबी खिच गई है। बेरोजगारी के इस आलम मे अपने परो पर खडे होने लायक बनने की और भी अधिक। चिकित्सा विज्ञान की उपलब्धियो से आई मत्यु दर म कमी के कारण जनसख्या विस्फोट और जीवन यापन की जटिलता ने मिल कर देर मे विवाह और कम सतान की अनिवार्यता हमे समझा दी है। (यद्यपि गावो मे अभी भी बडी सख्या मे छोटी उम्र की शादिया हो रही हैं पर पत्नी के गाव मे रहने और युवा पति के शिक्षा या रोजगार के कारण शहर म आ जाने स इस क्षेत्र म भी नई समस्याओ ने जन्म लिया है। घर स दूरी ही नहीं, बचपन मे ब्याही पत्नी की बाद म नापसदगी भी इसके पीछे है और ग्रामीण युवा का अपनी जमीन स उखड कर ग्रामीण व शहरी मानसिकता के द्वन्द्व मे फस जाना भी।)युगीन फ्रायडीय दर्शन और गर्भ निरोध के साधनो ने मिल कर ब्रह्मचर्य साधना जैसी प्राचीन भारतीय धारणाओ को व्यर्थ बना दिया है। दिनोदिन सिकुडती दुनिया म आए विदेशी प्रभाव और आज की स्वतनता की धारणा, जिसे अपनी जमीन पर टिकाने का कभी प्रयत्न नही किया गया भी इसके लिए उत्तरदायी है। और रही सही कसर पूरी कर दी है, आज के सिनेमा और चन्द्रकिरण सौनरिक्सा के शब्दो म देह का पुलिदा भर सस्ते पटरी साहित्य ने।

साक्षरता-प्रसार के साथ यह साहित्य अब गावो और कस्बो म भी प्रचुर मात्रा म उपलब्ध है। कस्बो मे शिक्षा सुविधा और फुरसत के कारण शहरो से अधिक पढा जा रहा है। सिनेमा वहा है ही। सिनमा और इस सिनेमाई साहित्य ने कस्बाई किशोर युवा मानसिकता को झकझोर कर रख दिया है और परपराओ के बधन वहा शहरो की तरह ढीले नही हुए है। तो प्रयोगधर्मी पीढी के मानसिक द्वन्द्व भी कस्बो और छोटे शहरो मे अधिक उभरे हैं महानगरो म कम। इसलिए घरो से भागने की प्रवृत्ति भी वहा बनी है भय, पाप चेतना और अपराध चेतना स घिर कर ओढ गए काल्पनिक और मानसिक रोगो की सख्या भी, जबकि यौन-रोगो के आकडे अपेक्षाकृत महानगरीय क्षत्र मे अधिक हैं।

प्रकृति तो अपना काम करती ही है। उत्तेजक माहौल म जब इच्छाए बे लगाम हो जाए और वे पर उडने लगें तो पाव भी भटकेंगे ही। वर्जनाओ का विस्फोट भी इम कह सकते हैं। पर सस्कार इस पचा नही पाते तो समस्या वहीं से गभीर होने लगती है। युवा मन ऐसे तनाव से घिरने लगता है कि ऊपर स आक्रोशी बन वह समाज को दोषी ठहराता है सब कुछ तोड फोड डालना चाहता है, भीतर से स्वय को बेहद विवश और निरीह पा, कभी अपने आप को भयकर रोगी समझ कर भय खाने लगता है तो कभी पापी अपराधी मान पश्चाताप म घुलते हुए स्वय से घृणा करने लगता है और इस सब स मुक्ति के लिए छटपटाने लगता है। इस तरह दिशाहीन

आजादी के बाद एक पूरी की पूरी पीढ़ी [illegible]। [illegible] किया जाए ? पीढ़ी को या उसके पैरों के नीचे की जमीन [illegible] उस [illegible] पर [illegible] और फिर दोष भी उसी पर आरोपित कर उसे दूसरी [illegible] में [illegible] दोषी [illegible] जाए ?

समस्याओं की जड़ें जमीन में बहुत-बहुत गहरी होती हैं। [illegible] से उन्हें उखाड़ फेंकना संभव नहीं होता। परिवार को भी स्थिर सामाजिक जमीन चाहिए। [illegible] बिना संतुलन [illegible] आधार [illegible] मनुष्य और समाज को एक साथ जोड़ने वाली विघटनकारी शक्तियों के विस्फोट को रोका नहीं जाता।

सर्वेक्षण का आधार

परिवारों में, साक्षात्कारों में, सर्वेक्षणों में भी एक सीमित सत्य में ही किशोरों, तरुणों तथा युवाओं से बातचीत की जा सकती है वह भी नाजुक विषयों पर खुलकर नहीं। आमने-सामने की बातचीत पर भी संपूर्ण सत्य हाथ नहीं लगता—प्रोग्राम [illegible] अपूर्ण सत्य भी नहीं। लेकिन एक ओर उसके आतरिक दबावों और दूसरी ओर अनाचार बाहरी स्थितियों— महंगाई, दोषपूर्ण शिक्षाप्रणाली शिक्षण संस्थानों में फैला भ्रष्टाचार, बेरोजगारी और भाई भतीजावाद से उत्पन्न अनिश्चित भविष्य, प्रश्नप्रिय राजनीतिज्ञों और दादाओं के आतंक, धन और हिंसा के बल पर टिकी मूल्यहीन राजनीति के दल दल में फँसता हुआ युवा मानस जब कहीं से कोई रोशनी, राह या निर्देश नहीं पाता, तो समाधान का पत्र लिखता है और उपाय पूछता है। चूंकि वह सामने नहीं होता और समाधान की खोज में स्वयं से मुक्ति की तलाश में ही अधिकतर पत्र लिखता है तो उसमें अपना हृदय खुल कर उड़ेलता है छिपाने लायक भी कुछ नहीं छिपाता। तब इन पत्रों के माध्यम से अध्ययनकर्ता के लिए इनकी समस्याओं को समझना अपेक्षाकृत आसान हो जाता है। समस्याओं की तह में छिपे अप्रत्यक्ष कारण भी तब छिपे नहीं रह जाते और निष्कर्ष आसान होकर प्रामाणिक भी हो जाते हैं।

सौभाग्य या दुर्भाग्य से पिछले डेढ़ दशक से मैं पत्रिकाओं के उन समस्या स्तंभों से जुड़ी हूँ जिनमें समाधान या उत्तर पाने के लिए किशोर युवा पाठक पाठिकाएं ढेरों पत्र लिखते हैं। इस तरह किशोर तरुण युवा पीढ़ी से मैं सीधे संवाद की स्थिति में रही हूँ। हर महीने सैकड़ों पत्रों से गुजरते हुए और अब तक ७० ७५ हजार पत्रों को देखने के बाद मैं अधिकार के साथ यह कह सकती हूँ कि यौन की फ्रायडीय व्याख्याओं के प्रचार प्रसार ने आधुनिक संसार का जितना नुकसान किया है उससे अधिक नुकसान किया है आजादी के बाद हमारे रहनुमाओं ने भारतीय युवा पीढ़ी को जिसे आंख मूंद कर अंधी स्थितियों में धकेल दिया गया है। भारतीय संस्कृति में यौन न निषिद्ध था, न कुत्सित। होता, तो उसे मंदिरों की पवित्रता के साथ कैसे जोड़ा जाता ? फिर एक ओर यह अति और विकृति, और दूसरी ओर इस लेकर यह उद्विग्न मानसिकता, यह विकार-ग्रस्त चिंतनशीलता, यह अपराधचेतना, वर्जनाओं से मुक्ति की चाह के बाद स्वयं से

मुक्ति' की यह चाह कहा से आई ? कभी सोचा गया कि युवा पीढी के दिशाहीन भटकाव पीछे यह भी एक बहुत बड़ा कारण है।

'मज बढता गया ज्यो ज्यो दवा की' या 'चिकित्सा-पद्धतिया का जितना विकास हुआ है बीमारिया भी उसी अनुपात मे बढती गई हैं।' वाले नियम म विभिन्न पत्र-पत्रिकाओ के माध्यम मे पाठकों द्वारा प्राप्त समस्या पत्रो के आधार पर निकाले गए य आकडे और निष्कर्ष देखिए

प्राप्त पत्रों का प्रतिशत विभाजन

	१		२	
अवधि	लडको से प्राप्त पत्र	लडकियो से प्राप्त पत्र	रोमानी प्रेम समस्या	यौन समस्या
१९६४ ६८	२४	३६	२८	१८
१९६९ ७४	५५	४५	१५	३३
१९७५ ८०	४८	५२	९	४५

यद्यपि बच्चा द्वारा माता पिता से शिकायतें भी बढी हैं और पत्नियो द्वारा पतियो की व ससुराल की शिकायतें भी कम नही आ रही। लेकिन काल विभाजन की इन्ही तीन अवधिया मे शिकायता का यह क्रम उलट सा गया है। यानी माता पिता द्वारा बच्चो की शिकायतें क्रमश बढती गई है। इसी तरह पति व सास श्वसुर द्वारा पत्नियो और बहुआ की शिकायताकी सख्या भी उत्तरोत्तर बढती गई है। यह अतर ध्यान से नोट करने का है। यह भी कि बेकारी के बावजूद कैरियर सबधी व अन्य आर्थिक प्रश्नो की सख्या कुल पत्रा मे दो से चार प्रतिशत तक ही रही है। मानसिक समस्याओ की सख्या भी उत्तरोत्तर वद्धि पर है लेकिन उनका सबध अधिकतर उपरोक्त कारणा स ही है।

कुछ पत्र नमूने

और अब सैकडो से लेकर हजारो पत्रो तक का प्रतिनिधित्व करने वाले पत्रो के कुछ सक्षिप्त नमूनो या पत्राशा का जायजा भी लीजिए। स्थितियो के अनुसार इनका निम्न वर्गीकरण किया जा रहा है

आज क किशोर युवा मानस की प्रेम सम्बन्धी धारणाए व प्रयोग—
कुछ नमूने

'मुझे एक लडकी स प्यार है। उस लडकी को भी मुझसे प्यार है। साहब ये दो दिल बेकरार हैं। लकिन मेरे पिता जी मेरी शादी एक दौलतदार लडकी स करना चाहते हैं जो मुझे बिल्कुल पसद नही। कृपया इस उलझन से मुझे बचाए, वर्ना न जाने हम

लोग क्या कर बठें। खुदा ही जाने।'

'बुरी सगति म पड कर मेरा दिल पढाई मे नही लगता है। मेरी बहन के हम-उम्र लडके ने मुझे खराब कर दिया है।'

'मैं अठारह वर्षीय प्रथम वष का विद्यार्थी हू। अपने चाचा की लडकी से प्रेम करता हू। अचानक एक रात चाची ने हम देख लिया और हम दोना का मिलना-जुलना बद हो गया। मैं अभी भी उसे दिल से चाहता हू, लेकिन उस लडकी न बेवफाई कर दी। मेरा साथ छोड एक दूसरे लडके स प्रेम करन लगी। यह देख कर मेरा दिल काच के गिलास की तरह टूट कर बिखर गया है।'

'मेरे और मेरे ताया जी की लडकी के बीच प्रेम सबध चल रहा है। हम एक ही घर म रहते हैं। पढन के लिए हमारा अलग कमरा है, जहा रात को पढाई के बीच हम एक शरीर हो जात है। अभी तक तो कुछ नही हुआ, पर घर वालो को पता चलेगा तो ता क्या होगा ? यह डर दिमाग म बैठ जाने से हमारी पढाई मे हज हो रहा है।'

'मैं, मेरी सौतेली बहन और मेरी चचेरी भतीजी हम तीनो एक घर मे रहते हैं। एक साथ सोते हैं। मेरी उम्र २२ वष और उन दोनो की २३ वष है। दोना लडकियो का कहना है, हमारे साथ कही भाग कर हमसे शादी कर लो। क्या हम रुढिया तोड कर यह शादी कर सकते है ?'

'मैं नौवी कक्षा मे पढती हू। अपने घर मे रहने वाले किराएदार से, जो अभी कुवारा है, प्रेम करती हू। पर मुझे उस पर विश्वास नही है, क्योकि वह मुझे दो दिन बुलाता है, फिर महीना महीना नही बुलाता। वह मेरे अग अग से परिचित है क्या इसीलिए नफरत करता है ? मेरे बाप को पता चला तो क्या होगा ? वह बहुत गुस्से वाला है। पर मैं उसे छोड भी नही सकती। इसलिए बहुत दुखी हू।'

'मैं बी० ए० मे पढता हू। एक सहपाठिनी से प्यार करता हू। अब उस लडकी के तीन माह का गभ है। मैं बडी आफत मे फस गया हू। वह साथ भाग चलने को कहती है पर मैं पढाई छोड भागना नही चाहता। क्या करना चाहिए।'

'१७ साल की उम्र तक मैंने किसी से प्रेम नही किया। सहेलिया मुझे छेडती थी कि तेरा कोई फ्रेंड नही है। बस बन्दर की नकल वाली बात, फिर मैं भी पडोस के एक लडक द्वारा इनवाइट' करने पर चली गई और हमारी मुलाकातें होने लगीं। एक महीने बाद मालूम हुआ कि वह तो मेरी सहेली के साथ भी इसी तरह प्रेम का नाटक करता है। सहेली ने कहा—क्या न हम दोनो मिलकर उसे उल्लू बनाए, बहुत मजा आएगा और वह भी जिंदगी भर याद रखेगा ! लेकिन मैंने मना कर दिया, उसने मुझे धाखा दिया हो, मैं नही दूगी। मेरा प्यार सच्चा था। फिर भी मैंने उसी दिन से उसस मिलना बन्द कर दिया। इस गम मे मेरी हालत पागलो की तरह हो गई। दिमाग परेशान रहने लगा कि तभी एक सुदर नवयुवक से मेरी मुलाकात हुई और मैंन अपना गम भुलाने के लिए उसे लिफ्ट दे दी। मैं उसके घर भी जाने लगी। एक दिन वह हद स बढन लगा तो मैन उससे मिलना बन्द कर दिया। मैं हर वक्त रोती रहती, क्याकि मुझे एक बार नही, दो बार धोखा मिला। यह दो साल पहले की बात है। अब मेरी शादी

तय हो गई है। इधर नवर दा लडके ने मेरी बन्नामी फैलानी शुरू कर दी है और धमकी देता है कि उससे शादी न की तो वह मेरे पति को मेरे लव लटर्स' दिखाएगा। अब मेरे पास एक ही रास्ता है—आत्महत्या।'

'मेरी उम्र कुल १६ वर्ष है। दो लडकियों से यौन सबंध स्थापित हो चुके हैं। छोडना चाहता हू पर उन्हें सामने पा बेकाबू हो जाता हू। वे दोनो मना नही करती। लेकिन इससे मेरे दिमाग पर बुरा असर पड रहा है। इट का जवाब पत्थर से देने वाला अब मैं दोस्तो की किसी बात का उत्तर तक नही दे पाता। बताइए, मैं फिर पहले वाला लडका कैसे बनू ?'

'तीन साल पहले मेरी एक लडके से दोस्ती हो गई थी। हमारा आपस मे पत्र व्यवहार भी चलता रहा। फिर वह लडका किसी और से प्यार करने लगा। मेरे विश्वास को ठेस लगी तो मैं उसे जलाने के लिए दूसरे लडके के साथ घूमने लगी। अब मैं उससे अपने पत्र वापस लेना चाहती हू। इसके लिए क्या करू ?'

'मैं १९ वर्षीय स्वस्थ युवक हू। अपनी सगी मौसी की १६ वर्षीय पुत्री से प्रेम करता हू। मेरे मा बाप न होने से मैं तो स्वतंत्र हू किन्तु जानता हू कि उसके मा-बाप जबरदस्त विरोध करेंगे। क्या कानून हमारी सहायता कर सकता है ? नही तो बालिग होने से पहले हम क्या रास्ता अख्तियार करें ?

मैं १७ वर्षीय लडकी हू। आठ महीने पहले एक लडके से मेरा प्रेम हो गया था। उसने मेरे साथ गलत काम किया, जिसे बर्दाश्त न कर मैंने उसके साथ मिलना बंद कर दिया। अब जबकि वह मुझे बिल्कुल नही बुलाता, मुझे उसके न बोलने से बहुत दुख पहुचा है। अब मैं उसे बुलाना चाहती हू। अच्छा सा उपाय बताइए।

तीन साल पहले सेना के एक अफसर से मेरी मगाई हुई। मैं भी उसे बेहद प्यार करने लगी। एक बार उसने मेरे साथ जबरदस्ती की। फिर लगातार तीन महीने तक वह मेरी इज्जत से खेलता रहा। फिर मगाई तोड दी। अब मेरी एक अन्य शिक्षित लडके से सगाई हो गई है। वह मुझे शरीर से नही, मन से प्यार करता है। लेकिन मुझे भी उसने कसम खिलाई है कि मैं कुमारी ही हू। साथ ही उसने कहा है, अगर सुहागरात में उसे जरा भी शक हुआ तो इसका अजाम बहुत बुरा होगा। इससे मैं बहुत परेशान रहने लगी हू।

मैं २० वर्षीय शिक्षित नवयुवक हू। गाव से दिल्ली आने के बाद मेरे मकान मालिक की लडकी ने मुझे फसाने की कोशिश की। चार पाच बार रात को मौका पाकर वह मेरे कमरे में भी आई। मुझसे शादी करना चाहती थी। मुझे उस पर विश्वास नही था। इसलिए मैंने शादीशुदा होने का बहाना बना दिया। फिर मकान बदल लिया। मैं एक प्राइवेट आफिस मे काम करता हू। उस लडकी को तो समझा बुझाकर चला आया पर अब मेरा अपने काम मे मन नही लगता है। लडकी को भूल नही पा रहा हू। उसका एक पत्र भी मेरे पास है। वह उसे वापस माग रही है। क्या उस पत्र से मैं कुछ लाभ उठा सकता हू ?

मैं १८ वर्षीय युवक हू। जब से होश सभाला अपनी हमउम्र पडोसिन लडकी

से सनता रहा और अब उसमे अथाह प्रेम करता हू। लेकिन वह मेरे दोस्त से मुहब्बत करती है। इसी गम मे मैंने एक अन्य लडकी से दोस्ती बढाई, पर वह भी मुझे छोडकर किसी और की हो गई। मेरा कोई दोस्त नही। मौत की दोस्ती रास नहीं आएगी। शादी की उम्र नही। बताइए क्या करू ?

'मैं २० वर्षीय लडकी हू। माता पिता नही हैं। चाचा-चाची के साथ रहती हू। केवल सात क्लास तक पढी हू। कोई काम भी मिलने की उम्मीद नही। थोडा बुनाई का काम करती हू। वह पैसा भी फिजूलखर्ची मे चला जाता है। मुझे अच्छा खाने पहनने का शौक है पर हैसियत नहीं। मुझे अपने आप पर भरोसा नही है। डर है कि कही इसीलिए गलत रास्ते न चली जाऊ।'

'मैं १८ वर्षीय खूबसूरत लडकी हू। पिताजी एक कारखाने के मालिक हैं। दौलतमंद सेठ। कुछ सप्ताह पहले मैंने एक माडर्न क्लब मे जाना शुरू किया। वहा एक नौजवान ने मुझे बहुत आग्रह करके व्हिस्की पिलाई, फिर मुझे सहला कर उत्तेजित करने लगा। इसके बाद रोज ही वह मेरे साथ अपनी वासना की प्यास बुझाने लगा। मुझे भी इसमे बहुत आनन्द आया। और मैं एक सेक्सी लडकी बन गई। दो सप्ताह बाद उसने मुझसे मिलना बद कर दिया। अब तो मेरे सामने मुश्किल आई कि अपनी शारीरिक प्यास किससे बुझाऊ। तब मैंने एक देहाती नौजवान को अपनी कोठी मे लाकर नौकर रख लिया। जब भी इच्छा होती है अपने नौकर को अपने बेडरूम मे बुला लेती हू। बहुत बार इस आदत को छोडने की कोशिश की पर एक दो दिन से ज्यादा नही छोड पाई। इस आदत को छोडने के लिए क्या करू ?'

'मैं एक २६ वर्षीय युवक हू। अच्छा भला था, पर इधर दो वर्ष से सुन्दर मादक युवतियो के प्रति आकर्षण बहुत अधिक बढ गया है। फिर स्लीवलेस शॉर्ट ब्लाउज नाभिदर्शना साडियो से सुसज्जित तितलियां तो जैसे आग पर घी का काम करती है। जिस अश्लील साहित्य के नाम से घृणा थी, अब वही पढने को मन करता है। जिन कामोत्तेजक फिल्मो से बैर था, उन्हे देखता हू। साथ ही एक ग्लानि-सी मन मे होती है। शायद पश्चात्ताप। इसी तनाव मे ध्यान मिलन ही विकृत काम चलाए करने लगता हू। छह माह मे शादी होने वाली है। शायद मेरी यह मनोदशा ठीक हो जाए। किन्तु भावी पत्नी कुछ सांवली कुछ स्थूल शरीर की है। क्या वह इन कंचनरूपा युवतियो के प्रति मेरे बेहद आकर्षण को दूर करने मे सफल हो सकेगी ? इस बात से चिंतित भी हू।

मेरी उम्र २० साल है। जब किसी खूबसूरत लडकी को देखता हू तो काम चेतना जाग उठती है। तब किसी वेश्या के पास जाने या हस्तमैथुन करने पर मजबूर हो जाता हू। इस तरह मेरी सेहत चौपट हो गई है। दिन भर सुस्ती छाई रहती है। कोई काम करने की इच्छा नहीं होती। कृपया इस कुविचार को दूर करने का उपाय बताइए।

मैं २२ वर्षीय युवक हू। अच्छा करियर है। अच्छी सर्विस मिल गई है। अब घर मे शादी की चर्चा है। लेकिन शर्मीले स्वभाव का न होने के कारण आज तक किसी लडकी से प्रेम न कर सका। अनेक मित्र और साथी थे। पर मन मे एक कसक रह गई कि शादी के पूर्व स्वतन्त्र प्यार का आनन्द नही ले सका। और अब मैं

समाप्त होने जा रहा है। जैसे जैसे शादी नजदीक आ रही है, यह बात ज्यादा महसूस होने लगी है। क्या शादी लेट कर दूं ? अपने सुझाव दीजिए।'

लीजिए, प्रेम करके भी पछतावा, न करके भी मलाल। जब हमारी किशोर युवा पीढ़ी के सामने सस्ता साहित्य और सिनेमा मिलकर एक उत्तेजना, एक झूठी तसल्ली, एक नकली व खोखली जिन्दगी का मसाला हर समय परोस रहे हैं तो ये बेचारे इसके सिवाय और सोच ही क्या सकते हैं ? प्रेम के नाम पर केवल सक्स और सक्स चिन्ता के ये कुछ बहुत थोड़े से नमूने ही प्रस्तुत किए गए हैं वह भी न लिखने योग्य भाषा व कैसे पत्र बचाकर। लेकिन इन्हें प्रतिनिधि पत्र अवश्य कहा जा सकता है।

सक्स के अतिरंजित प्रचार से नई पीढ़ी किन गंभीर परिणामों को भेल रही है किन मानसिक परेशानियां विकृतियां और मानसिक रोगों की ओर अग्रसर हो रही है, यह तनाव आपराधिक साहित्य के प्रभाव के साथ मिलकर किस तरह युवा पीढ़ी में हिंसक प्रवृत्तियों के लिए भी जिम्मेदार है इसके कुछ पत्र-नमूने भी संक्षिप्त रूप में नीचे दिए जा रहे हैं। सक्स की जरूरी वैज्ञानिक जानकारी का अभाव भी उन्हें किस नामालूम (अगंभीर किन्तु उनके लिए गंभीर व भयानक) परिणति की ओर धकेल रहा है इसकी झलक प्रस्तुत करने वाले कुछ नमूने भी

फिल्मी तर्ज की हिंसा प्रतिहिंसा दुःसाहसी सोच, मानसिक द्वन्द्व और मानसिक रोगों के कुछ नमूने

साहब मेरी एक प्रेमिका थी। हम दोनों एक दूसरे को दिलोजान से चाहते थे। वह मेरी हर आजमाइश में खरी उतरी थी। लेकिन उसके कुछ और चाहने वाले ने मेरा चेहरा बदसूरत बना दिया। और इसी बदसूरती पर ताना मार उसने मेरी तरफ देखने से इन्कार कर दिया। मेरे बुलाने पर वह मुझे गालियां बकने लगी। भरे बाजार में उसने मेरे मुंह पर थूका। उसे भुलाने के लिए मैंने शराब का सहारा लिया। फिर भी भुला नहीं सका। तो साहब मैंने अब पिस्तौल खरीद लिया है। और सबको मारकर मरना चाहता हूं।

मैं १६ वर्षीय स्वस्थ सुन्दर बी०ए० का विद्यार्थी हूं। मेरी लम्बाई व व्यक्तित्व के कारण मुझे कालेज में अमिताभ बच्चन की उपाधि मिली हुई है। इस वजह से मुझ से ११ लड़कियां प्यार करने लगी हैं। सभी मेरे पास फोटो और पत्र भेजती हैं। ग्यारह की ग्यारह शादी करने को बाध्य करती हैं। एक लड़की ने तो यहां तक कह दिया है कि मैं उससे शादी नहीं करूंगा तो वह आत्महत्या कर लेगी। परन्तु मैं किसी से प्यार नहीं करता। मैं तो स्वच्छन्द घूमने वाला युवक हूं। इस जटिल समस्या का हल बताइए।

मेरे पड़ोस की एक लड़की को मैं बहुत चाहता हूं। लेकिन वह कभी घास नहीं डालती। मैं बहुत कोशिश करके हार गया हूं। अगर लड़की ने कहना ना माना तो चाकू की नोक पर उसका अपहरण कर लूंगा। नहीं तो तेजाब फेंक कर उसकी खूबसूरती का

गारा घमड निकाल दूगा। फिर चाहे जेल हो जाए।'

'मैंने अपने जीवन म सिफ एक लडके से मोहब्बत की। किन्तु उसकी शादी हो गई। मैं यह गम बर्दाश्त कर गई। अब एक दूसरा लडका अपनी मोहब्बत जताता है। किन्तु उस लडके के एक दुश्मन ने मेरा अपहरण करवा लिया। मुझे तीन दिन अपने पास बेहोशी के आलम म रखा। अब जो लडका मुझसे मोहब्बत करता था और कहता था, हर हाल म तुमसे शादी करूगा, लोगो के भडकाने स उसने अश्लील शब्द कह कर मेरे टूटे दिल को बहुत दुखाया। इधर जिसने मेरा अपहरण किया था वह अपने और हमारे घर वालो पर जोर डाल रहा है कि शादी करूगा तो उसी लडकी से, नही तो उसे मार दूगा और खुद भी मर जाऊगा। अब मुझे मद जात से ही नफरत हो गई है। किसी भी पुरुष से शादी नही करना चाहती। आप फौरन और जरूर जवाब दें, नही तो मेरी हत्या के कसूरवार उस अपहरणकर्ता के साथ आप भी होगे।'

'मैं कक्षा १२ म विज्ञान का विद्यार्थी हू। पाच साल पहले से एक लडकी से जो अब १३ साल की है, प्यार करता आ रहा हू। उसके बिना मेरी जिन्दगी अधूरी है। उसे पाने के लिए इतजार भी कर सकता हू। यह सब वह जानती भी है। लेकिन वह मुझसे मिलने मे झिझकती और घबराती है। इसी उलझन म मैं दिन रात घुटता रहता हू। सोचता हू यदि उसने बेवफाई की तो मैं ऐसा प्रतिशोध लू कि न वह जी सके न मर सके।'

'मैं एक लडकी को बेहद प्यार करता हू। मेरी उम्र १८ वर्ष, लडकी की १६ वर्ष है। हमारे प्यार की यह बात लडकी के घर वालो को मालूम हो गई और मेरा लडकी के घर आना जाना बन्द हो गया। पर हम लोग छुप छुप कर मिलते रहे। पत्रव्यवहार भी चलता रहा। लडकी के कहने पर मैंने उसके डैडी से बात की तो उन्होने मुझे जान से मारने की धमकी दी। लेकिन प्यार के सामने मौत क्या महत्व रखती है। मैं [illegible] मिलता रहा। एक दिन मुझे लडकी का पत्र मिला। लिखा था, तुम [illegible] चले जाओ। मेरे बाबा तुम्हे मरवाने के लिए बाहर से गुण्डे लेने [illegible] है। [illegible] दिया, विवाह इसी लडके से करूगी। तो लडकी को बाहर भेज [illegible]। मैंने [illegible] शिका-यत थाना अध्यक्ष से कर दी। अब मुझे मालूम हुआ है कि [illegible] माल कर रहे है। मेरे लिए उससे मिलने के सारे रास्ते [illegible] हू। क्या कानून मेरी मदद करेगा ?

मैं २० वर्षीय सुदर ग्रेजुएट लडकी हू। [illegible] सुविधाए हैं। माता पिता बहुत प्यार भी करते हैं। [illegible] रहना अच्छा लगता है। मैं सिगरेट भी [illegible] सभी लडको को इन्कार कर देती हू, क्योकि [illegible] आता। सास श्वसुर के नाम म घृणा है। [illegible]

'मैं १२ वर्ष की थी तो [illegible] मैं इसके बारे मे बिलकुल [illegible] बैठी सोचती रहती हू। [illegible]

गालियां रोज खाना आदत बन गई है। रात को डरावने सपने आते हैं और डर से दिल की धड़कन बहुत तेज हो जाती है। हीनता की भावना इतनी आ गई है कि अच्छी शक्ल सूरत होने पर भी किसी से बात नहीं कर पाती। हाय बापने रहते हैं। गुस्सा इतना आता है कि चीजें उठाकर फेंक देती हूं। सिर दीवारों में दे मारती हूं। १८ वर्ष की होने पर भी अंगूठा चूसती हूं। नाखून चबाती हूं। बस उपहास हूं सबके लिए। इन्हीं चिंताओं में सेहत गिरती जाती है। कई बार छाती में अचानक दर्द भी उठने लगता है। डर है कि मैं पागल हो जाऊंगी। ऐसी स्थिति में आत्महत्या करना क्या बेहतर नहीं होगा?

'मेरी उम्र इस समय २४ साल है। मन इतना अशांत रहता है कि आत्महत्या के सिवा कुछ सूझता नहीं। एक बार दस 'मैंड्रक्स' खाकर बच गया। दूसरी बार नीला-थोथा खाकर भी बचा लिया गया। अशांति की जड़ मेरे बचपन में है। करीब १३ साल का था कि एक लड़की से जान पहचान हुई जो १२वीं कक्षा तक प्यार-संबंध में बदल चुकी थी। घरवालों को पता चला उन्होंने गांव से शहर चाचा के पास भेज दिया। शहर में चाचा ने भी नहीं रखा तो मारा मारा फिरता रहा। भूखा भी रहा। मेरे घर से बेघर होने पर उस लड़की ने भी मेरा साथ छोड़ अन्य लड़के से संबंध बना लिए, फिर उसी से शादी कर ली। जिसके पीछे घर से निकला, उसी ने साथ छोड़ दिया तो मैं गुंडा बन गया। जो कमाता शराब पी जाता। जरा सी बात पर सबको पीट पटक देता। सब लोग मुझसे डरने लगे। मैं अकेला पड़ गया। तभी पहली बार आत्महत्या का प्रयास किया। फिर बड़े भाई के समझाने पर सब छोड़ अगली पढ़ाई करने लगा। एम० ए० प्रथम वर्ष में मेरा अतीत जानकर भी एक लड़की ने मुझे अपनाया। प्यार दिया। पर उसके भी पूर्व संबंध निकले। एक दिन उसने बेशर्मी से कह दिया उसे भी नहीं छोड़ सकती तुम्हें भी। मैंने फिर नीलाथोथा खा लिया। बच जाने पर एम० ए० की पढ़ाई पूरी की। अरसे बाद फिर एक लड़की मेरे जीवन में आई। पूर्व घृणा के कारण मैंने उसे डांटा भगाया, पर रो गिड़गिड़ाकर आत्महत्या की धमकी देकर वह मेरे पीछे लग गई। स्वीकार करने पर मुझे भी खुशी मिली। पर घरवालों ने उसे भी पकड़कर घर में बंद कर दिया। पढ़ाई छुड़वा दी। अब मेरी हालत पागलों जैसी है।'

मेरी उम्र १८ वर्ष है। दो वर्ष पूर्व से एक अजीब बुरी आदत का शिकार हूं। हर रात किसी अंधेरी गली में खड़ा हो जाता हूं और वहां से गुजरने वाली हर लड़की के मुंह पर सख्ती से हाथ रख उसके उरोज दबाता हूं। फिर उसे वहीं छोड़ भाग जाता हूं। ऐसा मैं ३०-३५ लड़कियों के साथ कर चुका हूं। बस इतना ही आगे मेरी हिम्मत नहीं पड़ती। शेष काम घर पर अपने-आप मैं करता हूं। अब तो यह आदत इतनी बढ़ चुकी है कि लड़की न मिलने पर मां या बहन की ब्रा में गेंद डालकर उसी से खेलने लगता हूं। हजार कोशिश करके भी इस आदत को छोड़ नहीं पाता। वासना दिन दिन बढ़ती जा रही है और पढ़ाई में हानि हो रही है। कृपया छुटकारे का कोई उपाय बताइए।

२२ वर्षीय युवक हूं। अपनी पड़ोसिन लड़की से प्रेम करता हूं। अक्सर वह रात

को मेरे पास आ जाती थी। स्वय को बचाने के लिए फिर मैं विदेश चला गया। वहा भी मन न लगने पर शीघ्र लौट आया। देखकर प्रेमिका खुश हुई। पर जल्दी ही मुझसे हटने लगी। मिल जाने पर रास्ता बदल लेती है। मैं सारी-सारी रात रोता रहता हू। रोजाना नीद की गोलिया खाने और शराब पीने की लत लग गई है। जिन्दगी नीरस हो गई है। बचाव का कोई उपाय ?'

'१६ साल की उम्र मे मेरे साथ पडोस के एक लडके ने जबरदस्ती की। उसके बाद मैं पुरुषो से और सेक्स से नफरत करती हू। किसी लडके से बात तक नही करती। घरवाले मेरी शादी करने जा रहे हैं और मारे चिंता के मेरी तबीयत लगातार खराब रहने लगी है।'

'१७ वर्षीय लडका हू। बचपन से ही गदी आदतो का शिकार हू। कोई लडकी मेरी ओर आकर्षित नही होती। क्योकि दुबला पतला हू। इधर यह हाल है कि लडकियो के सपने देखकर तो गीला होता ही हू, किसी बच्चे को गोद मे लेकर बैठता हू तब भी अडरवीयर गीला हो जाता है। घरवाले मेरे रोग से अनभिज्ञ है। डाक्टर के पास जाते घबराता हू। कृपया हल बताइए। अब आपके ही सहारे हू। मेरी जिन्दगी बचाइए, नही तो आत्महत्या कर लूगा।'

'उम्र १४ साल हो है। घर मे भइया की शादी के बाद नई दुलहन छोटी भाभी के पास बैठना मुझे अच्छा लगता है। भाभी भी मुझे प्यार करती हैं। पर समस्या है कि मैं उनके पास थोडी देर के लिए भी बैठ नही सकता। बूद बूद टपकने लगता हू। नावेल पढते समय भी यही होता है। मैं इससे बहुत परेशान हू। कोई उपाय है इससे छूटने का ?'

मेरी उम्र २२ साल है। पिछले पाच साल से एक मुस्लिम लडके से प्यार है। मुझे पूरा विश्वास है कि वह इज्जतदार व मेहनती आदमी मुझे धोखा नही देगा, पर मेरे माता पिता किसी भी तरह इस शादी की इजाजत नही देते। इधर मेरा यह हाल है कि मेरी उससे शादी न हुई तो पागल हो जाऊगी या आत्महत्या कर लूगी।

'मैं १६ वर्षीय विद्यार्थी हू। सुदर हसमुख दुबला पतला। पूर्ण लडका होने पर भी विचार लडकिया के से हैं। लडको से ही मित्रता है, उनसे ही यौन-सबध। शायद इसीलिए अभी तक दाढी मूछ भी नही आई। घरवाले चाहते हैं कि मैं दूल्हा बनू पर मेरा लडकियो से लगाव नही। अब मा-बाप से भी लगाव खत्म होता जा रहा है। मन से यह भावना न गई तो आत्महत्या भी कर सकता हू।'

'उम्र २१ वर्ष है। छोटेपन से कुसगति मे समलगिकता की आदत पड गई। छूटती नही। घर मे शादी की बात चल रही है और मैं बेहद परेशान हू। कोई अच्छा-सा डाक्टर बताइए, जिन्दगी भर एहसान नही भूलूगा।'

मेरी उम्र २१ साल है। बी० ए० कर चुकी हू। पिछले पाच साल से मेरी सहेली से मेरा समलगिक प्यार-व्यवहार चल रहा है। अब शादी होने वाली है। मुझे लगता है यह उचित नही है। क्या हम दोनो सहेलियो मे कोई कमी है ? मेरी शादी सफल होगी कि नही, यह भय मन मे बैठ गया है। बहुत परेशान हू।'

'मैं अपने चाचा की लडकी से बचपन से प्रेम करता आ रहा हू। एक दिन हम रगे हाथो पकडे गए। हमने समझौता कर पढाई समाप्त करने तक बीच मे बोलना बद कर दिया है। पर इससे मेरी मानसिक स्थिति इतनी तनावपूण हो गई है कि पढाई मे तो बाधा पड ही रही है, लगता है, उसे भूलने की कोशिश म स्वय को भी भूल जाऊगा।'

'मैं एक मेधावी छात्र हू। परिवार के सभी सदस्यो को मुझसे वडी आशाए हैं। काश ! मैं उ हे पूरा कर पाता। पर सयम बिना मेरी सब महत्वाकाक्षाए मिट्टी मे मिल गई हैं। शिक्षक क्लास मे श्रृ गार कविता पढाए तो चित्त उद्विग्न हो जाता है। रात को स्वप्न मे भी यही। फिर तबाही। इसी परेशानी से परीक्षा भवन म प्रश्न भी छूट जाते है और ऐसे भय मन में बैठ जाने से मेरी हालत दिनोदिन बिगडती जा रही है। रात को सोत समय चिल्लाने लगता हू। मुझे इस प्रचड आधी मे बचा लें कृपया।'

१७ वर्षीय इटर का छात्र हू। मुझे हस्तमैथुन का रोग लग गया है। कोई भी नॉवेल पढते समय, कोई उत्तेजक फिल्म देखते समय स्वय को रोक नही पाता। कभी-कभी तो यह क्रिया रात दिन मे तीन से चार बार तक चलती है। कृपया इस रोग से छुटकारे का कोई सरल उपाय बताए कि डाक्टरी इलाज का सहारा न लेना पडे।'

घरवाले नॉवेल नही पढने देते थे। सिनेमा नही देखने दते थे। यही मात्र मेरा मनोरजन था। इसमे आदमी नपुसक बन जाता है, यह सुनकर छोड चुका हू। अब प्रि मेडिकल का छात्र हू। पिताजी डाक्टर बनाना चाहते हैं। मेरी भी तमन्ना थी डाक्टर बनने की। पर किस्मत साथ दे तब न। मेडिकल निरीक्षण म ही पता चल जाएगा कि मैं हस्तमैथुन करता था और मुझे अनफिट घोषित कर दिया जाएगा।'

' मैंने सुना है इससे आदमी नामद हो जाता है।'

'मेरी छाती लडकियो की तरह उभर आई है—क्या इसी कारण।

'आयु १६ वप है। आत्मरति और लडकियो के साथ लिप्त रहने से नक्ति खो चुका हू। गाल पिचक गए हैं। कमर झुकी-सी है। सेहत गिर जाने से दुखी व परेशान हू।'

'यह जानता कि इसके इतने दुष्परिणाम हागे ता कभी न करता। चेहरा एकदम मुरझा गया है। मुहासो से बदसूरत हो गया है। कोई मुझसे बात नही करता। मुहल्ले मे निकलते कतराता हू। पढने म मन बिलकुल नही लगता। सेहत स्वाहा हो गई है। बस पागल होने की ही कसर बाकी है।'

घरवाले पीछे पडे हैं, लेकिन मैं शादी नही कर सकता, क्योकि सेक्सी फिल्म, तस्वीरें देखने, नावेल पढने से मेरे अग से कोई द्रव्य पदाथ निकलने लगता है। शम के मारे तीन चार साल मे लगा यह रोग मैं किसी को बता नही पाता।'

'देखने मे दुबली-पतली हू, पर अप्राकृतिक ढग से वासनापूर्ति की आदत से मेरा पेट बढ गया है। अपने प्रति घृणा होने लगी है। शादी असफल होगी, यह चिंता भी खाए जा रही है।'

'धातुस्राव जैसी भयानक बीमारी का शिकार हो गया हू। कमजोरी, घबराहट,

भय के मारे बुरा हाल है। शरीर गिरता जा रहा है। चेहरे की कांति मलिन होती जा रही है। ऐसे में पढाई क्या खाक होगी ?'

सैकड़ो पत्रो का प्रतिनिधित्व करने वाले उपरोक्त (अंतिम दस) नमूना पत्रो मे एक ही समस्या है। एक ही भय, चिंता अथवा भयानक बीमारी (?) है—हस्तमथुन या स्वप्नदोष। वैज्ञानिक जानकारी के अभाव में यह भय-तनाव भी उन्हे कहीं का नहीं छोड़ता। इसीलिए हर पत्र के अंत में एक गिड़गिड़ाहट होती है—कोई अचूक नुस्खा, कोई असरदार दवा द्वारा छुटकारे का कोई उपाय ? अनुमान लगाया जा सकता है कि ताकत की दवाओ के विज्ञापनदाता और नीमहकीम इस बेबस (?) युवा पीढ़ी का कितना शोषण करते होगे ?

मनोचिकित्सकों की फाइलें भी इन मामलो से भरी पड़ी है। उनकी राय में, एकदम अति न हो तो यह आदत नहीं इसका भय, इससे उत्पन्न दुश्चिन्ता और अपराध चेतना ही उन्हें शीघ्र पतन का रोगी या नपुंसक बना देती है। यह अत्यधिक सेक्स चिन्तन और इस सम्बन्ध में वैज्ञानिक यौनशिक्षा के अभाव का ही परिणाम है।

पत्र पत्रिकाओं के कार्यालय में आने वाले कुल समस्या-पत्रो मे इस अकेली समस्या का प्रतिशत ३० के लगभग है। इसी से इस समस्या की व्यापकता का अंदाजा लगाया जा सकता है। लड़कियों के मामले में आत्म रति की रिपोर्ट कम है तो उससे उपजा भय भी कम है। लेकिन विवाह पूर्व यौन संबंधो के मामले बढ़ने से उनमें एक दूसरा भय व्याप्त है, वह है इस क्रिया (जो कहीं धोखे बलात्कार के रूप मे उपस्थित है, तो कहीं जिज्ञासा समाधान, प्रयोग और कहीं चारो ओर के उत्तेजक माहौल मे बढ़ी हुई कामेच्छा की पूर्ति के रूप मे) के बाद मन मे भविष्य के प्रति बैठ जाने वाला भय। कुछ वर्ष पूर्व तक यह भय केवल गर्भाधान तक सीमित था। क्योंकि समाज मे कुमारी माताओ को कभी भी अच्छी दृष्टि से नहीं देखा गया बल्कि उन्हें कलंकिनी, कुलक्षणी कह कर जीते जी मौत से भी अधिक नारकीय यातनाओं में धकेल दिया जाता था और जिसका अगला दुष्परिणाम प्राय जाति-बहिष्कार, वेश्यावृत्ति या हत्या-आत्महत्या के रूप मे सामने आता था। अब गर्भ-निरोध के साधनो की उपलब्धि और गर्भपात की कानूनी मान्यता से वह पुराना भय कम हो गया है, लेकिन सामाजिक स्वीकृति तो इसे नहीं मिल सकती। तो इस समाज-भय के अलावा अधिकांश पत्रो मे जो भय व्यक्त किया जा रहा है (इन पत्रो की संख्या भी २० प्रतिशत से कम नहीं है) वह है, विवाह के बाद पति को पता तो नहीं चल जाएगा ?' और यह भय कहीं-कहीं इतनी अधिक दुश्चिंता मे बदल जाता है कि फिर यह मानसिक परेशानी, मानसिक रोगो के लक्षण प्रकट करने लगती है।

पति पत्नी संबंधो मे दरार डालने के लिए जिम्मेदार मामलो के कुछ पत्र-नमूने

और अब उन मामलो से संबंधित कुछ पत्र नमूने भी देखिए जो पति-पत्नी संबंधो में दरार डाल, पारिवारिक विघटन के लिए जिम्मेदार हैं। बेशक आज बदलते युग मे अपने अपने अहम और अपने अपने स्वार्थ भी अपने अलग-अलग छोटे छोटे सिर उठा

कर पारस्परिक समपण व सहयोग भावना को आघात पहुचा रहे हैं। पति पत्नी के बीच सामजस्य की पहली शत होती है विश्वास। जब इस विश्वास को ही विवाह-पूव या विवाहतर सबधो से ठेस लगती है तो दाम्पत्य जीवन की शाति मग होना अनिवाय है। फिर चाहे पत्नी द्वारा बच्चो की खातिर अथवा अन्य किन्ही मजबूरियो के तहत उसे नजरअदाज कर दिया जाए या आधुनिक पति द्वारा तथाकथित प्रगतिशीलता का मुखौटा लगाकर भूठी उदारता दिखाने का असफल प्रयत्न किया जाए सबधो की स्निग्धता उन के बीच आ ही नही पाती।

परस्पर वफादारी और विश्वसनीयता ही वह मूल्य है, जो दाम्पत्य को आधार दे स्थायित्व प्रदान करता है। इस मूल्य को बीच से हटा लेने पर वैवाहिक जीवन की शाति तो भग होगी ही, स्थिरता भी भग हो सकती है।

तलाक के मामलो मे कही चारित्रिक स्खलन है, कही इसका मात्र सदेह। कही सेक्स विकृति है तो कही विवाह पूव की गलतियो अथवा उनस उपजे भय, अपराध चेतना के फलस्वरूप आई नपुसकता या मानसिक बीमारी। कही आर्थिक लेन-देन भी है। शेष म वही अपने अपने अहम् और स्वार्थों के टकराव म आई असहनशीलता। कुछ नमून

'मेरी शादी छ महीने पहले हुई। शादी के बाद जो हालत मैंने अपनी पत्नी की देखी, उससे मैं परेशान हो गया। वह एक गदी बीमारी साथ लाई थी। पूछने पर यह कह कर टालती रही कि वह ज्यादा बीमार पड गई थी, इस वजह से ऐसा हो गया। एक दिन मैंने जरा सख्त होकर पूछा तो उसने जो कुछ बताया, उसे सुन कर मेरे होशोहवास गुम हो गए। विवाह से पूव उसके पाच आदमियो के साथ यौन-सबध चल रहे थे। उनमे से एक आदमी हमारे गाव का भी है, जिसने गाव मे यह प्रचारित कर दिया। मेरी पत्नी इस सबकी जिम्मेदार अपनी मा को बताती है। फिलहाल मैंने पत्नी को मायके भेजने से इनकार कर दिया है। लेकिन उसे शायद आदत पड चुकी है इसलिए वह अपने मा बाप को छोडना नही चाहती। मैं इसी बात पर उसे तलाक देना चाहता हू। लेकिन मुझे पत्नी न जो कुछ बताया उसके अलावा मेरे पास कोई ठोस सबूत नहीं है। अवसर आने पर वह इससे इन्कार भी कर सकती है, तब मुझे खर्चा देना पड सकता है। क्या करू ?'

कहने को मैं शादीशुदा हू, मगर अपने आप को अकेला महसूस करता हू। पत्नी की आदतें इतनी गदी है कि घर मक्खी मच्छरो और गदगी से नक बना हुआ है। घर का एक एक काम मुझे देखना पडता है नही तो खाने की चीजें भी नगी पडी रहती हैं। मेरा दुख देखकर मेरी साली ने एक दिन कहा, दीदी का तो स्वभाव ही ऐसा है आप दुखी मत हो, मुझे अपना समझें। इसके बाद उसने मुझे इतना प्यार दिया कि हम डेढ साल तक रोज मिलते रहे। लेकिन वह भी प्यार नही उसकी हवस निकली। मैंने उसे दूसरे लडको को साथ मिलते देखा और मेरा दिल टूट गया। एक दिन गभ ठहर जाने पर वह फिर रोती हुई मेरे पास आई कि मैं उसे माफ कर दू उसका कुछ उपाय करू, नही तो वह बर्बाद हो जाएगी। मैंने फिर उसका साथ दिया और गभपात करवा दिया। इसके बाद भी वह मुझे आखें दिखाती है। दोनो बहनों ने मिल कर मुझे बर्बाद कर दिया है। सोचता हू उसकी सफाई की परची मेरे पास मौजूद है मेरे साथ खिची हुई फोटो भी। इन्हे लेकर मैं भी

उसे इस तरह बर्बाद करू कि याद रखे।'

'शादी तीन साल पूव हुई। हम पति पत्नी म हमेशा झगडा रहता है। कारण है, मेरे एक दोप की वजह से पत्नी का मुझसे घृणा करना। विवाह से पहले मुझे समलगिकता की आदत हो गई थी। उसे अभी भी छोड नही पाया हू। पत्नी की तडपन का ध्यान न कर अपने वहशीपन मे निदयी होकर उसके साथ भी वही करता हू। शम से वह किसी से कुछ कह नही सकती, इससे भी मेरा हौसला वढता है। उसके अत्यधिक विरोध पर ही मैं कभी सामान्य सहवास पर जाता हू। इसके फलस्वरूप एक बच्चा भी है। पत्नी मुझे कानून की धमकी दे छोड देने के लिए कहती है। क्या बच्चे के सबूत से कानून मेरी सहायता करेगा या उसका साथ देगा ? न मैं यह आदत छोड पाता हू, न हमारे बीच का तनाव खत्म होता है। इसी से मार पीट तक की नौबत आ जाती है।

'मैं २२ वर्षीय ग्रेजुएट युवक हू। पिछले डेढ साल से एक स्त्री से अवैध सबध है, जो तीन बच्चो की मा है। लेकिन आयु मे तेईस वष की ही है। हम दोनो ही एक दूसरे के बहुत दीवाने हैं। घरवाला को पता चल गया है। वे बहुत बिगडते है। फिर भी हम मौका पाकर मिल लेते हैं। कई बार सोचता हू, उसे भूल जाऊ। लेकिन मेरे लिए यह नामुमकिन हो जाता है। उसके कारण किसी अन्य लडकी की ओर आकर्षित नही हो पाता।'

'मैं एक लडकी से प्यार करता हू। वह भी मुझे बहुत प्यार करती है। न चाहते हुए भी एक बार हमारा शारीरिक सबध हो चुका है। अब उसकी शादी दूसरी जगह हो गई है, मगर हमारे बीच प्यार व पत्र व्यवहार अब भी चल रहा है। इधर मेरे एक दोस्त ने, जिसे मेरे प्यार के बारे म मालूम नही, बताया कि वह उस लडकी से प्यार करता है, और वह लडकी भी उससे। मैंने लडकी से शिकायत की तो उसन साफ इनकार कर दिया और अपने पति की भी कसम खा गई। मुझे पूरा यकीन है कि मेरा दोस्त मुझसे झूठ नही बोलता। इसलिए मैंने अब उस लडकी से मिलना बद कर दिया है। मगर दिल परेशान रहता है। उसके लिखे सभी पत्र मेरे पास हैं।'

'मैं बी० ए० प्रथम वष का छात्र हू। उम्र १६ साल। एक साल पूव मेरी शादी हुई। लडकी को मैंने पहले नही देखा था। शादी के बाद देखा, तो सन्न रह गया। चेहरा मुहासो से भरा, मर्दों जसे बाल और उम्र भी मुझसे दो साल ज्यादा। लेकिन पिताजी के समझाने-बुझाने पर मैंने अपने मन को समझा लिया। एक दिन मायके स उसकी बुआ का लडका हमारे यहा आया। मुझे तो पहले ही शक था कि लडकी कुमारी नहीं होगी। उस दिन शाम को उन्हे छुप कर बातें करते हुए देख मेरा शक पक्का हो गया। लडके के चले जाने के बाद मैं उससे पूछने लगा लेकिन उसने कुछ नही बताया। लगभग डेढ महीना लगा मुझे उससे बात निकलवाने मे, कि जब वह कक्षा आठ मे पढ रही थी, तभी से उनके बीच सबध चल रहा था। उससे तीन बार शरीर-सबध की बात भी उसन मानी। मैं पत्नी को मायके छोड, उस लडके के पास गया। उसने भी पहले टाल टूल की, फिर कबूल किया कि उसकी हर जिद्द पूरी होती रही थी। अब पत्नी के पेट मे जो बच्चा है, मुझे उस पर भी विश्वास नही है कि वह हमारा बच्चा है। इधर उसके व मेरे माता-पिता मुझ पर जोर डाल रहे हैं कि उस लडकी को रखो, नही तो घर से अलग हो जाओ।

बड़ी उलझन म फस गया हू।

'मैं २६ वर्षीय नवयुवक हू। शादी हुए चार साल हो गए। अभी तक निस्सतान हू। पत्नी स सतान की कोई आशा नही है। पिछल एक वष स मैं एक १२वी कक्षा की १७ वर्षीय छात्रा स बहद प्यार करन लगा हू। वह भी मेरी बनना चाहती है। लेकिन पत्नी इस पर सहमत नही है। क्या करना चाहिए ?'

'मैं २४ वर्षीय सरकारी कमचारी हू। पत्नी भी सरकारी कमचारी है। शादी हुए दो साल ही बीते हैं और घर मे हर समय तनाव रहन लगा है। मुझ उसका चरित्र ठीक नही लगता। कुछ दिन पहले एक निजी मामले पर बहस हो जान स वह अपन पिता के घर चली गई है। साथ ही जेवर व घर का अय कीमती सामान भी ले गइ है। न तलाक देती है, न फैसला करती है। क्या करना चाहिए ?'

'मैं ३२ साल की विवाहिता स्त्री हू। पति ज्यादा बाहर ही मस्त रहते हैं। एक पडोसी से खास लगाव हुआ। उनकी पत्नी को कुछ शक हो गया तो मैं सभल गई। उसन मुझे क्षमा भी कर दिया कि गलती इसान मे ही होती है। लेकिन इसके बाद मेरा अपने घर से भी कोई लगाव नही रहा। सोचती हू, आत्महत्या कर लू पर बच्चे का प्यार बीच म आ जाता है। मैं समय पर सभल गई लेकिन मेरे पति इतने शक्की मिजाज के है कि उह पता लगा तो क्या होगा ? यह परेशानी मुझे चैन नही लेन दे रही है, जब कि मुझे मालूम है मेरे पति के आफिस म जो अतिरिक्त काय होता है वह लडकियो से ही सबधित है।'

'मेरी उम्र २३ साल है। दो साल पूव शादी हुई। मुझे इतनी अधिक काम-वासना सताती है कि कई-कई बार से भी मन नही भरता। लेकिन पत्नी को यह पसद नही। समाधान बताइए, अयथा वह मुझे छोड कर चली जाएगी।'

मेरी शादी १२ वष पूव हुई थी। दो बेटिया हैं। पति अच्छी पोस्ट पर हैं। ऐसे मे गहस्थी सुख से चल सकती है पर चल नही रही, क्योकि मैं पति के एक परिवारी मित्र को दिल से चाहती हू। पति बहुत शक्की है। छोटी छोटी बातो पर मार पीट करते हैं। यह सब उस मित्र स देखा नही गया। उसकी हमदर्दी पाकर ही मुझे उसस प्यार हुआ है। अगर चार दिन भी न देखू न मिलू तो दिल उदास रहता है। नीद नही आती। सब कुछ छोड कर उसके पास जाने को दिल चाहता है। लेकिन वह भी शादीशुदा है। क्या करू ?

मेरे बडे भाई की शादी हो चुकी है। भाभी बहुत सुदर हैं। भाई ज्यादा बाहर ही रहते हैं। भाभी हमारे साथ ही रहती है। एक बार मुझे बुखार हुआ। भाभी ने ही मेरी देखभाल की। वही दवाई लाती और पिलाती थी। फिर एक दिन भाभी न मेरे साथ वह किया, जो उ हे नही करना चाहिए था। मैं बहुत कमजोरी महसूस कर रहा था। पर बहुत समझाने पर भी वह नहीं मानी। उसक बाद मेरे उनक गलत सबध चल रहे हैं। पहले भी भाभी ने मुझे इसी बात पर पटाया था कि नही मानूगा तो वह भाई के आने पर मेरे ऊपर झूठा आरोप लगाएगी। अब मेरी शादी होने वाली है। पर भाभी कहती हैं अगर मेरे साथ भी सबध न रखा तो उसका अजाम तुम खुद ही देख लेना। मैं बहुत

मुश्किल मे हू। उचित राय दें।'

'मैं १७ वर्षीय इटरमीडियट का विद्यार्थी हू। दो वप पहले एक लडकी मुझस प्रेम करती थी। अब नौ महीने पूव उसकी शादी हो गई है। पर अभी भी उसके 'लटस ससुराल से मेरे पास आते हैं। ससुराल मे आने पर भी वह मुझसे मिलने की कोशिश करती है। लेकिन मैं अपनी व उसकी इज्जत से और खेलना नही चाहता हू। ऐसा उपाय बताइए कि उसके दिल को धक्का न लगे और हमारा सबध छूट जाए।'

'मेरी शादी छुटपन म ही हो गई थी। गौने के बाद मुझे पत्नी बिल्कुल पसद नही। न वह सुदर है, न पढी लिखी। दिल्ली शहर म होस्टल मे रह कर पढाई कर रहा हू। बी० ए० का आखिरी साल है। वहा जिस लडकी से मेरा प्रेम है, उसका साथ भी इस साल के बाद छूट जाएगा। वह मुझस शादी करने को तैयार है पर मेरे घरवाले पत्नी को तलाक नही देने देंगे। सोचता हू, सारी जिदगी इस गवार पत्नी के साथ कैसे बिताऊगा ?'

'मेरी उम्र २८ वप है। व्यक्तित्व आकपक। नौ वप पूव शादी हुई थी। चार बच्चे है। गृहस्थी सुखी है। पर जिस लडकी स शादी के पहल मुहब्बत की थी, उसकी जिदगी म तूफान खडा हो गया है, हालाकि हमारे सबध शरीर सपक तक नही पहुचे थे। अब उसका पति उम मेरा नाम लेकर मारता पीटता है और तलाक की धमकी देता है। अगर उसने उसे तलाक दे दिया तो वह मुसीबत मेरे गले पडेगी, यह सोच मेरा व मेरी बीवी का खाना पीना हराम हो गया है, कृपया ठीक सलाह दीजिए।'

'मैं २५ वर्षीय विवाहित युवक हू। शादी चार साल पूव हुई थी। चुनाव घरवालो का ही था, जिस पर मैंने मूक सहमति प्रदान की थी। जब वह दूसरी बार ससुराल आई तो मैं उसे अपने गाव स मथुरा लिवा लाया, क्योकि मेरी नौकरी यही है। यहा आकर उसने ऐसी हरकतें की, जो बरदाश्त के बाहर थी। उसके पूव प्रेमी के पत्र व मरी पत्नी द्वारा उसे भेजे मनीआडर की रसीद भी हमारे हाथ लगी, तो काफी कहा सुनी के बाद मैंन उस उसके घर भेज दिया। अब मैं खुश हू उसके वियोग म दुखी नही, पर बिरादरी उसस छुटकारा नही दिला रही है। कृपया उपाय बताइए।'

मैं प्रथम वप विज्ञान का छात्र हू। दसवी कक्षा स ही एक लडकी स प्रेम करने लगा। समय के साथ प्यार के बधन मजबूत होते चले गए। मट्रिक म हम दोना न प्रथम स्थान प्राप्त किया और निणय किया, इस प्रेम को विवाह मे बदल देंगे। पर घरवाला ने मुझे अयत्र शादी करने के लिए मजबूर कर दिया। जीवन मे उदासिया बिखर गईं। फिर भी हम दोनो एक-दूसरे के चहेते बने रहे। कोई ऐसा रास्ता ढूढना चाहत हैं कि यह प्यार इकरार मे बदल जाए। कृपया समस्या का समाधान दें।'

'गाव का रहने वाला हू। यहा कालेज मे द्वितीय वप वाणिज्य का विद्यार्थी हू। बचपन म शादी हो चुकी है। पर पत्नी एकदम अनपढ और मूख है। इधर एक मेरी सहपाठिन मुझे बहुत अच्छी लगती है। वह मेरी आर बढ भी रही है। क्या हम शादी कर सकत है ? तलाक की बात हमारा गाव का परिवार स्वीकार नही करेगा। कोई उपाय ?'

'दो वर्ष पूर्व मेरा एक सहपाठी से प्रेम हुआ था। हमने मंदिर में जाकर शादी कर ली और स्वयं को पति पत्नी मान लिया। पर घरवालों ने हम अलग-अलग कर हम पर जैसे पहरा बैठा दिया है। मेरी पढाई भी छुडवा दी गई है। हम दोनो बालिग हो चुके है। फिर हमारी यह शादी कानूनी शादी क्यो नही मानी जाती? हम एक दूसरे के बिना नही रह सकते। हम क्या करना चाहिए?'

'मैं २० वर्षीय बी० ए० की छात्रा हू। तीन साल पहले बडी बहन के घर रहने गई तो वहा जीजाजी ने मेरे साथ वह किया, जो उन्हें नही करना चाहिए था। यह बात मैंने घर मे बहन व किसी को शर्म के मारे नही बताई। भीतर ही भीतर ग्लानि से घुटती रही हू। कई बार मरने की भी कोशिश की, पर असफल रही। अब मेरी शादी होने वाली है और मुझे यह चिन्ता खाए जा रही है कि पति को पता चल गया तो क्या होगा? क्या यह बात मुझे स्वयं आगे होकर पति को बता देनी चाहिए?'

'मेरी उम्र लगभग २२ वर्ष है। लडकियो से काफी दोस्ती है। पूरी आजादी से उसके साथ घूमता हू। मगर उनके समीप जाकर जब सीमा पार करने लगता हू तो मन की आवाज 'यह काम गलत है' पर रुक जाता हू। और फिर प्रयत्न करने पर भी सफल नही हो पाता। मैं डाक्टरी जाच मे बिल्कुल ठीक हू और फिर भी डर है कि शादी के बाद पत्नी के पास जाने पर भी कही ऐसा तो नही होगा?'

'मैं अपने कार्यालय के एक विवाहित सहकर्मी से प्यार करती हू। उसके घर भी आती जाती रहती हू। उसकी पत्नी को भी मालूम है, क्योकि वह छिपाना नही चाहता। पर उसकी पत्नी ऊपर से खुश रहने का प्रयत्न करती हुई भी अपने भीतर की घुटन को अपने व्यवहार मे छुपा नही पाती। मुझे यह देखकर दुख होता है। उसकी पत्नी के लिए मैं पीछे हटना चाहती हू तो वह युवक आत्महत्या कर लेने की बात करने लगता है। मैं नौकरी छोड नही सकती। क्या करू?'

'मैं २२ वर्षीय पढी लिखी सुन्दर लडकी हू। मुझे एक विवाहित पुरुष से प्रेम हो गया है। वह मुझसे शादी करना चाहता है। उसके दो बच्चे हैं पर पत्नी से झगडा है। वह अलग रहती है। तलाक लेना चाहता है, पर पत्नी देती नही। मेरे सामने उसका प्रस्ताव है कि दो-तीन साल के लिए बाहर चले जाए। फिर पुरानी बात हो जाने पर उसकी पत्नी हमारी शादी को स्वीकार कर लेगी। उसके पिता को छोड उसके घरवाले इससे सहमत हैं। पर मेरे घर से इसकी इजाजत नहीं मिल रही। इसीलिए मेरे घरवाले मेरी जल्द से जल्द शादी कर देना चाहते है। भाग कर मैं भी उससे शादी नही करना चाहती, जब तक कि वह पहले तलाक न ले ले। यदि घरवालो का कहना मान अन्यत्र शादी करा भी लेती हू तो क्या हमारा वैवाहिक जीवन सुखी हो सकेगा? फिर हम दोनो का क्या होगा, जो एक दूसरे के बिना रह नही सकते? बडी उलझन मे फस गई हू। हमारे धर्म अलग होने से भी यह उलझन बढ गई है।"

कुछ गभीर व विशेष चिन्तनीय समस्याए चंद नमूने

अपवाद रूप मे-या कम सख्या मे आने वाले पत्रो की कुछ गंभीर समस्याओ के

उल्लेख किए बिना भी यह विवरण अधूरा रहेगा। यद्यपि सभी का उल्लेख करना या उन की भाषा की झलक यहा देना सभव ही नही है। उ हे बचाते हुए ये दो चार नमूने भी

'मैं १४ वर्षीय लडकी हू। भइया मुझसे तीन साल बडे हैं। उनके कुछ दोस्त रात को उनके साथ पढने आते हैं और अक्सर रात ठहर जाते हैं। एक रात उनके एक भारी-भरकम दोस्त न मेर साथ जबरदस्ती सहवास किया। मैं रोन लगी। इतने म भइया आ गए, लेकिन बजाय दोस्त को कुछ कहने के वोभी उसके साथ शामिल हो गए। मैं अवाक रह गई। सामने की बिल्डिंग के एक खूबसूरत नौजवान से मैं प्यार करती हू। दिन म वह मुझे नही छोडता और रात को भाई व उसके दोस्त। शम के मारे माता पिता को बता नही सकती। अब मैं गभवती भी हू। इस गदी जिन्दगी से तग आ गई हू और आत्म-हत्या की बात सोचती रहती हू।'

'हम तीन दोस्त हैं। 'काल गर्ल्स' की जिदगी को समझने के लिए हम तीनो ही 'काल ब्वाय' बनना चाहते हैं। इसके लिए हमे क्या करना होगा?'

'मेरी उम्र १८ वप है। घर म २२ साल की और २० साल की दो जवान बहनें हैं। माता पिता को उनकी शादी की फिक्र नही और मेरे लिए वे समस्या बनी हुई है। जब कभी किसी बहन के साथ मैं घर मे अकेला होता हू मेरे लिए अपने ऊपर नियत्रण रखना कठिन हो जाता है। मैं क्या करू? क्या घर छोड कर चला जाऊ?'

मेरे पिताजी नही रहे। मा अब उसी दफ्तर म काम करती हैं। मेरे एक चाचा मा के दफ्तर से आने के बाद रोज घर आते हैं। मुझे तब बाहर गली मे अपनी सहलियो के पास आ जाना होता है। मेरी उम्र कुल ११ साल है। चाचा मुझे बच्ची की तरह प्यार करते थे पर मुझे अच्छे नही लगते थे। एक दिन मा घर नही थी तो उ होन मरे साथ जबरदस्ती करनी चाही। लेकिन मैं तुरत हाथ छुडा कर बाहर भाग गई। अब मुझ उनसे और भी ज्यादा घृणा हो गई है। इसी बात पर मेरी मा से भी लडाई हो जाती है और मैं उ हे उल्ट सीधे जवाब दे जाती हू। यदि मा ने घर म उनका आना बद न किया तो मेरे लिए घर से भागना जरूरी हो जाएगा।'

'मेरी उम्र १४ साल है। माता पिता दोनो बाहर काम करते हैं। मेरी सहलिया उन दोनो के ही बाहर सबधो को लेकर मुझे अक्सर छेडती हैं, जिससे मुझे बहुत शम महसूस होती है लेकिन अब तो हद ही हो गई है। मम्मी का एक दोस्त मेरे ऊपर भी निगाह रखने लगा है तो मुझे डर कर इधर-उधर हो जाना पडता है। लेकिन पापा का क्या करू? कई बार पापा मुझे अपने पास बुला कर इस ढग से प्यार करते हैं कि अब मुझे उनके पास जाने मे भी डर लगता है। कृपया मेरी जिदगी बचाने के लिए कुछ करिए। नही तो मुझे आत्महत्या करनी पडेगी।'

'मेरा और मेरे भाई का पढने का कमरा एक है। परीक्षा के दिनो [illegible] वहीं पढना होता है, तो भाई मेरे साथ पति वाली हरकतें करने लगता है। क्या मैं [illegible] को बताऊ?'

—ये कुछ थोडे से उदाहरण पढ कर पाठकों को आश्चर्य होगा कि [illegible] देश की ही घटनाए हैं? कुल समस्या-पत्रों में ऐसी समस्याओं की संख्या [illegible]

आशका उद्विग्नता से घिरकर क्रमश कम अक पाता हुआ पढाई मे पिछडने लगता है। पर प्रतियोगी जीवन की दौड मे पिछडने का अथ भी वह खूब जानता है तो नक्ल, सिफारिश, रिश्वत और हिंसा का सहारा लेने लगता है। फिर भी पिछड जाता है तो आवारागर्दी और अपराध की ओर अग्रसर हो लेता है। अगली स्थिति आती है आत्मग्लानि और अपराध चेतना की, जो वैसे ही आसानी से उसका पीछा नही छोडती, उस पर बडा द्वार' ताडना उसे और इस ओर धकेल देती है। तो इस सबसे त्राण पाने के लिए वह जीवन और समाज के बुनियादी मूल्या पर ही आक्रमण करने लगता है और 'ड्रापआउट' हो जाता है।

शिक्षाप्रणाली मे सुधार कब ? वर्षों स सुनते आ रहे हैं, हमारी शिक्षाप्रणाली दोषपूण है और इसमे फला फला सुधार होना चाहिए। पर आज तक पाठयक्रम घटान बढाने म छात्रा का बार-बार नुक्सान करने के अलावा क्या हुआ ? जीवन की दृष्टि स परिवार, समाज और रोजगार—इन तीनो पक्षो का समान महत्त्व है। शिक्षा रोजगारोन्मुख होकर भी परिवार समाज से जोडने वाली न हुई तो कैसे चलेगा ? जब तक शिक्षाप्रणाली इन तीना पक्षो को साथ लेकर नही चलती, शिक्षा पद्धति की यह गाडी इसी तरह पटरी से उतरी हुई रहेगी और विद्यार्थी इससे चोट खाते रहेंगे।

वैज्ञानिक यौन शिक्षा की अनिवायता निरतर अनुभव की जा रही है पर अभी तक कोई निणय नही हो पाया। यह शिक्षा-माध्यम शिक्षा की स्कूली अवधि से ही शुरू हो और गुणो दोषो सीमाओ की पहचान के साथ मानवीय सस्कार से युक्त भी हो तो इसकी उपयोगिता असदिग्ध होगी, अन्यथा दुरुपयोग और खतरो से बचने के लिए अमेरिका जसे देश के विशेषज्ञ भी जब माथापच्ची कर रहे हैं और समाधान के लिए पूव की ओर निहार रहे हैं तो हमे सोचना होगा कि पश्चिम का समाधान कहीं पूव का सकट न बन जाए जैसे कि वैसी स्थितिया मे भी हिप्पिया के आगमन से हमारे यहा नवधनिको की माड' युवा पीढी पैदा हो गई है।

शिक्षा मे नैतिकता और धम की शिक्षा की बात भी की जाती है। यह शिक्षा मानव को मूलभूत आस्था सकल्प शक्ति और सस्कार-सपन्नता दे सक्ती है। पर तभी, जब उसका आरभ घर से हो और परिवारो मे युगानुरूप नई, किन्तु अपनी जमीन पर आधारित परपराए स्थापित करने से हो। यदि परिवेश दोषपूण है तो पाठयक्रम म य विषय सम्मिलित करन से क्या होगा, सिवाय नए विरोधाभासो को जन्म देने के, जो फिर नई समस्याए खडी करेंग। मन चिकित्सक डा० विमलेन्दु के अनुसार 'ब्रह्मचय और सतीत्व की कथाए हमारे यहा भरी पडी हैं लेकिन ये प्रेम और विवाह की पूरकता की स्थिति म लागू होती हैं जबकि आज इनके बीच एक खाई पैदा हो गई है। अब दाम्पत्य को भाग्य या कम फल कहकर स्वीकारना और निभाना आसान नही रहा। तो क्या यह जरूरी नही हो गया है कि दोनो को अलग स्थितियो के रूप मे मान्यता दी जाए और इनके बीच एक समझौते की स्थिति विकसित की जाए ?"

यदि आज यह जरूरी समझा जा रहा है कि विवाह से पूव लडके-लडकिया एक दूसरे को जानें, पढाई के या काम के समय निकट सपक मे रहकर एक सहज मानवीय

सबध विकसित करें, तो यह भी जरूरी है कि लुकाव छिपाव और पलायन या भ्रष्ट आचरण के निराकरण के लिए किन्ही स्वस्थ सामाजिक सस्थाओ को राह दी जाए, जो पश्चिम की 'कोटशिप' या 'डेटिंग' पद्धति से भिन्न अपनी सस्कारिता पर आधारित हो। खोजने पर हमारे प्राचीन साहित्य और वतमान समाज मे से ही इसके लिए प्रेरणा व सुझाव मिलेंगे। केवल नई स्थितियो मे नई आवश्यकताओ के अनुरूप उन्ह सास्कृतिक वैज्ञानिक आधार देना होगा।

लडके-लडकियो मे मेलजोल—कितना ? किस सीमा तक ?
किशोर व युवा पीढी से सीधे बातचीत

इस नाजुक विषय को छेडना, इस पर सीधे लडके लडकिया से खुलकर बातचीत करना आसान नही। लेकिन यह युगीन आवश्यकता है कि विषय कोई भी हो, यदि वह युवाओ को भीतर बाहर से आलोडित कर उनके लिए सामाजिक मानसिक सघप की स्थितिया पैदा कर रहा है और समाज के लिए नई समाजशास्त्रीय समस्या लेकर उपस्थित है तो उस पर चर्चाए हा और समाधान खोजने के प्रयत्नो की शुरुआत को अब और अधिक टाला न जाए।

समस्या पत्नो पर आधारित उपरोक्त सर्वेक्षण प्रस्तुत करते समय मैंने अनुभव किया कि कुछ छात्र छात्राओ (जिनमे निम्न वग के कुछ लडके-लडकिया भी शामिल हा) से प्रत्यक्ष बातचीत करके उसका मिलान भी इन निष्कर्षों से किया जाए। यहा एक परिचर्चा के रूप मे बातचीत का साराश रखते हुए मैं पहले कुछ बातें स्पष्ट कर देना चाहती हू—पहली बात तो यह कि पत्र देश के कोने कोने से प्राप्त होते हैं और यह परिचर्चा एक महानगर तक सीमित है। दूसरे, प्रत्यक्ष बातचीत म विषय सकोच का व्यवधान बीच मे उपस्थित है। तीसरे, पत्रो मे प्राप्त समस्याए एक समस्या ग्रस्त वग (भले ही दिनोदिन इसकी सख्या बढ रही हो) की मानी जा सकती है जबकि बातचीत म शामिल किशोर व युवा सामान्य कम से कम देखने मे तो सामान्य ही कहे जा सकत हैं। इन तीन प्रमुख अन्तरो का ध्यान मे रखते हुए ही इन उत्तरा पर विचार करना ठीक होगा।

अब प्रस्तुत हैं पहले प्रश्नावली व फिर उस पर विभिन्न आयु-वर्गों और सामाजिक वर्गों का प्रतिनिधित्व करने वाले लडके-लडकियो के उत्तर सक्षेप म। पूछे गए प्रश्न हैं

१ लडके-लडकियो म मेलजोल कितना हो ? किस सीमा तक ? भारत म 'डेटिंग' पद्धति के बारे मे आपके क्या विचार हैं ? चोरी छुपे सबधो के बजाय सहज मेलजोल के लिए भारतीय परिवेश म इसके विकल्प रूप मे क्या किसी परपरा या पद्धति की सिफारिश आप करना चाहग ?

२ माता पिता या पुरानी पीढी से इस सबध मे आपकी मुख्य शिकायतें क्या है ? कहा आप सुरक्षा अनुभव करते हैं, कहा घुटन ? विद्रोह किन बाता पर फूटता है ?

३ विवाह पूव सबधा के बारे मे आपके क्या विचार हैं ? आप किस सीमा तक

छूट लेना चाहते है ? और क्यो ? आपके विचार या अनुभव म इन सबधो का प्रतिशत अभी कितना होगा ?

४ क्या आप इन सबधो को लेकर किसी भय, तनाव या अपराध चेतना स ग्रस्त हैं ? यह भय या तनाव पहले अधिक होता है या बाद म ? और आप इस तनाव मे मुक्ति के लिए क्या करत हैं ? अपने दायरे के अनुभव भी बताइए।

५ यौन शिक्षा के बारे म आपके क्या विचार हैं ? यह किस स्तर पर, किस माध्यम मे दी जाए ? आपके आसपास या अनुभव के दायरे म नशाखोरी और यौन-रोगो की क्या स्थिति है ?

६ वतमान छेडखानियो अपहरणो, बलात्कारो के पीछे आपकी दृष्टि मे मुख्य कारण क्या हैं ? क्या ये घटनाए केवल फैशनेबुल आधुनिकाओ के साथ ही घटती हैं ? यदि नही तो लडकियो को आप किस हद तक दोषी पाते हैं ? इस सबके पीछे लडका की कौनसी मनोवृत्ति काम करती है ? आपके सुझाव क्या हैं ?

बी० कॉम० फाइनल के छात्र श्री देवेन्द्र खन्ना की प्रतिक्रिया थी, 'स्कूली पढाई के बाद कालेज जीवन म आजादी मिलते ही पहली प्रतिक्रिया होती है, पूव घुटन का विस्फोट। लडके एकदम आजादी चाहन लगते हैं। प्रारभ होता है छेडखानियो से, फिर लडकियो के करीब आन के लिए वे प्रयोगधर्मी होने लगते हैं। भय और तनाव पूव स्थिति म तो होता ही है बाद मे भी शायद वह बढता ही है, घटता नही। कारण—एक ओर चारो ओर से उत्तेजक स्थितियो का निमन्त्रण, दूसरी ओर हमारी सामाजिक मान्यताओ का भय। इस अन्त सघष म कभी कभी उन प्रतिबधो को तोडने की प्रेरणा बलवती हो उठती है। लेकिन यह प्रेरणा भीतर से कम, बाहरी दिखावे मे या दोस्तो पर रोब गालिब करने की दृष्टि से अधिक होती है। जीवन मे किसी उद्देश्य के अभाव, विचारहीनता और बेकारी या बेकारी के भय के माहौल म उभरा भीतर का शून्य ही अधिकतर इसके लिए उत्तरदायी है। इस 'वैक्यूम' को शिक्षा प्रणाली व शिक्षालयो के वातावरण मे सुधार अपनी सास्कृतिक विरासत के ज्ञान और वैज्ञानिक यौन शिक्षा स भरे बिना इस समस्या का हल नही खोजा जा सकता। नतिक मूल्यो की मान्यता व माग सावकालिक व सावदेशीय है। फिर हमारे देश मे तो इसकी परपरा इतनी समृद्ध रही है कि प्रगति और विकास की हमारी योजनाए उस पर टिकाई जा सकें ऐसा कोई कारण मुझे नहीं दिखाई देता। मेरे विचार मे, युवक युवतियो को व्यक्तित्व विकास की ओर प्रेरित करने की ही जरूरत है, शेष सब व्यक्तिगत व सामाजिक समस्याओ का समाधान इसी मे से निकलेगा।"

इन्स्टीटयूट आफ टेक्नोलाजी मैकेनिकल इजीनियरिंग के ततीय वष के छात्र श्री रजन मिश्रा ने कहा, 'मेरी माध्यमिक शिक्षा एक पब्लिक स्कूल से सह शिक्षा के वातावरण मे हुई। वहा का वातावरण निश्चय ही दूसरे स्कूलो स अधिक खुलापन लिए और साथ ही अनुशासन लिए होता है। प्रारभिक दिनो मे विपरीत लिंग का आकषण कुछ अधिक प्रबल था स्व चेतना कुछ अधिक जाग्रत थी जो स्वाभाविक है। फिर शीघ्र ही सब सामान्य लगने लगा। हम सब दोस्तो की तरह मिल जुल कर रहे। थोडा मजाक,

थोडी छेडखानी भी चलती थी, लेकिन उन लडकियो के साथ ही, जो अपनी समृद्धि के अहम् मे या किसी अचेतन कारण से अपनी ऐंठ मे रहती थी, या (शायद घरेलू बधनो के कारण) *अलग थलग रहने का प्रयत्न करती थी। शेष सभी के बीच सभी विषयो पर* खुल कर बातचीत बहस चलती थी। इस तरह का सहज मेलजोल व वातावरण सभी स्कूलो मे आवश्यक है।

"लडके लडकिया के बीच दोस्ती कालेज-जीवन म आज आम बात है लेकिन मर्यादाए तोडकर अनुचित छूट लेने वाला की सख्या अधिक नही होती। जहा है, वहा भी उसके पीछे रूढिगत परपराए तोडने और दिखावे की भावना ही अधिक होती है, मूल्यो के बदलाव वाली विचार गभीरता बहुत कम। अधिकतर छात्र एक भ्रम, एक अनिश्चित-सी मन स्थिति मे ही जाते हैं। एक ओर तो वे 'परमिसिव सोसाइटी' की माग करते हैं दूसरी ओर छोटी छोटी बातों पर भय या तनाव पाल लेते हैं। इसका कारण पश्चिम के प्रति आकर्षण और अपने समाज के बधना के बीच का मानसिक सघर्ष ही है। जहा तक मेरा प्रश्न है, हमारे घर मे न बधन लगाए गए, न इतनी ढील ही दी गई कि हम भाई-बहना मे कुठाए पलती या बधन तोड विद्रोह की बात सूझती। कुल मिलाकर हमारे समाज मे जितने बधन हैं, वे कम होने चाहिए। नासमझ किशोर उन से ऊपर होने पर मा-बाप की ओर से बच्चो को थोडी छूट थोडी आजादी देना ही चाहिए। सेक्स को इतना महत्त्व देने की जरूरत नहीं कि यह हौवा बन जाए या तनाव पैदा करे। यदि यह हो सके तो हमारी सस्कृति मे पश्चिम की अपेक्षा अच्छाइया का नबर ज्यादा है। यदि पश्चिम का आकर्षण कम करना है और इस भ्रमित स्थिति को मिटाना है तो इन अच्छाइयो व आजादी का तालमेल बैठाना चाहिए। तब न लडकिया का फैशन कोई समस्या होगी न लडको की मनोवृत्ति।"

सगीत एव ललित कला सस्थान दिल्ली विश्वविद्यालय की सगीत स्नातक और भातखडे म्यूजिक कालेज मे अपनी सगीत शिक्षा को और आगे बढाने की इच्छुक कुमारी पूनम पाडे ने बताया, "कला सस्थान मे सह शिक्षा की तीन साल की अवधि म हमे पर्याप्त खुलापन मिला। वैचारिक व कला सबधी आदान प्रदान के लिए लिंग भेद को बीच मे लाना हमे असह्य लगता है। लडके लडकियो के मध्य अतरग मित्रता की बात भी लगभग पचास प्रतिशत मामलो मे देखने को मिली। जो ब्वाय गल फ्रेंडस नियमित रूप से बाहर जाते आते रहते हैं और एकात मे मिलते हैं उनम यौन-सबध आम होने की बात भी प्राय सुनाई देती है। इसमे कितना सत्य है, मैं नही जानती। लेकिन इतना जानती हू कि वे इसे न इतना महत्त्व देते हैं, न बहुत गभीरता से लेते हैं। भय और तनाव की स्थितिया वहीं देखी जाती है, जहा घर के प्रतिबधो व उनके आचरण मे कोई मेल नहीं होता और सारा खेल चोरी छिपे ही चलता है। छिपाव दुराव होगा तो भय तनाव होगा ही। अपराध चेतना के कारण बाद म शायद यह तनाव कुछ अधिक ही होता है।

"जहा तक मेरा प्रश्न है मेरे शिक्षित व उदार माता पिता स मुझे कोई शिकायत नही। हम लोग आपस मे बहुत 'फ्री' हैं। अपने विद्वान पापा से तो मैं बहुत स्वतत्रता और खुलेपन से बातचीत कर लेती हू। अपने मित्रो से चोरी छिपे या एकात मे मिलने की

फिर मुझे आवश्यकता क्या होगी ? मैं समझती हू, माता पिता का विश्वास तोडने या दुस्साहस दिखाने की चाह वही पैदा होती है, जहा घर से अच्छे बुरे की पहचान तो दी न जाए, केवल बधन ही लगाए जाए। कभी देर-सवेर हो जाने पर मा की चिता स्वाभाविक है, जानती हू, फिर भी परस्पर व स्वय पर इतने विश्वास के बावजूद जब अनावश्यक पूछताछ हो तो उस समय कभी भीतर स विद्रोह भी जागता है। पर यह गुस्से का दबाव थोडी देर के लिए होता है और यह अस्थायी दौर शीघ्र ही निकल जाता है। मेरे माता पिता व मेरे बीच इतनी 'अडरस्टडिंग' है कि जब मैं कोई चुनाव करूगी तो वे उसमे कोई बाधा नही डालेंगे। अभी भी मेरे घर आने वाले मेरे मित्र, चाहे वे लडके हा या लडकिया, का वे बहुत सम्मान करते हैं। इसलिए मेरे साथ तनाव जसी कोई स्थिति नही।

" जहा तक छेडखानियो की बात है, उसके पीछे युवकों की यह मनोवत्ति ही अधिक काम करती है कि ये लडकिया उनकी बराबरी मे क्यो आ रही हैं व कभी उनसे आगे क्यो बढ रही हैं। वर्षों के सस्कारो के कारण यह मनोवज्ञानिक प्रतिक्रिया स्वाभाविक है। इसलिए नगे फशन के अपवादो को छोड मात्र फशन को दोष नहीं दिया जा सकता। लडकिया भी दोषी है। पर शौकिया इस ओर जाने वाली लडकियो की सख्या बहुत कम है। कही आर्थिक मजबूरी है, कही धोखे के बाद स्वीकृति, तो कही परपराए तोडने की उथली वैचारिक प्रक्रिया। वातावरण सुधारने के लिए फिल्मो मे हिंसा-बलात्कार व सस्ते रोमास के दश्यो, घटिया दर्जे के अश्लील साहित्य और विज्ञापनो मे नारी शरीर के दुरुपयोग पर रोक लगानी चाहिए।"

इन्द्रप्रस्थ गर्ल्स कालेज की अतिम वष की छात्रा कुमारी निशा आनन्द ने भी बातचीत मे खुल कर भाग लिया, "मैं समझती हू, कुछ वष पहले की स्थितिया अब नही हैं। किशोरावस्था पार करते करते, कम से कम हमारे जैसे शिक्षित परिवारो की लडकियां अब काफी समझदार और 'चूजी' होती जा रही हैं। सस्ते रोमास का 'क्रेज' अब फिर कम होने लगा है। इसलिए छिपाव दुराव भी कम होता जा रहा है। वही लडकिया चोरी छिपे सबध बनाती हैं, जहा घर से पर्याप्त शिक्षा व देखभाल नही मिलती या फिर उन पर अनुचित बधन लगाए जाते हैं। मेरी जानकारी मे, पुरुष मित्रो के साथ अकेले घूमने फिरने वाली लडकियो की सख्या मध्य वग मे तो दस प्रतिशत से अधिक नही होगी। वसे मेलजोल आज आम बात है और जीवन साथी का चुनाव भावुकता म बहकर नही, खूब सोच समझकर किया जाने लगा है—'प्लानिंग' से ही एक तरह।

" मित्रो-सहेलियो के साथ मिलकर समूह मे कही भी आने-जाने म मैं कोई हज नही समझती। हा जब अन्तरग मित्र का चुनाव कर लिया जाए तो मेलजोल दानो घरो मे बता कर रखना चाहिए—प्रतिष्ठा व सुरक्षा दोनो दष्टियो से। विवाह-पूव यौन सबधो की बात मैं कतई ठीक नही समझती—ऐसे मे प्रेमी से विवाह की सात प्रतिशत सभावना हो तो भी लडकी अपने भावी पति की निगाह म सस्ती समझी जा सकती है और अपनी दृष्टि मे भी गिर सकती है। इसलिए यह सीमा बहुत जरूरी है।

" जहा तक छेडखानियो व अन्य वारदातो का प्रश्न है, इसके पीछे लडकियो को आगे बढता देख पुरुष का चोट खाया अह ही अधिक है या चारो ओर का वातावरण। लडकियो के मामले मे मनपसद साथी का चुनाव, दहज की वचत, कोई आर्थिक मजबूरी ही इसके पीछे होती है। लेकिन लडकियो का एक वग ऐसा भी है जो 'ईज़ी मनी' या मौज-मजे के लिए ही इस ओर जाता है—यहा लडकिया भी अवश्य दोषी है। मेरे सामने यह प्रश्न आने पर मेरा प्रयास अच्छे जीवन साथी के चुनाव का ही होगा और यह माता-पिता की रजामदी स होगा, ऐसा मुझे विश्वास है। "

एक सस्था के स्वागत कक्ष मे बैठी कुमारी वीना ने बताया, "यही पहले तक-नीशियन के रूप मे कायरत और अब सहकारिता प्रबध मे प्रशिक्षण ले रहे पसन्द के एक युवक को मैंने जीवन साथी के रूप म चुन लिया है और यह बात हमारे घरो म मालूम है और उसकी स्वीकृति है। बस प्रतीक्षा है, युवक के आत्म निभर हो जाने की। इसके बाद हम लोग विवाह कर लेंगे। इस मेलजोल मे हम घर से कोई बाधा नही दी गई। न अभी ही मिलन पर कोई प्रतिबध है—सीमाओ को हमे पहचान है। किशोरावस्था मे आते ही लडकियो को घरो स यह पहचान दी जाए और उचित यौन शिक्षा, तो मेरे विचार मे समस्या इतनी नही रहेगी।"

स्नातक होने के बाद एक बक मे कायरत श्री हरिन्दर सिंह लावा ने कहा, "मेलजोल होना चाहिए, लेकिन दोस्ती तक। मिडिल क्लास मे ज्यादातर होता भी यही है। आजकल ब्वाय गल फ्रेंडशिप' तो लगभग साठ प्रतिशत म होगी लेकिन मैं नही समझता कि उनके बीच यौन सबधो का आकडा भी अधिक हो। अब शहरी पढी लिखी लडकिया इस मामले मे काफी होशियार हो गई हैं। सबधो के पीछे प्राय जिज्ञासा ही होती है। मेरे ख्याल से **भय या तनाव अधिकतर सदेह, अविश्वास और 'गलत न समझे जाए' को लेकर होता है। विद्रोह भी प्राय इसी कारण होता है। कहीं कहीं तो यह विद्रोह ही मर्यादा तोडने के पीछे होता हैं।** भय तनाव की स्थितिया सबधो के पहले ही अधिक हो सकती है। बाद म अपराध-चेतना शायद लडकिया को सालती हो, लडके तो मुक्ति व राहत ही अनुभव करेंगे।

"पहल अधिकतर लडको की ओर से होती है, पर 'इन्वाल्वमट' और प्रतिस्पर्धा तो लडकिया को लेकर ही होगी। जहा तक मनोवत्ति का सवाल है मैं नही समझता कि हम लडकियो को बराबरी म नही आने देना चाहते। छेडखानियो के पीछे यह मनोविज्ञान कम, लडको की प्राकृतिक उच्चता ग्रथि और अपन दायरे म दिखावे व शान की भावना अधिक रहती है। सही ढग की यौन शिक्षा और सामाजिक-नतिक शिक्षा ही इसका समाधान है, इसे शिक्षण-सस्थाओ मे लागू किया जाना चाहिए। '

अब आइए किशोर पीढी पर

हायर सेकडरी के छात्र श्री अनुज कुमार देखने मे अपनी उम्र से बडे लगत थे। उनसे बातचीत करने पर उनका किशोर-सुलभ, मजाकिया और सीधा-सादा उत्तर था, "लडकिया ? क्या बात करती हैं आटी, **लडकिया हम जसों को थाडे ही मिलेंगी, ये मिलती हैं खूब पसे वालो को, कार पर घुमाने वालों को, महगे प्रेजेंट दिलाने वालो**

को। और वे केवल फायदा उठाती हैं, उनसे प्यार नहीं करतीं। लडके भी जिसे प्यार करते हैं, उन्हे इज्जत से रखते हैं। जिनके साथ घूमते हैं, उन्हें प्यार नहीं करते।

"क्या ?"

"विदेशा म भी इसे शायद अधिक अच्छा नही समझा जाता। फिर यह तो भारत है। पर हमारे सस्कार हम रोकते हैं और वातावरण हम उकसाता है। इसलिए हम न इधर के हैं न उधर के। माता-पिता कुछ नही कहते तो लगता है, उन्हें हमारी परवाह ही नही। रोकते टोकते हैं तो हमारा खून खौल उठता है और हम अट-सट जवाब दन लगते है पर बाद म पछतात भी कम नही। मैं चाहता हू, बडे हमारा ख्याल रखें, गलत बात पर मना भी करें, पर हमे कुछ आजादी भी दें। अनावश्यक रोक-टोक न करें। माता पिता की स्वीकृति से मेलजोल की आजादी भी हो तो ट्रेजडियां और बुराइया खत्म हो सकती हैं।"

ग्यारहवी कक्षा की छात्रा कुमारी मधु ने बताया, "हमारे सह शिक्षा स्कूल मे वातावरण कुछ सहज है, मेलजोल को बुरा नही समझा जाता। फिर भी लडके-लडकिया अक्सर ग्रुप बनाकर अलग अलग खडे हो जाते हैं फिर लडका के ग्रुप म प्राय लडकिया की और लडकिया के ग्रुप मे लडको की बातें होने लगती हैं। विषय-बदलाव तभी आता है, जब हम लोग इकट्ठे होत हैं। लडका के साथ बाहर जाने वाली लडकिया की सख्या का प्रतिशत चालीस से पचास के बीच होगा। आगे की बात मुझे नही मालूम। केवल देखती हू लडकियो को साथ ले जाने वाले लडके जगह बदल बदल कर खडे होते हैं। मेरे विचार मे, मेलजोल की छूट माता पिता की जानकारी मे और एक सीमा मे ही होनी चाहिए। माता पिता हम पर विश्वास करते हैं तो हमारा भी फर्ज है कि उनका विश्वास न तोडें।"

एक प्राइवेट कालेज की प्रथम वष की छात्रा कुमारी मलविन्दर न अपने अनुमान से उपरोक्त चालीस पचास प्रतिशत के आकडे को बढाकर साठ पैंसठ प्रतिशत बताया और कहा कि इन लडके लडकियो म आधी सख्या के बीच तो यौन-सबध होंगे ही। वैसे हम लोग कालेज मे एक फेमली ग्रुप की तरह है। मित्रो और सहेलियो के छोटे छोटे अपने ग्रुप भी हैं। जिनके घर मे अच्छी शिक्षा है उन्ह किसी भी वातावरण से भयभीत होने की जरूरत नही। मैं तो आगे होकर हर बात स्वय पिताजी को बता देती हू। उन्होने भी समझा दिया है और अपनी पहचान की एक लडकी की दुदशा के सदभ म मुझे भी यह बात अच्छी तरह समझ मे आ गई है कि गलत सही का चुनाव हमे स्वय करना है। घर म हमे अनुशासन के भीतर आजादी है। पिता जी स्वय अच्छी किताबें व पत्रिकाए लाकर देते हैं और देखते हैं कि हम सस्त 'नावेल' न पढें। सुरक्षा और सम्मान की दृष्टि से हमें इन सीमाओ का बधन न मान अपने हित म लेना चाहिए तभी हमारा भविष्य सुखी हो सकता है।"

अब ग्रामीण पष्ठभूमि से जुडे तीन लडके लडकिया की बातचीत का जायजा भी लें

गाव म पले पढे व मध्यम शिक्षा के बाद पिछले एक साल से महानगर निवासी श्री अरेन्द्र नाथ राय एक डाक्टर के साथ कपाउडर रूप में कायरत थे और प्राइवेट रूप

से अपना अध्ययन आगे बढा रहे थे। उनकी प्रतिक्रिया परिवेश अनुसार ही मिश्रित थी, लडके-लडकियो म मेलजोल एक सीमित दायरे मे ही होना चाहिए। भारत मे 'डेटिंग' पद्धति उचित नही। चोरी छिप सबधा से दुराचार फैलता है। मेलजोल परिवार के दायरे मे ही रहे तो गलत बाता की सभावना कम होगी। जहा तक माता पिता या पुरानी पीढी द्वारा लगाए जाने वाले प्रतिबधा की बात है, मेरे विचार म परिवार के नियमा मर्यादाओ का पालन करने से हम सुरक्षा रहती है। ऐसी गलतियो के लिए ढील देना ठीक नहीं। पर शिक्षा, करियर, विवाह के लिए जीवन साथी या सगिनी के चुनाव के लिए लडके लडकियो को भी अवश्य पूछा जाना चाहिए। बाल विवाह निरोध कानून का भी गावो मे सख्ती से पालन हो। जीवन साथी के बारे मे पसद का चुनाव होने से अवध सबधो पर रोक लगेगी। साथ ही गावो मे भी यौन शिक्षा का प्रबध होता कि कच्ची उमर के लडके भटकें नहीं। यौन रोगो व नशाखोरी को रोकने के लिए ग्रामीण क्षेत्रो और शहरी पिछडी बस्तियो मे पुस्तकालय, मनोरजन-केन्द्र और युवा क्लब हो। साथ ही आर्थिक-सामाजिक स्थितिया म इतना सुधार लाया जाए कि गावा मे रोजगार बढे और शहरा मे हम लोगा को परिवार के साथ रहने की सुविधा मिल सके। पत्नियां गावो मे छोड लबे समय तक शहर मे अकेले या एक एक कोठरी मे अच्छे बुरे कई-कई साथियो की सगति म रहन की बाध्यता समाप्त हो। यह नही होगा तो गाव के कम शिक्षित व अशिक्षित युवा शहर की चकाचौध मे भटकेंगे भी और यौन-रोगो के शिकार भी हागे। शहर म यह समस्या है तो गावा मे बडे लोगो और पुलिस की मिलीभगत से वहा बहू-बेटियो की सुरक्षा दिनोदिन कम होती जा रही है विशेष रूप से निम्न जातियो के साथ तो बहुत जोर जुल्म है। इन सामाजिक स्थितियो म सुधार लाए बिना अवैध सबधा छेडखानियो और यौन हिंसा की वारदाता का पूरी तरह निराकरण सभव नही लगता। ये तो हम लोगो के सस्कार हैं जो हम विपरीत स्थितियो मे भी निभा ले जाते हैं। लेकिन गाव छोड कर शहर जाने पर दोनो ओर कठिनाई तो है ही।"

खरादिए का काम कर रहे श्री भरत ठाकुर स्वय पाचवी कक्षा म पढाई बीच मे छोड कर शहर भाग आए थे और अब शहर गाव की मनोवत्ति के बीच झूलते हुए कहते हैं 'जे सब इस्क विस्क का चक्कर ज्यादा सहर मे फसन की देखादेखी मे हो है। गांव मे न ऐसा होता है, न हमे ऐसी आजादी चाहिए। आज जो हम करेंगे, कल हमारे बच्चे वही करेंगे और फिर यह दिन दिन बढता ही जाएगा। मलजोल से छेड छाड ता सायद बद हो जाए पर इधर उधर के सबध इससे कम नहीं होगे, बढेंगे ही। इसलिए मा-बाप की रोक टोक अच्छी ही है। केवल तब हमे अच्छा नहीं लगता, जब वे खुद तो हुक्का-बीडी पीते हैं लडको को बीडी सिगरेट पीने से मना करते हैं। इससे क्या होता है? छोरे लुक छिप कर पीते हैं। यह ठीक है कि हम गाव के लडके सहर म केवल काम की तलास मे ही नही आते यहा से जाने वाले हमारे भाई और दोस्त लोग जब सहर की जे सब बातें बताते है तो बहुत से लडके खेती का अपना काम होते हुए भी वहा मेहनत नही करना चाहते और सहर भाग आते हैं फिर चाहे यहा कितनी ही तकलीफें क्या न हो। पर दोस लडका पर ही क्या धरो, लडकिया भी जहा देखो वही आस भिलासी

मिल जाती हैं। प्यार तो कभी-कभार ही होता है। ज्यादा तो चार पैसा, सैर-सपाटे के लालच में ही वे साथ लग जाती हैं और गरीब लड़कों की जेब फूंक जाती है। एक दूसरे की देखा-देखी ही लड़के उनके चक्कर में पड़ते रहते हैं। इसलिए हमारे विचार में तो लड़के लड़कियों दोनों पर, घर में, बाहर में सख्ती होनी चाहिए, तभी समाज सुधरेगा।'

घरों में चौका बरतन करने वाली एक किशोरी ने कहा, 'हमारा नाम नहीं छापना नहीं तो घर में मेरी पिटाई हो जाएगी। यह तो आप जैसी और जैसी मालकिनों की शिक्षा का फल है कि मैं अपना बचाव आप करने लायक हूं। वहां तो मेरे माता पिता तो रात देर से अपना काम धंधा करके घर लौटते हैं, वे मेरी क्या देखभाल करेंगे और क्या मुझे शिक्षा देंगे। उन्हें तो पेट के धंधे से ही फुरसत नहीं। रात दस बजे तक मां थकी मांदी आएगी तो पूछ लेगी, खा लिया, जो रोटी बनाई हो सो दे दे बहुत भूख लगी है और खाकर सो जाएगी। सुबह मुंह अंधेरे से फिर वही धंधा। मैं अपने काम से, वे अपने काम से। पर मैं घर में देर तक अकेली रहती हूं या अकेली आती जाती हूं तो यह मत समझना कि मैं डरती हूं। कोई हाथ तो लगा कर देखे, साले को वह झापड़ लगाऊं कि होश ठिकाने आ जाएं। मैं इतनी सीधी नहीं हूं जितनी दिखती हूं। एक बार एक रिक्शा वाले ने कुछ कहा तो मैंने उसे वो गालियां सुनाईं और भगाया कि फिर कभी मेरे रास्ते में नहीं आया। हमारे घर के पास एक औरत रहती थी जो अच्छी नहीं समझी जाती थी। उसके कारण मुझे भी कभी कभी परेशानी होती थी। फिर हमने वहां से घर ही बदल लिया। तुम जानो, इसीलिए तो हमारे लोगों में जल्दी शादी कर देते हैं कि लड़की सयानी हुई तो फिर ससुराल वाले ही उसकी देखभाल करें। पति गांव में छोड़ शहर आ जाते हैं तब भी उन्हें कोई डर नहीं। वे सास ससुर की निगरानी में रहती हैं। फिर भी कभी कभी कोई किस्से हो ही जाते हैं। इसलिए सब अनपढ़ी व गांव की गरीब लड़कियों को भी अच्छी शिक्षा मिलनी चाहिए कि वे अपनी रक्षा आप कर सकें, थोड़ी चीजों या खाने-पीने के लालच में बिक न जाएं।' और ऐसी लड़कियों का जिक्र करते ही वह फिर उनके बारे में गालियां भरे अपशब्द कहने लगी थी।

और अब दो छात्र प्रतिनिधियों के बयान

दिल्ली विश्वविद्यालय छात्र संघ के तत्कालीन अध्यक्ष श्री राजेश ओबेराय से अपेक्षा की गई थी कि वे व्यक्तिगत राय देने के साथ छात्र प्रतिनिधि के नाते भी स्थिति पर प्रकाश डालें। उन्होंने बताया, 'दिल्ली में कुल ६६ कालेज हैं इनमें से ४५ हमारे छात्र-संघ के साथ संबंधित हैं। आठ नौ गर्ल्स कालेजों को छोड़ सभी में सह शिक्षा है और सह शिक्षा का वातावरण जिज्ञासा समाधान की दृष्टि से बेहतर ही होता है। प्रायः लड़के अपने कालेज की लड़कियों को अपने संरक्षण में मान उनके साथ तो अच्छा बनाव ही करते हैं। यह ठीक है कि कालेज जीवन एक आजाद जीवन होता है। कई लड़के तो *करियर का ध्येय हो, न हो इसलिए भी अपने जीवन का एक भाग यहां बिताना पसंद* करते हैं। विश्वविद्यालय क्षेत्र का वातावरण कुछ अधिक खुला हुआ और व्यापक होता है तो हर छात्र छात्रा की आकांक्षा इधर ही प्रवेश के लिए होती है। लेकिन वास्तव में छात्रावासों की स्वच्छंदता के कुछ अपवाद छोड़ शेष माहौल एक खुलापन लिए सहज

मेलजोल का ही रहता है। जब से दिल्ली विश्वविद्यालय छात्र सघ के कक्ष मे एक शर्मनाक घटना घटी हम यूनियन के अधिकारियो की सतर्कता इस ओर बढ गई है कि वातावरण स्वस्थ व स्वच्छ रहे।

"यह ख्याल गलत है कि कान्वेन्ट स्तर के कालेजो म समृद्ध सभ्रान्त वग क छात्र अधिक आते हैं इसलिए वहा का वातावरण कुछ अधिक स्वस्थ होगा। किसी कालेज का नाम लिए बिना ही मैं कहना चाहूगा कि वहा नशाखोरी और दूसरी खुराफातो के आकडे कुछ अधिक ही है। एक तो सुविधापरस्त वग से आनेवाले छात्रो को उनके घरो मे सुविधाए ही अधिक मिलती हैं, अधिक देखभाल नही, बल्कि खुला जेब खच देकर कुछ भी करने के लिए व स्वतन्त्र छोड दिए जाते हैं। दूसरे, वहा विदेशी छात्रो की सख्या अधिक होने से उनमे कुछ विदेशी शक्तियो के ऐसे एजेन्ट घुसपैठ कर लेते हैं जो आगे बढते हमारे देश की नई पीढी के उस वग को जिसम आगे अधिकारी बनने की अधिक सभावना होती है नशीली गोलियो 'दनू फिरमा' व अन्य खुराफातो म लपेट उनकी उभरती शक्तियो को कुठित कर देना चाहते है। ये मादक चीजें प्राय उनमे 'फ्री' वितरित की जाती हैं। अब तो इनका क्षेत्र कुछ विशेष कालेज ही नही रहे, अन्य कालेजो व होस्टलो मे भी इनकी पहुच हो रही है क्योकि समृद्ध वग के इन छात्रो (सभावित अधिकारियो) का प्रवेश उन कालेजो तक सीमित नही रह गया है। प्रवेश के समय सीटें बटन पर उन विशेष कालेजो म अब मध्य व निम्न मध्य वग के छात्र भी प्रवेश पाते है। परीक्षा परिणाम की दृष्टि स भी अब जीवन सघष स जूझते ये छात्र उन सुविधाभोगी छात्रो स आगे निकलने लगे हैं। चकि इनके लिए डिग्री ज्ञान शोभा की वस्तु से अधिक रोजी रोजगार की प्रतीक है तो प्रतियोगिता मे आगे निकलने के लिए वे जी तोड मेहनत करते ह।

' छेडखानिया अधिकतर अपने पुरुषत्व की धाक जमाने या बदला लेने की भावना से होती हैं। वस मित्रता तो आम बात है, पर पारिवारिक सामाजिक मान्यताओ के कारण अन्तरग मित्रता के आकडे अधिक नही होगे। वे प्राय किशोर उम्र म या फिर जीवन साथी के चुनाव की दृष्टि से स्नातकोत्तर काल म अथवा निरुद्देश्य भटकन लिए कुछ छात्रो के साथ अधिक होते है। लेकिन जिनमें हैं वहा सीमोल्लघन भी अवश्य होगा। अधिकाश मामले चोरी छुपे ही चलते है इसलिए भय व तनाव की स्थितिया स्वाभाविक है। मेरा अनुमान है यह तनाव लडको मे पहले व लडकियो म बाद म अधिक होता होगा। कही कही प्रतिहिसा के कारण यौन हिंसा की वारदातें घट जाना भी इसी तनाव की परिणति हो सकता है।

" वातावरण मे सुधार लाने की जिम्मेदारी हम सभी पर है। हम छात्र सघ के लोग इसके लिए प्रयत्नशील हैं। कुछ कदम उठाए गए हैं, कुछ उठाने जा रहे हैं। 'डेटिंग पद्धति के विकल्प पर तो नही सोचा गया पर मेरे सुझाव है मेल मिलाप के उत्सवो-समारोहो वाद विवाद प्रतियोगिताओ के आयोजनो और युवा-क्लबो की स्थापना के अलावा खेलो म लडकियो को आगे बढाया जाए और सौंदय प्रतियोगिताए आयोजित करने के बजाय व्यक्तित्व प्रतियोगिताए रखी जाए। व्यक्तित्व विकास को प्रोत्साहन समस्या को एक समाधान देगा। लेकिन जब तक शिक्षा प्रणाली मे कोई बुनियादी सुधार

नही होता और शिक्षा को रोजगार की गारंटी के साथ नही जोड़ा जाता, निरुद्देश्य भटकन और खाली मन की शैतानियां पर साथक रोक सभव नहीं।'

दिल्ली विश्वविद्यालय छात्र संघ की तत्कालीन उपाध्यक्ष कुमारी भारती सिंहा बातचीत म बहुत स्पष्ट लगी, उनके बेबाक उत्तर थे

"कम्पस के खुले वातावरण मे कोई बंधन नहीं। लेकिन भीतर का भय व सकोच बरकरार है। जब मेलजोल माता पिता की जानकारी मे नहीं होगा तो तनाव व अपराध-चेतना से बचा नहीं जा सकता। इसी भय के कारण मेलजोल भी सहज नहीं रह पाता। यदि लड़के लडकियों म मेलजोल को एक ही नजरिए स न देखा जाए तो मैं कहूगी, यह शत प्रतिशत होना चाहिए। लेकिन वही बात—लगाव स्वाभाविक भीतर-बाहर क भय स मेलजोल अस्वाभाविक। हम ऊपर स ही आधुनिक हो पाए हैं, भीतर से नहीं। हमारी शिक्षा प्रणाली बदलाव के साथ नहीं चल रही। समूह मे दोस्ती अच्छी बात है। अन्य चर्चाओ के साथ समूह मे इन विषयो पर भी खुल कर चर्चा हो तो कुछ फल निकले। लेकिन जहा इस तरह की कोई चर्चा छिडी कि लडकियां वाक आउट कर जाती हैं। मेरा उदाहरण ही लीजिए—मैं बिहार की हू। घर म बहुत खुला व चेतन वातावरण है। मेरा व्यक्तित्व प्रशिक्षण इतना अवश्य है कि मैं हर स्थिति का सामना कर सकू। बाधा न घर स है, न मेरे भीतर से। पर प्रबुद्ध और आधुनिक बनते हुए भी अभी इस चर्चा म मैं आपको दो तरह से जवाब देना चाहूगी—एक ढग से अपने लिए, दूसरे ढग स सामान्य। क्यो ? वही समाज। बाहर स बाधा। बस मैं कही किसी स भी मिलू, बचाओ मे भाग लू, प्रेस-मुलाकातें दू मेरे घरवाले जानते हैं, मैं गलत नही, ठीक चल रही हू। लेकिन जब उन्ही माता पिता को कोई बाहर से आकर कुछ कह दे तो वे बुरा चाहे न मानें, उनकी लडकी पर कोई जरा भी उगली उठाए, इसम व अप सेट' तो हो ही जाएगे न !

' यौन शुचिता के आदर्श में अन्य सभी दोष ढकने की परपरा जब तक रहेगी, इस मानसिक व सामाजिक जडता का टूटना सभव नही। सबधो को यौन नैतिकता स जोडने पर ही तनाव पैदा होता है वैसे नही। फशन, नशाखोरी, भटकन, ये सब भीतर के खालीपन को भरने के बहाने हैं। युवाओ को भविष्य का, कॅरियर का निश्चित आश्वासन मिले, लडकियां आत्मनिर्भर बनें, साथ ही किशोरावस्था म वैज्ञानिक यौन शिक्षा मिले, तो वातावरण म सुधार होगा।

' हा मैं भी मानती और जानती हू कि हमारे होनहार नवयुवको म नशाखोरी क लिए मादक वस्तुओ और ब्लू फिल्मो आदि का विवरण कुछ निहित स्वार्थ वाले विदेशी तत्वो द्वारा हो रहा है इसे रोकना चाहिए। फिल्मो मे सस्ते रोमास, हिंसा-बलात्कार के दृश्यो घटिया साहित्य और आपत्तिजनक भोडे विज्ञापनो की रोकथाम के लिए भी आवश्यक कदम उठाए जाने चाहिए।

' लेकिन मैं समझती हू, जो युवा पीढी यह सब झेल रही है, उसे ही कुछ करने की पहल करनी होगी। डेटिंग के विकल्प म युवा मेलजोल के लिए हर मुहल्ले-बस्ती के युवा-क्लब हो जहा व्यक्तित्व विकास मनोरजन व सहज मेलजोल की सभी तरह की

गतिविधिया हो। युवाओ को स्वय आगे आकर अपनी यह माग उठानी चाहिए और बदलाव की जिम्मेदारी लेकर उसम भागीदारी बढानी चाहिए।

"छेडखानिया फैशनेबुल लडकियो के साथ अधिक नही, अधिक 'ओपन' होती हैं, दूसरी दबी ढकी। युवा लोग कभी शुगल के लिए तो कभी बदला लेन की भावना से इसम भाग लेते है। लेकिन वसा म छेडखानी करने वाले प्रौढो को क्या कहे ? जहा तक मनोवृत्ति का प्रश्न है वह दोनो ओर है। लडको मे ही अह या उच्चता ग्रथि नहीं, लडकियां भी उन्ह पति या प्रेमी के रूप मे स्वय से ऊचा ही देखना चाहती हैं। सरक्षण की चाह और बराबरी की चाह दोनो साथ नहीं चल सकतीं। सरक्षण की बात मान भी लें लेकिन मजबूरी की बात करके स्वय को शोषण के लिए प्रस्तुत करने की बात समझ से परे है—दलित वग की बात और है। शोषण के विरोध म उठना है तो स्वय को मानसिक स्तर पर ऊचा उठाना होगा। इसके लिए वैचारिक भावभूमि तैयार करनी होगी, साथक कदम उठाने होगे। केवल नारेबाजी व्यथ है।'

ये वारदातें, ये आन्दोलन।

सन १९७२ में मथुरा नाम की एक किशोरी के साथ थाने के भीतर हुए बलात्कार का मामला। जिला न्यायालय के फैसले में उसके साथ न्याय नहीं हुआ, ऐसा मान कर केस उच्च न्यायालय मे गया था जहा अपराधियो को सजा सुनाई गई थी। लेकिन अपराधियो द्वारा उच्चतम न्यायलय का द्वार खटखटाने पर न्यायालय द्वारा उच्च न्यायालय के फैसले को फिर पलट दिया गया था और अपराधी छूट गए थे। इस मामले को सन् १९७९ मे कुछ बुद्धिजीवियो द्वारा प्रकाश मे लाने पर उच्चतम न्यायालय के उस फसले पर एक खुली बहस व चर्चा छिड गई। इस घटना से एक बार फिर नारी शोषण की ज्वलत समस्या पर सारे देश का ध्यान आकर्षित हुआ। यहा तक कि इस चर्चा ने एक आन्दोलन का रूप धारण कर लिया।

नारी अधिकारो की माग उठाने वाले प्रमुख नारी सगठन भी नारी-सुरक्षा की माग ले कर नारे लगाते हुए सडको पर उतर आए, जसे कि नारी शोषण की ऐसी घटनाओ का उन्हे अभी ही पता चला हो और इसके पहले कही कुछ न घटता रहा हो। पर उन्हे बडे बडे सम्मेलनो से फुरसत हो तभी न इन छोटी मोटी बातो पर ध्यान दें। बात बुद्धिजीवियो ने उठाई हो, अब तो उन्हे भी बहती गगा मे हाथ धोना ही था। 'इडियन वीमेस काउसिल' के नेतृत्व म कई समाजसेवी सगठनो और महिला सस्थाओ ने प्रदशन आयोजित किए। इन्हे प्रभावशाली बनाने के लिए नुक्कड नाटको के रूप मे सडको पर बलात्कार सबधी कुछ भाडे प्रदशन भी किए गए। लेकिन इन प्रदशनो के साथ साथ और इनके बाद भी वारदातें घटती रहीं। पुलिस न केवल उन्हे रोक पाने मे असफल रही स्वय उसकी सलग्नता और अत्याचार कहानियो की गूज भी हर रोज पत्रो मे ससद तक म, उठती रही। यहा तक कि मथुरा-काड' जैसी थानो के भीतर घटने वाली घटनाए माया त्यागी-काड तक आते आते दिन दहाडे सडको पर भी घटने लगी।

लेकिन समस्या न आज की है न अकेली मथुरा या माया त्यागी की, न केवल प्रकाश मे आने वाली कुछ घटनाओ की ही। समस्या तो शाश्वत है। अहल्या के शिला बनने' से लेकर आज तक।

वारदातें हर युग मे घटती हैं क्योंकि मनुष्य के भीतर का पिशाच कभी मरता

नही, किसी न किसी रूप म जिन्दा रहता है। लेकिन जिन्दा रहते हुए भी उस क्रम, कितना सिर उठान दिया जाता है, यह उस समय के सामाजिक-राजनीतिक परिवेश पर निमर करता है। पिछले कुछ वर्षों स देश का जो आम माहौल बनता चला गया है और स्थितिया को जिस तरह आख मूद कर हाथ से फिसल जाने दिया गया है, उस पष्ठभूमि मे एसी घटनाओ का लगातार घटना और उनकी एक पूरी श्रृखला का मिलना कोई आश्चयजनक बात, कम से कम मुझे ता, नही लगती।

दज व प्रकाशित सख्या बहुत कम ये लज्जाजनक घटनाए कभी भी पूरी तरह सामन नही आती। लडकी के मामले म समाज क स्वय व लडकी के भविष्य को देखते हुए इक्का दुक्का केस ही पुलिस फाइला म दज होते हैं। उनम स भी कुछ ही पत्रा मे प्रकाशित व चर्चित होत हैं। फिर भी पिछले एक दशक का गहराई से अध्ययन करें तो *न केवल वारदाता की इस श्रृखला को खोज पाएग जहा से य फूट कर आ रही हैं,* समाज का वह नासूर भी अपनी पूरी वीभत्सता के साथ उजागर हो जाएगा। कारणा प्रभावो और परिणामा पर पिछले अध्याया म काफी लिखा गया है। सामाजिक पारिवारिक और व्यक्तिगत विघटन के फलस्वरूप यह विकृति अब किस तरह करवट लेकर एक अभियान, एक आन्दालन को जन्म देन लगी है, इसकी चचा इस अध्याय म—

ये लज्जाजनक घटनाए

हर रोज पत्रो म आने के कारण बात अब चौंकाने वाले स्तर से आगे निकल चुकी है। पर वतमान स्थिति का जायजा लने के लिए सन १६७० ८० दशक के उत्तराध की और आन्दोलन की शुरुआत के बाद सन १६७६ ८० म इस ओर प्रेस सक्रियता बढ जान के कारण तेजी स प्रकाश म आन वाली कुछ वारदातें ही सक्षेप मे उठाए तो भी हर चिन्तनशील मस्तिष्क पर इसस चिन्ता की रेखाए तो उभरेंगी ही

—ग्यारह वर्षीय अबोध हरिजन बालिका का अपहरण। उसके साथ बलात्कार। फिर उसे अपने जाल म फसा कर देवी' बनने के लिए विवश करना ढाग पाखड रचा भोलभाली जनता के अधविश्वास का लाभ उठाकर उस देवी (?) के माध्यम से काफी पैसा बनाना, वह भी एक तथाकथित नेता द्वारा जिस स्वतन्त्रता सेनानी का ताम्रपात्र भी मिल चुका था। *जब घटना की गूज ससद के दोना सदना म उठी तो बच्ची व उसके* अभिभावको का प्रधानमत्री के पास जाकर अपनी करुण कहानी सुनानी पडी और अपनी इज्जत व जिन्दगी की भीख मागनी पडी। इसलिए कि पर्दाफाश हो जाने से अपराधियो द्वारा बच्ची व उसके बाप को जान से मार दने की धमकिया दी गई थी।

—मेरठ की एक कालेज छात्रा का उसकी सहेलिया के बीच से अपहरण। उस तरह-तरह की यातनाए देकर, उसके चरित्र पर लाछन लगा कर उसे एक गुडे के साथ शादी करन के लिए बाध्य करना। चूकि लडकी एक सभ्रान्त घर से सबध रखती थी, उसके पिता के ऊचे सपर्कों के कारण काफी सरगर्मी से पुलिस खोज के बाद लडकी बरामद कर ली गई थी और गुडे पकड लिए गए थे।

—कलकत्ता मे रवीन्द्र रगशाला में आयोजित एक सास्कृतिक कायक्रम। कायक्रम

विश्वविद्यालय के पीछे बने पपिंग स्टेशन पर ले जाना। वहा अपने चार साथियो सहित उसका महिला स बलात्कार। महिला गर्भवती थी। उसके साथ आई उसकी छोटी बहन तो यह दश्य दख डर कर ऐसी भागी कि फिर उसका पता ही नही चला कि कहा गई।

—त्रिलोकपुरी के एक बाल्मीकि द्वारा अपनी पत्नी की मदद से ही सत्रह वर्षीय एक युवती का अपहरण व शील हरण।

—एक मिनी बस की रात की अतिम पारी मे ड्यूटी से लौटती दो नर्सों के साथ बस कडक्टर और ड्राइवर का दुर्व्यवहार। इज्जत बचाने के लिए दानो नर्सों द्वारा चलती बस स छलाग। उसके बाद एक नर्स की घटना स्थल पर ही मत्यु और दूसरी का जख्मी हो जाना भी कम दहशतभरी घटना न थी।

— दिल्ली विश्वविद्यालय के प्रागण म छात्र सघ के कार्यालय के भीतर छात्र सघ के ही कथित नेताओ द्वारा एक जरूरतमन्द लडकी को नौकरी दिलाने के झासे म उसकी आबरू पर हमला करना। केस चलन परअपराधी पकडे तो गए पर मुकदमे के दौरान जिस तरह बलात्कार प्रक्रिया की एक एक बात को लेकर वहा जुटी तमाशाइयो की भीड के सामने लडकी की छीछालेदर की जाती थी, जिस तरह अदालत म बयान देते समय लडकी फूट फट कर रो पडती थी और जिस तरह इस घटना की रिपोर्टिंग के एक-एक विवरण को लोग चटखारे ले-लेकर पढते थे, बलात्कृत छात्रा की उस पीडा की कहानी मथुरा केस या बागपत के माया त्यागी केस से कुछ कम न थी।

—राजधानी मे ही दो प्रतिभाशाली छात्रा (भाई-बहन गीता और सजय) के लिफ्ट मागन पर गुडा द्वारा उनका अपहरण। भाई के सामन ही बहन से बलात्कार की चेष्टा। भाई बहन द्वारा जान पर खेल कर गुडो का कडा मुकाबला। पुलिस खोज म तीसर दिन झाडियो के पास दोनो बच्चो की क्षत विक्षत लाशें मिलना। इस ददनाक गीता सजय काड न भी एकबारगी तो राजधानी ही नही, पूरे देश को झकझार कर रख दिया था। ससद म भी कई दिन तक इस काड की गूज रही। बाद म अपराधिया म बहन की रक्षा मे शहीद होन वाले भाई सजय को मरणोपरात राष्ट्रीय सम्मान से विभूषित किया गया।

—दिल्ली की जे० जे० कालोनी सिद्धार्थ नगर म रहने वाली सुनीता की यह दुखभरी कहानी यह लडकी अपनी मा क साथ समीप के नर्सिंग होम म काम करती थी और मा के साथ ही आती जाती थी। या उस नर्सिंग होम का चौकीदार घर छोड जाना था। एक दिन रात के आठ बजे अकेली वह घर लौट रही थी कि उसी दिन उसके साथ दुघटना घट गई। रास्त म चाय की दुकान पर बैठा एक बदमाश उस जबरदस्ती खीच कर दुकान के भीतरी भाग म ले गया। उसे मार पीट धमका कर उसके साथ दो व्यक्तियो द्वारा बलात्कार किया गया। लडकी क देर तक घर न लौटन पर घरवाला को चिता हुई तो नर्सिंग होम से पूछताछ की गई। पर लडकी वहा स जा चुकी थी। रात दस बज के बाद जब घर लौट कर लडकी न रो रोकर आपबीती सुनाई तो घरवाल उस लेकर नर्सिंग होम पहुच। वहा लडकी की डाक्टरी जाच करन पर खरोचो और बाहरी भीतरी चोटा क निशान स उसके द्वारा शक्तिभर प्रतिरोध की बात सिद्ध भी हो गइ।

राधियो ने लडकी को बाहर कुछ बताने पर मार डालने की धमकी देकर मना कर दिया था इसलिए शराब पीकर वे घर म ही निश्चितता से सोए मिले और पकड लिए गए। उनम मे एक तो पुलिस रिकाड म दज पुराना अपराधी था। फिर भी जब व जमानत पर छूट आए तो विरोध मे समाजसेवी महिलाओ, पत्रकारो और नर्सिंग होम के डाक्टरो न यह मामला उठाया। उन्ही दिनो सुना गया कि उस्ट लडकी के घर आने जाने वाले हर व्यक्ति पर निगाह रखी जाने लगी और उन्ह मामला आन्दोलन के रूप मे उठान पर तरह तरह की धमकिया दी जाने लगी। शायद पुलिस की मिलीभगत रही हो !

और रक्षक से भक्षक बनी स्वय पुलिस के ही ये कारनामे

—पजाब के सगरूर जिले म एक नवयुवती के साथ बलात्कार के अभियोग म तीन पुलिस कास्टेबुलो की गिरफ्तारी।

—लखनऊ के एक थान म एक शिक्षित महिला के साथ थानदार व तीन सिपाहियो द्वारा बलात्कार।

—राजधानी के जयप्रकाश नारायण अस्पताल म एक रोगिणी के कारणवश रात को वहा रुकने और अस्पताल के लान म सो जाने पर एक पुलिस सिपाही द्वारा उसे आधी रात उठा जबरन एक एकान्त स्थान पर खीच ले जाना व उसके साथ बलात्कार करना। सुबह उस रोगिणी द्वारा समीप के दरियागज थान मे रिपोट दज करान पर उस सिपाही की गिरफ्तारी।

—लाज के लुटेरे पुलिस कमचारियो के आतक से छिप कर भागी दो सुदर हरिजन युवतियो राजवती और त्रिवेणी की करुण कहानी २७ अप्रल, १६८० के 'नव भारत टाइम्स मे इस प्रकार प्रकाशित हुई थी—इन दोनो युवतियो को क्षेत्र के आर० ए० सी० (राजस्थान आर्म्स कास्टेबलरी) के जवान अपने अफसरो को खुश करने के लिए ले जाना चाहते थे। इस काम के लिए उन्होने उन दोनो की सास को पटा लिया था। सास के मारने पीटने और खाना बद करन पर भी वे नही मानी और जुल्म बरदाश्त न कर घर से भाग अपने पिता के गाव पहुच गइ। वहा जाकर उन्होने अपने पतियो के खिलाफ तलाक की अर्जी देत हुए उसमे उन जवानो के खिलाफ सब कुछ लिख दिया। तो इस सच की सजा उन्ह कैसे न मिलती ! राजवती व त्रिवेणी जेवर लेकर भागी हैं, ऐसी रिपोट दोनो के पतियो स लिखवा पुलिस न उनके भाइ, जीजा और मामा को पकड लिया। उन्ह गाव के पुलिस थाने मे बुलवा खूब मारा पीटा गया और मजबूर किया गया कि वे उन दोनो स यह लिखवा दें कि उन्ह किसी पुलिस वाले या आर० ए० सी० के जवान स कोई शिकायत नही है। इन्कार करने पर उनका भाई दुल्ली तो शायद पुलिस की मार खात-खात वही मर गया। लोगो की उत्तेजित भीड उसकी लाश मागती रही, लेकिन पुलिस ने इस मामले पर पर्दा डालते हुए कहा कि लाश उन्ह सडक के किनारे मिली थी, जिसे गश्ती पुलिस के सिपाही उठा कर लाए थे। इस झूठ से लोग उत्तेजित हो उठे। वे जाच की माग करते रहे पुलिस उन पर लाठिया बरसाती रही। पुलिस की बर्बरता का यह नगा नाच देख कर गाव वाले सहम गए। सुना गया कि दोनो

दुखनिया को साथ लेकर उनके परिवार वाले और साथ में गांव के कुछ अन्य हरिजन लोग भी पुलिस के आतंक से डर गांव छोड़ कर भाग गए। यह फरवरी १९८ की घटना है।

—इसके बाद मार्च १९८ के शुरू में ही पुलिस-अत्याचार की यह शर्मनाक घटना प्रकाश में आई। सुबह आठ बजे पटना में गोलघर पुलिस चौकी पर दो पुलिस कर्मचारियों जगन्नाथ सिंह और सल्लन तिवारी ने एक रिक्शा चालक की पत्नी बबिता देवी के साथ बलात्कार कर अपने पुरुषत्व के अहम् को तुष्ट किया। पुलिस-कर्मचारी निलंबित किए गए गिरफ्तार नहीं। तो मगध महिला महाविद्यालय की छात्राओं ने बबिता देवी को साथ लेकर महिलाओं पर इस अत्याचार के विरुद्ध जुलूस निकाला जो कला महाविद्यालय पहुंच कर मैदान की एक बड़ी सभा में बदल गया। इस कांड की डाक्टरी रिपोर्ट पर आपत्ति उठाते हुए छात्राओं का एक प्रतिनिधिमंडल जिलाधिकारी के पास पहुंचा, पर वह भीतर नहीं गया अधिकारी को बाहर आने के लिए मजबूर किया गया। इस जुलूस में, 'बबिता तुम अकेली नहीं हो, हम सब तुम्हारे साथ हैं।' के नारों से शोभित नारी जागृति की इस लहर का विस्तृत विवरण २७ अप्रैल और ३ मई, १९८ के दिनमान में प्रकाशित हुआ था।

—बलछी, नारायणपुर, पारसबीघा, कफल्टा में हुए पुलिस अत्याचार और सामूहिक बलात्कार की दुर्दान्त घटनाओं ने तो सारे देश को हिलाकर रख दिया था। शायद ही कोई पत्र बचा होगा, जहां अंधी कामुकता और नृशंस बर्बरता के ये लोमहर्षक विवरण न छपे हों। उन्हें दुहराने की आवश्यकता नहीं। सरकारी सूचनाओं और गैरसरकारी आंकड़ों में तालमेल न होने की बात जाने दें, तो भी क्या इन अमानवीय घटनाओं को नजरअंदाज किया जा सकता है? नारायणपुर में तो दस वर्षीय बालिकाओं से लेकर पचपन साठ की प्रौढ़ाओं तक किसी को नहीं बख्शा गया था। सास ससुर के सामने उनकी पुत्र वधुओं की इज्जत लूटना, एक एक परिवार की सभी बेटियों, बहुओं, मांओं, सासों के साथ सामूहिक बलात्कार, घर के दरवाजे तोड़ कर सशस्त्र सी० आर० पी० और बी० एस० एफ० के जवानों का घर में घुसना और बारी बारी से सभी का अपनी प्यास बुझाना, चार दिन की सद्य प्रसूता को भी अपनी कामुकता का निशाना बनाना और बहुओं को प्रतिरोध करने पर प्रतिशोध की आग में झोंक कर, मार मार कर लाश में बदल देना आदि बहुत शर्मनाक ये घटनाएं बंगलादेश युद्ध की सामूहिक बलात्कार की बर्बरता की याद दिलाती है। बाद में नारायणपुर कांड पर बैठाए गए जांच आयोग की रिपोर्ट में भी पुलिस के इस कर्म की भर्त्सना की गई थी व उसे दोषी ठहराया गया था।

—रमीजा बी, प्रेमा, शकीला और ऐसी न जाने कितनी सताई गई नारियों की दास्तानें पत्र पत्रिकाओं में 'सत्यकथा' के रूप में या वैसे आए दिन छपती रहती हैं। रमीजा बी—पुलिस हिरासत में दम तोड़ देने वाले अहमद हुसैन की पत्नी। अपनी इस खूबसूरत पत्नी को साथ लेकर वह रात को सिनेमा का अंतिम शो देखने गया था कि गश्ती सिपाहियों की रमीजा पर नजर पड़ गई। सिपाहियों ने पति पत्नी दोनों को आवारागर्दी के आरोप में थाने ले जाकर मारा पीटा। पति ने हैदराबाद के उस थाने में दम तोड़ दिया। पत्नी के साथ चार सिपाहियों ने बलात्कार किया। मिसेगन हालत

म जब उसने अपने हाथा से स्वय को ढकने की कोशिश की तो जलती सिगरेट स उसके हाथ दाग दिए गए। यह सारा काड रोशनी म हो रहा था इसलिए रमीजा बी ने बाद म सिपाहिया को शिनाख्त परेड म पहचान लिया। इस काड के तूल पकडने पर सरकार को जाच आयोग बिठाना पडा था और जाच म बलात्कार का आरोप सच पाए जाने पर सबद्ध अपराधी मुअत्तल किए गए थे। पर रमीजा को जो अपनी अस्मत और पति दोना से हाथ धोना पडा, उसकी क्षतिपूर्ति ? प्रेमा—मुरादाबाद के एक रिक्शा-चालक की पत्नी। उसके पति रिक्शा चालक को शराब पीने के जुम मे पकड लेन के बाद प्रेमा को थाने बुलाया गया। फिर थानदार उसे जबरदस्ती थाने के पीछे की बरक मे ले गया। उसके साथ स्वय तो बलात्कार किया ही, अन्य सिपाहिया को भी बाद म उसके पास भेज दिया। जब वह सहते सहते और न सह पाने पर बेहोश हो गई तो उसे बेहोशी की हालत म उसके घर भिजवा दिया गया। दूसरे दिन उसके पति के छूट कर घर आने पर जब प्रेमा ने रो रोकर यह सब बताया तो रिक्शा चालका और मजदूर यूनियना ने विरोध मे हडताल कर जलूस निकाला। पत्रकारा न भी इस प्रश्न को उठाया। पर प्रेमा एक बदचलन औरत है' कह कर सारे काड पर परदा डाल दिया गया। शकीला दुर्भाग्य से एक पाकेटमार हनरी की पत्नी थी। हेनरी अपनी बीवी और साले के साथ हैदराबाद से कुछ दूरी पर स्थित एक धार्मिक स्थान की यात्रा पर गया। वहा पत्नी और साले को एक धर्मशाला म छोड अपने काम स बाहर निकल गया। तभी वह पाकेटमारी के आरोप मे पकड लिया गया। अदालत न उस जुर्माने का दड दिया तो किसी से उसका जुर्माना भरवा कर पुलिस ने उसे छुडवा लिया और दोबारा पकड कर थाने ले गई। पूछताछ मे उसने जब अपनी पत्नी और साले के धर्मशाला म ठहरने की बात बताई तो पुलिस जाकर उन दोना को भी पकड लाई। पति हवालात म था, पत्नी को थाने के पिछले भाग मे एक कमरे मे बद रखा गया। पुलिस अधिकारी उससे नौकरानी का काम लेते थे और उसके साथ मनमानी भी करते थे। शकीला को हवालात मे पति से मिलने नही दिया गया। अन्त मे तग आकर उसने कोई विषैली चीज खाकर आत्महत्या कर ली।

ये तीनो दर्दनाक कहानिया सत्यकथा के जुलाई नवबर ७९ व अप्रल ८० के अको मे छपी थी। इन गरीब, असहाय नारियो को अनेक बार किस तरह पति का कर्ज चुकाने या आर्थिक मजबूरी की अन्य स्थिति मे अधिकारियो का समपण करना पडता है और किस प्रकार उनके पति सुविधाओ के मोह से अधिक अधिकारी द्वारा अन्दर करा दिए जाने के भय से उस समपण का चुपचाप कडवे घूट की तरह गले के नीचे उतार लेते हैं, इस पीडा की एक झलक अपनी पूरी मार्मिकता के साथ 'धर्मयुग' २१ सितबर, १९८० के अक मे 'दरोगा जी स ना कहियो' कहानी मे मिलती है।

—१८ जून १९८० को बागपत मे जो खुले आम हत्या काण्ड और बलात्कार-काण्ड हुआ उसकी भयकरता ने तो एक बार फिर नारी सगठनो को पुलिस अत्याचार के विरुद्ध प्रबल मोर्चा बनाने के लिए मजबूर कर दिया। इस घटना ने एक बार फिर ससद का ध्यान एसी वारदाता की बढती सख्या की ओर आकृष्ट किया। बडौत के एक

प्रत्यक्षदर्शी श्री श्याम के 'नवभारत टाइम्स' मे छप पत्र के अनुसार 'मैंने जो अपनी आखो से देखा, वह न देखा होता तो अच्छा था। कस्बा बागपत म १८ जून १९८० को दिन के एक बजे पुलिस का वह नगा नाच देखने को मिला कि शर्म के मारे सिर झुक गया। एक परिवार अपनी रिश्तेदारी मे जा रहा था। वे लोग गाडी बागपत म रोक कर नाश्ता करने लगे। परिवार की एक महिला गाडी मे बैठी थी। एक पुलिस अधिकारी सादी वर्दी मे आया तथा महिला के कधे पर हाथ रख कर पूछा 'कहा जा रही हो ?' इस पर महिला ने उत्तर दिया आप पूछने वाले कौन होते हैं ?' महिला के पारिवारिक सदस्य भी आ पहुचे। बात बढी। तब पुलिस का आदमी यह कह कर चला गया कि 'पाच मिनट रुको, तुमसे अभी निपटते है।' थोडी देर बाद कई पुलिस वाले आए। पहला गोली पुलिस वालो ने एक स्टेट बक की दीवार पर मारी। उसके बाद एक एक करके उन तीनो प्राणियो की जान ली। बाद म जब इसस भी सब्र नही हुआ तो उस औरत को गाडी से खीच कर नगा किया। सडक पर घसीट कर चौराहे पर लाए तथा उसके साथ ऐसा अभद्र व्यवहार किया, जो कोई भी मनुष्य कहलाने वाला नही कर सकता। इससे उसका पाच माह का गर्भ वही सडक पर गिर गया। सिपाही, जिनकी लडकियो की उम्र उस लडकी से कही ज्यादा होगी चौराहे पर वहशी दरिन्दा जैसा व्यवहार कर रहे थे। देखने वाले दग रह गए। पुलिस चिल्ला रही थी, यह डकैतो की सरगना है' इस कारण जनता कुछ समझ न पाई। इस काण्ड के बाद बागपत की जनता क्रोध और अपमान से जल रही है।"

इस घटना की जाच के लिए ससद सदस्या के एक प्रतिनिधि-मडल के साथ गृहमत्री को भी बागपत जाना पडा, क्याकि ससद म सदस्यो द्वारा गहरी चिता प्रगट कर ऐसी माग उठाई गई थी। (बाद म इस विवाद के तूल पकडने पर सरकार को बागपत हत्याकाड और माया त्यागी काड पर जाच आयोग बैठाना पडा था। आयोग की जनवरी १९८१ म प्रकाशित रिपाट मे पुलिस को दोषी ठहराया गया।) लोकसभा अध्यक्ष ने गृहमत्री को आदेश दिया कि वे देश के विभिन्न भागो स प्राप्त बलात्कार की रिपोर्टों पर बयान दें। इसके बाद २७ नवम्बर ८० को ससद म सूचना दी गई थी कि १९७५-७८ के चार वर्षो म देश मे बलात्कार के १४ हजार ८८२ मामले सामन आए। यह भी सुझाव आया कि ससद सदस्या की एक समिति बनाई जाए, जो महिलाआ के साथ दुराचार के खिलाफ कडा कानून तैयार करे। प्रधान मत्री ने ससद सदस्यो की चिता को उचित बताते हुए ससद के उसी सत्र म एक विशप विधेयक लाने की घोषणा की। आश्वासन के अनुसार यह विधेयक सत्र के अन्तिम दिन ससद मे विचाराथ पेश भी कर दिया गया।

लेकिन ससद मे और ससद के बाहर सडका पर आम सभाआ म जब य जोरदार विरोधी आवाजें उठ रही थी, ऐसी वारदातें तब भी घट रही थी और निरतर पत्रो मे छप भी रही थी। कुछ बानगिया

—२१ जून, १९८० की एक खबर मे बाराबकी के निकट कुरसी पुलिस थाने के दो कास्टेबलो को इसी थाने मे स्थित पीर नगर गाव की एक हरिजन महिला के स

बलात्कार के बाद उसकी हत्या के आरोप में गिरफ्तार किया गया। महिला के कथित ठग पति को गिरफ्तार करने के लिए दोनों कान्स्टेबल १५ जून को उनके घर गए थे। पति फरार हो गया था। उसकी अनुपस्थिति में दोनों ने उस पर निरन्तर तीन दिन तक अमानवीय अत्याचार किया। चौथे दिन उसकी मृत्यु हो गई। और पुलिस कांस्टेबलों ने उस आत्महत्या का मामला सिद्ध करने के असफल प्रयास में शव को फांसी की तरह लटका दिया। इस घटना से सारे गांव में आतंक छा गया था।

—६ जुलाई ८० को प्रकाशित एक समाचार ४ जुलाई को मध्यप्रदेश विधान सभा में राज्य के मुख्य मंत्री को बयान देने पर मजबूर किया गया और उन्होंने भी इस काण्ड को बर्बर बताया—दुर्ग की नन्दिनी खदान में काम करने वाली ३३ वर्षीय रुक्मणि के साथ घटी वह शर्मनाक घटना इस प्रकार है एक कामगर महिला फूलमती पर उसके अफसर, जिसके घर वह नौकरानी का भी काम करती थी, ने घर से जेवर चोरी करने का इल्जाम लगाया। थाने में फूलमती की जम कर पिटाई हुई। जेवर उसने नहीं चुराये थे, पर जान बचाने के लिए उसने अपनी एक रिश्तेदार रुक्मणि का नाम लेते हुए कहा कि जेवर उसके घर रखे हैं। इसके बाद रुक्मणि उसका पति व उसका १८ वर्षीय किशोर बेटा थाने में बुलवाये गये। जब पूछताछ और मारापीटी से बात नहीं बनी तो महिला पुलिस सब इन्स्पेक्टर एल्डा मार्टिस और एक अन्य स्त्री सिपाही द्वारा तलाशी लेने के लिए रुक्मणि को निवस्त्र किया गया। उसकी उसी हालत में एक पुलिस अफसर ने आकर उसके पेट पर लात मारी और उसका गर्भस्राव आरंभ हो गया। बेचारी रुक्मणि तड़प कर जमीन पर लोटने लगी। उसी हालत में उसके किशोर बेटे को भीतर बुला कर उसे मां के साथ बलात्कार करने के लिए कहा गया। बेचारा बालक यह दृश्य देख कर हक्का बक्का रह गया। उसके इन्कार करने पर उस पर मार पड़ी। तभी बाप को भी भीतर बुला कर बुरी तरह पीटा गया। इतने में खदान से और लोग आ गए। तब जाकर यह पिटाई और नंगई रुकी। बाद में यह बात भी खुली कि जेवर चोरी ही नहीं गए थे, उस शराबी अफसर ने कहीं रेहन रखे थे और बेचारे निर्दोष कामगरों पर यह सारा जोर जुल्म केवल उस वहशी अफसर और बर्बर पुलिस की मिली-भगत से ही ढाया जा रहा था।

—६ जुलाई ८० को छपा एक समाचार उन्नाव जिले के नवलगंज गांव में पुलिस के दो सब इन्स्पेक्टरों द्वारा एक १६ वर्षीय हरिजन लड़की से बलात्कार। पुलिस द्वारा रिपोर्ट दर्ज करने से इन्कार करने पर मजबूर पिता ने घटना की सूचना अधिकारियों को पत्र द्वारा दी। तब एक विधायक श्री मुख्तार अनीस ने दोषी पुलिसकर्मियों के विरुद्ध मुकदमा चलाने की मांग उठाई।

—७ जुलाई, ८० को प्रकाशित एक समाचार के अनुसार बंगला देश के जसोर जिले की रहने वाली २५ वर्षीय श्रीमती अमीना खातून जब बम्बई जाने के इरादे से अपनी चार वर्षीय पुत्री के साथ सियालदा रेलवे स्टेशन पर इधर उधर भटक रही थी तो पुलिस का एक सहायक सब इन्स्पेक्टर उसे बहाने से नीम्टा पुलिस थाने ले गया और थाने की छत पर दो सहायक सब इन्स्पेक्टरों ने उसके साथ दुराचार किया। फिर

उसे थाने से बाहर निकाल दिया गया। स्थानीय कार्यवाहक पुलिस-अधीक्षक के बयान के अनुसार, एक स्थानीय सामाजिक सगठन के लोगो ने महिला को निरुद्देश्य भटकते देखा तो उस थाने पहुचा दिया जहा एक कास्टेबुल ने उसके साथ कथित दुराचार किया। लेकिन उक्त सामाजिक सगठन के सदस्य जब उस महिला के बारे म पूछताछ करने थाने गये तो उसने रोते हुए सारा घटनाक्रम कह सुनाया। विवरणो मे अतर होते हुए भी बलात्कार की घटना सच पाई गई और पुलिस अधीक्षक द्वारा सबधित तीनो पुलिस-कर्मियो को निलम्बित करन और उन्हे गिरफ्तार करने के आदेश दिए गए।

—१३ जुलाई, ८० को भारतीय जनता पार्टी की उपाध्यक्ष श्रीमती विजयाराजे सिंधिया बादा म पत्रकारो को निम्न रिपोट देते हुए रो पडी—बादा जिले के गोइदा गाव म २६ जून की रात सादे वेश म डकैतो ने आक्रमण कर पुरुषो को एक ओर ले जा बाध दिया और १६ १७ महिलाओ को निवस्त्र करके रात की चादनी म कई घटे तक जबरदस्ती नचवाया। तीन महिलाओ को झोपडियो से अलग ले जाकर उनके साथ कई लोगो ने सामूहिक बलात्कार किया। इस गाव मे आदिवासी 'कोल' रहते है। घटना के बाद गाव वालो की शिकायत पर पुलिस वहा जाती रही, पर उसने अपने रिकार्ड मे इस बारे म कुछ भी दर्ज नही किया। बादा के पत्रकारो न श्रीमती सिंधिया के नेतृत्व मे गई एक जाच समिति को बताया था, 'इस घटना की सही रिपोर्टिंग करने के कारण हम स्थानीय पुलिस के गुस्से के शिकार बने हुए हैं और आशका है कि हम नुकसान पहुचाया जाएगा।' पत्रकारो की इस आशका के आधार की पुष्टि करती है इसके बाद घटने वाली घटनाए—पत्रकार-पत्नी छविरानी बलात्कार-काड। वाराणसी मे सपादक पर हमला। गोरखपुर मे पत्रकारो की पिटाई। लखनऊ के दैनिक 'पायोनियर' के मुख्य उपसपादक श्री असद सिद्दीकी की हत्या और जगह जगह सवाददाताओ को मिलने वाली धमकिया। जाच समिति ने अपनी रिपोट मे इस घटना के अलावा बादा जिले की ही एक अन्य घटना की ओर भी ध्यान खीचा—२३ जून की रात ६ बजे छ व्यक्ति सशस्त्र पुलिस की वर्दियो मे हरिजनो के एक छोटे से गाव कोडिनपुरवा सलैया मे, जिसमे सिर्फ नौ परिवार रहते हैं, गए। उन्होंने गाव के सभी स्त्री-पुरुषो को घरो स बाहर यह कह कर निकाला कि उनके घरो म हथियार छुपे हैं जिनकी उन्हें तलाशी लेनी है। फिर गाव वालो को समीप की पहाडी की ओर ले गए। पुरुषो को मारा-पीटा, फिर छोड दिया। पर महिलाओ को आधी रात तक रोक कर रखा और उनके साथ बलात्कार किया। जाच समिति की सदस्याओ द्वारा पूछताछ करन पर वे महिलाए रो पडी, फिर बोली, 'हमारे मुह से क्या कहलवाती हैं! बस इतना ही समझ लें कि वे कोई हमारा मुह देखने के लिए तो हमे ले नही गए थ!' रिपोट के अनुसार, 'जिस दिन समिति वहा पहुची उस दिन भी पुलिस के अधिकारी और कई सिपाही वहा मौजूद थे। गाव के लोग उनके भय से कुछ बताते हुए हिचकते थे।' उत्तरप्रदेश के बादा जिले की इन घटनाओ की उच्चस्तरीय जाच की माग उठाने पर ससद मे इनकी गूज भी उठी थी।

—१७ जुलाई ८० को लोकसभा मे विपक्षी सदस्यो ने हरियाणा के सिरसा जिले की मडी डबवाली मे एक महिला के साथ पुलिसकर्मियो द्वारा बलात्कार और

उसके बाद जीप से गिरा कर उसकी हत्या कर सबूत मिटाने की कोशिश का मामला बार-बार उठाने का प्रयास किया। इस हगामे के कारण सदन की कार्यवाही बीस मिनट तक बद रही। अध्यक्ष ने यह मामला राज्य का विषय कह कर उस पर स्थगन प्रस्ताव अमान्य कर दिया। लेकिन हरियाणा के मुख्य मत्री ने डबवाली की इस घटना की और उस पर रोष व्यक्त करने के लिए थाने पर जुटी भीड पर गोली काण्ड की न्यायिक जाच के आदेश जारी कर दिए। इस गोली काण्ड मे कई लोग घायल हुए थे।

रिपोर्ट के अनुसार—१३ जुलाई की रात मडी डबवाली के सब जज के अदली श्री नथे सिंह और उसकी पत्नी को उसी न्यायालय का नायब कोर्ट रिछपाल सिंह घर से सिनेमा दिखाने के बहाने ले गया। रास्ते मे थाने के पास बने एक क्वार्टर मे, जहा उम्मेद सिंह नायब सिपाही पहले से बैठा हुआ था, वह रुका। फिर रिछपाल नथे सिंह को फोन करने के बहाने अपने साथ बाहर ले गया। पीछे उम्मेद सिंह नायब सिपाही ने नथे सिंह की पत्नी के साथ बलात्कार किया। जब वे दोनो लौट कर आए तो नथे सिंह की पत्नी अधनग्न अवस्था मे चीखती चिल्लाती सिपाही को चप्पलो से मार रही थी और वह उसके साथ जबरदस्ती करने म जुटा था। यह देख कर नथे सिंह रिछपाल सिंह पर टूट पडा। फिर तुरत पत्नी को लेकर थाने पहुचा, लेकिन उसकी प्रार्थना पर रिपोर्ट नही लिखी गई। बडी मुश्किल से उसने उप पुलिस अधीक्षक से सपर्क किया। तब रिपोर्ट तो लिख ली गई, पर उसकी नक्ल देने से फिर भी साफ इकार कर दिया गया। रात के ग्यारह बजे थानेदार ने उस महिला की डाक्टरी जाच का आदेश दिया। लेकिन अस्पताल पहुचने पर डाक्टर न पुलिस रिपोर्ट की नक्ल मागी। रात दो बजे वह पत्नी को साथ लिए नक्ल लेने के लिए फिर थाने पहुचा, जहा से उन्ह पुलिस का एक सहायक सब इस्पेक्टर तथा तीन सिपाही जीप म बैठा कर अस्पताल के लिए रवाना हुए। जब वे लोग दोबारा अस्पताल पहुचे तो डाक्टर न यह कह कर जाच से इकार कर दिया कि वह छुट्टी पर है। पुलिस फिर नथे सिंह और उसकी पत्नी को बिठा कर वहा से चल पडी। रास्ते म पुलिस चौकी स एक मुलजिम को भी जीप मे बैठा लिया गया। कुछ देर बाद नथे सिंह को पत्नी से अलग कर अगली सीट पर भेज दिया गया और फिर थोडी दूर जाकर सिपाहियो ने शोर मचा दिया, 'गिर गई, गिर गई'। जब जीप रुकी तब नथे सिंह को पता चला कि उसकी पत्नी जीप मे नही है। थोडा पीछे लौट कर देखा तो वह सडक पर बेहोश पडी थी और उसके सिर से खून बह रहा था। उसे तुरत डबवाली अस्पताल ले जाया गया, जहा उसे मृत घोषित कर दिया गया।

जाहिर था कि इस महिला शीला की मौत जीप से गिर कर नही हुई। रिछपाल सिंह और बलात्कारी उम्मेद सिंह के जुर्म को छिपाने के लिए उसे मार डाला गया। इस काण्ड पर रोष व्यक्त करने के लिए भी लगभग पांच हजार लोगो की भीड पुलिस थाने पर इकट्ठी हुई, जिसे तितर बितर करने के लिए न लाठी चार्ज हुआ, न अश्रु गैस छोडी गई सीधे गोली चला दी गई। इस गोली-काण्ड मे मजिस्ट्रेट के आदेश के बिना जिस तरह पुलिस न मनमाने ढग स काम लिया और उसम जितने लोग घायल हुए, उससे इस घटना की जांच के आदेश जारी हुए और मुख्य मत्री को ऐन मौके पर अपनी विदेश

यात्रा रद्द करनी पडी। बाद मे मार्च १९८१ को प्रकाशित जाच आयोग की रिपोर्ट मे पुलिस द्वारा डबवाली काण्ड मे भी नथे सिंह की पत्नी शीलादेवी की हत्या के षडयन्त्र की पुष्टि की गई।

मध्यप्रदेश के मुरैना कस्बे मे भी चोरी के आरोप मे पकडी गई एक स्त्री को अपराध स्वीकार कराने के लिए उस पर इसी तरह के जुल्म ढाने की रिपोर्ट मिली थी। पर विधानसभा मे बयान देते समय मत्री महोदय ने कहा कि महादेवी नाम की उस स्त्री के साथ बलात्कार नही हुआ, केवल उसे पीटा गया उसके वस्त्र फाड कर उसे नगा किया गया और फिर उसकी योनि म मिर्चें डाल दी गईं। गोया यह कृत्य बलात्कार से कम है या मामूली बात है।

इस प्रकार दो सप्ताह के भीतर ही स्त्रियो पर पुलिस सेना के जवानो गुडो, समाज के प्रभावशाली लोगो आदि द्वारा होने वाले अत्याचारो के तीन दजन से ऊपर मामले प्रकाश मे आए थे। ('दिनमान' २७ जुलाई, २ अगस्त १९८०) छुपे हुए या अप्रकाशित रह जाने वाले मामले कितने रहे होगे, इसका अदाजा उपरोक्त घटनाओ की भयानकता के सदर्भ म सहज ही लगाया जा सकता है।

इसके बाद अक्तूबर, ८० मे कटक के उडिया पत्र 'प्रगतिवादी' के सवाददाता श्री नवल किशोर महापात्र की पत्नी छविरानी की बलात्कार के बाद हत्या ने तो उन सभी बुद्धिजीवियो के मुह पर जैसे तमाचा जड दिया जो इन घटनाओ को वर्ग सघर्ष या दमितवासना के विस्फोट के साथ जोड तटस्थ मुद्रा अपनाए रहते है, अधिकारो की माग को दबाने के लिए, वाक् स्वातत्र्य और न्याय का गला घोटने के लिए सिर उठाती व्यापक हिंसा को नही देख पाते।

छोटी बच्चिया भी बख्शी नही जाती

जब स्थिति इस सीमा तक पहुच जाए कि छोटी छोटी बच्चिया भी दुराचारियो द्वारा बख्शी न जाए तो विरोधी आदोलन, सरक्षण की माग और इन मामलो की ससद मे गूज पर कोई आश्चर्य नही होना चाहिए। इधर कई समाचारो मे प्रौढो द्वारा परिवार की या पडोस की छोटी बच्चियो के साथ बलात्कार की घटनाए भी निरतर प्रकाश मे आ रही हैं

—२३ जून १९८० की मेरठ की एक घटना है विद्यालय परिसर के शिक्षिका-निवास मे रहने वाली एक अध्यापिका कार्यवश बाहर जाने पर अपनी सात वर्षीय बच्ची को दूसरी अध्यापिका के घर छोड गई। सयोग से उस अध्यापिका को भी उस दिन एक विवाह मे जाना पडा। घर पर केवल उसका पति था। उसने बच्ची को अकेला पाकर उसके साथ दुराचार किया। लडकी के पीडा से चिल्लाने पर उसका मुह बद कर दिया गया था।

—२ मई १९८० को नवभारत टाइम्स' म एक ही दिन मे दो समाचार प्रकाशित हुए पहले म दिल्ली के एक ५६ वर्षीय प्रौढ को कुछ समय पूर्व ढाई साल की बच्ची के साथ किए गए बलात्कार के जुर्म म एक वर्ष (?) के कठोर कारावास की सजा सुनाई

गई थी। दूसरे मे ताजपुर गाव की नौ साल की बच्ची के साथ पडोसी प्रौढ़ द्वारा बलात्कार की सूचना थी। बच्ची इसके बाद अपन घर म मृत पाई गई थी और हत्यारा बलात्कारी फरार हो चुका था।

तीनो लामहषक घटनाए ! मई-जून के दो महीना मे ही दिल्ली म व उसके आसपास घटित और वह भी केवल प्रकाश म आने वाली।

समस्या-स्तम्भो के माध्यम स मेर पास आने वाले प्रतिमाह सकडा पत्रा म स अनेक पत्रो म भी घरा स छोटी बच्चिया के अपन ही चाचा, मामा, पडोसी, पिता, भाई, भाई के दोस्त आदि स भय खाने की और उनके दुर्व्यवहार-दुराचार की जो शिकायतें मिलती हैं, उनसे भी इस बात की पुष्टि होती है कि अब छोटी बच्चियो का भी न केवल घरो स अकेले बाहर निकलना निरापद नही रहा, घरो मे भी उन्हें रिश्तेदार या पडोसी पुरुषा के भरोसे अकेला नही छोडा जा सकता। यद्यपि पिता, भाई वाले मामले अपवाद रूप मे ही है, पर घरो मुहल्लो म इन अपवादा की बढती सख्या चिंतनीय है। अपराध क्षेत्र म तो ये मामले तेजी से बढ रहे हैं। जसे

—दिल्ली यमुना पार कृष्ण नगर मे सुरह नगर निगम स्कूल मे पढने जाने के लिए घर स निकली एक बालिका को कुछ गुडे उठा कर एक सुनसान जगह म ले गए और कुकृत्य करने के बाद उसे बेहोशी की हालत मे वही छोड गए। दो घटे बाद उसे अस्पताल मे भर्ती कराया गया।

—नई दिल्ली कीर्ति नगर स्थित एक मदिर के बाबा मोतीनाथ की साढ आठ वर्षीय बालिका के साथ बलात्कार करने के अभियोग मे गिरफ्तारी।

—१३ सितबर १६८० को इदौर मे १० वर्षीय बालिका से बलात्कार के बाद उसकी हत्या से उमडे जन-आक्रोश के कारण १६ सितबर को इदौर बद रहा। और इदौर बद के दूसरे दिन ही इदौर रेलवे स्टेशन पर एक खाली डिब्बे मे आठ वर्षीय बालिका के साथ बलात्कार का असफल प्रयत्न किया गया।

१८ अक्तूबर १६८० के एक समाचार के अनुसार, नई दिल्ली की वाल्मीकि बस्ती मे अपनी १५ वर्षीय पुत्री के साथ बलात्कार के प्रयत्न के आरोप मे एक पिता को गिरफ्तार किया गया। पिता ने शराब पीकर पहले पत्नी को मारपीट कर घर से बाहर निकाला, फिर दरवाजा बद कर पुत्री से बलात्कार की कोशिश म उसके कपडे फाड दिए। पुत्री द्वारा विरोध करने पर वह तेजाब से भरा एक मग उस पर उडेलने के लिए ले आया। पर पुत्री न झपट कर वह मग उसी के ऊपर फेंक दिया और दरवाजा खोलकर भाग निकली। तेजाब से बुरी तरह घायल पिता को अस्पताल म भरती होना पडा व बाद मे उसकी गिरफ्तारी हुई।

—७ दिसम्बर १६८० के एक समाचार म, अमरावती के पास जलगाव आरवी ग्राम की एक मजदूरनी की ६ वर्षीय बालिका को घर मे अकेली पा पडोस के ६० वर्षीय वृद्ध ने घर दबोचा। चीखें सुन कर पडोसियो ने वृद्ध को मारपीट कर पुलिस को सौंपा व बेहोश बालिका को सभाला।

—कुरुक्षेत्र के डी० एस० पी० ने चण्डीगढ के लोक निर्माण विभाग के एक

अधिकारी के घर से एक १३ वर्षीय बालिका को बरामद किया तो उसने पुलिस को बताया कि उसे उत्तर प्रदेश म कई जगह और कालका म घुमाया गया था। जगह जगह उसके साथ बलात्कार हुए जिनम बिजली विभाग का एक कमचारी भी शामिल था। लोक-निर्माण विभाग के इस अधिकारी के घर से पुलिस ने २० और २२ वष की दो बगाली युवतियो को भी खोज निकाला था। उनस पता चला कि उस अधिकारी का घर शारीरिक व्यापार व भ्रष्टाचार का अडडा बना हुआ था, जिसम कई छोटी लड कियां भी लाई जाती थी।

—ठीक ऐसा ही एक अडडा कुछ समय पूव नई दिल्ली की एक पोश कालोनी म, जहा विशेष रूप से कानून के सरक्षको का निवास है, एक कोठी के पिछले हिस्मे मे पकडा गया था, वह भी तब जबकि वहा गुडो की आपसी लडाई मे एक हत्याकाण्ड घट गया था।

ये स्कैंडल्स

तथाकथित प्रेम जाल मे फस कर या फसा कर पत्नी, प्रेमिका, प्रेमी क हत्या काण्ड की कहानिया भी आए दिन पत्रो मे प्रकाशित हो रही हैं। इनकी उत्तरोत्तर बढती हुई सख्या के साथ यह बात भी अब जैस आम हो चली है। यद्यपि नानावती काट विद्या जन हत्या काड, डा० गौतम को उसकी प्रेमिका द्वारा गोली मार देना पूर्णिमा सिंह और राष्ट्रीय पुरस्कार से सम्मानित दक्षिण भारतीय अभिनत्रियो शोभा और राधा की रहस्यमय मृत्यु जैस इक्का दुक्का काड ही पत्रो मे चर्चा का विषय बनते हैं, वह भी प्राय बडे घरो से सबधित होने के कारण।

नई दिल्ली मे ताज होटल की एक कमचारी युवती के चेहरे पर तेजाब फेंकने के जुम मे एक युवक को गिरफ्तार किया गया। सुरेश सुषमा काड भी पत्रा मे कम नही उछला। आए दिन होटला म, घरो मे हत्या और आत्महत्या के मामलो की छान बीन करने पर पता चलता है कि इनके पीछे प्राय ऐसे काड ही छुपे होते है। घरो मे स्त्रियो क जलने या जला दिए जाने के पीछे भी। इनके असली कारण कम ही जाहिर हो पाते हैं। साहित्यकारो और कलाकारो के घरो मे ही दूसरी पत्नी के रहने पर पहली पत्नी द्वारा स्वय को जला लेने की तीन घटनाए तो मैंने परिचित परिवारो मे स्वय देखी हैं।

पर ५ मई, १९८० को प्रकाशित एक समाचार तो बहुत ही चौंकाने वाला लगा। नई दिल्ली, राजौरी गाडन निवासी एक सत्तर वर्षीय वद्ध ने अपनी साठ वर्षीय पत्नी को इसलिए छुरा भोक दिया कि उसे पत्नी के चरित्र पर सदेह था। पढ कर सदेह हुआ कि यह भारत म ही घटित घटना है!

और ये छेडखानिया

इधर महानगरा मे, नेताओ की ठीक नाक के नीचे राजधानी म भी, नारी-अपमान और छेडखानियो की घटनाए जिस तेजी से घट रही हैं और जिस रूप मे घट रही हैं उससे भी स्थिति की गभीरता का अन्दाजा लगाया जा सकता है। कुछ उदाहरण हैं

—दिल्ली के रामलीला मैदान म रावण जलने के बाद भीड छटन के समय विभिन्न टोलियो म युवका का लडकिया पर टूट पडना। पुलिस और होम गाड भीड को ही नियन्त्रित करती रही और लडकियो से छेडखानी कर उन्हें अपमानित करने वाला को किसी ने नहो पकडा। यह शमनाक घटना देखकर एक दशक के मुह से निकला, 'ये आधुनिक रावण कब जलेंगे ?'

—खचाखच भरे काफी हाउस मे लडकियो की मेज पर सिगरेट का पकट रखा देख उन्ह भारतीय नारी पर एक भारी भरकम लेक्चर झाडने क बाद दो चाकूधारी गुडा द्वारा जलती सिगरेट एक लडकी के चेहरे पर रगडते हुए जल्दी स सीना फुलाए बाहर निकल जाना।

—भरी बस म एक छात्र द्वारा अपनी पसद की छात्रा को बगल में बैठने का आदश। लडकी द्वारा इन्कार करने पर बस से उतरन के बाद लडके का हाथ उसके गले की ओर बढना और हाथ झटक दिए जाने पर तिलमिलात लडक द्वारा लडकी के गाल पर चाटो की बौछार। उस समय बचाव के लिए लडकी न चेहरे को हाथो से ढककर सिर नीचा कर लिया। बाद मे चेहरे पर नीले निशान लिए उपकुलपति से शिकायत कर दी। लेकिन न तो घटना स्थल पर राहगीरो द्वारा लडके का बाल बाका किया गया, न ही उसे कालेज से कोई कडी सजा मिली।

—यूनिवर्सिटी स्पेशल बस मे एक छात्र द्वारा एक सीधी सादी छात्रा का कुरता फाडकर अपनी मर्दानगी का जौहर दिखाना। छात्र की इस कमीनी हरकत को आसपास के सभी छात्र छात्राओ द्वारा चुपचाप बर्दाश्त कर लेना। बडी उम्र के बस ड्राइवर व कडक्टर के चेहरे पर भी गुस्से या शम की जगह कुत्सित मुस्कराहट थी। शेप लडकिया दहशत खाकर चुप लगा गई थी और छेडखानी की शिकार लडकी अधनग्न हालत म बस अड्डे से चलकर कालेज तक आई थी। कालेज छात्रावास मे किसी लडकी से लकर उसने कुरता बदला। फिर प्राध्यापिका के सामने वह बिलख बिलख कर रोई। लकिन यह कह कर कि मामला उठाएगे तो गुण्डे उसे और परेशान करेंगे, बात को दबाना ही उचित समझा गया।

—एक प्रसिद्ध महिला कालेज के छात्रावास के पिछवाडे दूसरे कालेज के लडका द्वारा शराब के नशे मे नग्न होकर नाचना। इस लज्जाजनक घटना की चारों ओर भत्सना की गई थी।

—एक सभ्रात फशनेबुल कालोनी मे कालेज स लौटती एक छात्रा का दुपट्टा खीच साथ के पड की टहनी पर टाग दना और परशान छात्रा को देख निलज्ज युवको द्वारा ही ही करके हसना।

—कुछ मनचले लडको द्वारा दुकान पर खडी एक जवान महिला का बटुआ खीच उसकी आखो के सामने ही परे फेंक देना।

बस की भीड मे जानबूझ कर धक्का देना, लडकियो को दबोचना, उनकी बगल म हाथ डालना, स्त्रिया के ब्लाउज फाडना, उन पर फिकरे कसना, साइकिल या स्कूटर पर जाती हुई युवतियों को टक्कर मारकर गिरा देना जसी घटनाए तो जसे रोजमर्रा की

वात है ।

लेकिन ३१ दिसम्बर १६६७ की रात नई दिल्ली के कनाट प्लेस मे नववर्ष की पूर्व सध्या का उत्सव मनाते हुए, नशे म मदहोश युवको की टोलियो द्वारा स्त्रियो के साथ शर्मनाक आक्रामक व्यवहार करना, फिर गुण्डो द्वारा मोटरो पर पत्थर बरसा उन्हें रोक उनमे से स्त्रियो को खीचकर बाहर निकालना उनके कपडे फाडना जैसी जो गभीर घटनाए यदाक्दा घटती रहती हैं, क्या इन्ह मात्र छेडखानी की सज्ञा दी जा सकती है ? 'दिनमान' की भाषा मे 'रसिकता से बरजोरी तक' शारीरिक, मानसिक, सामाजिक उत्पीडन देने वाली छेडखानी की इन घटनाओ को नजरअन्दाज नही किया जा सकता। इन्हें यौन हिंसा या बलात्कार की ओर ले जाने वाली पहली सीढी कह सकते है। जिस *समाज मे छेडखानी की घटनाए रोकने के लिए पुलिस को विशेष शालीनता अभियान* चलाने की जरूरत पड जाए उस समाज की स्थिति सचमुच चिन्तनीय ही कही जाएगी।

दलित, विजित वर्ग की नारी पर दुहरी मार

शक्तिशाली वर्गों द्वारा दलित वर्गों की स्त्रियो के साथ व्यक्तिगत और सामूहिक छेडखानी तथा बलात्कार की घटनाए हर युग का ऐतिहासिक सत्य है। लेकिन जब पूरा परिवेश इस उत्पीडन के लिए सहायक हो जाता है राजनीतिक दल एक दूसरे पर दोषारोपण करते हुए न केवल 'घर फूक तमाशा देखने वाले बन जाते हैं इन दुर्घटनाओ को अपने पक्ष म भुनाने भी लगते हैं और पुलिस तथा प्रशासक वर्ग भी जब शक्तिशाली वर्गों का ही पक्ष ले प्राय रक्षक से भक्षक बन जाते हैं, तो ऐसे माहौल मे बागपत-काण्ड जैसी खुल्लमखुल्ला मनमानिया और नारायणपुर बेलछी, बादा मे घटी सामूहिक बलात्कार जैसी शर्मनाक घटनाए कोई अस्वाभाविक वात नही रह जाती। (बागपत और नारायणपुर काडो की जाच रिपोर्टों म आयोगो ने राजनीतिक दलो की विश्वसनीयता एव सार्वजनिक चरित्र पर भी प्रश्नचिह्न लगाया है।)

साप्रदायिक दगा हो या वर्ग सघर्ष अथवा युद्ध स्थिति, शक्तिशाली और विजेता वर्गों द्वारा सर्वहारा और विजित वर्गों पर सामूहिक रूप से जुल्म ढाए जाते रहे हैं। नारी इन जुल्मो की दोतरफा शिकार होती है। नारी के नाते भी और गरीब, गुलाम या विजित वर्ग से सबध रखने के कारण भी। जमींदारो द्वारा उनके कर्ज मे दब गरीब किसानो खेतिहर मजदूरो की बेबस स्त्रियो का यौन शोषण, ठेकेदारो व उनके कर्मचारियो द्वारा समय समय पर उनकी मजबूरियो का लाभ उठा गरीब मजदूर स्त्रिया व भोलीभाली आदिवासी स्त्रियो की खरीदारी, हडताल के दौरान मालिको की ओर स उनके कर्मचारियो या किराए के गुण्डो द्वारा हडताली मजदूरो की स्त्रियो के साथ बलात्कार को दबाव के हथियार के रूप म इस्तेमाल करना इस जुल्म के कुछ नमूने हैं। इधर चारो ओर स पुलिस के लोगो द्वारा गरीब, असहाय स्त्रियो के साथ बलात्कार की जो घटनाए पत्रो मे प्रकाशित हो रही हैं, इन्ह भी शक्तिशाली वर्गों की मिलीभगत स कमजोर वर्गों पर सामूहिक दबाव व बदले के हथियार के रूप मे जाना जा सकता है। या व्यक्तिगत स्तर पर भी प्राय यही शक्तिशाली वर्ग पाशविक वृत्ति, चारित्रिक स्खलन

और भ्रष्टाचार का अगुआ बना हुआ है। निम्न वर्गों व आदिवासियो मे ढीले नतिक नियम भी उनकी इस प्रवत्ति को बढावा देते है। पर अधिकतर आर्थिक कारण ही इसके पीछे होते है।

युद्ध स्थिति म बडे पैमाने पर सामूहिक बलात्कार की शिकार नारी तो आज के विकसित सभ्य जगत के सामन एक बडा सा प्रश्न लेकर खडी है। पडोसी बगला देश म युद्ध के दौरान पाकिस्तानी सैनिको द्वारा एक लाख से ऊपर स्त्रियो का सामूहिक बलात्कार वतमान युग की शायद सबसे बडी और सबसे दर्दीली घटना है।(अ तर्राष्ट्रीय सदभ मे इन घटनाओ की विकरालता पर अलग से लिखा जा रहा है।)

दलित वर्गों की बेबस, सताई औरतो के मामले मे न्यायालयो के निणय भी जैसे अलग ढग से दिए जाते है, अन्यथा दड विधि सहिता का उल्लघन करके पूछताछ क लिए थाने मे महिलाओ को रोकना तो दूर, बुलाया भी नही जाता। एक मामले म मान नीय न्यायाधीश ने सहिता की इस धारा की व्याख्या करते हुए किसी स्त्री को पूछताछ के लिए थाने मे बुलाने की भत्सना की थी और ऐसे आदेश को तनाव उत्पन्न करने वाला बताया था। लेकिन मथुरा बलात्कार काड मे इस धारा की उपेक्षा की गई। दड सहिता धारा ३७५ मे ऐसे दबाव डालने वाले परिवेश मे कम उम्र की भयग्रस्त लडकी द्वारा सह मति या असहमति के प्रश्न पर भी स्पष्ट निर्देश है, प्रतिरोध या प्रतिरोध की असमथता को लेकर मथुरा बलात्कार काड ने इसी आधार पर एक आदोलन को जन्म दिया था।

यदि दलित वग की असहाय, अशिक्षित स्त्री के मामले मे इस तरह के कानूनी अन्याय पर कुछ बुद्धिजीवियो द्वारा पत्रो मे खुली चर्चा आरभ न की गई होती तो न इस गभीर समस्या की ओर सारे देश का ध्यान आकर्षित होता, न इसकी प्रतिक्रिया म एक के बाद एक ऐसे काड—बचिया देवी काड, राजवती और त्रिवेणी काड, माया त्यागी काड, रुक्मणि काड, शीला काड, छविरानी काड आदि—प्रकाश म आते। य उदाहरण नारी के प्रति दुहरे मानदड अपनाने की सामाजिक प्रवृत्ति की ही अनुगूज हैं। यहा यह मानने मे भी हिचक नही होनी चाहिए कि मथुरा काड व परवर्ती प्रतिक्रियाओ को लेकर यदि बुद्धिजीवियो, सामाजिक सस्थाओ व नारी सगठनो द्वारा आदोलन न छेडा जाता और प्रचार माध्यमो का उसे पूरा सहयोग न मिलता तो विधि आयोग की ८४वी रिपोट म भारतीय दड सहिता और साक्ष्य कानून म सशोधन के लिए दिए गए सुझाव भी शायद इन सताई गई महिलाओ के इतने पक्ष म न जाते। (यद्यपि कुछ सुझाव विवादास्पद हैं और अभी उन पर निणय लेना शेष है।)

तो एक बार पीछे मुडकर इस सारी सनसनी, जागृति और आदोलन की प्रेरणा, मथुरा-काड को भी अब जरा देखें

मथुरा काड क्या था ?

महाराष्ट्र के देसाई गज थाने मे २६ माच १६७२ को एक व्यक्ति गामा द्वारा रिपोट दज कराई गई कि उसकी बहिन का उसके घर से अपहरण कर लिया गया है। वास्तव में उसकी यह १४-१५ वर्षीय बहिन मथुरा अपने प्रेमी अशोक जिससे वह शादी

करना चाहती थी, वे साथ घर से चली गई थी। मथुरा एक घर म नौकरानी थी और अशोक उसकी मालकिन नुगी का भाई था। खोजबीन के बाद पुलिस न मथुरा को उसी दिन एक घर से बरामद कर लिया। रात लगभग नौ बजे कुछ अन्य व्यक्तियो के साथ उस थाने म बुलाया गया। पुलिस ने गामा मथुरा, उसकी मालकिन मालकिन के पति और अशोक के बयान लिए और रात १० ३० पर जाच काय समाप्त कर सभी व्यक्तियो को छोड दिया। छूटने वाला न राहत की सास ली। लेकिन जस ही सबके साथ मथुरा भी बाहर जाने लगी, ड्यूटी पर तैनात पुलिस कास्टेबुल गनपत न उसका हाथ पकड उस वही रोक लिया। पूछताछ के बहाने यह मथुरा को घसीटते हुए थाने के पिछले भाग मे स्थित एक गुसलखाने म ले गया। यह देखकर शेष लोग थाने के बाहर ठहर गए। इनके बयान के अनुसार, मथुरा न बचाव के लिए चीख पुकार भी मचाई लेकिन पुलिस के डर से किसी की आग बढने की हिम्मत न हुई। गनपत ने बाथरूम म उसके साथ बलात्कार किया। इस दौरान दूसरा कास्टेबुल तुकाराम बाहर खडा रहा। जब गनपत अपनी काम पिपासा शात कर बाहर निकल गया तो इस दूसर सिपाही ने भी उसके साथ बलात्कार की चेष्टा की, लेकिन शराब म धुत्त होने के कारण सफल नही हो पाया। इस बीच थाने के सामने लोगो की भीड इकट्ठी हो गई थी। लोग चिल्ला चिल्ला कर मथुरा को उनके चगुल म बचाने की माग कर रहे थे। जब भीड थाने पर हमला करन पर उतारू हो गई तो तुकाराम न बाहर आकर बताया कि मथुरा घर चली गई है। लेकिन नशे म धुत्त उस व्यक्ति को झूठ बोलते हुए यह भी होश नहीं रहा कि मथुरा उसके पीछे पीछे बाहर आ रही थी। मथुरा न बाहर आकर सबके सामने रो रोकर बताया कि गनपत ने उसके साथ बलात्कार किया है। इस पर भीड उत्तेजित हो गई और पुलिस अधिकारी को घर से आकर गनपत और तुकाराम के खिलाफ रिपोट दज करनी पडी। अगले दिन मथुरा की डाक्टरी जाच व अन्य जाच स जो तथ्य सामने आए उनके अनुसार सभोग के प्रमाण तो मिले, लेकिन मथुरा के शरीर पर प्रतिरोधस्वरूप कोई घाव या चोट के निशान नही थे। डाक्टरी जाच स यह भी सिद्ध हुआ कि मथुरा का कौमाय उसके पूव भी भग किया जा चुका था, जो उसके प्रेमी के साथ भागने की अनिवाय स्थिति कही जा सकती है और किसी भी तरह इस आधार पर उसे पुलिस जुल्म की शिकार बनने योग्य नही ठहराती।

बलात्कार के स्पष्ट सबूत के आधार पर महाराष्ट्र सरकार ने गनपत और तुकाराम के खिलाफ मुकदमा चलाने का साहसिक निणय लिया। चद्रपुर के सेशन जज ने मामले की सुनवायी कर १ जून १९७४ को अपना फैसला सुनाया और मथुरा के साथ बलात्कार को 'सहमति से सभोग' मान दोनो कास्टेबुलो को छोड दिया। बचाव पक्ष का यह तक मान लिया गया कि मथुरा भीड के सामने बलात्कार कह कर इसलिए चिल्लाई थी कि भीड म शामिल अपने प्रेमी अशोक के सामन उसे स्वय को निर्दोष सिद्ध करना था। इस फैसले के खिलाफ बम्बई उच्च न्यायालय की नागपुर शाखा म अपील की गई। उच्च न्यायालय ने १२ अक्तूबर १९७६ को अपना निणय सुनाते हुए निचली अदालत के फसले को रद्द कर दिया और गनपत को पाच वष तथा तुकाराम को

की कैद सुनाई। उच्च न्यायालय के विद्वान न्यायाधीशो ने वादी पक्ष के इस तर्क को स्वीकार किया था कि मथुरा जैसी अशिक्षित, अल्पवयस्क लडकी इस तरह के भयभीत करने वाले व अरक्षित परिवेश मे अजनबी और शक्तिशाली व्यक्तियो को अपनी सहमति मे समर्पण नही कर सकती थी, न ही अपराधियो का ऐसा प्रतिरोध ही कर सकती थी, जो उसके शरीर पर चोट के निशान छोड सके।

लेकिन गनपत और तुकाराम ने अपनी सजा के खिलाफ उच्चतम न्यायालय मे अपील कर दी। माननीय न्यायाधीशो ने १५ सितम्बर १९७८ को अपना फैसला सुनाते हुए उच्च न्यायालय के फैसले को पलट दिया। इस नए निर्णय का आधार था, लडकी द्वारा कडा प्रतिरोध किए जाने की कहानी झूठ है। डाक्टरी रिपोर्ट मे इसके शरीर पर किसी चोट के चिह्न का उल्लेख नही किया गया है। कथित बलात्कार एक शांति से घटित सभोग की घटना थी। जब मथुरा थाने से अपने भाई के साथ बाहर निकल रही थी और गनपत ने उसका हाथ पकड उसे रोक लिया था तो उस समय उसने कोई प्रतिरोध करने की कोशिश नही की। उच्चतम न्यायालय ने भारतीय दण्ड विधान की धारा ३७५ का उल्लेख करते हुए यह भी कहा कि केवल 'मृत्यु या चोट के भय से सभोग के लिए दी गई सहमति' पर सदेह का लाभ उसे दिया जा सकता है। लेकिन अप्रत्यक्ष प्रमाण के रूप मे भी रिकार्ड मे ऐसा कोई मामला दर्ज नही है कि उसे अपराध के लिए सगत साक्ष्य माना जाए।

इस तरह मामला समाप्त कर दिया गया और अपराधी साफ छूट गए। लेकिन कुछ समय बाद, वह भी वकीलो का नही विश्वविद्यालय के कुछ विधि प्राध्यापको का ध्यान इस फैसले द्वारा असहाय मथुरा के साथ हुए अन्याय की ओर आकर्षित हुआ। लखनऊ की एक कम्पनी के 'ला जर्नल' मे इस मामले की रिपोर्ट पढकर दिल्ली विश्वविद्यालय के कानून विभाग के प्राध्यापक डा० उपेन्द्र बक्षी के मन को इतनी चोट पहुची कि उनके अनुसार वे पूरी रात सो न सके। दूसरे दिन उन्होने अपनी सहयोगिनी श्रीमती लतिका सरकार से सपर्क कर उसे अपनी मन स्थिति बताई और कहा 'कुछ करना चाहिए।' लतिका सरकार भी वह रिपोट पढ कर विचलित हुई थी। उनके अन्य सहयोगी श्री रघुनाथ केलकर और पूना विश्वविद्यालय की वसुधा धागवार भी साथ हो लिए। चारो की सहज मानवीय प्रतिक्रिया थी कि अनेक मामलो मे कानून प्रक्रिया मानव अधिकारो की उपेक्षा कर रही है।

उन्होने मिलकर भारत के मुख्य न्यायाधीश और उनके साथियो के नाम एक खुला पत्र लिखने का निश्चय किया, जिसमे मथुरा काड पर फैसले के बारे मे कुछ आपत्तिया उठाते हुए पूरे मामले पर पुनर्विचार की साहसिक माग भी शामिल थी।

उठाए गए सवाल सितम्बर १९७९ मे चारो विधि अध्यापको ने भारत के मुख्य न्यायाधीश और उनके सहयोगियो को जो खुला पत्र लिखा, उसमे ये कुछ सवाल उठाए गए

मथुरा रात के अधकार मे पुलिस थाने मे थी। तब उच्च न्यायालय ने इस बात पर अविश्वास किया कि उसने सभोग के लिए पहल की होगी। फिर जब सभी के बयान

दज कर उन्हे जाने का आदेश दे दिया गया तो अकेली मथुरा को ही वहा रुकने के लिए क्यो कहा गया, उसके प्रेमी अशोक को भी साथ क्यो नही ?

यह भी विचारणीय प्रश्न है कि मथुरा को गनपत से बचाने के लिए तुकाराम ने कोई चेष्टा नही की। अदालत के रिकाड के अनुसार तुकाराम शराब के नशे मे धुत्त था। शायद इसीलिए बाधा नही डाल सकता था। लेकिन बाथरूम की बत्ती क्या बुझाई गई ? दरवाजे क्यो बन्द किए गए ?

क्या भारतीय उच्चतम न्यायालय १४ से १६ वष की एक गरीब लडकी से यह आशा करता है कि वह पुलिस थाने के भीतर दो सिपाहियो के चगुल म फसने पर बचाव के लिए चीख पुकार म सफल हो सकती है ? क्या उसके द्वारा लम्बे तगडे पुलिस सिपाहिया का ऐसा कडा प्रतिरोध सभव था कि उसके शरीर पर घाव या चोट के निशान बन सकें ? क्या ऐसे चिह्नो का अभाव आवश्यक रूप स कडे प्रतिरोध का अभाव माना जाना चाहिए ? यदि हा, तो प्रतिरोध के चिह्न गनपत के शरीर पर भी होने चाहिए थे। यह हो सकता है, कि मथुरा को हाथ पकड कर भीतर ले जाते समय उसके चीख पुकार मचाने की बात बाहर खडे व्यक्तियो न झूठ कही हो। लेकिन पुलिस थाने के भीतर कथित चीखने चिल्लाने के अभाव को लडकी द्वारा सभोग की सहज स्वीकृति मानना क्या न्यायोचित होगा ? (सयोग से बलात्कार की शिकार महिला गूगी हो या उसका मुह बद कर दिया जाए तो एसे मामले मे न्यायालय की प्रतिक्रिया क्या होगी ?)

निचली अदालत के फैसले को बहाल करते समय क्या उच्चतम न्यायालय ने विश्वास कर लिया कि मथुरा न अपने प्रेमी अशोक के सामने स्वय को निर्दोष सिद्ध करने के लिए बलात्कार की कहानी गढी ? क्या उच्चतम न्यायालय ने यह भी विश्वास कर लिया कि अपने प्रेमी के साथ पूव सबध होने के कारण मथुरा इतनी गिरी हुई थी कि बाहर खडे अपने भाई, प्रेमी और मालिक के सामने ही पुलिस कास्टबुलो के साथ सभोग का अवसर हाथ से जाने नही दे सकती थी ? गनपत के मामले म उसके द्वारा बलात्कार के पीछे उसकी कामुक आदत को नजरअन्दाज कर उसे सदेह का लाभ दे दिया गया, लेकिन मथुरा इसके पूव कौमाय भग की दोषी पाई जाने पर उस पर हुई ज्यादती की बात अविश्वास म ली गई ?

इन पत्र लेखको ने इस बात पर भी आश्चय प्रकट किया कि उच्चतम न्यायालय ने भारतीय दड विधान की धारा ३७५ के केवल तीसरे अनुमान पर ही ध्यान दिया, जो मत्यु या चोट का भय दिखा कर बलात्कार की सहमति प्राप्त करने स सबधित है। इस धारा के द्वितीय अनुमान पर विचार नही किया जहा कि 'समपण' और 'सहमति म स्पष्ट अन्तर बताया गया है। उच्चतम न्यायालय ने यह विश्वास कर लिया कि मथुरा ने समपण किया था लेकिन 'भयभीत स्थिति म सहमति के सवाल पर सदेह का लाभ उस नही दिया। क्या सहमति के प्रश्न पर उच्चतम न्यायालय अपने विश्लेषण का विस्तार नही कर सकता था कि सताई गई मथुरा की इज्जत और अधिकार को कानूनी सरक्षण मिल पाता ? क्या विवाह-पूव यौन सबध होने से ही किसी लडकी के साथ पुलिस को मनमानी करने का अधिकार मिल जाता है ?

हस्ताक्षरकर्ताओ ने इस बात पर भी खेद प्रकट किया कि उच्चतम न्यायालय ने दड विधि सहिता १६० (एल) का उल्लघन करके मथुरा को पूछताछ के लिए पुलिस स्टेशन बुलाने और उसे वहा रोकने के पुलिस कार्य की भर्त्सना भी नही की, जबकि १६७८ म एक प्रतिष्ठित महिला के मामले म महिलाओ को पुलिस थाने मे बुलाए जाने के प्रयत्न की उच्चतम न्यायालय के न्यायमूर्ति श्री कृष्ण अय्यर ने भर्त्सना की थी। क्या सम्भ्रान्त महिलाओ और मथुरा जैसी असहाय स्त्रियो के मामले मे कानून की एक ही धारा दो प्रकार से लागू होगी ?

यदि इस मामले मे बलात्कार को सभोग भी मान लिया जाए तो भी क्या पुलिस कर्मचारियो को इस कार्य के लिए पुलिस थानो के इस्तेमाल की छूट दी जा सकती है ? उच्चतम न्यायालय के निर्णय मे पुलिसकर्मियो के इस अनुचित कार्य की भी कोई भर्त्सना नही मिलती, न इस सबध मे प्रशासनिक अधिकारियो के लिए कोई हिदायत ही ? क्या मथुरा उस समय पुलिसकर्मियो के सरक्षण म नही थी ? सरक्षक पुलिस के लिए पुलिस थाने के भीतर यह कार्य कहा तक उचित था ?

पत्र के अन्त म इन विधि अध्यापको ने मुख्य न्यायाधीश से अपील की कि असाधारण स्थिति का ध्यान म रखकर एक बडी बेंच द्वारा जरूरत पडे तो पूरे न्यायालय द्वारा इस मामले की फिर स सुनवाई कराई जाए। सभव है फिर से जाच कराए जान पर भी गनपत और तुकाराम की रिहाई उचित ठहराई जाए, पर तब निश्चय ही बहतर कारण उपलब्ध कराए जा सकेंगे और 'सहमति' के प्रश्न पर उचित व्याख्या सामने आ सकेगी।

बलात्कार सबधी दड विधान की धारा ३७५ क्या है ?

इसस पूर्व कि इस पृष्ठभूमि पर उठे आदोलनो की आगे चर्चा करें, हम भारतीय दड विधान की बलात्कार सबधी धारा ३७५ को जरा विस्तार से समझ लेना चाहिए

धारा ३७५ म अपवादित दशा के अलावा किसी स्त्री के साथ इन पाच परिस्थितियो म स किसी भी परिस्थिति म किए गए सभोग को बलात्कार माना गया है

१ स्त्री की इच्छा क विरुद्ध।

२ उसकी सहमति क बिना।

३ जब उसकी सहमति चोट पहुचाकर या मृत्यु का भय दिखाकर ली गई हो।

४ जब किसी बाहरी पुरुष द्वारा स्त्री की सहमति प्राप्त करने का आधार स्त्री की अनभिज्ञता और पुरुष की जानकारी म स्त्री को यह विश्वास दिलाना या उसे यह विश्वास होना हो कि वह पुरुष उसका कानूनी विवाहित पति है।

५ जब १५ साल स कम उम्र की लडकी की सहमति प्राप्त की गई हो। इस सहमति को कानूनी मान्यता प्राप्त नही है। मूल अधिनियम म यह आयु पहले १० वर्ष रखी गई थी, १८९१ म इस सशोधित कर १२ वर्ष किया गया, १९२५ म १४ वर्ष और १९४९ म १६ वर्ष—डाक्टरी परीक्षण स इस सिद्ध किया जा सकता है। (अपवाद रूप म यह आयु १४ १६ की बजाय १३ १५ भी मानी गई।)

इस खण्ड मे एक अपवाद यह भी जोडा गया है कि १५ वप से कम आयु की अपनी पत्नी से सहवास बलात्कार नही कहलाएगा।

बलात्कार कानूनी व्याख्या

बलात्कार की सरल कानूनी व्याख्या है किसी भी स्त्री से उसकी सहमति बिना सहवास बलात्कार कहलाएगा। इसका सीधा अथ है, स्त्री की इज्जत या उसकी अस्मिता पर आक्रमण। शाब्दिक अथ मे बलात्कार का मतलब सहवास मे जोर जबरदस्ती ही है। यह जबरदस्ती ही कानून का मूलाधार है और उपरोक्त वर्णित पाच कारण आगे इसी की व्याख्या करते हैं।

कानून मे उसकी 'इच्छा के विरुद्ध और फिर उसकी 'सहमति के बिना' इन दो वाक्यो के भिन्न अथ हैं। जोर जबरदस्ती के इन मामलो मे बलात्कार को सिद्ध करने के लिए स्त्री के विरोधस्वरूप कोई चोट पहुचाने के शारीरिक चिह्न मिलना चाहिए या यह प्रमाण कि ऐसा उसकी गैर जानकारी मे हुआ,या कि वह स्वीकृति देने, न देने का निणय करने की स्थिति मे नही थी। यद्यपि १६ वप से कम उमर की लडकी की सहमति कोई कानूनी महत्त्व नही रखती पर १६ साल से कम उमर मे भी जब सहवास का पूव अनुभव हो तो डाक्टरी जाच मे योनि परीक्षण सही रिपोट देने म असफल हो सकता है और इस कमी का लाभ बलात्कारी पुरुष अपने पक्ष मे ले सकता है। (जैसा कि मथुरा-केस म हुआ) इसलिए हर मामले मे असहमति को आधार बनाया जाना चाहिए—सन १९३४ के एक मामले म पहले भी यह माग उठाई जा चुकी है।

वास्तव मे ऐसे अस्पष्ट मामला मे जज कानूनी सिद्धातो से कम और अदालती निणयो के लबे अनुभवो से अधिक प्रेरित हो अपना निणय देते है। जहा कोई प्रमाण सिद्ध नही होते, वहा हल्की सजा देकर मामला निपटा दिया जाता है या सदह का लाभ दे, चेतावनी देकर अपराधी को छोड दिया जाता है। जब प्रमाणो के आधार पर दोनो पक्षो मे कोई फैसला नही हो पाता, तब जज समाज को पहुचने वाले सभावित खतरे के आधार पर निणय लेते है। इससे सिद्ध है कि निणय के पीछे मानवीय आधार व जजो का सामान्य ज्ञान और अनुभव भी प्रेरक तत्त्व होते है।

एक उदाहरण एक अनुभवी वकील की राय म, यदि मथुरा केस मे वादी पक्ष का वकील केस १०३ १९६० पजाब म न्यायमर्ति टेकचन्द द्वारा लगभग वैसे ही मामले म लिया गया निणय उदाहरणस्वरूप सामने लाता तो सभव है मथुरा-केस मे फैसला इसके विपरीत होता। इस केस की कहानी इस प्रकार थी

झाझो नाम की एक २० वर्षीय ग्रामीण स्त्री अपनी ४ वर्षीय बच्ची के साथ एक गाव से अपने गाव नसीरपुर लौट रही थी कि वर्दी म लैस तीन पुलिस कान्स्टेबुल उसके पीछे लग गए। उस पर आवारागर्दी का इल्जाम लगा कर उसे थाने ले जाने की धमकी देन लगे। स्त्री के इन्कार करने पर उन्होने उसे डडो से पीटा और पकड कर पास के गन्ने के खेत मे ले गए। एक सिपाही बच्ची को साथ लेकर बाहर खडा हो गया। शेष दो मे से एक ने उसका मुह बद किया, दूसरे ने उसके साथ बलात्कार किया। एक के बाद

दूसरे द्वारा भी बलात्कार हुआ। फिर तीसरे द्वारा भी। तीसरा सिपाही खेत मे था व पहले दो मे से एक बाहर बच्ची के साथ था कि ऊपर से दो राहगीर आ गए। इन ग्रामीणों के आ जाने पर खेत के दोना सिपाही भाग गए और झाझो के शोर मचान पर बाहर वाले सिपाही को उन दोनो न पकड लिया। वे उसे पकड कर साथ के ग्राम सिवली थान म ले गए। केस चलने पर बचाव पक्ष की ओर से ठीक वैसे ही तक सामने आए, जस कि मथुरा केस म लाए गए थे कि झाझो के शरीर पर प्रतिवादस्वरूप चोट के निशान नही पाए गए कि वह पहले से ही दुष्चरित्र थी और यह कि सभोग उसकी 'इच्छा क विरुद्ध नही सहमति' से था। लेकिन माननीय जज ने झाझो के दहशतभरे चेहरे की करुण पुकार को सुना। उसके अस्तव्यस्त वस्त्रो के निशान देखे और झाझो की स्थिति को 'भय स समपण का प्रतीक मान अपराधी को दडित किया। यद्यपि प्रत्यक्ष सबूत के अभाव म शेप दो अपराधी छूट गए थे। और पकडे जाने वाले उनके तीसरे साथी को ही दो साल की सजा सुनाई गई थी।

उपरोक्त मामले म कथित 'सहमति' को सहमति नहीं, 'भय से समपण' माना गया तो कोई कारण नही था कि मथुरा केस मे समान भयग्रस्त मन स्थिति को असहमति का आधार न माना जाता, जबकि पुलिस थाने मे उसे रोकना ही उसके साथ ज्यादती थी। झाझो केस मे भी पुलिस पक्ष ही अपराधी कटघरे मे था। यद्यपि तीनो दडित नही किए गए फिर भी इन दो लगभग समान अदालती मामला स सिद्ध है कि कानून की क्षमता अथवा कानून की कमी नही, उसकी व्याख्या ही निणय के पीछे का मुख्य आधार होती है और निणय म सबधित जजा का सामान्य अनुभव और तात्कालिक प्रभावी उनकी मानवीय सवेदना ही मुख्य प्रेरणा का काम करती है।

बलात्कार कानून मे हिंसा या बिना हिंसा के बलात्कार और इच्छा के विरुद्ध' या 'सहमति के बिना' शब्दा के सूक्ष्म कानूनी भेद सबधी कुछ व्याख्याए इस प्रकार हैं

सम्मोहन चिकित्सा किसी रोगिणी की सम्मोहन पद्धति द्वारा चिकित्सा के दौरान उसे सम्मोहित कर उसकी चेतन अवस्था म उसके साथ किया गया सहवास भी उसकी इच्छा के विरुद्ध बलात्कार माना जाएगा। जैसे कि इस मामले म हुआ

एक १८ वर्षीय लडकी के घर पर एक डाक्टर रोज सम्मोहन चिकित्सा देन के लिए आता था। साढे चार महीने बाद लडकी को महसूस हुआ कि वह गभवती है। डाक्टरी परीक्षण म गभ की पुष्टि हो जाने पर डाक्टर पर मुकदमा चला और प्रमाणो से सिद्ध हो गया कि गभ उसी अवधि का है और डाक्टर दोषी है। सम्मोहित दशा म लडकी को कोई शारीरिक प्रतीति या मानसिक यातना नही हुई। यहा विरोध के प्रति उसकी असमथता लडकी की 'सहमति' नही मानी गई। तो इस मामले म डाक्टर का कृत्य लडकी की इच्छा के विरुद्ध' उसके साथ बलात्कार माना गया और डाक्टर को सजा हुई।

बिना हिंसा के बलात्कार सामान्यत बलात्कार जोर-जबरदस्ती या हिंसा और भय दिखान के प्रयोग से ही सबधित होते हैं। लेकिन कुछ मामला म नही। तब बालिग महिलाओ के बारे म आसानी से प्राप्त की गई स्वीकृति को आधार बनाया जा सकता है

और नाबालिग लडकिया के मामले मे सहमति प्राप्त करने के तरीका का विश्लेषण करना आवश्यक होता है। (यौन अपराध अधिनियम १९५६ मे उन तरीको की व्याख्या की गई है।)

इरादा जब बलात्कार की घटना उस महिला के अपने मकान मे घटती है तो तार्किक रूप म उसके उस पुरुष के साथ सबध को सिद्ध करना आसान रहता है। उसे निवस्त्र करने या उसके स्वय निवस्त्र होने के ढग म निश्चय ही अतर होना चाहिए। इस अतर को स्पष्ट करने के परिणामा के आधार पर इरादे या जबरदस्ती को सिद्ध करन की कोशिश की जाती है

इच्छा के विरुद्ध सहवास के लिए उम्र, शारीरिक स्थिति, समझ की दृष्टि से दोना योग्य है या जो कुछ होने जा रहा है, उसके क्या परिणाम होगे, उसके प्रति चेतन, सहमति के इस आधार को भग करते हुए जो सहवास होगा, उसे स्त्री की इच्छा के विरुद्ध' एकतरफा कायवाही माना जाएगा। इसकी कुछ स्थितिया मे ये व्याख्याए भी हैं

नींद मे बलात्कार कोई स्त्री नीद मे है और इस हमले के प्रति चेतन नही है तो पुरुष बलात्कार का दोषी ठहराया जा सकता है। यद्यपि जागने पर उसे विरोध प्रकट करना चाहिए, लेकिन कि ही कारणा से शोर मचाना या विरोध करना सभव नही हो तो भी मामला उसकी 'इच्छा के विरुद्ध' माना जाएगा। कई बार बलात्कार यद्यपि स्त्री की 'इच्छा के विरुद्ध' होता है लेकिन उसकी स्वीकृति किसी तरह प्राप्त कर ली जाती है जसे शराब पिला कर नशे की हालत म या नशीली गोलिया खिला कर या अ य तरीके से उसे उत्तेजित करके, जैसा कि इरादतन अपराधी प्राय करते हैं। तो यह मामला भी 'इच्छा के विरुद्ध' ही माना जाएगा।

मद बुद्धि स्त्रियों के साथ कोई स्त्री यदि सही गलत का निणय लेने के योग्य न रहने के कारण विरोध नही करती तो ऐसे मामले म बलात्कार न केवल उसकी 'इच्छा के विरुद्ध' बल्कि 'उसकी सहमति के बिना' भी माना जाएगा। पर जरूरी नही कि बिना सहमति वाला कृत्य उसकी इच्छा के बिना भी हो। एस मामलो मे उसका पूव इतिहास को दष्टि मे रख कर निणय लिया जाता है। कई मामलो मे स्त्री के चेतन न होने पर पुनरावृत्ति का केस भी उसकी इच्छा के विरुद्ध माना जा सकता है। यह इस पर निभर करता है कि उसकी स्मरण शक्ति कैसी है।

सहमति के बिना कानून मे 'इच्छा के विरुद्ध' की उपरोक्त व्याख्याओ के अलावा 'सहमति के बिना' की भी स्पष्ट व्याख्याए हैं

सहमति श दा द्वारा या क्रियाओ द्वारा बतानी चाहिए। यदि इस प्रकार की सहमति सिद्ध हो जाती है तो मुकदमा अदालत से खारिज हो जाता है। लेकिन सहमति' की स्थिति म केस अदालत मे जाना ही नहीं चाहिए। अत असहमति का कानूनी अथ होगा बिना प्रतिरोध'। इसकी कुछ अपवाद स्थितिया हैं—गम के अतिम दिनो म जब वह कड़े प्रतिरोध की स्थिति मे न हो तो केवल 'बिना प्रतिरोध' के आधार पर उसकी सहमति नही मानी जा सकती। इसी तरह एक पागल, अद्ध पागल स्त्री की प्राकृतिक माग उसकी इच्छा के बिना भी 'सहमति' बन सकती है। पर इससे उस स्त्री का दोषी नही

ठहराया जा सकता। पागलपन मे, बेहोशी मे, नीद मे, नशीली दवा या शराब के नशे म अथवा सम्मोहन या अन्य ऐसे साधन अपनाए जाने पर प्राप्त की गई 'सहमति' का अथ भी बिना किसी दबाव के स्वतन्त्र सहमति से नहीं होगा। भय से समपण भी सहमति नही, कानून इसकी स्पष्ट व्याख्या करता है। समपण और सहमति का अतर है—हर सहमति समपण की ओर, लेकिन हर समपण मे सहमति आवश्यक नहीं। अधिक शक्तिशाली के हाथ समपण बच्ची का प्रौढ के हाथ समपण या दहशत की स्थिति म समपण सहमति नही। चोट या मत्यु का भय दिखा कर ली गई सहमति कभी भी सहमति नही मानी जा सकती। इसलिए ऐसी स्थिति मे बिना प्रतिरोध या प्रतिरोध के प्रमाणो का अभाव सहमति नही माना जाता।

वैस लम्बे समय तक प्रतिरोध हो तो यह मानना कठिन होता है, कि स्त्री को भीतर या बाहर कोई चोट न आए। १६ साल से कम आयु की लडकी के मामले मे चोट के चिह्न के अभाव को 'बिना प्रतिरोध' सिद्ध करना आवश्यक नही, क्योकि अज्ञान या अधूरे ज्ञान स उसके लिए निणय लेना कठिन हो सकता है। वह मानसिक आघात से भी चुप रह सकती है। एक से अधिक लोगो द्वारा दबोचने पर भी प्रतिरोध सभव नही होता। एसी स्थिति म, या प्रतिरोध करना खतरनाक अथवा जानलेवा सिद्ध होने का भय हो तो भी 'सहमति' नही माना जा सकता। ऐसे मामले मे यदि शुरु मे सहमति थी और बाद मे प्रतिरोध था, तो इस तक के आधार पर भी सहमति नही मानी जा सकती, क्योकि प्रथम बार फुसलाए जाने पर या अनिणय की स्थिति मे सहमति होने पर भी यदि बाद मे प्रतिरोध के प्रमाण सामने आते हैं तो इसे उसकी इच्छा के विरुद्ध जबरदस्ती ही माना जाएगा। नाबालिग लडकी के केस मे बाद की सहमति भी सहमति नही मानी जाएगी। गभ ठहरने पर सहमति सिद्ध करने की बात भी इस आधार पर गलत ठहराई जा सकती है।

इस तरह कानून मे 'बिना प्रतिरोध' को हर स्थिति मे सहमति मानने से इन्कार किया गया है और 'समपण व 'सहमति के अतर की स्पष्ट व्याख्या की गई है। मथुरा-केस म विधि अध्यापको द्वारा ये ही कानूनसम्मत प्रश्न उठाए गए थे।

कुछ अन्य उदाहरण इन स्थितियो के कुछ अन्य उदाहरण ये दज मामले भी हैं

—लडकी के साथ नीद म सहवास के मामले मे पकडे गए एक युवक को बलात्कारी सिद्ध नही किया जा सका, क्योकि लडकी ने तभी शोर मचाया और युवक को धक्का देकर उठाया, जबकि किसी ने उन्हें इस हालत मे देख लिया। यहा प्राथमिक सहमति नीद की अभिज्ञता म मान लिए जाने पर भी नीद से जगने पर प्रतिरोध न किए जाने को बाद की सहमति ही मान लिया गया। साथ ही डाक्टरी परीक्षण मे मामला प्रथम बार सिद्ध नही हुआ। लडकी के यौन सबध का पूव इतिहास होने और अदालत मे भी लडकी के उसके खिलाफ कुछ न बोलने से मामला बलात्कार नही, सहमति से सहवास सिद्ध हुआ और युवक बरी हो गया।

एक डाक्टर द्वारा लडकी को आपरेशन के लिए ले जाकर उसके साथ अद्धचेतनावस्था मे किया गया सहवास लडकी द्वारा बिना प्रतिरोध भी उसकी इच्छा के विरुद्ध

माना गया और डाक्टर को सजा मिली।

—इसी तरह एक एक्सरे टेक्नीशियन द्वारा एक्सरे रूम म अधेरे म लडकी को ऐक्सर के बहाने नग्न कर उसके साथ बलात्कार म भी लडकी की बिना प्रतिरोध सहमति नही मानी गई और अपराधी को सजा हुई। यहा कपडे जबरदस्ती उतरवाने या फाडने और स्वय उतारने की कानूनी प्रक्रिया का अतर भी अपराधी के पक्ष म नही गया, क्योकि लडकी को ऐक्सरे के बहाने फुसला कर नग्न किया गया।

—छत पर सोई एक लडकी की चारपाई पर पडोस की छत से कूदे एक युवक द्वारा आक्रमण। लडकी को निवस्त्र किए बिना अभी वह उसके साथ सघर्ष कर ही रहा था, कि लडकी द्वारा शोर मचाने पर थोडी दूर सोई मा जाग गई और अपराधी भाग गया। इस मामले म प्रतिरोध के कोई चिह्न न मिलने और बलात्कार न होने पर भी केवल लडकी के शोर मचाने व मा द्वारा देखे जाने के प्रमाण ही जजा की सतुष्टि के लिए पर्याप्त माने गए और बलात्कार के इस प्रश्न का बलात्कार के यथाथ से अधिक गभीर मान दोषी को सजा दी गई।

कई मामलो मे मद बुद्धि, अद्धपागल व अधी लडकियो के साथ सहमति का आधार सिद्ध करते हुए भी दोषी व्यक्ति बरी नही हुए। उन्हे सजा मिली। लेकिन किसी डाक्टर द्वारा आपरेशन या चिकित्सा के बहाने प्राप्त सहमति शुरू मे सहमति न होकर भी यदि आगे उसका प्रतिवाद नही होता तो उसे धोखे से प्राप्त की गई सहमति नही माना जाता। जब तक लडकी अचेत या सम्मोहित न हो, धोखा देर तक नही दिया जा *सकता —उसका आगे प्रतिवाद होना ही चाहिए। साथ ही किसी व्यक्ति द्वारा देखे* जाने से पूव ही लडकी को शिकायत करना चाहिए।

पति द्वारा जबरदस्ती सहवास की कानूनी स्थिति भी खड ७ म स्पष्ट की गई है। सामान्य स्थितिया मे पति द्वारा जबरदस्ती अपराध नही। यहा तक कि घणित रोगो म जबरदस्ती भी कानून मुक्त है। खतरनाक स्थितिया म भी कानून की दूसरी धाराओ के अन्तगत ही कायवाही की जा सकती है। केवल अदालती अलहदगी की अवधि म पति जबरदस्ती सहवास नही कर सकता। पर तब भी इस जबरदस्ती की सजा केवल अलगाव-अवधि की समाप्ति माना जाना ही है। बलात्कार उसे नही माना जाता।

खण्ड ८ के अनुसार, प्रतिवाद न करने के अन्य कारण भी हो सकते हैं। जसे समाज भय से, अपना भविष्य बिगड जाने के भय से शोर नही किया तो भी इसे भय के अन्तगत प्राप्त सहमति माना जा सकता है। उदाहरण के लिए—स्कूल मास्टर द्वारा अपनी छात्रा के साथ पिता द्वारा पुत्री के साथ, मालिक द्वारा नौकरानी के साथ अशोभनीय ढग के व्यवहार की स्वतत्रता पाना, इसी तरह किसी भी अधीनस्थ स्थिति म प्राप्त की गई स्वीकृति मे भय, या जबरदस्ती न होने पर भी उस अधीनस्थ की स्वतत्र सहमति नही, अधिकार प्राप्त व्यक्ति द्वारा अधिकार का दुरुपयोग माना जाएगा।

खण्ड ६ के अनुसार सहमति *तथ्यो से अनभिज्ञता के आधार पर भी हो सकती* है जो सहमति नहीं मानी जाएगी। किसी स्त्री को नीद म उसके पति का विश्वास देकर या पति म लम्बी अवधि से बिछुडी पत्नी को वर्षों बाद पति की पहचान देकर प्राप्त की

गई सहमति तब सहमति नही मानी जाएगी, जब पहली स्थिति मे पुरुष के पहचान जान के बाद स्त्री शोर मचाए या प्रतिरोध करे और दूसरी स्थिति मे इस तथ्य से पूरी तरह अनभिज्ञ हो कि वह पुरुष उसका पति नही है। ऐसे मामलो मे धोखे को विश्वास के आधार पर ग्रहण करने वाली स्त्री निर्दोष व पुरुष अपराधी माना जाएगा।

खण्ड १० मे 'सहमति की कार्यान्विति नहीं' सबधी महत्वपूर्ण धारा है, जिसे १८५१ और १९२५ म दो बार सशोधित किया जा चुका है। इसके अनुसार कानून स्वीकृत उम्र से कम उम्र की लडकी की सहमति न केवल मायने नही रखती, उसकी माग पर सहवास भी बलात्कार माना जाएगा। इसलिए कि वह उचित-अनुचित का निणय लेन की स्थिति मे नही है। केवल पति द्वारा अपनी पत्नी के साथ सहवास का मामला ही इस मामले मे अपवाद माना गया है।

खण्ड ११ के अनुसार बलात्कार के पूर्व कौमार्य भग का प्रमाण भी अपराध की दृष्टि से बलात्कार और बलात्कार के प्रयत्न मे विशेष अतर नही करता। वीय धब्बा की अनुपस्थिति भी पर्याप्त पमाण नही कि बलात्कार नही हुआ।

खण्ड १२ म बलात्कार से मत्यु की व्याख्या है—जानबूझ कर या अनजान ? यह सिद्ध होने पर सजा का निर्धारण भी उसी के अनुसार किया जाता है। यद्यपि पति द्वारा जबरदस्ती भी मान्य है पर एक बालिका-वधू के साथ पति द्वारा जबरदस्ती के मामले मे जब पत्नी की मत्यु हो गई थी तो पति को दोषी ठहरा कर उसे सजा दी गई थी। अत यदि पत्नी की आयु सबधी अयोग्यता से पति अनभिज्ञ नही है तो उसके पति के अधिकार पर भी कानून प्रश्नचिह्न लगा सकता है।

भारतीय दड विधान की यह धारा ३७५ कानून की व्याख्याओ से सबधित है, धारा ३७६ उनके अनुरूप दड प्रक्रियाओ से। इन व्याख्याओ से स्पष्ट है कि बलात्कार सबधी प्राचीन कानून म कई कमिया होने पर भी वे कमिया इतनी नहीं हैं कि उनकी आड मे गरीब असहाय स्त्रियो को उचित न्याय स वचित किया जा सके। यह तो वकीलो द्वारा प्रस्तुत कानूनी व्याख्याओ व तर्क की तिकडमो पर निभर करता है कि उनकी कार्यान्विति कैसी हो और माननीय जजो की सहज प्रत्युत्पन्नमति व मानवीय सवेदना पर निभर करता है कि किसी पचीदा मामले पर निणय कैसा हो।

बलात्कार विरोधी आदोलन

चारो बुद्धिजीवियो द्वारा मुख्य न्यायाधीश के नाम लिखा गया वह खुला पत्र सवप्रथम ७-१३ अक्तूबर १९७९ के दिनमान के अक मे सम्पूर्ण प्रकाशित हुआ था। उसके बाद वह पत्र जैसे भारत मे नारी-सुरक्षा और शोषण मुक्ति आदोलन के लिए एक मील का पत्थर साबित हुआ और उसे लेकर जगह-जगह आदोलन उठ खडे हुए। यही नही अनेक सस्थाओ को मिला कर जो बलात्कार विरोधी मच बना उसने अपनी नौ सूत्री याचिका के साथ—ससद म भी दस्तक दी। याचिका की यह नौ-सूत्री माग इस प्रकार थी

१ अनपेक्षित दबाव या जोर जबरदस्ती स प्राप्त सहमति को सहमति न

माना जाए।

२ यदि यह साबित हो जाए कि डयूटी पर तैनात पुलिस कर्मचारी ने संभोग किया तो यह प्रमाणित करना उसका दायित्व हो कि उसने स्त्री की सहमति से ही यह किया।

३ थाने में बलात्कार की रपट लिखाने वाली स्त्री से महिला पुलिस ही पूछताछ करे।

४ बलात्कार की परिभाषा में यह स्पष्ट किया जाए कि हिंसा प्रदर्शन के बिना या पुरुष द्वारा स्त्री की सहमति या असहमति की परवाह किए बिना भी बलात्कार हो सकता है।

५ रपट लिखाने वाली स्त्री का नाम या उसकी पहचान कराने वाली जानकारी छापना गैर कानूनी होना चाहिए।

६ अदालत में अभियुक्त के अलावा किसी और को स्त्री से उसके यौनाचार या पूर्व यौनानुभव के बारे में प्रश्न नहीं पूछना चाहिए।

७ इस तरह के कदम उठाए जाने चाहिए कि पुलिस या न्यायिक हिरासत में स्त्री को बलात्कार का शिकार न बनना पड़े।

८ यदि स्त्री चाहे तो बलात्कार के मामले की सुनवाई बंद कमरे में होनी चाहिए।

९ बलात्कार से संबंधित मामलों की सुनवाई के लिए पृथक अदालतें या न्यायाधिकरण होने चाहिए।

इसके बाद १७ जून १९८० को ही विधि आयोग द्वारा अपनी ८४वीं रिपोर्ट सदन में प्रस्तुत करते हुए जो सिफारिशें की गईं, उनमें और उपरोक्त नौ सूत्री मांगों में अधिक अंतर नहीं था। इस रिपोर्ट प्रस्तुति के शीघ्र बाद १९ जून १९८० को ही राज्य सभा में प्रधानमंत्री श्रीमती गांधी ने घोषणा कर दी कि राज्य सरकार से विचार विमर्श कर स्त्रियों पर होने वाले जुर्मों के खिलाफ सरकार शीघ्र ही एक विधेयक पारित करेगी। साथ ही उन्होंने जनता से भी अनुरोध किया कि स्त्रियों पर जुल्म करने वालों का सामाजिक बहिष्कार किया जाना चाहिए। उन्होंने इस सुझाव का समर्थन किया कि स्त्री अपराधियों के मामले में सारी कार्यवाही महिला पुलिस अधिकारियों द्वारा की जानी चाहिए। प्रधानमंत्री ने यह सुझाव भी दिया कि नारी संगठनों को ऐसे मामले में और ज्यादा दिलचस्पी लेनी चाहिए और ऐसे लोगों का सामाजिक बहिष्कार करने के लिए समाज को संगठित करने का जिम्मा लेना चाहिए।

जहां तक कानून की कमियों का प्रश्न है उन्हें किसी हद तक दूर करने की मांग इन सिफारिशों में मान ली गई थी। सदन के सत्रावसान के अंतिम दिन १२ अगस्त १९८० को केन्द्रीय सरकार के आश्वासनानुसार तत्संबंधी कानूनी संशोधन के लिए एक विधेयक भी सदन में लाया गया। लेकिन सिफारिशें जिस रूप में प्रस्तुत की गई उनके अविकल रूप में पास होने की संभावना नहीं क्योंकि कुछ संशोधन विवादास्पद हैं। विधिवेत्ताओं की राय में, उनकी कुछ धाराओं की उसी रूप में स्वीकृति से कानून का दुरुपयोग भी हो सकता है। विधि आयोग की ये सिफारिशें थीं

विधि आयोग की सिफारिशे

आयोग ने सिफारिश की कि भारतीय दण्ड सहिता और साक्ष्य-कानून म इस तरह के सशोधन किए जाए, जिससे यह सुनिश्चित हो सके कि बलात्कार करने वाला कोई भी अपराधी दण्ड से बच न सके। आयोग ने जाब्ता फौजदारी मे भी इस तरह सशोधन का सुझाव दिया कि बलात्कार के मामलो की सुनवाई बद कमरे म हो सके।

'असहमति' सबधी प्रमाणो के अभाव मे अनेक मुकद्दमा की विफलता को देखत हुए विधि आयोग न यह भी सुझाव दिया कि साक्ष्य कानून मे ऐसी धारा जोडी जाए कि बलात्कार की शिकार स्त्री के साथ सहवास प्रमाणित हो जाने पर वह स्त्री यदि उसे अपनी 'असहमति' कह कर शिकायत करे तो अदालत उस सभोग को बलात्कार मान कर चले, क्योकि स्त्री को अपनी 'असहमति' प्रमाणित करने के लिए अनेक कठिनाइयो व अपमानजनक स्थितियो का सामना करना पडता है।

आयोग ने इस महत्त्वपूर्ण मुद्दे पर भी अपनी टिप्पणी दी कि बलात्कार की शिकार स्त्री के पूव यौन सबध या चरित्र को अदालत म गवाही के रूप मे प्रस्तुत करने को कितना महत्त्व दिया जाए, इस प्रश्न पर भी विचार करना चाहिए। यह मानना गलत होगा कि वह स्त्री इसी कारण सच नही बोलेगी। इस प्रकार की गवाही निराधार न होन पर भी सवथा कमजोर है। इन प्रमाणो की प्रस्तुति व पूछताछ से स्त्री इतनी ग्लानि व शम महसूस करती है कि इस अपमानजनक स्थिति से गुजरने के बाद उसकी मानसिक शाति हमेशा के लिए भग हो जाती है। इसलिए आयोग न साक्ष्य कानून की धारा १४६ म ऐसी एक उपधारा जोडने की सिफारिश की है कि बलात्कार या उसकी कुचेष्टा के मामले मे सताई गई स्त्री से किसी अन्य व्यक्ति के साथ उसके पूव यौन सबध विषयक प्रश्न नही पूछे जाए।

इन सिफारिशो के आधार पर सदन मे प्रस्तुत विधेयक म सजा के निम्न प्रावधान थे

—किसी स्त्री स बलात्कार करने वाले को न्यूनतम सात वष और अधिकतम आजीवन कारावास की सजा दी जाएगी।

—यदि कोई पुलिस अधिकारी या कमचारी बलात्कार के मामले म दोषी पाया गया तो उसके लिए न्यूनतम सजा की अवधि दस वष होगी और अधिकतम आजीवन कारावास।

—ऐसे अपराधियो को, चाहे वे पुलिस कमचारी हो या अन्य कोई, कारावास की सजा के साथ जुर्माना भी किया जा सकेगा।

—यदि कोई सावजनिक कमचारी जेल या अस्पताल का अधीक्षक किसी स्त्री को फुसलाएगा तो इस प्रयत्न के लिए भी उसे पाच साल की सजा और जुर्माने का दड दिया जा सकेगा।

—यदि किसी पुलिस अधिकारी या अधीन स्त्री पर अपने पद के नाते नियन्त्रण रखने वाले किसी व्यक्ति या ऐसे व्यक्तियो के समूह पर बलात्कार का आरोप होगा तो यह साबित करने की जिम्मदारी अभियुक्त की होगी कि सहवास उस स्त्री की सहमति स

हुआ है।

विधेयक का उद्देश्य विधि आयोग की सिफारिशो के अनुसार जाब्ता फौजदारी कानून म इस प्रकार सशोधन लाना है कि बलात्कारियो का कठोर दड मिल सके। प्रस्तावित विधेयक मे सजा की अवधि बढाने स स्थितियो मे अधिक अतर नही आएगा। लेकिन सामा य व्यक्ति और अधिकारी व्यक्ति तथा सामा य व्यक्ति और पुलिस कम चारी म सजा की दष्टि से भेद करने और सहमति से सहवास को सिद्ध करने की जिम्मे दारी उन पर डालने से निश्चय ही पीडित स्त्रिया को याय मिलने की सम्भावना बढ जाएगी।

इन सिफारिशो के बाद बलात्कार सबधी कानून की कमियो को लेकर किसी आदोलन की जरूरत नही रह गई थी। लेकिन मथुरा काड के बाद नारायणपुर, दुग, गोडा, मडी डबवाली और बागपत काड मे पुलिस की ज्यादतियो ने महिला-आदोलन को शिथिल नही होने दिया। बल्कि बागपत मे सरेआम पुलिस द्वारा जो नशस हत्याए और महिला अपमान की वहशी ढग की घटना घटी उसने और आग मे घी डालने का काम किया।

आदोलन और राजनीति

प्रश्न नारी सम्मान और सुरक्षा का था। उसे मानवीय स्तर पर महिला सग ठना द्वारा ही उठाया जाना चाहिए था। लेकिन बागपत की घटना को सरकारी और प्रतिपक्षी दलो की आर से जिस प्रकार परस्पर विरोधी बयान दे देकर राजनीति मे उलझा दिया गया, उसने महिला-आ दोलन को शक्ति देने के बजाय शिथिल ही किया। निस्सदेह बागपत की घटना नृशस थी और उसके लिए पुलिसकर्मियो को कडा दड देने के बजाय सरकारी पक्ष से उनके बचाव मे वक्त य देना नि दनीय व भविष्य म खतरनाक परराओ को ज म देना था। पर नारायणपुर की नदिनी खदान की, गाडा की या मडी डबवाली की घटनाए क्या कम नृशस थी? लेकिन सडको पर, ससद के दोनो सदनो म बागपत की घटना पर जितना हो हल्ला मचा, उतना शेप घटनाआ पर क्या नही? लोकदल के हजारो कायकर्ताओ न बागपत-काड पर गिरफ्तारिया दी। सत्याग्रह किया। घरने दिए। स्थानीय स्तर पर बागपत काड मे गिरफ्तारिया देने का समथन किया जा सकता है, पर जहा तक पूरे देश की नारी-अस्मिता का सवाल है, इन प्रश्ना पर सभी महिला सगठनो, विचारका और सासदा को मिल कर बडे पैमाने पर आ दोलन नही छेडना चाहिए था?

एक शुरुआत १७ जुलाई १९८० को सीमित स्तर पर ऐसी एक शुरुआत की भी गई थी। कई महिला सस्थाओ और प्रतिपक्ष की लगभग सभी ससद सदस्याआ की एक रैली राजधानी के बोट क्लब की सभा से चल कर प्रधानमत्री निवास तक गई। प्रधानमत्री को अपराधी पुलिसकर्मिया व गुडो के खिलाफ अविलब कडी कायवाही करन कानून-सशोधन सबधी विधेयक शीघ्र लाने सुरक्षा के व्यापक प्रब ध करने की मांगो क साथ एक ज्ञापन दिया गया। बोट-क्लब पर आयोजित राजमाता गायत्री देवी की अध्यक्षता

मे हुई सयुक्त सघष समिति की इस सभा म अनेक महिला सासदो और प्रसिद्ध सामाजिक कायकर्त्रियो द्वारा जोशीले भाषण हुए। डा० सुशीला नैयर ने कहा, 'एक द्रौपदी के चीरहरण पर महाभारत हो गया था। आज सरे आम सैकडो द्रौपदियो के चीर गुडा व पुलिस द्वारा उतारे जा रहे हैं, पर सरकार तमाशा देख रही है। श्रीमती पूर्वी मुखर्जी के भरे गले से अटकते ये शब्द निकले, 'दुख और कष्ट अब सीमा लाघ गया है।' श्रीमती सुषमा स्वराज ने ललकारा, 'दो चार पुरुष भी ऐसा कृत्य करते हैं तो पूरा पुरुष समाज कलकित होता है और स्त्रियो की नजर म हर पुरुष वहशी, जानवर और सदेहास्पद हो जाता है। पुलिस वाले भी हमारे भाई हैं, हम उनका मनोबल नही तोडना चाहती। पर कहे देती हैं कि ऐसे कृत्य अब और हरगिज सहन नही किए जाएगे। सरकार नही सुनगी तो हम उसे सुनवा कर रहेगी। सरकार कायवाही नही करगी, तो हम सीधी कायवाही करेंगी। अब बिल्कुल चुप नही बैठेंगी। अय प्रवक्ताओ ने भी कुछ इसी स्वर मे, इसी लहजे म चुनौती दी चुनौती स्वीकार की। कुछ बहनें तो जोश मे बलात्कारियो से सनिक स्तर पर निबटने, उनका 'कोट माशल' करने या उन्हे सरे आम फासी देने तक की माग उठाती भी दिखाई दी।

बडा मानवीय प्रश्न छोटा अभियान लेकिन एक प्रत्यक्षदर्शी की नाते मुझे यह देख कर आघात लगा कि इतने बडे मानवीय प्रश्न पर 'इतनी सारी महिला सस्थाओ और महिला सासदो के एक मच पर जुटने के बावजूद देश भर की तो क्या, राजधानी की महिलाओ पर भी इस आवाहन की कोई विशेष प्रतिक्रिया नही हुई। सभा म जितनी प्रवक्ता थी रैली मे सम्मिलित सस्थाओ की कुछ गिनी चुनी कायकर्त्रियो को छोड, राजधानी की (प्रबुद्ध या आम) इतनी भी श्रोता महिलाए नही दिखाई दी। सभा व रैली मे अधिकतर सख्या बागपत और अय आसपास के क्षेत्रो स ट्रको मे भर कर आई उन अशिक्षित महिलाओ की थी जिनमे स शायद दो चार ही आदोलन व उसके उद्देश्य स परिचित होगी। पूरा वातावरण प्रतिपक्ष की राजनीति, वोट की राजनीति और भीड के जनतत्र का अधिक था, नारी अस्मिता की रक्षा जैस गभीर प्रश्न मे प्रेरित कम। यद्यपि सभी भाषणकर्त्रिया की माग व प्रधानमत्री स अपील का स्वर यही था कि इस पर राजनीति से हटकर नारी सम्मान सुरक्षा और देश की कानून व व्यवस्था की दृष्टि म ही विचार किया जाए।

गोष्ठिया और सेमिनार

महिलाओ पर अत्याचार और नारी-अस्मिता की रक्षा के प्रश्न पर अय अनेक गोष्ठिया भी हुई—टूरिस्ट होस्टल वाई० एम० सी० ए० मे, विश्वविद्यालय परिसर मे। 'अखिल भारतीय महिला सम्मेलन' की ओर स आयोजित सब-सस्था प्रतिनिधिया व विषय विशेषज्ञो का सेमिनार इनम विशेष रूप म उल्लेखनीय है। देश के सभी प्रमुख नगरो म भी ऐसी गोष्ठिया समिनारो रैलियो और विरोध प्रदशन जुलूसो के समाचार समय-समय पर मिलते रह हैं। लेकिन राजधानी म इसक बाद सब-सस्था महिला आदोलन लगभग समाप्तप्राय हो गया। इसका कारण कुछ तो ससद मे कानून-सशोधन विधे-

यक का लाया जाना हो सकता है, कुछ देश म तभी बाढ व दगो के समाचारो से इन समाचारा का दब जाना और 'ऊपरी आदेन' स पुलिस द्वारा उनका दबाया जाना भी हो सकता है पर मुख्य कारण मेरी राय म यह था कि इस आ दोलन के पीछे कोई सव-सम्मत नीति और विचार शक्ति नही थी।

महिला प्रश्न पर महिला ऐमे

सारे देश की महिलाओ को इस प्रश्न पर सगठित करने व ऐसा जनमत तैयार करन का कोई ठोस प्रयत्न हुआ ही नही। इसके बदले आन्दोलन महिलाओ के भी विभिन्न राजनीतिक खेमा म बट गया। उदाहरण है पहले मथुरा काड को लेकर ८ माच १९८० को 'अन्तर्राष्ट्रीय महिला दिवस पर साम्यवादी विचारधारा से प्रेरित इडियन वूमन्स काउसिल' द्वारा अनक सगठना के साथ आयोजित रली व नाटकीय प्रदशन। फिर सब प्रतिपक्ष महिला रैलिया व प्रदशन। इसके बाद इसके उत्तर मे ४ अगस्त १९८० को काग्रेस (आई) द्वारा महिला शक्तिदल के गठन की घोषणा व उसके माध्यम' से सम्मलन। 'भारतीय जनता पार्टी की ओर से आयोजित महिला सम्मेलन आदि। 'अखिल भारतीय महिला परिषद ने गैर राजनीतिक सस्था होन के नाते इसीलिए इनमे भाग नही लिया। पर उसकी ओर से भी अखिल भारतीय स्तर पर अपनी शाखाओ को परिपत्र भेजन के अलावा कोई व्यापक प्रयत्न इस दिशा मे नही हुआ। यह पहल या तो उसे करनी चाहिए थी या फिर सब सस्थाओ द्वारा स्थापित सघष समिति को। लेकिन जब तक पूरे देश मे वैचारिक बदलाव के लिए कोई व्यापक रचनात्मक आदोलन नही चलाया जाता, इन छिटपुट प्रयत्नो को सामयिक प्रतिक्रिया के अलावा और कोई नाम नही दिया जा सकता। नारी अस्मिता की रक्षा और स्त्री के मानवीय व्यक्तित्व, पथक अस्तित्व की मान्यता के लिए वैचारिक आदोलन तो इसे हरगिज नही कह सकते। क्या अभी भी बुनियादी सोच म बदलाव के लिए और समाज म नारी के 'भोग्या रूप को पुन उभरन से रोकने के लिए पष्ठभूमि तैयार नही हुई है ?

जाहिर है कि सही मान मे यह नारी मुक्ति आदोलन नही था, इसे केवल 'बलात्कार विरोधी सामयिक आदोलन कहा जा सकता है। कानून व्यवस्था की सामा य स्थिति के साथ ही इसे जोड कर देखना चाहिए। जब भी जिस कालावधि म कानून और व्यवस्था की सामान्य स्थिति बिगडती है ऐसे अपराध भी बढ जाते है।

अब तो लगभग रोज ही अखबारो की प्रमुख सुर्खियो मे अपराध, अत्याचार और बलात्कार की खबरें होती हैं। सब सामान्य को पढकर लगता है, हाय, यह अपराधो की बाढ कहा से आ गई ? क्या सचमुच ही ये अपराध बढ गये हैं या कि इन खबरो को प्रमुखता देने की प्रेस नीति अपनी प्रसार सख्या बढाने के लिए सनसनीखेज व हिंसक खबरो को बढावा दे रही है ? प्राय प्रबुद्ध व्यक्ति भी न केवल यह सदेह व्यक्त करता है, इसम उखाड पछाड की राजनीति का हाथ भी निश्चित रूप स मानता है। लेकिन पिछले एक-डेढ दशक की पष्ठभूमि का अध्ययन रखने वाले इन स्थितियो को हैरत की नजर से नही देखते। एक ओर अपराध-बढोतरी की खबरें आती हैं सर्वेक्षण निष्कष

म हुई संयुक्त संघर्ष समिति की इस सभा मे अनेक महिला सासदा और प्रसिद्ध सामाजिक कार्यकर्त्रियो द्वारा जोशीले भाषण हुए। डा० सुशीला नैयर ने कहा, 'एक द्रौपदी के चीरहरण पर महाभारत हो गया था। आज सरे आम सैकडो द्रौपदियो के चीर गुडो व पुलिस द्वारा उतार जा रहे हैं, पर सरकार तमाशा देख रही है। श्रीमती पूर्वी मुखर्जी के भर गले से अटकते ये शब्द निकले, 'दुख और कष्ट अब सीमा लाघ गया है।' श्रीमती सुषमा स्वराज न ललकारा, 'दो चार पुरुष भी ऐसा कृत्य करते हैं तो पूरा पुरुष समाज कलकित होता है और स्त्रियो की नजर मे हर पुरुष वहशी, जानवर और सदेहास्पद हो जाता है। पुलिस वाले भी हमारे भाई है हम उनका मनोबल नही तोडना चाहती। पर कहे देती हैं कि ऐसे कृत्य अब और हरगिज सहन नही किए जाएगे। सरकार नही सुनगी तो हम उस सुनवा कर रहगी। सरकार कार्यवाही नही करेगी, तो हम सीधी कार्यवाही करेंगी। अब बिल्कुल चुप नही बैठेंगी।' अन्य प्रवक्ताओ ने भी कुछ इसी स्वर मे, इसी लहजे मे चुनौती दी, चुनौती स्वीकार की। कुछ बहनें तो जोश मे बलात्कारियो से सनिक स्तर पर निबटने, उनका 'वोट माशल' करने या उ हे सरे आम फासी देने तक की माग उठाती भी दिखाई दी।

बडा मानवीय प्रश्न छोटा अभियान लेकिन एक प्रत्यक्षदर्शी की नाते मुझे यह देख कर आघात लगा कि इतने बडे मानवीय प्रश्न पर 'इतनी सारी महिला सस्थाओ और महिला सासदो के एक मच पर जुटने के बावजूद देश भर की तो क्या, राजधानी की महिलाओ पर भी इस आवाहन की कोई विशेष प्रतिक्रिया नही हुई। सभा मे जितनी प्रवक्ता थी, रैली म सम्मिलित सस्थाओ की कुछ गिनी चुनी कार्यकर्त्रियो को छोड, राजधानी की (प्रबुद्ध या आम) इतनी भी श्रोता महिलाए नही दिखाई दी। सभा व रैली मे अधिकतर सख्या बागपत और अन्य आसपास के क्षेत्रो से ट्रको म भर कर आई उन अशिक्षित महिलाओ की थी, जिनमे स शायद दो चार ही आन्दोलन व उसके उद्देश्य स परिचित होगी। पूरा वातावरण प्रतिपक्ष की राजनीति, वोट की राजनीति और भीड के जनतन्त्र का अधिक था, नारी अस्मिता की रक्षा जैस गभीर प्रश्न से प्रेरित कम। यद्यपि सभी भाषणकर्त्रियो की माग व प्रधानम त्री स अपील का स्वर यही था कि इस पर राजनीति स हटकर नारी सम्मान, सुरक्षा और देश की कानून व व्यवस्था की दृष्टि से ही विचार किया जाए।

गोष्ठिया और सेमिनार

महिलाओ पर अत्याचार और नारी-अस्मिता की रक्षा के प्रश्न पर अन्य अनेक गोष्ठिया भी हुई—टरिस्ट हास्टल वाई० एम० सी० ए म, विश्वविद्यालय परिसर मे। 'अखिल भारतीय महिला सम्मेलन' की ओर स आयोजित सब सस्था प्रतिनिधियो व विषय विशेषज्ञो का सेमिनार इनम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। देश के सभी प्रमुख नगरो म भी ऐसी गोष्ठिया सेमिनारो रैलिया और विरोध प्रदर्शन जुलसो के समाचार समय-समय पर मिलते रहे हैं। लेकिन राजधानी म इसके बाद सर्व-सस्था महिला आन्दोलन लगभग समाप्तप्राय हो गया। इसका कारण कुछ तो ससद म कानून-सशोधन विधे-

यक का लाया जाना हो सकता है, कुछ देश मे तभी बाढ व दगो के समाचारो से इन समाचारो का दब जाना और 'ऊपरी आदेश' से पुलिस द्वारा उनका दबाया जाना भी हो सकता है पर मुख्य कारण मेरी राय मे यह था कि इस आन्दोलन के पीछे कोई सर्वसम्मत नीति और विचार शक्ति नही थी।

महिला प्रश्न पर महिला खेमे

सारे देश की महिलाओ को इस प्रश्न पर सगठित करने व ऐसा जनमत तैयार करने का कोई ठोस प्रयत्न हुआ ही नही। इसके बदले आन्दोलन महिलाओ के भी विभिन्न राजनीतिक खेमो मे बट गया। उदाहरण है पहले मथुरा काड को लेकर ८ मार्च १९८० को 'अन्तर्राष्ट्रीय महिला दिवस पर साम्यवादी विचारधारा से प्रेरित इडियन वूमेन्स काउसिल' द्वारा अनेक सगठनो के साथ आयोजित रैली व नाटकीय प्रदर्शन। फिर सब प्रतिपक्ष महिला रैलिया व प्रदर्शन। इसके बाद इसके उत्तर मे ४ अगस्त १९८० को काग्रेस (आई) द्वारा 'महिला शक्तिदल के गठन की घोषणा व उसके माध्यम' से सम्मेलन। भारतीय जनता पार्टी की ओर से आयोजित महिला सम्मेलन आदि। 'अखिल भारतीय महिला परिषद' ने गैर-राजनीतिक सस्था होने के नाते इसीलिए इनमे भाग नही लिया। पर उसकी ओर से भी अखिल भारतीय स्तर पर अपनी शाखाओ को परिपत्र भेजने के अलावा कोई व्यापक प्रयत्न इस दिशा मे नही हुआ। यह पहल या तो उसे करनी चाहिए थी या फिर सब सस्थाओ द्वारा स्थापित सघर्ष समिति को। लेकिन जब तक पूरे देश मे वैचारिक बदलाव के लिए कोई व्यापक रचनात्मक आदोलन नही चलाया जाता, इन छिटपुट प्रयत्नो को सामयिक प्रतिक्रिया के अलावा और कोई नाम नही दिया जा सकता। नारी अस्मिता की रक्षा और स्त्री के मानवीय व्यक्तित्व, पृथक अस्तित्व की मान्यता के लिए वैचारिक आन्दोलन तो इसे हरगिज नही कह सकते। क्या अभी भी बुनियादी सोच मे बदलाव के लिए और समाज मे नारी के 'भोग्या' रूप को पुन उभरने से रोकने के लिए पृष्ठभूमि तैयार नही हुई है?

जाहिर है कि सही माने मे यह नारी मुक्ति आदोलन नही था, इसे केवल 'बलात्कार विरोधी सामयिक आदोलन' कहा जा सकता है। कानून व्यवस्था की सामान्य स्थिति के साथ ही इसे जोड कर देखना चाहिए। जब भी जिस कालावधि मे कानून और व्यवस्था की सामान्य स्थिति बिगडती है, ऐसे अपराध भी बढ जाते है।

अब तो लगभग रोज ही अखबारो की प्रमुख सुर्खिया मे अपराध, अत्याचार और बलात्कार की खबरें होती है। सब सामान्य को पढकर लगता है, हाय, यह अपराधो की बाढ कहा से आ गई? क्या सचमुच ही ये अपराध बढ गये हैं या कि इन खबरो को प्रमुखता देने की प्रेस नीति अपनी प्रसार सख्या बढाने के लिए सनसनीखेज व ट्रिगर खबरो को बढावा दे रही है? प्राय प्रबुद्ध व्यक्ति भी न केवल यह सदेह व्यक्त करता है, इसमे उखाड पछाड की राजनीति का हाथ भी निश्चित रूप मे मानता है। लेकिन पिछले एक-डेढ दशक की पृष्ठभूमि का अध्ययन रखने वाले इन स्थितियो को हैरत की नजर से नही देखते। एक ओर अपराध-बढोतरी की खबरें आती हैं सर्वेक्षण निष्कर्ष

से जी सके, अपने हक के लिए लड सके और मानवीय मूल्यो पर से उसकी आस्था बिलकुल ही न डिग जाए। जघन्य शील भग की प्रत्येक घटना पर पूरे समाज का सिर शर्म से झुके और उसमे सरकार का मुह ताके बिना इसके निराकरण की भावना और शक्ति जागे। समाज यह भी निश्चित करे कि ऐसे अमानवीय कृत्यो द्वारा उसका स्वास्थ्य, उसकी शान्ति भग करने वाले अपराधी को सामाजिक बहिष्कार के रूप मे किस प्रकार का दड दिया जाए कि कानून से बच कर भी वह सजा से न बच सके? इस तरह की घटनाओ से जब सारे समाज की बदनामी होती हो, जहा नारी पूज्य मानी जाए, वही प्रति वर्ष बलात्कार का आकडा ३० हजार हो, उसमे निरतर वृद्धि भी हो रही हो (बदनामी व भविष्य नष्ट होने के भय से अ दर्ज मामलो की सख्या तो इससे बहुत बडी होनी चाहिए) तो सिद्धान्तहीन राजनीति या सरकार के भरोसे न रह कर समाज को स्वय ही इसका उपाय भी सोचना होगा।

कुछ सवाल कुछ सुझाव

—राजस्थान सरकार की ६ जून, ८० को प्रकाशित एक विज्ञप्ति मे बलात्कार की शिकार महिलाओ को पुष्टि के बाद सहायता राशि देने की घोषणा की गई थी। जोधपुर मडल के सोमेसर गाव मे बलात्कार की शिकार ग्वारिन जाति की एक युवती को पाली के जिलाधीश ने दो हजार रुपये देने की घोषणा इसी नीति के अन्तर्गत की। सवाल उठता है कि इस युवती गवरी, जिसके साथ एक रात पाच व्यक्तियो ने सामूहिक बलात्कार किया, की आबरू और उसके भविष्य की क्या यही कीमत है? असम आन्दोलन मे कामरूप जिले की एक किशोरी माया तालुकेदार के बलात्कार की शिकार होने पर उसे घर से तो नही निकाला गया, पर खबर मिली थी कि घर मे उससे कोई, पति तक, बात नही करता। अपवित्र मान उसे घर की रसोई मे जाने की अनुमति नही है। शर्म के मारे वह बाहर निकलने मे भी घबराती है। तो ऐसे मे वह क्या करे? कहा जाए? जाच आयोग भी अपनी रिपोर्टों मे इस बात का कोई उत्तर नही देते। ऐसी कई गवरी, माया, शीला, कमला ऐसे हादसे से गुजरने के बाद आत्मग्लानि, शर्म व अपमान मे जीवित लाश बन जाने के लिए अभिशप्त होती हैं। उनकी इस मानसिक हानि, व्यक्तित्व-हानि, भविष्य हानि, जिसकी परिणति कई बार आत्महत्या मे भी होती है की कीमत क्या हजार दो हजार पाच हजार मे आकी जाएगी?

—जिस समाज मे स्त्रियो को पुरुषो की निजी सपत्ति मान पुरुषो से बदला लेने के लिए उनके घर की निर्दोष स्त्रियो को अश्लील गाली दी जाती हो, उनसे बलात्कार किया जाता हो, जिसमे नारी, चाहे वह किसी भी सामाजिक दर्जे या आर्थिक हैसियत की क्यो न हो, की पहचान मात्र नारी या 'भोग्या' रूप मे ही हो, बराबरी के इन्सानी दर्जे या उसके मानवी रूप की नही, जहा महिला सासदो तक को रात्रि के सरकारी कार्यों और मीटिंग के लिए सुरक्षित वाहनो की माग करनी पडे, उस समाज का सस्कार और परिष्कार क्या केवल सरकार करेगी?

—जिन सताई गई नारियो को समाज समय पर सरक्षण नही दे सकता, उन्हे बाद

सामयिक तौर पर सामाजिक ताप उठाना स्वाभाविक है। विरोध में आवाज बुलंद करने के लिए नारी-आन्दोलन भी अपनी जगह ठीक है। बल्कि ऐसा न होने पर सामाजिक उदासीनता समझी जाएगी और उदासीनता से प्रेरित 'सब चलता है' वाली प्रवृत्ति से हम पहले ही बहुत सामाजिक हानि उठा चुके हैं। यह कहावत 'जब तक बच्चा न रोए, मां दूध नहीं देती' आज की परिस्थितियों में और भी ज्यादा लागू होती है जबकि बिना विरोध प्रदर्शन या आंदोलन के सरकार व उसके अधिकारियों के कानों पर जूं भी नहीं रेंगती। जहां तक नारी शोषण के विरोध और नारी समस्याओं के समाधान की बात है, नारी संगठन ही इस ओर प्रवृत्त हो कारगर कदम उठाएं तथा ऐसी मानवीय समस्याओं को राजनीतिक मुद्दा न बनने दें, तभी स्थितियों में अपेक्षित सुधार हो सकता है।

पर उपरोक्त घटनाओं व आन्दोलनों के संदर्भ में एक तटस्थ दृष्टि अपनाते हुए ये कुछ और सवाल भी उठाए जा सकते हैं

—आज जबकि न्यायपालिका के कार्यपालिका के समक्ष कथित झुकने अथवा उसके कुछ महत्त्वपूर्ण निर्णय कार्यपालिका के दबाव में होने पर शंकाएं और चिंताएं उठाई जा रही हैं, सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय को इस तरह खुली चुनौती देना सड़कों पर प्रदर्शन करते हुए सर्वोच्च न्यायाधीशों की निर्णय क्षमता पर अंगुली उठाना अथवा उनकी सार्वजनिक आलोचना की प्रवृत्ति को प्रोत्साहन देना क्या ठीक होगा ?

—सही साक्ष्यों के अभाव में या निर्णय के समय कारणवश लापरवाही से मानवीय आधार की उपेक्षा हो जाने से कभी किसी केस के निर्णय में गलती संभव है। मथुरा-केस में भी यह सामान्य नियम लागू होता है। यह भी ठीक है कि निर्णय पर पुनर्विचार की मांग विधानसम्मत है लेकिन यह मांग क्या संसद में नहीं उठनी चाहिए थी ? विधि अध्यापकों द्वारा खुला पत्र छपवा कर सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की अवमानना और नारी संगठनों द्वारा इस मांग को सड़कों पर उठा कर जवाब तलब करना, गलत परंपरा डालना भी तो हो सकता है।

—हमारी न्याय प्रणाली का मूल सिद्धान्त है—निरपराध को दंड देने के बजाय अपराधी का छूटना बेहतर। प्रायः अपराधी इसी कारण संदेह का लाभ ले जाते हैं। यद्यपि मथुरा केस में यह संदेह का लाभ पुलिस कर्मचारी को नहीं मथुरा को मिलना चाहिए था, इस दृष्टि से आंदोलन का समर्थन ही किया जा सकता है पर महिला-संगठन अपनी शक्ति का सहारा देकर मथुरा से भी तो निर्णय पर पुनर्विचार की अपील करवा सकते थे ? महाराष्ट्र सरकार पर दबाव डाल उसके द्वारा भी संबंधित याचिका प्रस्तुत की जा सकती थी ?

—कानून की कमियां दूर करने व उसमें उचित संशोधन की मांग लेकर नारी-संगठन राष्ट्रपति को प्रधानमंत्री को, विधि मंत्री को संसद सदस्यों को ज्ञापन दें। अत्याचार के विरोध में सशक्त आवाज उठाएं, प्रदर्शन करें धरने दें, जरूरत पड़ने पर जेल भी जाएं आत्म-बलिदान भी करें और कानूनी मोर्चे से भी लड़ें। लेकिन सर्वोच्च न्यायालय के निर्णयों को सड़कों पर सार्वजनिक आलोचना का विषय न बनाएं। महिला संगठनों को न राजनीतिज्ञों की चालों का मोहरा बनना चाहिए न ही राजनीति को इन

के अपराध बढ सकते हैं। देखना होगा कि एक अपराध दर गिराने मे दूसरी अपराध दर न बढ जाए। वैसे भी आदोलना मे स्त्री को जितनी अबला, असहाय बताया जाता है, उतनी आज वह है नही। स्त्रियो द्वारा किए जाने वाले अपराधो की, सगीन अपराधो की भी, बढती दर इसकी गवाह है। आज के समाज म व्यभिचार फैलान म वे भी समान नही तो वहुत हद तक दोषी है। (देखिए, 'व्यक्तिगत विघटन' के अतगत पाठको की समस्याओ सबधी प्रकरण)

—अपराधी हमेशा अपराध चेतना के कारण भीतर से कमजोर व भयभीत होता है। अत जब तक सामूहिक पुरुष बल या एकदम असहाय स्थिति ही सामने न हो, स्त्री कम स कम प्रतिरोध तो कर ही सकती है—शोर मचा कर, हाथ पाव से, दाता और नाखूना से, बुद्धि बल से, हर सभव उपाय स। बदली स्थिति म उसे समाज भय भविष्य-भय या शम के मारे चुप नही रहना चाहिए। अपने हक के लिए, अन्याय के विरुद्ध लडें नही, चुप लगा जाए तो इसस भी बलात्कारियो को शह मिलती है और उनकी हिम्मत बढती है। जो स्वय कानून का सहारा न ले सकें नारी सगठना की सहायता एसी लडकिया को अवश्य उपलब्ध होनी चाहिए। बलात्कारी बच कर न जाए उसे कडी सजा मिले, इसके लिए जब तक स्वय स्त्रिया और स्त्री सगठन आगे नही आएगे परिवर्तित कानून भी उनके लिए कुछ नही कर पाएगा।

—अपनी शक्तियो और सीमाओ दोनो की पहचान जरूरी है। अकारण अनावश्यक साहस या दुस्साहस दिखाकर खतरो वाली जगहो पर अकेले जान म कोई तुक नही। हर काम मे पुरुषा की बराबरी की होड मे, न करणीय काय भी करन के चक्कर म, ताल ठोक ललकारने की सी मुद्रा मे अहवादी पुरुषो को चिढा कर अपने पीछे लगाना और जान बूझ कर स्वय को जोखिम मे डालना क्या ठीक है? कई रिकाड बतात हैं कि असफल प्रेम के बहुत से मामलो म अपहरण व बलात्कार इसी अहम की चोट से या बदले की भावना स होते हैं। लडकियो को गलत कामा मे अपनी शक्तियो का अपव्यय बचाना चाहिए। इसके बदले आत्म शक्ति बढा पुरुषो पर नैतिक दबाव डालन स्वय निभर होकर चलन और समाज म सबके लिए निभयता व सम्मान से जीन योग्य स्थितियो के विकास म अपनी शक्तियो को व्यय करन का प्रयत्न क्या ठीक नही होगा? जब तक मित्रता गहरी न हो जाए, एक दूसरे पर अटूट विश्वास न पैदा हो जाए लडकिया को प्रेम-पत्र भेजने से भी बचना चाहिए, अन्यथा पूव खिलवाड का मामला बाद मे 'ब्लैकमेलिंग' म बदलने का खतरा रहता है और इसी भय से बहुत सी लडकियो को गलत समझौते करने पडते हैं। यदि अपनी भूल से या अन्य किसी कारण कभी ऐसी स्थिति का सामना करना भी पडे तो अपराधी को समपण करन के बजाय साहस से काम लेना चाहिए। परिवार की मदद से स्थिति को सभालना चाहिए। यह सभव न हो या घर मे ही स्थिति ठीक न हो तो महिला सस्थाओ के सबधित विभागो म जाकर रिपोट करनी चाहिए ताकि उनकी मदद स मामले को सभाला जा सके। इस उद्देश्य के लिए सस्थाओ को तकनीकी व कानूनी सलाह-केन्द्रा का भी निर्माण और विस्तार करना है। सहायता सस्थाओ की उपयोगिता बढाने के लिए उनमे फले भ्रष्टाचार का निवारण भी जरूरी है।

—कला क्षेत्र की ओर दलित वग की स्त्रिया को भी मरक्षण देन दिलान की जिम्मेदारी महिला सगठनो को उठानी चाहिए और असहाय दलित रग के सहायता-काय को प्रमुखता देनी चाहिए। उन्ह देखना है कि अथ सत्ता की शक्ति य प्रदशन म, दवाव या बदले की भावना स दलित स्त्रिया और अधीनस्थ स्त्रिया पर यौन शक्ति के इस घिनौने हथियार का प्रयोग न हो, अयथा प्रगति पथ पर बढते नारी के कदम डग-मगा कर फिर पीछे लौटने लगेंगे। यवना के आक्रमणो स नारी लाज बचाने के उद्देश्य से भारतीय नारी पर लग पूव प्रतिबधा वाला इतिहास दुहराया नही जाना चाहिए।

बलात्कार का इतिहास

कहा जाता है कि बलात्कारी पुरुप का व्यवहार पशुवत हाता है। लेकिन प्राणि-विनान की दष्टि से यह बात गलत है अवैनानिक है। बलात्कार पशु स्वभाव नही है। पशुओ मे कामेच्छा प्राकृतिक ढग से प्रजनन के साथ जुडी है। उनम सगम की यह स्थिति एक स्वाभाविक आवत्ति है। एक अनुशासित चक्रिक प्रक्रिया। नर पशु तब तक इसके लिए उद्यत नही होता जब तक कि मादा पशु अपने जैविक सकेतो द्वारा नर पशु को आमन्त्रित न करे और उनम यह क्रिया तब तक सम्पन्न नही होती, जब तक कि मादा की इच्छा व सहयोग उसमे शामिल न हो। मानव की स्थिति इससे भिन्न है। मनुष्य मे यह इच्छा उसके मस्तिष्क मे जागती है और नारी की काम क्रिया अनिवाय रूप से उसकी प्रजनन प्रक्रिया के साथ जुडी हुई नही है, न ही पुरुप की यह माग नारी की इच्छा, तैयारी या आमन्त्रण पर निभर करती है। इसलिए प्राकृतिक रूप स पुरुप कभी भी अपनी यह इच्छा स्त्री पर लाद सकता है।

प्राचीन भारत मे 'पैशाच' विवाह की निन्दा
स्त्री को सरक्षण

आदिकाल से, जब स पुरुष न अपन पुरुषत्व को पहचाना, वह स्त्री पर अपन इस हथियार से अधिकार जमाता आया है। विधिवत विवाह सस्था की समाज मे स्थापना से पूव अपहरण और बलात्कार ही आदिम विवाह के रुप थे। इन्ह वदिक ऋपिया ने समाजसम्मत नही माना पर इन अस्वीकृत विवाह के निम्न रूपा द्वारा प्राप्त पत्नियो को भी गहस्थ मे शामिल किया कि वे निर्दोप होने पर सामाजिक दड की भागी न बनें। वैदिक काल म प्रचलित आठ प्रकार के विवाहा का हमारे प्राचीन साहित्य म उल्लेख है। य है—दैव विवाह आप विवाह ब्राह्म विवाह, प्रजापत्य विवाह, आसुर विवाह, गधव विवाह राक्षस विवाह और पैशाच विवाह। इनमे से प्रथम चार समाज स्वीकृत थे, अतिम चार अस्वीकृत पर जिन्हें आपद धम के रूप म मान कर स्त्रियो को सरक्षण प्रदान किया गया। इनम मे प्रथम तीन विवाह प्रकार विद्वान ब्राह्मणा और ऋपिया के लिए माने गए थे। प्रजापत्य क्षत्रिया और वश्यो के लिए। लेकिन अस्वीकृत चार विवाहा मे से वधू मूल्य देकर खरीदी गई पत्नी वाला 'आसुर विवाह, वश्यो के लिए, शौय दिखा कर अपहरण द्वारा अपनी प्रेमिका या इच्छित स्त्री को लाकर उससे किया

गया 'राक्षस विवाह' क्षत्रियो के लिए तथा 'गधव विवाह' सभी सामान्य प्रेमियो के लिए —इस तरह तीन प्रकार के इन स्वच्छिक विवाहो को सामाजिक सम्मान न देकर भी इन्ह सामाजिक स्वीकृति द दी गई। पर नशे म मदोन्मत्त कर धोखे स स्त्री स सबध स्थापित करने या बलात्कार के माध्यम से उस पर अधिकार करने वाले पैशाच विवाह को विवाह का निकृष्टतम रूप मान इस आपद्धम के रूप म भी मान्य नही किया गया, केवल उसम प्राप्त स्त्री को सरक्षण द दिया गया।

सुदर स्त्री का अधिकारी बहादुर पुरुष ही होता है उक्ति अपहरण विवाह का समथन करती है, जबकि हमारे प्राचीन साहित्य म पैशाच विवाह या बलात्कार की सवत्र भत्सना की गई है। पर यहा यह बात ध्यान दने की है कि उस समाज मे जोर-जबरदस्ती के पैशाचिक विवाह और बलात्कार की घोर निन्दा करके भी उसस प्राप्त पत्नी को समाज-बहिष्कृत नही किया गया। आठ प्रकार के विवाहो म निकृष्टतम मान कर भी इस इसीलिए विवाहो म शामिल किया गया कि निर्दोष स्त्री दडित न हो और उसे परिवार मे सरक्षण मिले। यहा एक बात और उल्लेखनीय है कि वदिक साहित्य म स्वीकृत प्रथम चार विवाहो म 'दैव' और 'आर्ष' की ऋषि परम्पराओ को छोड सामान्य सभ्य समाज म ब्राह्म विवाह और 'प्रजापत्य विवाह ही प्रचलित स्वीकृत व सम्मानित हुए जिनम कन्या का पिता योग्य वर खोज, उस विवाह के समय कुछ भेंट उपहार देकर सुखमय जीवन के आशीवाद और गृहस्थ जीवन के कत्तव्यो की सीख के साथ अपनी पुत्री सौंपता है। यही विवाह तब से आज तक हिंदू विवाह पद्धति मे आदश विवाह माना जाता है और इसे ही सामाजिक मान्यता व प्रतिष्ठा प्राप्त है।

पर वात्स्यायन के 'काम सूत्र म आर्यों द्वारा छठे स्थान पर रखे गए परस्पर सहमति से किए जाने वाले प्रेम विवाह यानी 'गधव विवाह को ही आदश विवाह कहा गया है। आधुनिक समाज मे इसे स्वीकृति प्राप्त हो गई है पर अभी इस आदश नही माना जाता। अपहरण विवाह विशेष स्थिति मे प्रेम विवाह मे शामिल कर लिया गया है। 'आसुर विवाह' भी निम्न जातियो म स्वीकृत व प्रचलित है। पर पैशाच विवाह' को कभी किसी युग म मान्यता नही मिली, प्रतिष्ठा का तो प्रश्न ही नही उठता। इसलिए अत्याधुनिक मुक्त यौन की माग के साथ भी इस जोर जबरदस्ती का कही मेल नही बैठता। इसकी निन्दा हर युग मे हुई है, आगे भी की जाएगी। इसलिए प्रश्न इसकी मान्यता अमान्यता का नही, जसे प्राचीन काल म आपदधम मान कर सताई गई स्त्री को समाज मे सम्मान से जीनेके लिए सरक्षण प्रदान किया गया था, पुनरुत्थान के इस युग म भी बलात्कृत स्त्रियो को निर्दोष मान उन्हे परिवार म समाज मे अपनाने का है। धोखे से, जोर-जबरदस्ती से या बलात्कार से अधिकार करने के बाद उस स्त्री की रजामदी से उसके साथ विवाह करने की इच्छा प्रकट करने वाले को कानूनी सजा और सामाजिक बहिष्कार म उसी प्रकार छूट मिलनी चाहिए, जसे कि प्राचीनकाल मे स्त्री सरक्षण के लिए पैशाच विवाह' को भी अतत स्वीकार कर लिया जाता था। इसस इस निन्दनीय कृत्य को समथन तो नही मिल जाता, लेकिन इसकी शिकार स्त्री को सरक्षण अवश्य मिल सकगा।

मान्यताएं बदलीं शक्तिशाली का अधिकार वहीं समय के साथ सामाजिक मान्यताएं बदली। सामन्ती युग म विद्वत्ता और शौर्य का स्थान भू सपत्ति और धन-शक्ति के प्रदशन ने ले लिया। लेकिन शक्तिशाली का अधिकार वही रहा। आधुनिक काल मे भी यह बल कायम है, केवल वह धन-दौलत, राजनीति और ऊचे ओहदा म परिवर्तित हो गया है। स्त्री की निजी इच्छा और स्वतन्त्रता समय समय पर बल-प्रयोग के इन्ही भिन्न प्रकारा स सीमित या बाधित होती रही है। राष्ट्रो के इतिहास म समकालीन सामाजिक स्थितियो के प्रभाव से भी इस स्वतन्त्रता का रूप बदलता रहा है।

भारत की बेहतर स्थिति *इस सदभ मे भारतीय स्थितिया नारी के पक्ष मे अधिक* अनुकूल रही हैं। विश्व इतिहास मे स्त्रियो पर बल प्रयोग व अत्याचार का अध्ययन करने पर आदि काल से आधुनिक काल तक भारतीय नारी की स्थिति बेहतर दिखाई देती है तो इसका श्रेय हमारे वैदिक ऋषियो द्वारा अपनाई गई नीतिया— बुद्धि और शौय के माध्यम से सुख भोग की प्राप्ति पर जोर देना, भोग को नैतिक आध्यात्मिक नियमा के साथ जोड योग की ओर उन्मुख करना और स्वीकृत विवाहो म न गिन कर भी आसुर, गधव, राक्षस विवाहो को, विशेष स्थिति मे पैशाच विवाह को भी आपदधम के रूप मे मान्यता देकर स्त्री को सरक्षण देना—को दिया जा सकता है।

मध्यकाल मे भारतीय स्त्री की स्वतन्त्रता बहुत सीमित हो गई थी। उसे अनेकानेक बधना से जकड दिया गया था। पर इसके बावजूद उसकी स्थिति अन्य राष्ट्रो की अपेक्षा सरक्षित रही। यद्यपि सती प्रथा, परदा प्रथा बाल विवाह जैसी कुरीतियो का किसी भी तरह समथन नही किया जा सकता, लेकिन माना जा सकता है कि वे विदेशी आक्रमणो से बाहरी पुरुषा के अत्याचारो से रक्षा के लिए भारतीय स्त्री समाज पर मजबूरी से लादी गई थी। कारण ये रह हा या हमारी मूल सस्कारिता या दोनो, *हमारी सभ्यता और सस्कृति मे, मध्यकाल या रीतिकाल मे भी, बलात्कार लगभग* निर्वासित रहा और उसका स्थान सुरक्षित काम' ने लिया। जो विकृतियां रही, बाहर उनकी चर्चा निन्दित होने से उनके भी बडे पैमाने पर पूरे समाज म फैलने बढने पर रोक लगी रही। राजे महाराजा नवाबा सामन्ता के जीवन की विलासिता की अपनी शैली व परपरा रही, जन जीवन के प्रवाह पर उसका कोई विशेष असर न था। पूव सामन्ती विलासिता और आज के नवधनिका और समाज के शक्तिशाली वर्गो की विलासिता की तुलना की जाए तो भी उसमे धन शक्ति के बल पर स्त्रियो को आकर्षित करने उन्हे खरीदने या उनकी मजबूरी का लाभ उठाने की समान बात ही अधिक निकलेगी। बलात्कार जैसी जघन्य प्रवृत्ति का समथन वैसी स्थितिया मे भी कभी नही किया गया न आगे कभी किया जा सकेगा।

भारतीय स्त्री के इस माने मे अधिक सुरक्षित रहने के इतिहास के पीछे एक मत यह भी है कि विदेशी आक्रमणो के बाद सत्रहवी से उन्नीसवी शताब्दी तक का भारतीय इतिहास सत्ताधारियो की नीतिया पर आधारित है। शायद इसलिए भी भारतीय

स्त्रियो पर हुए गोरो के अत्याचार पर परदा डाल दिया गया हो ! यह भी सभव है कि अपनी सस्कारिता और मध्यकाल से विकसित मनोविज्ञान के कारण यहा की स्त्रिया ने अपनी व अपने परिवार की इज्जत की रक्षा के लिए उन जुल्म-घटनाओ को चुपचाप सहन कर लिया हो ! पर इस मत मे अधिक जान नही है। ऐसे उदाहरण बहुत कम है और यह बात निर्विवाद रूप से सारे ससार द्वारा मान्य है कि विश्व के अ य राष्टो की तुलना म भारतीय नारी प्राचीन काल से आज तक अधिक सम्मानित और सरक्षित रही है।

पश्चिमी इतिहास मे नारी-देह शोषण

सुसन ब्राउन मिलर ने अपनी पुस्तक 'अगेंस्ट आवर विल' मे बलात्कार के इतिहास पर प्रकाश डालते हुए शिकायत की है कि पश्चिमी विद्वानो ने इस महत्वपूण मानवीय प्रश्न पर या तो चुप्पी साध ली है या इसे मनोविकार कह कर छोड दिया है। यौन विकार विशेषज्ञ क्राफ्ट एबिंग ने भी बलात्कारी को पतित व जडबुद्धि इसान कह कर इस विषय को वही समाप्त कर दिया। फ्रायड ने मनोविश्लेषण म स्त्री पुरुष के अग प्रत्यग और सेक्स ग्रथियो, कुठाओ पर विस्तार से लिखते हुए भी बलात्कार पर कुछ नही कहा, यह आश्चय का विषय है ! एडलर भी चुप रहे। युग न केवल इसका सदभ म जिक्र भर किया है। माक्स और एजल्स जसे विद्वाना ने भी वग सघष अत्याचार के सिद्धात स्थापित करते हुए इस विषय को एकदम नजरअदाज कर दिया। आगस्ट बेवल ने पहली बार बलात्कार के इतिहास पर ध्यान दिया और 'वीमेन अडर सोशलिज्म' मे इसके कारणा पर प्रकाश डालते हुए लिखा, सत्ता और धन-सपत्ति के सघष मे पहले स्त्रियो के साथ बलात्कार करके उनके पुरुषो को झुकाया गया, फिर पराजित पुरुषो को गुलाम बनाया गया। य सब विवरण देते हुए सुसन ब्राउन मिलर आश्चय व अफसोस जाहिर करती है, 'इससे स्पष्ट है कि प्राचीन काल की स्त्रियो ने अपने साथ हुए बलात्कारा के विरुद्ध कोई आवाज नही उठाई। उन्हे न्याय मागने का हक ही शायद दिया नही गया और मानवता के विरुद्ध इतने बडे अपराध की उपेक्षा कर दी गई। स्त्री तब पुरुष की सपत्ति थी, उसका अपमान उसके पुरुष का अपमान समझा जाता था। शायद इसीलिए पुरुष ही आवाज उठा सकता था, स्त्री नही।'

भारत से बाहर अ य देशो मे स्त्रियो के देह शोषण की क्या स्थितिया थी, यह बात निम्न उदाहरणा से भी स्पष्ट है

अमेरिका मे गुलाम स्त्रियों पर अत्याचार आज से केवल दो शताब्दी पूव अमेरिका म दक्षिणी गुलामा और काली नीग्रो स्त्रियो पर बेशुमार जुल्म ढाए जाते थे। बेगार मे काम लेने के लिए गुलाम सताना की उन्हे जरूरत थी, इसके लिए गुलाम स्त्रिया अपने मालिको की जायदाद समझी जाती थी। इन स्त्रिया के पास अपने बचाव के लिए कोई कानूनी अधिकार नही था। प्लाटेशन कानून के अनुसार किसी दूसरे की गुलाम स्त्री से किसी अन्य गोरे मालिक द्वारा बलात्कार अपराध था, जबकि अपनी गुलाम स्त्री से जबरदस्ती सतान पदा करना उनका मालिकाना अधिकार था। मालिक

की इच्छा का वे लोग जरा भी विरोध नही कर सकती थी, क्योकि इनसे सहवास और बच्चे पैदा करना मालिको का कानूनी अधिकार था। बच्चे पैदा कर सकन वाली स्त्रिया, बच्चे पालने वाली स्त्रिया और इसके अयोग्य स्त्रिया यही मात्र उनका वर्गीकरण था। भरण-पोषण की सुविधाए भी उन्हें इसी के अनुसार मिलती थी। उनकी खरीद बिक्री का अधिकार भी मालिका के पास था। और विरोध का अथ था, कोडो की मार, चाकू से गोदना या फिर गोली से उडा देना।

वर्जीनिया गुलाम बच्चो व स्त्रियो के व्यापार का एक बडा केन्द्र था। पैदा होते ही गुलाम बच्चो की खरीद बिक्री शुरू हो जाती थी। आठ साल की उम्र तक आते ही वे कठोर श्रम के काय करने योग्य समझे जाते थे और उन्हे सुदूर दक्षिण मे उन क्षेत्रो म भेज दिया जाता था, जहा कि कठोर श्रम की आवश्यकता हो। बेचारी माताओ का अपने बच्चो पर कोई अधिकार न था। गोरे मालिको की सतान होने पर भी इन बच्चो के पितत्व का प्रश्न ही न था। वे केवल गुलाम थे और सस्ते मजदूरो की जरूरत के लिए पैदा किए जाते थे। इन स्त्रियो और बच्चो की करुण कहानियो से अमेरिका का प्राचीन साहित्य भरा पडा है। इन्हे एक ओर मालिक के वहशी जुल्मो का शिकार होना पडता था दूसरी ओर मालकिन की घणा का। जरा-जरा सी बात पर उन्हे सबक सिखाने के लिए कभी मालिक, तो कभी मालकिन के डडो की मार सहनी पडती थी। गुलाम स्त्रिया की गोरी सुदर कन्याए 'फसी गल्स' के नाम से विश्व के वेश्यावत्ति-अड्डो के लिए बेच दी जाती थी। कुछ बाजार और होटल इन लडकियो की बिक्री के लिए प्रसिद्ध थे। गुलामो का मालिक ही कानूनी तौर पर चकले का मालिक भी होता था, जिसे सुदर गुलाम लडकियो से जबरदस्ती वेश्यावत्ति कराने का अधिकार प्राप्त था। कितने लोग जानते हैं कि आज के उन्नत और समद्ध देश अमेरिका की समृद्धि की नीव मे इन गुलाम स्त्रियो की शहादत की कितनी खाद डाली गई थी ?

अमेरिकी इतिहास म रेड इडियनो और गोरो की परस्पर घृणा के परिणाम स्वरूप रेड इडियन स्त्रियो के साथ गोरो के और गोरी स्त्रियो के साथ रेड इडियन पुरुषो के बलात्कार की कहानिया भी कम नही हैं।

भारत मे हरिजन समस्या और अमेरिका मे नीग्रो समस्या को समान स्तर पर रख कर जो लोग इनकी तुलना करते हैं उन्हें उपरोक्त विवरण से अन्तर सहज ही समझ मे आ जाएगा। भारत की सवण हरिजन समस्या और अमेरिका की काले-गोरे की समस्या समान नही है। इसम बुनियादी भेद है। इसी तरह वहा की गुलाम स्त्री व भारत की दासी गोली मे भी, यद्यपि दोना ही मध्य सामन्ती युग की देन थी।

युद्ध और बलात्कार

प्राचीन काल से आज तक विश्व मे जितने भी युद्ध हुए उसका एक दुर्भाग्यपूण पहलू विजेता सनिकों द्वारा विजित देश या क्षेत्र की स्त्रियों के साथ व्यक्तिगत व सामूहिक

बलात्कार भी है। पुराने जमाने मे कुछ देशो की युद्ध नियमावली मे इस अधिकार को सामाजिक मान्यता भी प्राप्त थी। यूनान की युद्ध-सहिता इसका प्रमाण है। युद्ध के दुष्परिणाम को नागरिक धन सपत्ति के विनाश, सबधियो की मृत्यु, स्त्रियो के वैधव्य, अनाथ बच्चो और धर्म के नाश के रूप म तो भोगते ही हैं, सबधित देश की स्त्रिया बलात्कार के रूप म इस दुष्परिणाम को अधिक गहरे स्तर पर अभिशाप रूप म भोगती है। जैसे पत्नी की रक्षा करना पति का कर्तव्य है तो पति को नीचा दिखाने के लिए उसका कोई शत्रु उसकी स्त्री को अपमानित करके सतुष्ट होता है, इसी तरह किसी राष्ट्र का कर्तव्य भी अपने नागरिको की रक्षा करना माना जाता है तो शत्रु राष्ट्र विजेता होकर, या हार की स्थिति म लौटते हुए भी, उस राष्ट्र की स्त्रिया को अपमानित करने स नही चूकता। सैनिको के प्रशिक्षण मे शत्रु देश की धन सपत्ति शस्त्र भडार और कल-कारखाने नष्ट करने की योजनाए शामिल होती हैं, पर पुरुष स्त्री को भी सपत्ति समझता है, तो शत्रु देश के सैनिक इस सपत्ति को लूटना भी अपना अधिकार मान लेत हैं।

सभ्यता के विकास के साथ १०वी शताब्दी से ही सभ्य ससार म युद्धकालीन बलात्कार के विरुद्ध आवाज उठाई जाने लगी थी। सयुक्त राष्ट्र सघ की स्थापना के बाद अतर्राष्ट्रीय युद्ध नियमावली भी बनाई गई। इसके अनुसार, बलात्कारी सैनिक की सजा उम्र कैद और फासी तक हो सकती है फिर भी हर युद्ध म बडे पमाने पर इस अपराध की स्थिति बनी हुई है। प्रथम विश्वयुद्ध मे जर्मन-सेना ने बेल्जियम पर आक्रमण किया और जर्मनो द्वारा खुल कर बलात्कार किए गए।

दिल दहलाने वाले विवरण आनल्ड तोयनबी ने इस युद्ध मे बलात्कारो की नृशसता का हृदय विदारक वर्णन दो पुस्तको म किया है—एक पुस्तक मे बेल्जियम स्त्रियो पर व दूसरी मे फ्रासीसी स्त्रियो पर बलात्कार के ये वर्णन दिल दहला देन वाले हैं। जर्मन सैनिको की नृशसता पर हिल्स की पुस्तक और 'पोलिश यहूदी जाति की काली किताब' भी भयानक रूप से प्रकाश डालती हैं। जर्मन-सैनिको ने यहूदी स्त्रिया के साथ बलात्कार करने के बाद या तो उन्ह मार दिया या उनके छिपे अगो पर 'हिटलर के सैनिको की रखैल' का छापा गोद दिया। इन स्त्रिया को यो भी परिवारो म खपाना कठिन होता है। जिन्होन अपना जीवन नये सिरे से शुरू करन के लिए शादिया की उनके पतियो ने अपनाने के बाद भी उनके शरीर पर गुदे छापे देख कर उन्हें छोड दिया। इस तरह युद्धकालीन हादसे से गुजरने के बाद जीवित बच कर भी वे मानसिक रूप म जीवित लाश बन गइ।

द्वितीय महायुद्ध द्वितीय महायुद्ध म जर्मन-सैनिको के अत्याचार स सबधित कहानिया समय-समय पर प्रकाशित होती रही हैं। लेकिन उन हादसो के ३८ वर्ष बाद इधर मा-बेटी तीन महिलाओ की जो आतकभरी दर्दनाक कहानी प्रकाश म आयी है, उसे पढ कर रूह कांप उठती है—फ्रांस के सउलन से ३० किलोमीटर दूर एक सुनसान क्षेत्र मे पेडो व झाडियो म घिरे मकान मे ६१ वर्षीय विधवा श्रीमती हेलन बारबरो अपनी दो बेटियो ६३ वर्षीय जोजी तथा ६१ वर्षीय जेनेवीव के साथ रहती थी। १२ अगस्त,

१९८० को एक सरकारी कर्मचारी श्रीमती बारबरी के नाम एक पत्र लेकर उस मकान पर पहुचा। जीनी ने आधी खिडकी खोल कर सदेशवाहक से कहा, 'मा की हालत बहुत खराब है अत वह उठ कर पत्र नही ले सकती।' लेकिन पत्रवाहक को जीनी ने अपनी मा का इलाज करने वाले डाक्टर का जो नाम बताया, वह ६ वर्ष पूर्व मर चुका था। पत्रवाहक को सदेह हुआ। उसने आसपास के घरो से पूछा तो उसे बताया गया कि श्रीमती बाररी को किसी भी व्यक्ति ने इधर एक अर्से से नही देखा।

सदेह पक्का होने पर जब सरकारी कर्मचारी घर के भीतर जबरन घुस तो जीनी ने कापते हुए स्वर म कहा, 'मेरी मा को मत छुआ, वह बहुत बीमार हैं।' लेकिन कपडा हटा कर देखने पर मालूम हुआ कि वह फर के कोट म लिपटा हुआ श्रीमती बारबरो का ककाल था जिसकी मृत्यु तीन-चार वर्ष पहले हो चुकी थी। ककाल से हृदय बाहर निकाल लिया गया था और ककाल पर पालिश चढा कर उसके गले म सोने का लाकेट डाल दिया गया था। जाच करने पर ३८ वर्ष पूर्व की ददनाक कहानी सामने आयी जब जमन सेना के कुछ सैनिक उनके घर म घुस आए थे और कई दिन वही रह थे। व इन तीनो मा बेटियो के साथ लगातार बलात्कार करते रहे थे। उस समय मा की उम्र ५३ वर्ष और बेटियो की क्रमश २५ व २६ वर्ष थी। उस हादसे के बाद वे तीनो विक्षिप्त सी हो गई थी। पिछले ३८ वर्षों से उस घर मे न गैस थी न बिजली। पूरा घर अस्तव्यस्त था। पर दानो बेटिया को उस आघात से असुरक्षा का भय बैठ जाने से व मा को नही छोडती थी और मा के भरोसे ही चलती थी। इसलिए मा के मर जाने पर उन्होने ककाल के सहारे जीना शुरू कर दिया ताकि बाहर वालो को यह पता न चले कि वे अकेली रहती हैं। लेकिन उन्ह विक्षिप्तता मे भी इतना होश अवश्य था कि वे मा की पेंशन लेना नही भूली। उनकी गुजर बसर इसी पर निर्भर थी, शायद इसलिए। अधिकारियो ने दोनो बहनो को मा के पास से हटा कर (उन्ह पता चला था कि वे दोना ककाल की बगल म ही सोती थी) मानसिक चिकित्सालय मे भेज दिया। यह दुदान्त घटना आधुनिक महिलाओ के समानाधिकार और अपनी रक्षा आप के नारे पर एक करारा व्यग है।

हिल्स की पुस्तक म भी एक फ्रासीसी सैनिक हताश स्वर मे बयान करता है 'जमनो ने मेरा छोटा सा घर नष्ट कर दिया। मैं अपनी पत्नी के साथ जिस नन्ही बच्ची को छोड गया था, लौटने पर देखा मेरी पत्नी और वह नन्ही बच्ची, जो अब किशोरी हो गई थी दोना ही गर्भवती थी। जमन सैनिको ने मेरा घर, मेरी पत्नी मेरी बच्ची तीनो को लूट लिया था।' यह उद्धरण भी कम ददनाक नही है।

जापानी सेना ने चीन पर हमला करके जब उसकी राजधानी नानकिंग पर कब्जा किया तो उन्होने भी नानकिंग की स्त्रिया के साथ वही व्यवहार किया जो 'नानकिंग के बलात्कार' के नाम से कुख्यात है। दूसरे महायुद्ध म अमेरिकी सैनिको ने भी जो बडे पैमाने पर बलात्कार किए उनकी नशसता के आगे म जमन व रूसी सैनिको के घृणित बलात्कारो की कहानिया भी फीकी पड गइ। १९६० मे कागो सैनिको न भी अपनी आजादी का उत्सव मनाते हुए बेल्जियम स्त्रिया पर बलात्कार किए। वियत-

नाम युद्ध म भी अमेरिकी सैनिको ने कम जुल्म नही ढाए।

ताजा उदाहरण वगला देश की लडाई है, जिसमे हताश पाक सनिको ने बगला देश की डेढ से दो लाख तक स्त्रियो से सामूहिक बलात्कार किया। पाक सैनिको के जुरम की ये कहानिया अभी लोग भूले न होगे कि किस तरह बगाली स्त्रियो के लम्बे बाल भी काट दिए जाते थे और उनकी साडिया भी छीन ली जाती थी कि कही व उनसे गले म फदा वना कर आत्महत्या न कर लें। ये सैनिक जब तक वहा रह अपने कब्जे म आई इन स्त्रियो से स्वय तो अपनी पिपासा शात करते ही थे उनसे जबरन वेश्यावृत्ति करवा कर पैसा भी कमाते थे। हजारो स्त्रिया गभवती हुइ। पाक सैनिको ने वगला देश से हार कर लौटते हुए अपनी नस्ल का बीज वही छोडने के रूप मे इसे अपनी जीत मे शुमार किया। लेकिन वगला देश के लिए वलात्कृत स्त्रियो की इतनी वडी सख्या एक समस्या बन गई। तत्कालीन प्रधानमत्री शेख मुजीबुरहमान ने इन स्त्रियो को वगला देश की आजादी की शहीद वीरागनाए कह कर उ हे सम्मान दिया। फिर भी वे उन्हें उनके परिवारो मे व समाज मे स्थापित नही कर सके। वहा की स्थिति का जो भयावह वणन मैंने सुप्रसिद्ध मुस्लिम समाज नेत्री श्रीमती तारा अली बेग के मुह से सुना था वह रोगटे खडे कर देने वाला था कि केवल दस प्रतिशत परिवार ही अपनी मर्जी से उन्हे अपनाने के लिए तयार हुए थे। मजबूरी से पुरुषो की पाशविकता की शिकार नारी को ही जब (पुरुष के बजाय) इस कदर सजा दी जाए, तो इमसे बडा अपमान आज की तथाकथित समान अधिकार सपन्न नारी का क्या होगा? ये महिलाए मानसिक रूप से अध विक्षिप्त सी हो गई थी। उनकी एक बडी सख्या यौन रोगो से भी पीडित थी। सकडो न आत्म हत्या कर ली। जो गभवती थी, उनमे वच्चे को ज म देन या उसे पालने का कोई उत्साह न था। ऐसे समय सेवामूर्ति मदर टेरेसा सामने आयी। उ होन इन अभिशप्त नारियो की सेवा सहायता की और वच्च अपनाने के लिए विदेशियो को प्रेरित किया।

युद्धकालीन समान स्थितियो मे भी मैं नही समझती कि भारतीय सस्कारिता मे पले सनिक विजित क्षेत्र की स्त्रियो के साथ इतने बडे पैमाने पर एसे जघ य कृत्य कर सकते हैं। इतिहास मे भारतीय सैनिको द्वारा व्यापक रूप म ऐस अपराधो के उदाहरण नही है। 'अनुलोम और 'प्रतिलोम विवाहो के भेद हो या अपहरण, बलात्कार द्वारा प्राप्त पत्नियो की निम्नस्तरीय सामाजिक मा यता, विजित स्त्रियो से भरे रनिवास हो या पुरोहितो को दान म और वीरो को दहेज म दी गई दासिया—स्त्री सरक्षण की परपरा सवत्र विद्यमान मिलेगी। उनक साथ पशाचिक रूप म सामूहिक सावजनिक बलात्कारो का यह इतिहास यहा कभी नही रहा। लेकिन इधर जो स्थितिया उभर रही है उनम आग ऐसा नही होगा, इस बार म कुछ नही कहा जा सकता।

महिला सगठनो ने क्या किया?

ससार क वडे महिला-सगठनो ने युद्ध के समय होने वाली इन सामूहिक दुघट नाओ के विरोध मे कुछ प्रस्ताव पास किए, राहत कार्यों म कुछ सहायता पहुचाइ और बस उनके कतव्य की इतिश्री हो गई। सयुक्त राष्ट्रसघ मे 'नारी अधिकार आयोग' की

ओर से या बडे अतर्राष्ट्रीय महिला सगठनो की ओर से 'महिला वध' मे भी कोई ऐसी जोरदार आवाज नहीं उठी कि युद्ध कैदियो की सुरक्षा के लिए बने 'जेनेवा कन्वेंशन' की तरह युद्ध काल मे नागरिक स्त्रियो की सामूहिक सुरक्षा के लिए भी उचित प्रबध हो और पूव अतर्राष्ट्रीय युद्ध नियमावली इसके लिए प्रभावकारी न हो तो उसमे आवश्यक सशोधन किया जाए। ऐसे नियमो पर कितना अमल कराया जा सकेगा, यह अलग बात है। पर नारी अधिकारो व नारी सुरक्षा के लिए लडने वाली अतर्राष्ट्रीय एजेंसिया ऐसे मानवीय प्रश्ना पर मौन रहती हैं, तो उनकी आवश्यकता ही क्या है? युद्ध हो, दगा हो या वग-सघष, विजित, पीडित, कमजोर वर्गों मे नारी ही सवाधिक पीडा कब तक झेलती रहगी ?

राष्टीय स्तर पर भी उठान लायक प्रश्न है कि बगला देश से लौटे बलात्कारी सैनिका का काले झडा स स्वागत उनकी पत्निया माताए व बहनें तो शायद नही कर सकती थी---यद्यपि नारी-सुरक्षा के विश्वजनीन प्रश्न पर उन्हे भी करना चाहिए था---पर पाकिस्तान के महिला सगठनो ने भी इस रूप मे विरोध का स्वर बुलद क्यो नही किया? किया होता तो आगे इसकी प्रतिक्रिया मे अवश्य कुछ होता। 'महिला दशक' की आधी अवधि भी बीत चुकी है। इसके अधकाल मे अगस्त १६८० म कोपनहेगन मे जो विश्व महिला सम्मेलन हुआ, उसम भी नारी शिक्षा, स्वास्थ्य रोजगार तथा कानूनी अधिकार सबधी सामान्य प्रश्न ही उठाए गए, नारी सम्मान व सुरक्षा के नहीं। आज, जबकि तीसरे विश्वयुद्ध का खतरा हर राष्ट्र के सिर पर मडरा रहा है क्षेत्रीय स्तर पर छोटे मोटे युद्ध भी होते रहते है और देश के भीतर दगे आदि भी, इन आपातकालीन स्थितियो मे नारी सुरक्षा जैसे बडे मानवीय प्रश्न पर राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर विचार नही किया जाना चाहिए क्या ?

बलात्कार और शोषण क्यो ?

बलात्कार का कारण केवल बढी हुई कामेच्छा या यौन-चेतना ही नही होती, इसक और भी अनेक कारण होते हैं। समाज मे नैतिक नियमो की ढील और साहित्य, सिनेमा, विज्ञापना द्वारा निरन्तर उत्तेजक वातावरण का निर्माण तो प्रमुख कारण हैं ही, बलात्कारी का अपना मनोविज्ञान भी होता है। किन्ही मामता मे हारमोन-ग्रथि की सक्रियता बढ जाने से कामेच्छा म वद्धि और आदतन अपराध वृत्ति के साथ इस अपराध का स्वाभाविक रूप म जुड जाना भी हो सकता है। लेकिन ऐसे मामले अधिक नहीं होते। अधिकतर तो व्यक्तित्व विकास के लिए उत्तरदायी पारिवारिक वातावरण और समय विशेष की सामाजिक परिस्थितिया ही इसके लिए जिम्मदार हाती हैं।

समाज-मनोविज्ञान और यौन अपराध इस विषय पर राजधानी के वरिष्ठ मन चिकित्सक एव भूतपूव मेडीकल सुपरिटेंडेंट मेटल हास्पिटल शाहदरा डा० पी०बी० बक्शी का मत जानने के लिए उनसे जो बातचीत की गई, उसका सार यहा दिया जा रहा है

'जहा तक सेक्स मांग की बात है, यह व्यक्ति व्यक्ति की अलग अलग होती है।

पर उत्तेजक परिवेश मे यह माग बढती है यह एक सवमान्य अनुभूत तथ्य है। माग-वृद्धि के पीछे ग्रथि सक्रियता का बढना किन्ही विशेष मामलो म ही होता है। इस पर अभी तक कोई ऐसे व्यापक शोध विवरण प्राप्त नही हुए हैं कि उत्तेजक स्थितियो या वातावरण का अस्थायी रूप से भी ग्रथि सक्रियता बढाने मे कितना हाथ है ? अथवा इस कारण स्थायी माग वद्धि कितनी होती है ? पर अवैध सबध यौन अपराध और बलात्कारी प्रवत्ति के कई सामाजिक मनोवैज्ञानिक कारण हो सकते है। जैसे

—किसी पारिवारिक कटु अनुभव के कारण विपरीत लिंगी के प्रति चिढ या घृणा।

—प्राकृतिक नियमो द्वारा अमीर का गरीब पर, बलवान का कमजोर पर, चालाक का कम समझ वाले व्यक्ति पर हावी होने का प्रयत्न।

—पुरुषत्व के अहम और गलत सगति के मिश्रण से दादागीरी की चाह।

—सिनेमा जस सचार माध्यमा म हिंसक शक्ति को 'ग्लोरीफाई' करना।

—व्यक्ति के सामा य अपराधो मे सलग्न रहने के कारण अपराध के एक अग रूप मे, जैसे एक डाक या चाकूधारी गुडा लुटेरा अवसर मिलने पर बलात्कारी भी हो सकता है।

—घर म माता पिता के चारित्रिक स्खलन का गलत उदाहरण।

—समाज मे नतिक मूल्यो की ढील से प्रोत्साहन।

—व्यक्तित्व विकास म किसी कमी के कारण सेक्स के मामले मे स्वय के प्रति अविश्वासी और काफी चिंतित रहने वाले, अपनी उपलब्धियो स हमेशा असतुष्ट, अतर्मुखी व्यक्ति तथा क्षणिक सवेगों म वह कर स्वय पर नियत्रण रख पाने मे असमथ व्यक्ति भी इस प्रकार की गलतिया कर बठते हैं। पर बाद मे पछतावे के कारण ये इसके अभ्यस्त अपराधी नही बनते।

—मद बुद्धि या योग्यता की कमी की दूसर तरीके से क्षति पूर्ति करने के लिए धन प्राप्ति के इस तरीके को सरल मान कर अपना लेना। बम्बई की वेश्याओ पर हुए एक सर्वेक्षण मे पर्याप्त सख्या इसी वग की पाई गई थी।

—साइकोपैथ' या मनोरोगी जो अभ्यस्त अपराधी होने के कारण हमेशा समाज के लिए खतरा बने रहते है। इनके रोग को प्रारभ म न सभाला जाय तो रोग की बढी हुई अवस्था मे इनके लिए जेलें ही रह जाती ह, वह भी उनस बाहरी लोगो के बचाव की दष्टि से ही उनके सुधार की दष्टि से वे अधिक कारगर नही होती प्राय।

—अक्सर ऐसे अपराध शराब क नशे म भी किए जात हैं। क्षणिक आवेश वश भी, क्योकि इन उत्तेजक स्थितिया म वे अपना होश खो बैठते हैं। पर चूकि व ये अपराध इरादतन नही करते नशा या आवेश उतरने पर उ ह इसके लिए पछतावा हो सकता है।

—जहा तक वग सघष की बात है विजेता वग द्वारा विजित वग की या उच्च जाति के समद्ध व्यक्ति द्वारा दलित, गरीब व्यक्ति की स्त्री स इस प्रकार का व्यवहार प्राकृतिक नियम से बलवान के कमजोर पर हावी होने के प्रयत्न के अलावा, उसके सिर उठाने पर बदले के हथियार रूप मे भी किया जाता है। यहा इन वर्गों की स्त्रिया दोहरी

मार सहती है। लेकिन जब तक पुरुष व स्त्री को भी एक दूसरे का पूरक न मान कर, दो वग माना जाएगा इनके बीच सदेह—अविश्वास की दरार यौन अराजकता और यौन-शोषण जैसी प्रवत्तिया सिर उठाती रहेगी।

डा० बक्षी के मत मे, 'फिर भी इन कारणो से समाज मे बलात्कार की बढती प्रवृत्ति स्वय मे एक पूरी समस्या नही है, समस्या का एक अग मात्र है। इन वारदातो को पूरे परिवेश म व्याप्त नैतिक चारित्रिक मूल्यो की गिरावट के एक अग के रूप म ही देखना चाहिए। कौन सा क्षेत्र आज भ्रष्टाचार और शोषण से बचा है? शक्ति चाहे प्रकृति प्रदत्त हो अथशक्ति हो, या सत्ता, उसके साथ तत्कालीन पतनशील समाज मूल्य जुडने पर ही ये परिणाम सामने आते हैं। पारिवारिक-राजनीतिक-सामाजिक स्थितिया मे साथक बदलाव लाए बिना केवल कानूनी सुधारो से इसका निराकरण सभव नही है। निहित स्वार्थो वाली शक्तिया एक ओर निम्न वर्गों की वोट पर निगाह जमाए, उनका पक्ष लेकर राजनीतिक लाभ लेती है दूसरी ओर दमनकारी शक्तिया का साथ दे, उनके दमन के लिए सारे हथकडे अपनाती हैं। पुरुषो का सिर नीचा करने के लिए उनकी स्त्रिया के साथ दुव्यवहार व सामूहिक बलात्कार इस दमन का ही एक अग है। अथशक्ति उन्हें खरीदती है। राजनीतिक लाभ उठाने वाली शक्तिया उन्हे भडकाती भी है उनके दमन म भागीदार भी होती हैं। सत्ता मे या विरोध मे कोई भी दल हो नारी अपमान की घटनाए हो या साप्रदायिक दगे के रूप मे जातीय अपमान की, इनकी स्थिति कमोबेश वही रहती है। इस तरह आज एक सामाजिक समस्या का राजनीतीकरण करके कबीर, नानक, दयानन्द, गाधी, अम्बेडकर, कर्वे आदि सुधारको के इस दिशा मे किए गए सारे प्रयत्नो पर जसे पानी फेर दिया गया है और समस्या को अधिक उलझा दिया गया है।'

बलात्कारी का मनोविज्ञान कुछ अन्य मत

एक विदेशी मनोवैज्ञानिक ने यौन अपराधिया की पत्नियो और माताओ पर अध्ययन करके एक निष्कष यह भी निकाला था कि अक्सर ये स्त्रिया सुदर व आकषक व्यक्तित्व वाली होती है और इनके पति या पुत्र भीतर स कही स्वय को हीन या अपमानित अनुभव करते हैं। शासक प्रकृति की स्त्रियो के पतिया और पुत्रो के साथ भी लगभग यही स्थिति रहती है। तो य पुरुष अपने हीनभाव स मुक्ति क लिए और अपनी शक्ति-सामथ्य के प्रदशन के लिए स्वय म बलात्कारी और आक्रमणकारी वृत्ति उत्पन्न कर लेते हैं। कई बार ऐसे पुरुषो द्वारा निकट सबधी स्त्रिया के साथ बलात्कार की कहानिया भी सामने आइ।

एक अन्य मनोवैज्ञानिक के अनुसार, बलात्कार काम तृप्ति के बजाय विद्वेष या बदला लेने की भावना स अधिक होते हैं। ऐसे बलात्कारिया का ध्यान स्त्री की सुदरता, आयु या फैशन पर भी कम जाता है। बस जिससे बदला लेना होता है उसे देखते ही य उस पर टूट पडते हैं। स्त्री के विरोध करने पर उसे चोट पहुचाते हैं या जान से मार डालते हैं। पर छोटी बच्चियो के साथ बडो के बलात्कार अधिकतर क्षणिक आवेश म होते हैं और उनके पीछे उनकी लबे समय से दमित वासना ही होती है।

आक्रामकता के विज्ञान पर भी अब पश्चिमी वैज्ञानिक काफी खोज कर रहे हैं कि इसके लिए भीतरी रासायनिक और वंशानुगत कारण अधिक हैं या बाहरी उत्तेजनाएं? इस खोज के बाद हिंसक प्रवृत्ति वाले लोगों का रासायनिक उपचार करने के लिए निरोधी टीके की बात भी सोची जा रही है। भावी समाज पर इन खोजों का क्या असर होगा यह तो भविष्य ही बताएगा। पर मानव नस्ल सुधार के लिए और हिंसा, यौन हिंसा, आक्रामकता की रोकथाम के लिए की जाने वाली खोजों के संभावित परिणामों से भी वैज्ञानिक भयभीत हैं कि न जाने कब हिटलर जैसा कोई तानाशाह इनका अपनी जाति के पक्ष में दुरुपयोग करने लगे?

शोषण की अनेक स्थितियां

अक्सर इन घटनाओं पर प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए लोग यह कहते पाए जाते हैं कि आजकल महिलाएं अधनग्न उत्तेजक पोशाकों और अपने हावभावों से स्वयं भी बलात्कारी को निमंत्रण देती हैं। पर नग्न या अधनग्न फैशन का समर्थन किए बिना भी यह कहा जा सकता है कि यह धारणा भ्रामक है, पुरुषों द्वारा अपनी कायरता ढकने की कोशिश है। छेड़खानी अपहरण, बलात्कार के पीछे भड़कीले, नग्न फैशन व अश्लील हावभाव का कुछ ही हाथ होता है, अधिक नहीं। अधिकतर तो इन घटनाओं के पीछे पारिवारिक, व्यक्तिगत रंजिश, वर्ग विद्वेष, या असफल प्रेम की और प्रेम में धोखे की ऐसी कहानियां ही होती हैं, जिनसे बदले की भावना पैदा होती है। या फिर स्त्रियों के अरक्षित हाल में रहने और अकेले आने जाने की स्थितियां होती हैं।

ऐसी स्थितियों में जहां किसी लड़की या महिला के किसी प्रेम संबंध (सच्चा निर्दोष संबंध ही क्या न हो) की चर्चा हो तो उसे चरित्रहीन मान कर भी उस स्त्री की उपलब्धि को सहज मान लिया जाता है और मौका देख कर उस पर हमला कर दिया जाता है इसलिए कि मामला सामने आने या अदालत में जाने पर भी ऐसे में दोष प्रायः स्त्री पर ही आ जाता है। यह भी जरूरी नहीं कि अकेली अरक्षित स्त्री के संबंधों की कोई चर्चा हो ही, उसका अकेला रहना या आना-जाना ही उस पर संदेह के लिए काफी है। यहां पुरुष समाज स्त्री की आत्म निर्भरता को जैसे अपने लिए एक चुनौती मान उसे उसकी स्वयं निर्भरता से वंचित करना चाहता है। सुंदरता और फैशन के अभाव में भी अकेली या अरक्षित स्त्रियों को बाहरी पुरुषों द्वारा किस प्रकार दबोचा जाता है, इसका उदाहरण हैं गांवों में निर्जन रास्तों से होकर खेत पर पति का खाना ले जाती अकेली स्त्रियां, सुदूर अंचलों से समीप के गांवों के स्कूलों में आती जाती कभी अकेली पड़ जाने वाली लड़कियों और घरों में शौचालयों के अभाव में सुबह मुंह अंधेरे उठ कर या सांझ ढले घरों से बाहर खाली पड़ी भूमि पर अथवा खेत में जाकर बैठनेवाली स्त्रियों से समय-समय पर होने वाले बलात्कारों की रिपोर्टें। यहां तक कि नगरों के फुटपाथों पर सोने वाली गंदी भिखारिनों और पागल स्त्रियों को भी अकेली देख कर बख्शा नहीं जाता।

पढ़ी लिखी भी अकेले असुरक्षित शहरी पढ़ी लिखी युवा महिलाएं भी अविवाहिता, विधवा या परित्यक्ता होने पर घर में किसी पुरुष या बड़ी उमर की महिला के

साथ ही स्वय को सुरक्षित समझती हैं वर्ना नही। जब तक कि उनकी आत्म निर्भरता के साथ कोई अधिकारी पद न जुडा हो या वैसी अय सुविधाए उन्हे उपलब्ध न हो, वे समाज के भूखे भेडियो की निगाहा से बच नही पाती। बहुत सुलझी हुई, परिपक्व मन-मस्तिष्क वाली और साहसी होगी तो वे स्वय को बचा ले जाएगी पर फिर भी उनका कुचर्चाआ से बचना जैसे असभव सा हो जाता है। यहा पुराने मूल्य उनके पैरो की बेडी बन जाते हैं और अविवाहित या अकेले रह कर सफलतापूवक जीवन बिताने का सकल्प लेन वाली युवतिया भी अक्सर एक समय बाद अपना निणय बदलने पर बाध्य हो जाती हैं। अपवाद रूप म कुछ गिनी चुनी आत्मनिमर महिलाए ही रह जाती हैं, जिनका आत्मविश्वास किसी भी स्थिति म डिग नही पाता। श्री कमलेश्वर की कहानी पर आधारित फिल्म फिर भी मे इसी समस्या को उठाया गया था। यह अलग बात है कि उसका हल किसी भी तरह नारी के इस आत्मविश्वास या सकल्प को बल प्रदान कर ऊचा उठाने म सहायक नही होता।

स्त्री पुरुष के सहज सबधो का विकास जरूरी आज जरूरत है, नारी के आत्म विश्वास म बाधक इन पुराने मूल्यो को बदलने की और समाज मे स्त्री पुरुषो के बीच सहज मित्रवत् व सहकर्मी के सबध विकसित करने की, जिन्हें सदेह अविश्वास भय, तनाव और कुचर्चाओ के कीचड स बचा कर स्पष्ट, खुले, उज्ज्वल रूप मे देखा रखा जा सके। प्रबुद्ध स्त्री पुरुपा के सामने यह समस्या अधिक है इसलिए उन्हें ही, कुठाओ को उभारने के बजाय इस दिशा मे पहल करनी चाहिए। शिक्षा, साहित्य, कला के क्षेत्र मे भी दवाव रूप मे पुरुष अधिकारिया सपादको, कला निदेशको गाइड प्राध्यापको द्वारा अपने अधिकार के दुरुपयोग की और थोडे से लालच मे स्त्रियो द्वारा कमजोरी प्रदर्शित कर झुक जाने की स्थितियो की खुल कर विवेचना करने की जरूरत है, और जरूरत है इन दवाव स्थितियो का निराकरण करन की। 'माया मई १९७६ के अक म देवकी अग्र वाल की कहानी अधेरे और साए' की तरह इस विषय पर विभिन्न पहलुओं से विविध विधाआ म काफी लिखा जाना चाहिए।

नारी की अपनी कमजोरी २२ २८ जून १९८० के अक 'साप्ताहिक हिदुस्तान म प्रकाशित अचला नागर की कहानी एक परी देश की कहानी मे प्रेम क अभाव बिना भी अपनी छोटी छोटी महत्वाकाक्षाओ की पूर्ति के लिए आधुनिक नारी द्वारा अपनी, अपन घर की सारी खुशिया लुटा कर तनाव ओढ लेने की स्थितिया पर अच्छा प्रकाश डाला गया था। सबधा की टूटन की ये स्थितिया आज आम हो चली हैं जो नारी को अनेक सुविधाआ की अधिकारो की सौगात देकर भी उसे भौतिक रूप म अरक्षित कर रही हैं और भावनात्मक स्तर पर द्वदात्मक मानसिक स्थिति म ढकेल उसके लिए अनुचित राहो व शोपण की स्थितिया का निमाण कर रही है।

आधुनिक शिक्षित समय नारी भी यदि सोच समझ कर स्वय अपनी राहा का निर्माण नही करेगी, वतमान स्थितियो को ही अपनी नियति मानती रहगी—उनम बहने या उन्हे सहने से इकार कर नय मूल्यो की रचना की बात नही सोचेगी लेखन स्तर पर या सगठित रूप म इसके लिए आवाज बुलद नही करेगी, तो सिवाय वतमान स्थिति पर

अफ़सोस जाहिर करते रहने, उसे ढोने की मजबूरी ओढने या पुरुषो को दोष देते रहने की यथास्थिति को बनाए रखने से इससे क्या हासिल होगा ? प्रगति की बंद राह खोलनी है तो सबसे पहले स्त्रियों को स्वयं को संभालना है और वर्तमान स्तर से ऊंचे उठना है। फिर विचार नवित की प्रेरणा लेकर मूल्य बदलाव की ठोस भूमि पर यह लडाई संगठित रूप मे लडनी है—तब भी केवल पुरुषो के खिलाफ नही, अपने और सबके खिलाफ जाने वाली, देश के खिलाफ और देश की संस्कृति के खिलाफ जाने वाली इन भ्रष्ट, अपमानजनक और असह्य स्थितियो के खिलाफ।

मुख्य लडाई धन-शक्ति के गठबंधन की भ्रष्ट सत्ता से

कारण कुछ भी हो, इसमे दो मत नही कि समाज मे नारी अपमान की वर्तमान स्थिति देश मे बढती हुई अपराध मनोवृत्ति और बिगडती हुई कानून व व्यवस्था की स्थिति का ही अंग है। १२ जून १९८० को राज्य सभा मे गृहराज्य मन्त्री ने एक प्रश्न के उत्तर मे बताया था कि सन ८० की प्रथम तिमाही मे देश भर मे हरिजनो के साथ अत्याचार के २९०७ मामले थानो मे दर्ज हुए इनमे हरिजन महिलाओ के साथ बलात्कार के दर्ज मामले १०४ थे। इज्जत का सवाल बीच मे आ जाने से ये मामले बहुत कम संख्या मे दर्ज होते हैं इसलिए यह संख्या इससे कही अधिक मानी जा सकती है। पर गरीबो पर सामान्य जुल्म के भी सभी मामले दर्ज नही होते, इसलिए इन आंकडो को सामान्य अपराधो की पृष्ठभूमि मे रख कर देखना ही ठीक होगा—उस पृष्ठभूमि मे जिसमे अब गरीबो पर ही नही, समाज के सर्वाधिक सुरक्षित व्यक्तियो—नेताओ, अधिकारियो और पत्रकारो पर भी हमले हो रहे है।

हरिजन और आदिवासी ९ अगस्त ८० की एक खबर मे उत्तरप्रदेश के बिजनौर जिले मे नलपुरा गाव के कुछ ठाकुरो ने एक पूरे हरिजन परिवार को जला कर मार डाला। २९ जून ८० को प्रकाशित एक समाचार के अनुसार, बिहार के रोहतास जिले के करसरुआ गाव मे स्थानीय पुलिस ने गाव के सभी हरिजनो को सवेरा होते ही उनके घरो से बाहर निकाला और उनके जेवर नकदी कीमती चीजें लूटने के साथ चार व्यक्तियो का हाथ पैर बाध कर जमीन पर पटक दिया फिर उन पर घोडे दौडा दिए। दो व्यक्ति घोडो की टाप से कुचल कर मर गए शेष दो को बाहर ले जाकर गोली से उडा दिया गया। गावो मे हरिजन महिलाओ के साथ अत्याचार की घटनाओ को क्या इन दुर्दांत घटनाओ से अलग करके ही देखा जाएगा ?

आदिवासियो के साथ भी यही स्थिति है। एक ओर उनकी गरीबी व अज्ञानता दूसरी ओर उनके कुछ समुदायो मे ढीले नैतिक नियम बस ठेकेदारो और उनके एजेंटो को, स्थानीय अधिकारियो को सैलानियो को उनके आर्थिक शोषण और उनकी स्त्रियो के शोषण का सरलता से बहाना मिल जाता है। जौनसारबावर छत्तीसगढ और बिहार के आदिवासी क्षेत्र तो इस शोषण के लिए प्रसिद्ध है ही, इधर राजस्थान के धौलपुर उपखंड मे व अन्य अनेक जगहो पर भी स्त्रियो के क्रय विक्रय के नये पुराने अड्डो का पता चला है, जहा माए बेटियो को व पति पत्नियो को बेच देते है या उन्हे फुसला कर, लालच

देकर उडा लिया जाता है। अपनी राची यात्रा मे जब मैं राची स्थित ट्राईबल रिसच इस्टीटयूट' के निदेशक स इस जानकारी के लिए मिली तो उन्होंने बताया, 'हमारी इस्टीटयूट मे इसी विषय पर यानी आदिवासी नारियो के यौन शोषण पर एक शोध प्रोजेक्ट चल रहा है जिसके निष्कर्षों को कुछ समय बाद देश के सामने लाया जाएगा। दो वर्ष बाद एक पर एक—तीन पत्र लिख कर रिसच के बारे मे मैंने पूछताछ की, लेकिन कोई उत्तर तक वहा स नही मिला। दिल्ली स्थित केन्द्रीय आदिवासी कल्याण सस्थान के पुस्तकालय म भी स्वय खोज कर आप कुछ छिटपुट रिपोर्टें तो देख सकते है, पर इस पर अलग से न कोई समन्वित रिपोट उपलब्ध है, न पुस्तक। न वहा का कोई अधिकारी ही कुछ बताने की स्थिति म है। व्यक्तिगत स्तर पर अध्ययन से जो जानकारिया हम लेखको और समाजशास्त्रियों के पास है, केन्द्रीय सस्थान मे बैठे अधिकारियो को वसी छिटपुट जानकारियो स भी मैंने अनभिज्ञ पाया। महिला समाजशास्त्री ही इस दिशा म अब कुछ करें शायद!

अपहरण सभी क्षेत्रो मे : हरिजन और आदिवासी स्त्रियो के शोषण की बात अलग रख कर देखें तो भी सारे समाज म अपराध के जो आकडे हैं और नैतिक मूल्यो पर इधर काले धन के मूल्य जिस भयकर रूप से हावी हो चले हैं, यौन उच्छ खलता, नारी देह की खरीद बिक्री और यौन अपराधो को उनसे भी अलग करके नही देखा जा सकता। अपहरण आज सभी क्षेत्रो मे है, बलात्कार और दबाव भी। राजनीति मे यह अपहरण निजी स्वतत्रता का गोपनीयता का, चरित्र का है। आर्थिक क्षेत्र म गरीबो की जेबो का और करोडपतियो के बेटो का—फिरौती पाने के लिए। बदले की भावना स या सौदे बाजी के लिए विमानो का भी। फिर स्त्री भी जब तक कमजोर, भोग्या या पुरुष की सम्पत्ति समझी जाती रहेगी, अपराध के इस आम माहौल म उसका भी अपहरण होगा ही। उसका सौदा भी होगा और उसस बलात्कार भी। पैसे पर आधारित मूल्यो के रहते इन अपराधो पर पूरी तरह रोक सभव नही। 'नवनीत म प्रकाशित पश्चिमी विद्वान श्री ए० बी० डेविस के एक लेख मे चेतावनी दी गई है, पसे के मूल्य पैसे की सत्ता-शक्ति को खत्म कर देना होगा, नही तो सन् २००० तक सारी मानव जाति खत्म हो जाएगी।'

अरबों के नए हरम पैसे की शक्ति का ताजा उदाहरण है तेल के स्वामित्व पर एकाएक बने अरब देशो के अमीरो द्वारा दूसरे देशो की गरीब व सुन्दर स्त्रियो की अस्मिता का अपहरण। उनकी खरीद और उनका शोषण। स्वीडन और सोवियत सघ के वतमान कानूनो म आज जबकि अपनी पत्नी से भी जोर जबरदस्ती बलात्कार के अपराध म शामिल है, अमीर अरब देशो मे बाहर की लडकियो से बलात्कार की घटनाए आम हो गई है, इन लडकियो और स्त्रियो को ब्याह के नाम पर लाकर अपने हरम भरने की भी। हमारे देश मे गरीब मुस्लिम लडकियो के अरबो से विवाह की बम्बई, हैदराबाद और सिकदराबाद से अधिक व देश के दूसरे भागो से कुछ कम रिपोर्टें मिली हैं, पर सारे देश म आज ऐसे ऐजेन्टो का जाल बिछा है। ये लोग गरीब मुस्लिम माता पिता को मेहर' मे अच्छी रकम मिलने का लालच देकर उनकी सुदर कमसिन लडकिया प्रौढ अरब शेखो

को विवाह देते हैं। केरल की बेरोजगार-बारोजगार नर्सों तथा अन्य क्षेत्रों म रोजगार की इच्छुक युवतियों को भी अरब देशो म तगडे वेतन पर अच्छी नौकरी का लालच देकर भेज देत हैं। अब तो घर छोडकर निकली भूली भटकी युवतिया को तीर्थों स, स्टेशनो से, कही से भी खोजकर, नौकरी दिलाने का लालच देकर अरब देशो के अमीर शेखा के हरमा मे पहुचाने वाले असामाजिक गिरोह पैदा हो गए हैं। इक्का दुक्का लाग पकड म आए ह, शेष पैसो के लालच मे अपने देश की अस्मिता को खुले हाथो बाहर बचने के लिए बेधडक जुटे हुए है। कुछ स्थानीय अधिकारियो, पुलिसकर्मिया, वीसा अधिकारिया का भी उन्ह आशीर्वाद या अभयदान रहता है, शायद इसलिए।

पर इन गरीब या नौकरी के लालच मे धोखे की शिकार युवतिया पर आगे क्या बीतती है, किस तरह उन्हे भोगने के बाद आसानी से तलाक देकर निराश्रित छोड दिया जाता है, किस तरह उनमे अपने महलो' मे नौकरानियो की तरह काम लिया जाता है, उन पर क्या क्या जुल्म ढाए जाते है य करुण कहानिया आए दिन पत्रो मे छपन लगी हैं। केरल की नर्सों की आपबीती पर ता ससद मे भी गूज उठ चुकी है। इन स्त्रियो क भेजे जाने के बारे म कुछ सतकता बरती भी जाने लगी थी, पर इधर तो ऐस गिरोहो के अधिक सक्रिय हो जाने की ही खबरें मिल रही है। सरकार इस दिशा म कदम उठाए व नीति निर्धारित करे, ऐसी आवाज भी अब जोर पकडने लगी है। ये कदम शीघ्र उठाए जान चाहिए।

यह विरोधाभास एक ओर अरब देशा मे बढत फैलते जाने वाने इन हरमा की खबरें है, दूसरी ओर लदन स्थित एक सगठन की प्रतिनिधि श्रीमती जकलिन थिवाल्ट ने नौ वष तक वहा सामाजिक काय करने के बाद रिपोट दी है कि सऊदी अरब मिस्र, इराक, जोडन इस्राइल अधिकृत अरब क्षेत्र तथा अन्य अरब देशा म अपनी लडकिया को अब भी कडे बधना के साथ परदे म रखा जाता है। किसी युवती का किसी पुरुष स यौन सबध हो गया हो, चाहे वह मरजी स हो या बलात्कार से उस जान स मार दिया जाता है। कभी किसी युवती को किसी पुरुष स बात करते देखकर भी उसकी जान पर बन आती है। इस तरह सकडो लडकिया वहा घर की इज्जत के नाम पर मार दी जाती है। स्वय बाप बड भाइ चाचा, चचेर भाई या किराए पर लाए गए गुडे यह हत्या काय करते हैं। जिन क्षेत्रा मे यह परपरा अधिक है वहा स्त्रियो की सख्या आनुपातिक रूप से कम हो गई है। फिर एक एक शेख कई कई शादिया कर सकता है और उनकी अपनी अरबी बिरादरी म मेहर के रेट अब काफी बढे चढे है तो इसलिए भी बाहरी दशा म और भारत से गरीब माता पिता को कुछ धनराशि 'मेहर के रूप मे देकर लडकिया ब्याह कर लाई जा रही है। श्रीमती थिवाल्ट न सयुक्त राष्ट्र सघ की मानवाधिकार समिति को यह विवरण देने के साथ अन्य देशो स भी अपील की है कि इन देशो स अत्याचार के कारण भागने वाली युवतिया का अपने देश मे शरण दें, क्याकि फिर उनके लिए घर लौटने की स्थितिया बहुत कम बच रहती हैं।

हमारे देश मे भी कुछ तबका म रिश्वतखोरी, मुनाफाखोरी और लेन दन के भ्रष्ट व्यापार स जब काले धन का मूल्य बढ रहा है तो येन-केन प्रकारेण जल्दी म

आसानी से, बिना श्रम, बिना प्रतीक्षा धन प्राप्ति की लालसा म इन अनैतिक धधा का बढना अब कोई छिपी या अज्ञात बात नही रही है। तो साधना की शुद्धता और श्रम की महत्ता स्थापित किए बिना इस असाध्य होती जा रही बीमारी का इलाज भी सभव नही है। भ्रष्ट राजनीति व उसकी राह पर भ्रष्ट नौकरशाही म आमूलचूल सुधार लाए बिना न काले धन स आई विलासिता की समस्या का समाधान सभव है, न मूल्यवृद्धि, महगाई और उसकी मार से बहुसख्यक वग म बढती गरीबी की समस्या का। न इसी कारण समाज म बढते असतोष और कुठा हताशा का न अनतिक धधा और नारी शोषण का। फिर से सिर उठाती साम ती वृत्ति का फन कुचले बिना नारी के फिर पीछे लौटते कदमों को वापिस प्रगति की राह पर लाना सभव नहीं दीखता। शायद इसके लिए अब एक और 'पुनर्जागरण-काल' की आवश्यकता है।

खण्ड दो

विचार-सारिणी

प्रेम, काम और यौन के प्रति मूल भारतीय दृष्टि

एक जमाना था (अभी अभी गुजरा), जब प्रेम के सदम मे यौन की चर्चा करने से लोग कतराते थे। प्रेम का स्थान सर्वोपरि था, यौनक्रिया उसकी अभिव्यक्ति का एक प्रकार। और इस प्रकार को कोई विशेष मान्यता नही दी जाती थी, प्रतिष्ठा तो बिलकुल नहीं। सेक्स की चर्चा खुले आम वर्जित थी। उसके लिए निकट मित्र मडली की सीमित उपस्थिति की अपेक्षा होती थी या अधेरी जगहो की। यह हाल केवल भारत म ही नही आज मुक्त यौन व उसकी खुली चर्चा मे अग्रणी पश्चिमी देश भी इसके अपवाद न थे। विक्टोरियन युग मे ब्रिटेन मे कोई व्यक्ति सावजनिक स्थल पर इस तरह की चर्चा का साहस नही कर सकता था।

भारत मे यह दबी ढकी स्थिति मध्यकाल के बाद अनकानक सामाजिक विधि निषेधा के विकास के साथ आयी, अयथा हमारे विद्वान ऋषि बहुत प्राचीन काल म इस जो वनानिक रूप दे चुके थे, फ्रायडवाद से उपजी यौन भ्राति स गुजरने के बाद पश्चिम अब उस भीतरी आत्म विनान की खोज की ओर उन्मुख हुआ है।

पश्चिम मे सेक्स की खुलकर चर्चा सबसे पहले उन्नीसवी शताब्दी के उत्तराध मे फ्रायड ने ही की। फिर प्रथम विश्वयुद्ध के बाद तो जसे युगही बदल गया। जहा पहले वासना के दमन या आत्म सयम को श्रेय माना जाता था, अब उस दमन को वर्जित मान सारा मनोविश्लेषणवाद इसी के इद गिद घूमन लगा। यद्यपि फ्रायड के अनुयायियो म से एक एडलर ने फ्रायड के कई सिद्धा ता की काट तभी आरभ कर दी थी, लेकिन धीरे-धीरे विश्व भर म मनुष्यो के विचार और व्यवहार के क्षेत्र मे फ्रायडीय विचारधारा ने एक ऐसा तूफान ला दिया कि लगभग तीन चौथाई सदी उसके दुष्प्रभाव से सम्मोहित, पीडित रही और अत म विकृतियो की शिकार हो छटपटाने लगी।

मनुष्य मशीन नहीं प्रेम मर गया। सक्स के सदम म उसकी चर्चा तक अप्रासगिक हो गई। आत्मीयता और अतरगता का स्थान औपचारिकता के प्रदशन ने ले लिया। मनुष्य अपनी अस्मिता और सत्ता भूल जैसे शारीरिक ग्रथियो के हाथ का खिलौना बन गया। अत निस्सकोच कहा जा सकता है कि भौतिक प्रगति के आधार पर मानव सभ्यता के विकास मे पश्चिम से जो अनेक भूलें हुइ, शायद उनम सबसे बडी भूल

यही है कि उसने विज्ञान का दुरुपयोग किया और मनुष्य शरीर को भी एक यंत्र मान आदमी को यांत्रिक जिन्दगी का अभिशाप ढोने के लिए विवश कर दिया। लेकिन देर-सवेर भूला का परिणाम भी सामने आता ही है। पहले वासना के दमन न कुछ समस्याए खडी की थी, अब उसकी खुली छूट न उससे अधिक व विकट समस्याए खडी कर दी हैं।

उचित समय दुर्भाग्य से आज जब भारत भी इन समस्याओ की चपट म आता जा रहा है तब क्या यह उचित समय नही है कि हम प्रेम, काम और यौन मबध म भारतीय मूल दष्टि को फिर से *व्याख्यायित करें, ताकि फ्रायडवाद के प्रभाव की प्रारभिक* प्रतिक्रिया से लेकर आधुनिक 'परमिसिव सोसाइटी' और हिप्पस तक की परिणति म पश्चिमी यौन दशन और मूल भारतीय यौन दशन के तुलनात्मक विवचन स आगे की राह खोजी जा सके।

ब्रह्मानन्द सहोदर

फ्रायड, युग, एडलर से बहुत पहले हमारे यहा यौन विज्ञान के महापडित व 'काम सूत्र' के रचयिता वात्स्यायन पैदा हो चुके थे। और उससे भी पहले हमारे ऋषि मुनि वर्षों की साधना के बाद उसे ऐसे आध्यात्मिक धरातल पर व्याख्यायित कर चुके थे जिसका विशुद्ध विज्ञान और मनोविज्ञान से कही विरोध नही। भारत म काम की प्रतिष्ठा व गरिमा अद्वितीय रही है। इन्द्र, वरुण, अग्नि की तरह काम भी एक देवता है। धम, अथ काम मोक्ष—जीवन की प्रथम चार अनिवायताओ म इसका स्थान है। कामानन्द को *हमारे शास्त्रो म ब्रह्मानन्द सहोदर भू' तक कहा गया है।* वह केवल भोग तक *सीमित* नही है इसस आगे बढ सजन की सभी सीमाए स्पश करता है और ईश्वरीय साक्षात्कार के चरमानन्द तक जाता है। स्त्री पुरुष के बीच का सारा द्वैत नष्ट कर उन्हें एकप्राण, एकात्म कर अद्वैत मे प्रविष्ट कराता है।

स्वामी रामतीथ भारतीय पुनर्जागरण के मन्त्रद्रष्टा थे। वे वेदान्ती और योगी होकर भी गृहस्थ और कमठता म विश्वास करते थे और इसी मे जीवन की सफलता मानते थे। उनके अनुसार भारतीय प्रेम, काम और यौन की व्याख्या

प्रेम बधन नहीं, मुक्ति प्रेम एक रोमान भर नही है एक आत्मीयता है। अत रगता है। एक विश्वास है। एक शक्ति है। जीवन के लिए एक साथक प्रेरणा है। प्रेम बधन नही है मुक्ति है। प्रेम का अथ एक दूसरे को समपण कर एक दूसरे के भीतर कद हो जाना नही है अपना पृथक अस्तित्व खोना नही है केवल व्यक्तिगत अहम से ऊपर उठ कर आत्मा के स्वरूप को प्राप्त करना है। पत्नी की माग पति की उन्नति मे बाधक *हो या पति द्वारा पत्नी की निजी स्वतन्त्रता का अपहरण हो—ये दोनो स्थितिया* दाम्पत्य मे बाधक हैं। रात्रि के देह मिलन की दिन भर आध्यात्मिक मिलन सी अनुभूति रहनी चाहिए। यदि यह नही होती है तो आत्म विश्लेपण करें और क्षतिपूर्ति करें। 'पति परमेश्वर' का अथ पति का पत्नी से ऊचा होना नही, उस समय पति से आलिगन की अनुभूति ईश्वर स आलिगन जैसी हो इसलिए ऐसा कहा गया है। परमानन्द का भी यही अथ है—शरीर के माध्यम से ईश्वरीय सम्पक की अनुभूति। प्रेम की परिपूणता और

उसकी चरम आनन्दानुभूति प्रेमपूर्ण यौन से ही सभव है। है कही ऐसा चरम सुख बाहर किसी यान्त्रिक क्रिया या विधान मे ?

दाम्पत्य विभेद की साधना प्रेम के अभाव मे यान्त्रिक क्रिया एक समय बाद विक्षोभ पैदा करती है। प्रेम रूप की भी अधिक परवाह नही करता, जबकि शरीर-सौन्दर्य पर आधारित सबधो म जल्दी ही खीझ व दरार पैदा होने लगती है। बढती हुई विषयासक्ति या वासना की कोई सीमा नही होती। सीमा बढाते जाने से तप्ति भी वैसे ही उससे दूर होती जाती है। पानी बिच मीन पियासी, देखत आवे हासी' जसी स्थिति बन आती है। इसीलिए कहा गया है, 'मरना सरल है, जीना कठिन। जीने के लिए साधना करनी पडती है। कामनाओ से ऊचे उठते पर वे हमारे पीछे लगती है, उनसे याचना की वत्ति मे हमे दुत्कार मिलती है। दाम्पत्य इसी साधना इसी विभेद का प्रतीक है। इसम एसी मन स्थिति आवश्यक है कि मन पर कोई बोझ या दबाव न रहे। पति पत्नी म से एक शासक, दूसरा शासित, उच्च या हीन, सबल या दुबल माना जाए तो जो अहकार या हीनता-बोध उपजता है, वह अद्वैत स्थिति नही।

इच्छाओ की हर समय दासता मकडी के उस जाले के समान है जिसे वह स्वय बुनती है और अन्त म उसी मे समाप्त होती है। दूसरी ओर शून्य का भी कोई मूल्य नही। मूल्य सबधो की स्थितियो पर ही आधारित होते है। सबधो की अधिक लिप्तता और उनका अस्वीकार दोना ही स्थितिया जीवन को खोखला और निरथक बनाती हैं। आनन्द स्त्री मे नही, स्त्री शरीर मे नही, प्रेम पात्र मे केन्द्रित होता है। आनन्द के स्रोत मे केन्द्रित होता है। विवाह की निन्दा या परित्याग करके भी सुख नही। वह एक अप्राकृतिक स्थिति है। गृहस्थ जीवन मे रहते, उसका भोग करते हुए ही उससे ऊचे उठने मे सुख है। आसक्ति और भय दोनो से ऊचे उठने मे आनन्द है। मुझम घुलमिल जाओ, आनन्द का सागर बन जाओ, फिर पास रहो या दूर, अन्तर नही पडेगा' अभेद की ऐसी स्थिति मे ही समस्या का समाधान है।

प्रेम का विस्तार वसुधैव कुटुम्ब एक-दूसरे से प्राप्त प्रेम का ही जब बाहर विस्तार होता है तो मनुष्य प्राणि मात्र से प्रेम करने लगता है। पति पत्नी के प्रेम की सीमा का विस्तार ही परमात्मा से साक्षात्कार है। सासारिक प्रेम के माध्यम से ईश्वरीय प्रेम तक पहुचें, तभी सम्पूण जगत के साथ तादात्म्य की ऊची स्थिति प्राप्त होती है और 'वसुधैव कुटुम्ब की धारणा विकसित होती है। 'यह देह जो ईश्वर का अश है इसके सर्वोच्च को अपने सवप्रिय म लीन करें'—इस तरह मन म उच्च सत्ता का स्मरण लेकर ही चरम अनुभूति प्राप्त होती है और अपने भीतर स्वग का आभास मिलता है।

भारतीय दशन मे यह जो प्रेम की सीमा का विस्तार है उसम पति-पत्नी म से किसी एक की भी अधिकार भावना के लिए कोई स्थान नही। वह यदि है तो एकात्म म, अद्वैत मे बाधक है। पुरप स्त्री पर हावी होगा तो उसे आनन्द म सह-भागी नही बना सकता। भारतीय दष्टि यहा प्राकृतिक भी है तकपूण वैज्ञानिक भी आध्यात्मिक भी, जिसके अनुसार, अधिकार जमाने की भावना अद्वैत को समाप्त कर न केवल मिलन के चरमानन्द को खडित करती है यह स्वार्थी वत्ति पारिवारिक कलह को भी जन्म

देती है।

सयम का अथ कामना एक विस्तृत व उलझा विषय है। तलवार मारती भी है रक्षा भी करती है। अग्नि जलाती भी है, उसके बिना हमारा काम भी नही चलता। हानि केवल दुरुपयोग से ही होतीहै। भ्रमण स्वास्थ्य के लिए लाभप्रद है, पर उसम अत्यधिक थकान हो जाए तो बेचैनी व रुग्णता पदा होती है। यही बात सबधा पर भी लागू है। स्वभाव को वशवर्ती करने से कभी निराशा नही होती। सयम का बस इतना ही अथ है स्वय को मारना नही। इद्रिय दमन भी अनुचित है, उनके वशीभूत होना भी। अधिकार का प्रयोग भी तब श्रेयस्कर हो जाता है जब दृष्टि मे समभाव हो और अपने भीतर से आवाज उठे 'अह ब्रह्मास्मि'—मैं स्वय म ईश्वर हू। सभी मनुष्यो मे, प्राणि-मात्र मे ईश्वर का अश है। इस स्थिति म पहुचकर ईश्वर से डरना भी मूखता होगी और मनुष्य स डरना तो सरासर कायरता। अपने आप को जानने से ही डर निकल जाता है। किसी भी तरह के भय से विहीन होकर ही वास्तविक मिलन की अनुभूति प्राप्त की जा सकती है। भय थोडा भी बीच मे आएगा तो चरमान द मे बाधक होगा।

अभीत और अभिन्न प्रदशन नहीं, सम्मान इस प्रकार अभीत और अभिन्न होने का ही अथ है, अद्वैत, एकात्म, आत्मरूप हो जाना, जहा बाहरी दिखावटी शब्दा की कोई आवश्यकता नही रह जाती। भारतीय परपरा की यह विलक्षणता है कि भारतीय पति सावजनिक रूप से पत्नी का आदर सम्मान नही करता। पश्चिमी पति की तरह बात बात मे 'डार्लिंग' या प्रिय का सबोधन नही करता, आई लव यू'—'मैं तुमस प्रेम करता हू' नही दुहराता। प्रेम प्रदशन मे वह कजूस है। पर भीतर से वह पत्नी को प्रेम व इज्जत देता है। उसके लिए सवस्व न्यौछावर करने के लिए तैयार रहता है। समय पर उसके लिए कुछ भी करने, यहा तक कि जान तक देन के लिए तत्पर रहता है। अतरगता और आत्मीयता मे इसी भावना और त्याग को/स्थान है प्रदशन को नही—भारतीय व पश्चिमी परपरा और दष्टि के इस मूल अन्तर को भी समझन की जरूरत है।

प्रकृति, विज्ञान और आध्यात्मिकता का समन्वय उपरोक्त व्याख्याओ म कहा है पति पुरुष की स्त्री पर अधिकार भावना या स्त्री की दासता? ' पति को उस समय परमश्वर मानो' का अथ चरमान द की अनुभूति प्राप्त करने के लिए ईश्वरीय स्पश व साक्षात्कार को ध्यान म लाना और इस तरह भावी सन्तान मे श्रेष्ठत्व की कामना करना ही तो है! 'अपने भीतर के सर्वोच्च को अपन सवप्रिय मे लीन करो' में कहा है पति-पत्नी के बीच द्वैत? या ईमानदार, नि शक दाम्पत्येतर प्रेम सबधो पर भी ऐसी रोक, जो विक्षोभ विसगति या भय पैदा करे? भय की स्थिति मे न तल्लीनता सभव है न चरमान द की अनुभूति। फिर जहा न लिप्तता है, न अस्वीकार, न अधिकार भावना, न भय उस सष्टि म और स्वग म क्या अन्तर है?

तो ऐसी थी हमारी प्राचीन दष्टि जिसे समझ लेने पर मिथुन मुद्राओ को मदिरो की पवित्रता के साथ जोडन की बात तुरत समझ म आ जाती है। प्रकृति, विज्ञान और आध्यात्मिकता का अदभुत समन्वय करने वाली यही भारतीय दृष्टि भावी विश्व म

मान्य होगी, ऐसा मेरा विश्वास है। इसी विश्वास का सूत्र या अवलब पकड कर नए मूल्यो की रचना का यहा फिर स प्रारभ किया जा सकता है। भारत को इस मामले म 'नकल' नही, पहल' करनी चाहिए। कही ऐसा न हो कि यह पहल भी, जिसके आसार नजर आने लगे हैं, पश्चिम स हो और हम अपनी चीज को वहा से लौटकर आन पर ही कदर करें और तब उसके पीछे लगें, जैसा कि इस सदी म हम अन्य क्षेत्रा मे करते आए हैं। (देखिए, पश्चिमी प्रभाव और हमारी आधुनिकता, प्रकरण मे, 'आत्मा की खोज और 'ब्रह्मचय का 'नए मूल्य (?)के रूप मे समथन) क्या भारतीय चितक इस चुनौती को स्वीकार करने का साहस दिखाएग ?

वेदो मे भोग और योग का समन्वय

भोग का स्वीकार और उसमे अलिप्तता अद्वत की गहराई तक सलग्नता और योगी की तरह उसी म मे ऊचे उठन की प्रेरणा—यह समग्र दृष्टि हमार वदिक वाड्मय की देन है जो सर्वांगीण जीवन के सिद्धान्ता का प्रतिपादन करती है। जीवन की यह परिपूर्णता सावजनीन है, कालातीत है। सभवत इसीलिए वैदिक साहित्य की मान्यता और प्रतिष्ठा भारत म ही नही, पूरे ससार म है।

वदिक ऋचाओ म कही भी भौतिक सुख सम्पन्नता का तिरस्कार नही है। यहा प्रकृति और ब्रह्म का, विज्ञान और अध्यात्म का, भोग और योग का अदभुत समन्वय है। सैकडो वेद मत्र देव-स्तुति या ईश प्राथना म धन धान्य, आरोग्य, ऐश्वय, श्रेष्ठ वीर सतति शत्रुओ पर विजय और यश की प्राप्ति के लिए रचे गए है। साथ ही प्रेम, सद-बुद्धि, सवविद्या, योग सूय के समान ऋषि तेज की प्राप्ति के लिए भी। इहलोक मे रह कर ही ऊचे—और ऊचे उठन के लिए भी। अधकार से निकलकर ज्योति-लोक मे आरो-हण क लिए अतरिक्ष के समान अत करण की विशालता के लिए मन के हष शोक की द्वद्वात्मक स्थिति से निकल परमानन्द की प्राप्ति के लिए भी। और आश्चय यह कि दोना प्रकार की मनोकामनाओ म भी कही द्वद्व नही। इसीलिए वेद मत्रा म

एक ओर—

—पति पत्नी को एसी प्रेरणा दें कि वे चकवा चकवी की तरह प्रेम करें, वश वद्धि करें और आयु पयन्त सुख भोगें।

—युवती कन्या यही मनोकामना करती है कि वह प्रेमी पति के घर जाए।

—कन्या म विद्यमान ऊष्मा पति पत्नी दोना को दीघ जीवन और बल प्रदान करती है।

—पत्निया आलिंगनपूवक पतिया को सुख दे।

—हे पति-पत्नी तुम्ह कभी वियोग न हो।

—हे ईश्वर, तू अपनी रहस्यमय शक्ति स पति-पत्नी म अनुकूलता और कन्याओ म काम भाव पैदा करता है।

—हे प्रभु, अपन हाथो म स्वण भर कर हम एश्वय प्रदान करो।

—हे प्रभु, मुझे अमरत्व दो, जिससे अक्षय आनन्द और आमोद प्रमोद प्राप्त

होता है और कामनाए पूण तृप्त होती है।

और दूसरी ओर—

—हम बुद्धिमान होकर प्रचुर धन, अन्न, यश के भागी बनें।

—हम अपने शौय स ऐश्वय प्राप्त करें।

—हम सूय समान तेजस्वी हो।

—हम सवविद्या, योगक्षेम प्राप्त हो।

—हम सौ हाथो स अर्जित करें, हजार हाथो स बाटें।

—अधकार से निकलकर ज्योति लोक म आरोहण करें।

—हे पुरुष, उत्क्रमण करो। ऊचे उठो।

—साधक ज्योति पथ म एक शिखर स दूसरे शिखर पर जाता है।

— अपनी अन्त सामथ्य के कारण मैं अन्तरिक्ष के समान विशाल हू।

—हम पार्थिव लोक से अन्तरिक्ष लोक म, अन्तरिक्ष लोक से देवलोक म आरोहण करें, फिर दवलोक से अनन्त प्रकाशमय, आनन्दमय ज्योतिपुज म विलीन हो जाए।

कैसी है यह जीवन यात्रा ? जीवन मे भौतिक सुख ऐश्वय, शक्ति विजय यश-तेज की कामना करती हुई भी जीवन से ऊचे उठन की आकाक्षा लिए अन्तरिक्ष म, देवलोक से भी आगे अनन्त प्रकाश म विलीनता के अन्तिम लक्ष्य की ओर बढती हुई ? जीवन के कम भोग मे योगस्थ आत्मा के साथ विचरण कर तप्ति और परिपूणता प्राप्त करती हुई ?

इस सिद्धि का रहस्य क्या इसी मे नही कि धन ऐश्वय, विजय, यश की यह आकाक्षा इन चीजो को बुद्धि और शौय के माध्यम से (किसी तिकडम स नही) प्राप्त करन की कामना के साथ जुडी है ? सौ हाथो स अर्जित कर हजार हाथो से बाटन' की सदवत्ति भी इसमे निहित है ? भोग के साथ योग दृष्टि को जोड भोग के दुष्परिणामो, भ्रष्ट आचरणो को नैतिकता के अकुश द्वारा सीमित या बाधित करती है ? और इस प्रकार जीवन के कम क्षेत्र म रहते हुए भी उसके बाहरी दुखो स उसे खीच कर भीतरी आत्मिक आनन्द की साधना म लीन करती है ?

भारतीय दर्शन और फ्रायडवाद

फ्रायड न आधुनिक ससार को नया कुछ नही दिया केवल उस नए वैज्ञानिक रूप मे प्रस्तुत किया। उन्नीसवी सदी के अन्त म फ्रायड का जो मनोविश्लेषणवाद सामने आया, उसकी अनेक बातें भारतीय दशन के चेतना के विश्लेषण मे मिलती हैं। लेकिन फ्रायडवाद और भारतीय दशन के चेतना के विश्लेषण म कुछ बुनियादी अन्तर है जिसे समझे बिना काम और यौन के प्रति भारतीय मूल दृष्टि को ठीक से समझा नही जा सकता। इसलिए उसे यहा सक्षेप म स्पष्ट करन का प्रयत्न किया जा रहा है

फ्रायड न मन की तीन अवस्थाओ का उल्लेख किया है—सचेतन, अवचेतन और अचेतन। उसके अनुसार, मनुष्य के मन मे कई तरह के विचार रहत है। कई विचार ऐसे होते हैं, जिन्हे हमारा समाज सहन कर लेता है माता पिता या समाज की ओर से

उन पर कोई बधन नहीं होता। ये समाज सम्मत विचार हमारे सचेतन मे रहते है। किंतु जिन विचारो को पसद नही किया जाता या जिन्हे सामाजिक स्वीकृति नही मिलती वे भी मन म उठते तो रहते ही है। वे पूरी तरह लुप्त नही होत चेतना के अन्त स्तल म जा बैठते ह या अचेतन म जा दबत है। इस मानसिक प्रक्रिया को मनोविश्लेषणवाद मे 'दमन कहा जाता है। ये दबे हुए विचार भीतर जाकर मरते नही, भीतर स बाहर आने के लिए अकुलाते रहते है। जब उनकी क्रियाशीलता बढ जाती है तो भीतर बेचैनी होनी है। इसी से तन्त्रिका रोग या मानसिक रोग पैदा होते हैं। अचेतन मन मे दबे य विचार जिन्ह गदा अश्लील या समाज विरोधी कह कर भीतर दबा दिया जाता है, भीतर स बाहर सीधे अचेतन मन मे नही आ सकते। उन्हे पहले मध्य स्तर पर स्थित अवचेतन मन स गुजरना पडता है। इस अवरोधक या 'सेंसर कह सकते है, जो उन विचारो को उसी रूप म बाहर आने से रोकता है उचित नही कह कर फिर पीछे धकेल देता है। कई बार ऐसा होता है। जब उन्हे राह नही मिलती तो इसका परिणाम यह होता है कि वे गन्द समझे जाने वाले विचार अपना रूप बदल कर सचेतन मे आने का प्रयत्न करते हैं।

स्वप्न अधिकतर अचेतन मे दबे विचारा का ही भिन्न भिन्न रूप होते है। सपना के अलावा मनुष्य के अनेक व्यवहारा मे भी इनका बदला हुआ रूप देखा जाता ह विशेष रूप से समस्या व्यवहारो म। जब इन्हे भेस बदल कर या बिना भेस बदल अचेतन से बाहर निकलने का अवसर नही मिलता तो व्यक्ति भीतरी द्वन्द्व, मानसिक ऊहापोह या मानसिक तनाव का शिकार हो जाता है और यह तनाव बढने पर मानसिक सतुलन तक खो बैठता है। इसीलिए मानसिक व्याधियो की चिकित्सा म मनोविश्लेषणवाद का सहारा लिया जाता है। कई बार जब रोगी को यह पता चल जाए कि उसका मानसिक तनाव किस परिस्थिति म किस मनोभाव को दबाने स पैदा हुआ है तो इस जानकारी भर स उसका रोग जाता रहता है।

चेतना के विषय मे फ्रायड ने जस सचेतन अवचेतन और अचेतन के रूप म मन की तीन अवस्थाओ का उल्लेख किया है वैस ही इच्छा और अहकार के लिए भी तीन स्तरा या रूपो का उल्लेख किया है--'इड' 'ईगो तथा सुपर ईगो। 'इड' हमारी अतिरिक्त वासनाओ के उस पुज का नाम है जो अचेतन व अज्ञात क्षेत्र म दबी रहती हैं। यहा बुद्धि काम नही करती। 'इड के बाद दूसरी सत्ता ईगो की है। इसका क्षेत्र अवचेतन है जहा बुद्धि का दखल है। इसलिए तर्क वितर्क कर विचारो म तरतीब बठाना ईगो का काम है। ईगो के बाद तीसरी सत्ता सुपर ईगो की है, जिसका सबध सचेतन मन से माय है। ज्यो ज्यो बालक का मानसिक विकास होता है अपन आसपास के जगत के सपर्क म आ वह परिस्थिति की वास्तविकता समझने लगता है त्यो-त्यो उसम सुपर ईगो का निर्माण होने लगता है। पहले वह हर बात को अपनी इच्छानुसार देखना व करना चाहता है। यहा 'इड मौजूद रहती है। लेकिन जल्दी ही उसम ईगो विकसित होने लगती है और वह समझने लगता है कि दुनिया म उसकी अपनी इच्छा ही नहीं चलेगी। धीरे धीरे जब वह अच्छे बुरे का निर्णय स्वय सोच कर करने लगता है तो उसम

यही मुख्य बुनियादी अन्तर है।

चेतना के उपरोक्त चार स्तरों की तरह पातंजलि मुनि ने वाणी के भी चार स्तरों का वर्णन किया है—वैखरी, मध्यमा पश्यन्ती तथा परा। सांख्य दर्शन ने फ्रायड की 'इड', 'ईगो' व 'सुपर ईगो' की जगह अहंकार चित्त, मन, बुद्धि—इन चारों चित्त प्रवृत्तियों का वर्णन किया है, जिनका विकास जीवन के विकास के साथ ही क्रमशः इन्हीं चार स्तरों पर होता है। यहां जीवन के प्रथम संचालक सूत्र के रूप में अहंकार की तुलना एडलर के सिद्धान्त 'स्वाग्रह' से की जा सकती है कि जीवन कामभावना से प्रभावित तो होता है पर यही उसका संचालक सूत्र नहीं। कामभावना की उपस्थिति फ्रायड के अनुसार जन्म से भी मान ली जाए तो यह भावना जरूरी नहीं कि जीवन के अन्त तक भी रहे, समय के साथ वह समाप्त भी हो सकती है, जबकि मनुष्य का 'स्व' जन्म से मृत्यु पर्यन्त कायम रहता है। अतः वही जीवन की मूल प्रेरणा है। आत्माभिमान की भावना ही जीवन का मूल आवेग माना जाना चाहिए। यहां सांख्य दर्शन का सिद्धांत व एडलर का सिद्धांत मिलता जुलता है और यह फ्रायड से आगे जाता है।

भारतीय दृष्टि रचनात्मक और समग्र जहां तक 'लिबिडो' या कामलिप्सा का प्रश्न है भारतीय दर्शन इसे अस्वीकार नहीं करता, निष्कासित भी नहीं करता बल्कि अधिक अच्छे रूप में उसे मान्यता देता है। यहां अस्वीकार केवल 'इडिपस काम्प्लैक्स' या मान-ग्रंथि के फ्रायडीय विश्लेषण का है जिसे एडलर या आधुनिक मन चिकित्सकों ने भी अस्वीकार किया है। 'लिबिडो' को भारतीय दर्शन में 'पुत्रैषणा' कहा गया है। आधारभूत बात एक ही है, पर यहां ध्येय भिन्न है—सन्तानोत्पत्ति और वंशवृद्धि तथा न केवल भौतिक आनन्द की प्राप्ति, इस माध्यम से चरम आध्यात्मिक आनन्द तक भी पहुंच। इसीलिए इसके साथ धर्म व पवित्रता की भावना जोड़ी गई है। काम आनन्द का स्रोत है, लेकिन मनुष्य का अंतिम ध्येय इसकी दलदल में फंसने के बजाय इसे लांघकर आगे तुरीयावस्था में पहुंचना है। इसलिए मन की वासना का उपाय उसे बाहर निकालना मात्र ही नहीं है ज्ञान की अग्नि द्वारा उसे भस्म भी किया जा सकता है। जब वासनाएं केवल दबी नहीं रहेंगी भस्म भी की जा सकेंगी तो उनसे रोग की उत्पत्ति नहीं हो सकती। इन वासनाओं को या तो बाहर निकालना होगा या भीतर भस्म करना होगा। फ्रायड उन्हें केवल बाहर निकालने या उदात्तीकरण द्वारा उनकी दिशा बदलने की ही बात करता है उन्हें भीतर भस्म करने की नहीं। यही भोग और योग के समन्वय की भारतीय वेदान्त की बात पूरी तरह स्पष्ट हो जाती है। यह समन्वय आध्यात्मिक साधना द्वारा ही संभव है। भावी मनोविज्ञान और मनोविश्लेषणवाद इसी ओर बढ़ रहा है, जिसमें फ्रायड का मनोविश्लेषणवाद बहुत पीछे छूट जाएगा। अभी ही उसके अनेक सिद्धान्त अमान्य किए जा चुके हैं।

भारतीय शास्त्रों में कामभावना के रूप में पुत्रैषणा ही नहीं, दो अन्य मूलभूत एषणाएं भी स्वीकार की गई हैं—लोकैषणा और वित्तैषणा। इनमें कामेच्छा का स्थान पहला है लेकिन भिन्न ध्येय के साथ। शेष दो एषणाएं भी जीवन के लिए उतनी ही महत्त्वपूर्ण हैं। 'लोकैषणा' मनुष्य की आत्माभिमान की पूर्ति करती है इसलिए उसे

'सुपर ईगो' का निर्माण होने लगता है। समाज के आदश उसके 'आद'ा-स्व' बनने लगते हैं, क्योकि उन आदर्शों या मापदण्ड मान कर वह स्वय को परखता चलता है। इसी 'आदश स्व' को फ्रायड ने आत्मा की आवाज कहा है, जिसका निर्माण समाज करता है।

इस मनोविश्लेषणवाद म फ्रायड ने लिबिडो' या काम लिप्सा और लिंग सबधी विचार पर बहुत विस्तार से प्रकाश डाला है। फ्रायड के अनुसार, लिंग सबधी विचार बालक के ज-मत ही उसम उत्प-न हो जाते हैं। फ्रायड न इसे 'इडिपस काम्प्लेक्स' या मातग्रथि का नाम दिया है। बालक प्रारभ स ही अपनी माता के प्रति और बालिका अपने पिता के प्रति खिचाव अनुभव करती है। बच्चे की प्रत्यक क्रिया—अगूठा चूसना, पेशाव करना मल-त्याग आदि—को फ्रायड ने काम लिप्सा के ही प्रारभिक भि-न भिन्न रूप कहा है। इस तरह फ्रायड ने जीवन की प्रेरक शक्ति काम को ही मान लिया। इसी बात पर उसकी बहुत आलोचना भी हुई। फ्रायड के समय म ही एडलर ने इस मत को गलत ठहराया। उसने कहा, " 'काम लिप्सा' या लिबिडो' का जीवन म महत्त्वपूण स्थान तो है, पर-तु वह जीवन की सर्वेसर्वा नही। जीवन मे मुख्य स्थान शक्ति प्राप्त करने की अभिलाषा या 'स्वाग्रह' का है। यही आवेग जीवन की प्रेरणा है। उसका सचालक-सूत्र है। इसी आवेग के कारण व्यक्ति व्यक्ति मे भि-न परिस्थितियो के फलस्वरूप श्रेष्ठता-मनाग्रथि या 'हीनता मनोग्रथि' का विकास होता है।' एडलर की 'सेल्फ एम-शन' की धारणा भारतीय दशन की अहकार की धारणा से मिलती जुलती है। फ्रायड के 'इडिपस काम्प्लेक्स' या मातृग्र थि वाली बात का भारतीय दशन म कतई उल्लेख नही है। इस मातग्रथि की धारणा का आधुनिक नारी मुक्ति आ-दोलन की कायकत्रिया न भी जम कर विरोध किया है—इसकी चर्चा आगे मुक्ति आ-दोलन क सदभ म की जा रही है।

बुनियादी अ-तर भारतीय शास्त्रीय विचार से मन की तीन नही चार अवस्थाए है—जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति तुरीय। सचेतनावस्था जागृतावस्था है। अवचेतनावस्था स्वप्नावस्था है। अचेतनावस्था सुषुप्तावस्था है। लेकिन भारतीय विचार यहा समाप्त नही हो जाता इसके आग जाता है। मानव देह के सो जाने के बादभी जो सत्ता उसके भीतर बनी रहती है वह शरीर की तनिका अवस्था नही, भौतिक नही, अध्यात्म अवस्था है। चेतना का यही तुरीय स्तर है। यही चेतना का शुद्ध स्वरूप है—सुषुप्ति के आगे का स्तर, जिस लाघ कर चेतना आगे भावातीत अवस्था म पहुच जाती है। फ्रायड यहा तक नही पहुच पाए, अचेतन म ही अटक कर रह गए। फ्रायड को भौतिक दष्टि स मनुष्य के मन म दबे विचारो को जान कर उसके मलिन या असामा-य व्यवहारो को जानना था और उसी के अनुसार उसकी चिकित्सा करना था, शायद इसीलिए उसकी दष्टि चिकित्सक की दष्टि से आगे नही बढ सकी। हमारे उपनिषदकारो को अचेतन से आगे निकल विशाल अन-त चेतना तक पहुचने का प्रयत्न करना था क्योकि उनकी दष्टि मे मन मे दबी मलिनता को बाहर लाने का प्रयत्न ही मात्र उपाय नही था आध्यात्मिक साधना से उसका परिष्कार करना भी था। शुद्ध चत-य तक पहुच कर चरम आनद की खोज करना भी था जहा पहुच कर किसी मानसिक चिकित्सा की अलग से आवश्यकता ही नही रह जाती। भारतीय मनोविश्लेषणवाद और फ्रायडीय मनोविश्लेषणवाद मे

जीवन मे ऊचा उठान म सहायक है क्योकि इसम परोक्ष रूप स यश की कामना जुडी है। वित्तैषणा यानी जीवनयापन के साधनो को पान क लिए प्रयत्नशील होना, सुख-भोग की आकाक्षा करना। फ्रायड ने जीवन क इस पक्ष की उपक्षा की है। भारतीय दशन म सुख भोग का स्वीकार है। और उसकी प्राप्ति के लिए प्रयत्नशील होने और बुद्धि व शौय जस शुद्ध साधनो क प्रयोग करन पर जोर है। और फिर भोग को योग के साथ जोडकर उस अतिम ध्यय की ओर उन्मुख करन का प्रावधान है। इसलिए इच्छाओ क दमन या शमन के विभिन्न उपायो को लेकर भी भारतीय दष्टि और फ्रायडीय दष्टि के अन्तर को समझन की जरूरत है।

आधुनिक ससार मे 'अति सवत्र वजयेत' की उपेक्षा एक लबी अवधि तक फ्रायडीय मनोविश्लेपणवाद क ससार के मन चिकित्सा क्षत्र पर छाए रहन के कारण अधिकाश लोगो की यह धारणा बन गई है कि यौन विचारो का दमन करन के बजाय विषय भोग कर लेना अच्छा है कि मानसिक तनाव न रह। यह धारणा लोगो को अपनी मूल प्राकृतिक इच्छाओ क अधिक अनुकूल जान पडी, इसलिए इसका व्यापक असर हुआ और उत्पादक रूप से उपभोक्ता रूप म बदला समाज इसी एक बात को महत्व द इसके पीछे लग गया। अति सवत्र वजयते' के रूप मे चेतावनी देन और अति अवस्था म इसे 'विश्वहा' कहने वाले भारतीय दशन की हम भारतीय ही उपेक्षा कर गए। आज के सेक्स प्रधान समाज मे तन्त्रिका भग ('न्यूरोस्थेनिया') से पीडित लोगो की सख्या बढने का यही कारण है। इन्द्रियो के विषय म मनोविज्ञान दो अवस्थाओ की सभावना व्यक्त करता है। पहले नियम से उत्तेजित इन्द्रिया विषय भोग से कुछ देर के लिए शात हो जाती हैं पर उन्ह इसका चस्का लग जाता है। विषय भोग से तप्ति होने के बजाय वासना बढती जाती है। दूसरे नियम स हर बार यह लालसा बढेगी, लेकिन उसस प्राप्त आनन्द की मात्रा क्रमश घटती जाएगी। इस तरह दोनो ही नियमो स अति वर्जित है। विषयो का भोग अपने आप म बुरा नही है। इन्द्रिया बनी ही इसके लिए है। लेकिन यह कह कर कि दमन करेंगे तो मानसिक तनाव बढेगा और मानसिक स्वास्थ्य गिरेगा, इस इच्छा को अतिवाद की ओर ले जाना मनुष्य को कही का नही छोडना। मनुष्य का अनुभव भी यही कहता है कि इन्द्रियो का दास होन से मन म एक खिचाव एक तनाव की स्थिति निरतर बनी रहती है और उससे हीनता बोध पैदा होता है, जबकि इन्द्रियो पर विजय पान स मन विजयोल्लास से भरा भरा रहता है और श्रेष्ठत्व की अनुभूति होती है।

समान दशन इच्छा का उदात्तीकरण इस प्रकार मनोविश्लेपणवाद की भोग-वादी दष्टि एक तरफ है। भारत की शास्त्रीय अध्यात्मवादी दष्टि दूसरी तरफ है। मनो-विश्लेपणवाद कहता है विषय भोग मे मन शात हो जाता है मानसिक तनाव दूर हो जाता है। भारतीय विचारधारा कहती है विषय भोग की शाति क्षणिक शाति ह अस्थायी शाति ह, कुछ समय बाद यह शाति अधिक अशाति को जन्म देती है। लेकिन फ्रायड न यह कभी नही कहा कि अचेतन मे दबी इच्छाओ को बाहर निकालन का एकमात्र उपाय सक्स सलग्नता ही है। यह ठीक है कि सेक्स की मूल प्रवत्ति कृत्य म प्रवत्त होन की है और निवत्ति के बाद उत्तेजना शात हो जाती है तनाव मिट जाता है जबकि दमित सेक्स

भीतर बचैनी उत्पन्न करता है। लेकिन फ्रायड ने समाज निंदित तरीके स प्रवृत्ति का समथन नही किया। उन्हाने इसके लिए एक दूसरा रास्ता भी सुझाया है। वह है इच्छा का उदात्तीकरण। पानी की भाप एक शक्ति है। इस भाप से हम दाल सब्जी भी पकाते है रलगाडी का इजन भी चलाते है। यानी उसी शक्ति से छोटा काम भी ले सक्त है, बडा भी। शक्ति से ध्वस भी किया जा सकता है, सृजन भी। इसी तरह सैक्स जिसे भारतीय दशन न भी एक शक्ति कहा है के उदात्तीकरण से उच्च स्तर का सजनात्मक काम भी किया जा सकता है। विचार चिन्तन कला-कौशल, साहित्य किसी भी ललित रचना की ओर इसे प्रेरित करके ऊचे कलात्मक व सृजनात्मक जीवन की उपलब्धि हो सकती है। जहा फ्रायड ने काम को केवल दमन या केवल स्खलन मे बचा कर उच्च ध्येय की ओर प्रवृत्त किया है वहा फ्रायडीय विचारधारा और भारतीय वैदिक विचार-धारा लगभग समान स्तर पर बहती दिखाई देती हैं। वैदिक ऋषियो न फ्रायड से सैकडा वष पहले काम को एक महत शक्ति मान उसके दमन की नही उसे सृजनात्मक काय म, उच्च ध्येय की प्राप्ति म लगाने की विचारधारा को जन्म दिया था। यही फ्रायड के अनु-सार सैक्स या यौन का उदात्तीकरण है, वदिक विचारधारानुसार 'चरम लक्ष्य की ओर आरोहण तथा सांख्य दशनानुसार मन की तुरीयावस्था की ओर प्रस्थान' है।

सिद्धान्त का दुरुपयोग

लेकिन आधुनिक ससार न फ्रायडीय सिद्धान्त के इस पक्ष की अवहेलना कर दी और सक्स का दमन हानिकर है, केवल इस बात को पकड लिया। मनोरोग विज्ञानी ही दमन के खिलाफ सक्स का पक्ष लेत रह हा, ऐसी बात भी नही है। मनोविज्ञानियो, विशेष रूप स बाल मनोविज्ञानियो ने तो इच्छाओं के दमन के खिलाफ एक विश्व-अभियान चला कर जैस दुनिया का नक्शा ही बदल दिया। बालक की इच्छाओं का दमन करने से उसका विकास कुठित होता है—यह बात अपने-आप मे सही होकर भी जब फ्रायडीय सिद्धान्त की गलत व्याख्या से अतिवाद को ओर झुक गई तो माता पिता और बच्चो के बीच, शिक्षकों और छात्रों के बीच पति और पत्नी के बीच, शासक और शासित के बीच सबध ही गडबडा गएऔर समाज म अनुशासन नाम की चीज का लोप होने लगा। मनुष्य की मूल प्रवृत्तियो को उभरने का मौका मिला। व्यक्तिगत अहम और इच्छा पूर्ति की प्रधानता होने से व्यक्तिगत स्वाथ और अधिकार भावना बढी। एक दूसरे के लिए त्याग करने के बजाय निजी स्वाथ पूर्ति को बल मिला। सहयोग वृत्ति के स्थान पर होड और प्रतिद्वन्द्विता की भावना मुखर हो गई। और नतीजा सामने है। मूल फ्रायडीय विचार-धारा म कई बातें अच्छी थी। उसम केवल कुछ खामिया थी। बाद म उन खामियो के विस्तार ने ही आधुनिक विश्व का यह सारा नुकसान किया। इसीलिए फ्रायडीय सिद्धान्त को ही अब गलत ठहराया जाने लगा है।

समग्र जीवन का अस्वीकार एक बडी विश्व हानि राजधानी के वरिष्ठ मन-चिकित्सक डा० पी०बी० बक्षी ने भी इस विषय पर अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा, "फ्रायड थियोरी मे ऐसी कोई नई बात नही थी, जिसकी व्याख्या हमारे प्राचीन साहित्य

जीवन म ऊचा उठान म सहायक है क्योंकि इसम परोक्ष रूप स यश की कामना जुडी ह। 'वित्तषणा यानी जीवनयापन के साधना को पान क लिए प्रयत्नशील होना, सुख-भोग की आकाक्षा करना। फ्रायडने जीवन क इस पक्ष की उपेक्षा की है। भारतीय दशन म सुख भोग का स्वीकार है। और उसकी प्राप्ति के लिए प्रयत्नशील होन और बुद्धि व शौय जसे शुद्ध साधना के प्रयोग करन पर जोर है। और फिर भोग का योग के साथ जोडकर उस अतिम ध्यय की ओर उन्मुख करने का प्रावधान है। इसलिए इच्छाओं के दमन या शमन के विभिन्न उपाया को लेकर भी भारतीय दृष्टि और फ्रायडीय दृष्टि के अतर का समझने की जरूरत है।

आधुनिक ससार मे 'अति सवत्र वजयेत' की उपेक्षा एक लबी अवधि तक फ्रायडीय मनोविश्लपणवाद के ससार के मन चिकित्सा क्षेत्र पर छाए रहन क कारण अधिकाश लोगो की यह धारणा बन गई है कि यौन विचारा का दमन करन के बजाय विषय-भोग कर लेना अच्छा है कि मानसिक तनाव न रह। यह धारणा लोगों को अपनी मूल प्राकृतिक इच्छाओ के अधिक अनुकूल जान पडी इसलिए इसका व्यापक असर हुआ और उत्पादक रूप से उपभावता रूप म बदला समाज इसी एक बात का महत्व दे इसके पीछे लग गया। अति सवत्र वजयत के रूप म चेतावनी देन और अति अवस्था म इसे 'विश्वहा कहने वाले भारतीय दशन की हम भारतीय ही उपेक्षा कर गए। आज के सेक्स प्रधान समाज मे तनिका मग (न्यूरोस्थेनिया स पीडित लागा की सख्या बढन का यही कारण है। इद्रिया के विषय म मनोविज्ञान दो अवस्थाओ की सभावना व्यक्त करता है। पहले नियम स उत्तेजित इद्रिया विषय भोग मे कुछ देर के लिए शात हो जाती हैं पर उन्ह इसका चस्का लग जाता है। विषय भोग म तप्ति होने के बजाय वासना बढती जाती है। दूसरे नियम से हर बार यह लालसा बढेगी, लेकिन उसम प्राप्त आनद की मात्रा क्रमश घटती जाएगी। इस तरह दोनो ही नियमा से अति वर्जित है। विषया का भोग अपन आप म बुरा नही है। इद्रिया बनी ही इसके लिए है। लेकिन यह कह कर कि दमन करग तो मानसिक तनाव बढेगा और मानसिक स्वास्थ्य गिरेगा इस इच्छा को अतिवाद की ओर ले जाना मनुष्य को कही का नही छोडता। मनुष्य का अनुभव भी यही कहता है कि इद्रियो का दास होने से मन मे एक खिचाव एक तनाव की स्थिति निरतर बनी रहती है और उसम हीनता बोध पदा होता है जबकि इद्रियो पर विजय पाने से मन विजयोल्लास से भरा भरा रहता है और श्रेष्ठत्व की अनुभूति होती है।

समान दशन इच्छा का उदात्तीकरण इस प्रकार मनोविश्लेपणवाद की भोग-वादी दृष्टि एक तरफ है। भारत की शास्त्रीय अध्यात्मवादी दृष्टि दूसरी तरफ है। मनो-विश्लपणवाद कहता है विषय भोग स मन शात हो जाता है मानसिक तनाव दूर हो जाता है। भारतीय विचारधारा कहती है विषय भोग की शाति क्षणिक शाति है, अस्थायी शाति ह कुछ समय बाद यह शाति अधिक अशाति को जन्म दती है। लेकिन फ्रायड ने यह कभी नही कहा कि अचेतन मे दबी इच्छाओ को बाहर निकालन का एकमात्र उपाय सेक्स सलग्नता ही है। यह ठीक है कि सेक्स की मूल प्रवृत्ति कृत्य म प्रवत्त होन की है और निवत्ति के बाद उत्तेजना शात हो जाती है तनाव मिट जाता है जबकि दमित सक्स

भीतर बचैनी उत्पन्न करता है। लेकिन फ्रायड न समाज निर्दित तरीके स प्रवनि का समर्थन नही किया। उन्होने इसके लिए एक दूसरा रास्ता भी सुझाया है। वह है, इच्छा का उदात्तीकरण। पानी की भाप एक शक्ति है। इस भाप स हम दाल-सब्जी भी पकात हैं रलगाडी का इजन भी चलाते हैं। यानी उसी शक्ति स छोटा काम भी ले सकते है, बडा भी। शक्ति स ध्वस भी किया जा सकता है सृजन भी। इसी तरह सक्स जिसे भारतीय दर्शन न भी एक शक्ति कहा है, के उदात्तीकरण स उच्च स्तर का सृजनात्मक काम भी किया जा सकता है। विचार चिन्तन कला कौशल, साहित्य किसी भी ललित रचना की ओर इस प्रेरित करके ऊच कलात्मक व सृजनात्मक जीवन की उपलब्धि हो सकती है। जहा फ्रायड ने काम को केवल दमन या केवल स्खलन स बचा कर उच्च ध्येय की ओर प्रवृत्त किया है, वहा फ्रायडीय विचारधारा और भारतीय वैदिक विचार धारा लगभग समान स्तर पर बहती दिखाई देती हैं। वैदिक ऋषियो ने फ्रायड स सैकडो वर्ष पहले काम को एक महत शक्ति मान, उसके दमन की नही उसे सृजनात्मक काय म, उच्च ध्येय की प्राप्ति म लगाने की विचारधारा का जन्म दिया था। यही फ्रायड के अनुसार सेक्स या यौन का उदात्तीकरण है, वदिक विचारधारानुसार 'चरम लक्ष्य की ओर आरोहण' तथा सांख्य दर्शनानुसार 'मन की तुरीयावस्था की ओर प्रस्थान' है।

सिद्धान्त का दुरुपयोग

लेकिन आधुनिक ससार न फ्रायडीय सिद्धान्त के इस पक्ष की अवहेलना कर दी और सक्स का दमन हानिकर है केवल इस बात को पकड लिया। मनोरोग विज्ञानी ही दमन क खिलाफ सेक्स का पक्ष लेत रह हो एसी बात भी नही है। मनोविज्ञानियो, विशेष रूप स बाल मनोविज्ञानियो न तो इच्छाओ के दमन के खिलाफ एक विश्व अभियान चला कर जस दुनिया का नक्शा ही बदल दिया। बालक की इच्छाओ का दमन करने से उसका विकास कुठित होता है—*यह बात अपन आप मे सही होकर भी जब फ्रायडीय* सिद्धान्त की गलत व्याख्या से अतिवाद को ओर झुक गई तो माता पिता और बच्चो के बीच, शिक्षक और छात्रो के बीच, पति और पत्नी के बीच, शासक और शासित के बीच सबध ही गडबडा गएऔर समाज म अनुशासन नाम की चीज का लोप होन लगा। मनुष्य की मूल प्रवृत्तियो को उभरन का मौका मिला। व्यक्तिगत अहम् और इच्छा पूर्ति की प्रधानता होने स व्यक्तिगत स्वार्थ और अधिकार भावना बढी। एक दूसरे के लिए त्याग करन के बजाय निजी स्वार्थ पूर्ति को बल मिला। सहयोग वृत्ति के स्थान पर होड और प्रतिद्वंद्विता की भावना मुखर हो गई। और नतीजा सामन है। मूल फ्रायडीय विचारधारा म कई बातें अच्छी थी। उसम केवल कुछ खामिया थी। बाद मे उन खामियो के विस्तार न ही आधुनिक विश्व का यह सारा नुकसान किया। इसीलिए फ्रायडीय सिद्धान्त को ही अब गलत ठहराया जान लगा है।

समग्र जीवन का अस्वीकार एक बडी विश्व हानि राजधानी के वरिष्ठ मन-चिकित्सक डा० पी०बी० बक्षी न भी इस विषय पर अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा, "फ्रायड थियोरी म ऐसी कोई नई बात नही थी, जिसकी व्याख्या हमारे प्राचीन साहित्य

मे नही मिलती। वह सिद्धात नया नही, उसकी वैज्ञानिक व्याख्या नई थी। पर उसम जो समग्र जीवन के अस्वीकार की एक बुनियादी गलती थी, उसकी ओर आधुनिक युग का ध्यान अब इतनी देर से गया है कि इस बीच विश्व मे इसके फैलाव से काफी नुकसान हो चुका है। फ्रायड को अपने जीवन मे मान्यता भी कहा मिली थी? जमन नाजिया व ब्रिटिशो द्वारा तगडा विरोध मिलने पर उसे अमेरिका मे जाकर शरण लेनी पडी थी। वही उसने अपने लेक्चस दिए। अपनी किसी एक राष्ट्रीय सस्कृति के अभाव म मुक्त अमेरिकन समाज म ही उस स्वीकृति मिली। फ्रायड का सारा साहित्य अमेरिका स प्रकाशित होकर ही बाद म सारे विश्व मे फैला। सामाजिक मर्यादाआ म बधी मनुष्य की दबी ढकी आदिम मनोवत्ति को यह मनोव्याख्या रास आ गई और ससार मे सभी जगह इस मुक्ति के साधन के रूप म मुक्तहस्त से अपना लिया गया।

'आज सैक्स को जो इतना महत्त्व व स्थान द दिया गया है और दमित इच्छाआ को राह दने के नाम पर जितनी छूट ली जा रही है, इसके पीछे फ्रायडीय मनोविश्लेषण का बहुत हाथ है। पिछले कुछ दशको मे इस पर जरूरत से ज्यादा जोर देकर और इसकी गलत व्याख्याए करके भी मन स्थितियो को उलझा दिया गया है। फ्रायड ने दमित इच्छाओ की बात करते हुए उनके उदात्तीकरण और रूपातरण की बात भी तो की थी। पर उसे भुला दिया जाता है और मन की लगाम ढीली करने की बात पकड ली जाती है। खर, अब तो फ्रायडीय व्याख्याए हर कही अस्वीकृत हो चली हैं। इस स्वीकृति देने वाल अमेरिकन भी अब अपनी भूल स्वीकार कर रहे हैं। वहा के मन चिकित्सक ही अब साइको एनालेसिस' छोड कर 'साइको फारमाकोलोजी और 'साइको-सजरी' मे दूसर देशो की अगुआई करते हैं। अब वहा फ्रायडीय प्रभाव कम हो चला है। लेकिन अमेरिकी सोसायटी पर इस प्रभाव के बारे मे एक मजेदार किस्सा मशहूर है—एक छ साल की बच्ची नाश्ते की मेज पर बठी पहले अपनी मा से पूछती है, 'क्या मैं गभवती हो सकती हू?' फिर पिता से यही प्रश्न करती है। फिर अकल मे। तीनो से 'नही जवाब मिलने पर वह साथ बैठे उन्ही मेहमान अकल के आठ वर्षीय पुत्र से तुरत बोल उठती है, मैंने पहले ही तुमस कहा था न कि नही हो सकती।' फिर पश्चिम के इन प्रभावो स हमारे यहा भी निकट सबधा मे ये प्रयोग शुरू हो गए हैं, तो इस पर आश्चय नही होना चाहिए।

भारतीय सस्कृति और भारतीय नारी

समानता की भावना पश्चिम की देन है। हमारी सस्कृति मे नारी का स्थान पुरुष से ऊचा है। यदि सीधे सीधे कहा जाए कि स्त्री पुरुष से श्रेष्ठ है तो बात शायद सबके गल नहीं उतरेगी। इसलिए इसकी व्याख्या मे जाना होगा

मा का स्थान सर्वोपरि

पश्चिमी सस्कृति म नारी का पत्नी और प्रेयसी रूप प्रधान है, भारतीय सस्कृति म मा का स्थान सर्वोपरि है। और यही वह पुरुष मे ऊची है। हमारे आचाय जब स्नातका को जीवन व्यवहार की शिक्षा देते थे, तब यही कहते थे—'मातृ देवो भव, पितृ देवो भव, आचाय देवो भव!' इसम माता का स्थान गुरु और पिता से पहले है। जगदगुरु शकराचाय ने भी कहा था— जगन्नमाता जगत गुरु'। यह जगन्नमाता का स्थान न केवल परिवार और समाज मे मा के ऊचे स्थान का परिचायक है, उसे देवत्व तक उठा कर आदि शक्ति का रूप भी दिया गया है।

ससार मे शक्ति के बिना न तो किसी लौकिक कार्य म सफलता मिलती है न किसी साधना म सिद्धि। ब्रह्म और शक्ति के सयोग मे ही ससार की उत्पत्ति होती है। निगुण, निराकार ईश्वर अपनी त्रिगुणात्मक शक्ति से जुडकर ही जगत की सष्टि, उसका पालन और सहार करता है। ब्रह्मा अपनी शक्ति महासरस्वती के साथ जुड कर ससार का सृजन करते हैं। विष्णु अपनी शक्ति महालक्ष्मी के साथ जुड कर ससार का सचालन करत है और शिव अपनी रौद्र शक्ति दुर्गा या महाकाली के साथ जुड कर विघ्न-बाधाओ का नाश और ससार का सहार करते है।

'दम्पति', 'अर्धांगिनी' और 'अध-नारीश्वर' की कल्पना

भारतीय सस्कृति म स्त्री शक्ति की महत्ता इसी से सिद्ध है कि वह न पुरुष की अनुगामिनी है, न उसके समकक्ष। वह पूरक है। स्त्री और पुरुष मिल कर जीवन की एक महत्वपूण इकाई है। 'दाम्पत्य' शब्द इसकी पुष्टि करता है।

पर पूरक होकर भी पुरुष की जन्मदात्री और शक्ति होने से स्त्री का स्थान पुरुष से श्रेष्ठ, उससे ऊंचा माना गया है। अपनी शक्तियों के अभाव में ब्रह्मा, विष्णु, महेश— ये तीनों महादेवता भी जैसे निरुपाय लगते हैं, मनुष्य की तो बात ही क्या! हमारे देवी देवताओं में 'अर्ध नारीश्वर' की कल्पना भारतीय संस्कृति की एक अद्भुत देन है। यहां नारी 'अर्धांगिनी है और पुरुष 'अर्धनारीश्वर'-युगल सामंजस्य की विलक्षण कल्पना।

आध्यात्मिक क्षेत्र से उतर कर संसार के रण क्षेत्र में देखें तो भी जीवन के सतत संघर्ष के लिए शक्ति की उपादेयता असंदिग्ध है। न अकेला पुरुष-जीवन सार्थक है, न अकेला स्त्री जीवन। जब दोनों ही एक-दूसरे के पूरक हैं तो इनमें प्रतिद्वंद्विता या होड़ कैसी? सृजन भी समानता से नहीं, पूरकता से ही संभव है। अपने आराध्यों को हम सीता राम राधा कृष्ण, लक्ष्मी-नारायण कहते हैं—राम सीता, कृष्ण-राधा, नारायण लक्ष्मी नहीं। 'लेडीज फर्स्ट' की धारणा हमारी संस्कृति में हजारों वर्ष पहले से व्याप्त है।

प्राचीन भारत में स्वतंत्रता व गरिमा अक्षुण्ण

भारत का इतिहास बताता है कि प्राचीन काल में स्त्रियों की स्वतंत्रता और गरिमा को पूरी मान्यता दी गई थी। हिन्दू विवाह-पद्धति में पाणिग्रहण संस्कार के समय पति अपनी पत्नी का हाथ पकड़ कर कहता है 'मेरे गृह की साम्राज्ञी बनो'। कोई भी धार्मिक या सामाजिक अनुष्ठान पत्नी के सहयोग बिना पूर्ण नहीं माना जाता। यज्ञ हो या धार्मिक अनुष्ठान, तीर्थयात्रा व पर्व स्नान हो अथवा कोई पारिवारिक या सामाजिक उत्सव, अर्धांगिनी पत्नी का साथ रहना अनिवार्य माना गया है। रामायण में अश्वमेध यज्ञ के समय सीता वनवास में थी तो सीता की सोने की मूर्ति बनवा कर यज्ञ हेतु राम की बगल में बिठाई गई थी।

'श्रद्धा' का स्थान 'इडा' से ऊंचा

यद्यपि वैदिक काल से पौराणिक काल और स्मृति काल तक आते आते भारतीय समाज में स्त्री का स्थान पूर्वापेक्षा नीचे हो गया, तब भी मनु ने लिखा— 'यत्र नारि यस्तु पूज्यन्ते, रमन्ते तत्र देवता'—जहां स्त्रियों का समादर होता है वहां देवता निवास करते हैं। मानव की आदि-कथा में मनु श्रद्धा, इडा का जो वर्णन है उसमें इडा या बुद्धि का स्थान महत्वपूर्ण मानते हुए भी श्रद्धा या भावना का स्थान उससे ऊंचा माना गया है। यह स्थिति सार्वभौम, सार्वकालिक कही जा सकती है। आज के समाज में इडा का प्राधान्य होने पर भी उसका स्थान उपयोगिता से अधिक नहीं। जहां तक मान सम्मान का प्रश्न है वह स्थान श्रद्धा को ही अधिक प्राप्त है। नारी केवल इडा (तार्किक) होकर न केवल अपनी संस्कृति से दूर हटेगी अपना सम्मान भी कायम नहीं रख सकेगी। वह पहले मां, फिर पत्नी या प्रेयसी होकर ही आज के भ्रमित दुखित विश्व के सामने अपनी भारतीय संस्कृति का आदर्श प्रस्तुत कर सकती है।

नैतिक मूल्यो पर जब जब भोगवादी मूल्यो की प्रधानता स्वीकार की गई, तभी समाज मे ये अत्याचार बढ गए—इतिहास इसका साक्षी है। इसलिए, आज दबे वर्गों के सिर उठाने पर उन्हे सजा देने के रूप मे यौन शक्ति के प्रदशन का यह घिनौना हथियार (बलात्कार) इस्तेमाल किया जाने लगा है, ताकि यथास्थिति या मौजूदावस्था को उनस कोई खतरा न हो और उनकी भोगवादी व मनमाने अधिकारो वाली सत्ता कायम रहे।

इस आधुनिक धारणा मे नारी के आत्म बलिदान का अस्वीकार है और उसके द्वारा सघष व प्रतियोगिता मे टिकने, मुकाबला करने को प्रोत्साहन है। ऊपरी तौर पर यह धारणा पश्चिमी मतवाद से प्रभावित लगती है। पर ध्यान से देखें तो नारी के प्राचीन शक्ति रूप का ही समथन करती है। केवल इसे भारतीय सास्कृतिक आधार पर समझने व इसमे युगानुरूप परिवतन सशोधन लाने की जरूरत है कि यह नारी शक्ति प्रतिद्वद्विता मे नष्ट न हो, सहकार-सहयोग से 'नारी पुरुष की सम्पत्ति है' वाली मध्यकालीन धारणा को बदला जा सके।

प्रकृतिवादियो का मत प्रकृतिवादियो के अनुसार—पुरुष के प्रति प्रकृति का पक्षपात उसे स्त्री पर अपनी श्रेष्ठता प्रमाणित करने का अवसर देता है। मातत्व एक शक्ति है, लेकिन मातृत्व ही वह कारण है, जिसके लिए उस पुरुष के सम्मुख झुकना पडता है। लेकिन आज जब कि मशीनें बाहु बल का स्थान ले रही हैं, नारी की प्रकृतिदत्त कमजोरी कोई अधिक मायने नही रखती। केवल शारीरिक शक्ति से सम्पन्न होने वाले भारी कार्यों को छोड शेष सभी क्षेत्रो मे वह आज पुरुषो के बराबर काय सक्षम है, काय रत भी। विज्ञान और तकनीक ने मिल कर उसके लिए नए-नए काय क्षेत्रो मे काय करना सभव बना दिया है बल्कि किन्ही क्षेत्रो मे नारी अपने प्राकृतिक गुणो के कारण अपनी प्रतिभा व योग्यता का बेहतर उपयोग और अपनी शक्तियो का बेहतर प्रदशन करने मे सफल हुई है।

फिर भी प्राकृतिक सीमाए अपनी जगह है। और जो है, उन्हे स्वीकार करके चलना होगा। भारी काम ही नही जिन्हे करने म स्त्रियो की गरिमा भग होती है या उनके स्त्रीत्व पर आच आती है, अथवा वे क्षेत्र जो उनकी सुरक्षा के लिए खतरा उत्पन्न करत ह केवल होड मे आकर या दुस्साहस दिखा कर उन क्षेत्रो मे जाने की जिद्द करना ठीक नही। फिर मातत्व जब तक प्राकृतिक रूप से नारी के साथ ही जुडा है (आगे चल कर किसी समय विज्ञान यदि उस इससे अलग करता है तो भी स्त्री के ममत्व की सवेगात्मक माग पूर्ति न होने से क्या उसका जीवन अपूण व अतप्त नही रहेगा?) वह पति पुरुष के सम्मुख अभ्यर्थिनी ही रहेगी। यह प्राकतिक सीमा नारी-जीवन की सब से बडी सीमा है, जिसे न नकारा जा सकता है न किसी मुक्ति-आन्दोलन द्वारा अलग ही किया जा सकता है।

समानता नही, पूरकता

उपरोक्त दोनो प्रकृतिवादी और मनोविज्ञानी मत अपनी-अपनी जगह अपनी

बिन घरनी घर भूत का डेरा

'गृहिणी गृह मुच्यते' और 'बिना घरनी घर भूत का डेरा' कहकर हमने गृहलक्ष्मी की महत्ता भी स्वीकार की है। सुंदर, सुशील, सुघड़ कन्या को 'लक्ष्मी' की संज्ञा दी जाती है। वह लक्ष्मी समान बने, इसके लिए अनेक घरों में लड़की को पुकारा ही लक्ष्मी नाम से जाता है। इसलिए कि एक सुंदर गृहिणी घर की शोभा तो होती है, पर सुंदरता के साथ यदि वह सुसंस्कृत व सुघड़ नहीं होगी तो न घर परिवार का कुशल संचालन होगा, न बच्चों को अच्छे संस्कार मिलेंगे। लक्ष्मी से तात्पर्य इन तीनों गुणों का समन्वय ही है। शिक्षा की कितनी ही डिग्रियां हों, कामकाजी रूप में इसका कितना ही ऊंचा वेतन हो, यदि नारी इन गुणों से वंचित है तो न उसका घर बाहर कहीं सम्मान है, न उसके घर की या उसके मन की शांति ही सुरक्षित है—आजादी के सारे नारों, प्रगति के सारे आंकड़ों को झुठला कर यह सत्य आज भी जीवित है और शायद आगे भी जीवित रहेगा। व्यक्तिगत व सामाजिक अनुभव में रोज महसूसने वाले इस 'सत्य' से आंख चुरा कर, कार्य विभाजन और कार्य सहयोग की परस्पर आश्रित भूमिका को भुलाकर आधुनिक नारी न सुखी हो सकती है, न प्रगति को सार्थक विकास की राह पकड़ा सकती है। घर ही समाज की सबसे छोटी इकाई है और घर-परिवार की धुरी नारी है। तो जाहिर है कि वही समाज उन्नति करेगा, जो कुशलता से संचालित घरों और सुसंस्कृत परिवारों से मिलकर बना होगा।

प्रकृति की संतुलित शक्ति

स्त्री प्रकृति की सबसे सुंदर रचना है। प्रकृति की भौतिक और नैतिक शक्ति भी। प्राकृतिक शक्ति के भी हमारे शास्त्रों में वर्णित तीन रूप हैं—अंतरंगा तटस्था और बहिरंगा। 'अंतरंगा' को हम भीतर के संतोष, आनंद में खोज सकते हैं। 'तटस्था' शक्ति हमारी जिजीविषा या जीवनी शक्ति ही है जो ईश्वरीय अंश होने, नियति-आश्रित होने पर भी उससे अलग और तटस्थ है और गीता के कर्मयोग की व्याख्या करती है। 'बहिरंगा' शक्ति हमारी भौतिक शक्ति है। भारतीय दर्शन में जीवन को इसी समग्र दृष्टि से समग्र रूप में देखा गया है। स्त्री के त्रिगुण देवी रूप की कल्पना प्रकृति को देखने की इस दार्शनिक दृष्टि से मेल खाती है।

सुंदरता, बुद्धि और शक्ति के मेल से ही जीवन का सफल संचालन संभव है। लक्ष्मी सरस्वती दुर्गा के रूप में जगत जीवन की नियंत्रक शक्ति समानांतर अर्थ में प्रकृति की यह संतुलित शक्ति ही है। इस संतुलित शक्ति से लैस होकर ही नारी जीवन सुखी, सार्थक और समाज हितैषी बन सकता है। आधुनिक भारतीय नारी को अपनी सम्मानजनक स्थिति से ऊपर उठने के लिए यही संतुलन साधना है—यह अपेक्षा उससे समाज की ही रहा है पुरुष की ही नहीं है, स्वयं उसकी अपनी भी है।

सामाजिक यथार्थ और भारतीय नारी

समाजशास्त्र का एक नियम है—सास्कृतिक विलबना अर्थात सभ्यता जितनी तेजी म आगे बढती है सस्कृति उस गति म काफी पीछे छूट जाती है। इसलिए कि परपराओ की जडें काफी गहरी होती हैं और विवेक सभ्यता की अधाधुध दौड म पिछड कर उन्हें काट नही पाता। सास्कृतिक परिवतन सोच विचार के परिणाम होते है। इसलिए उनकी गति मन्द होती है जबकि वैज्ञानिक और तकनीकी आविष्कार सास्कृतिक परिवतन की परवाह किए बिना सभ्यता को तेजी स आगे ले जाते हैं। तब प्रगति तो होती है पर वह प्रगति समाज के लिए विशेष हितकारी नही होती क्योकि सभ्यता और सस्कृति की विकास गति मे जितना अधिक अतर होगा, समाज म अव्यवस्था उतनी ही ज्यादा फैलेगी। विचार और व्यवहार मे अतर उतना ही अधिक बढेगा। आज की उच्छ खलता अनुशासनहीनता, भ्रष्टाचार, पारिवारिक विघटन आदि स्थितिया इसक परिणाम हैं।

इस सामाजिक यथाथ की पृष्ठभूमि मे देखने पर आज के सक्रमण काल की सामाजिक और पारिवारिक विसगतिया सहज ही समझ मे आ जाएगी। वधानिक अधिकार सभ्यता की एक छलाग है। सविधान पास हुआ कि एक ही दिन मे स्त्रियो को समानाधिकार प्राप्त हो गए, लेकिन सामाजिक स्वीकृति उन्हे इसके साथ ही नही मिल गई।

सवैधानिक और सामाजिक अधिकारा म अनुकूलन तभी हो पाएगा जबकि परिवतन का आधार अपनी परपराए और सामाजिक मर्यादाए हो। इसका अथ यह नही कि वैज्ञानिक तकनीकी और वैधानिक परिवतनो के साथ सास्कृतिक परिवतन नही होत। लेकिन यहा हम परिवतन और विकास का अतर समझना होगा। सभ्यता सास्कृतिक विकास म ही सफल होती है। इसलिए कि सस्कृति सभ्यता की विवेकहीन अधगति पर रोक लगाती है। इस बात के साथ परिवतन की गति भले ही मन्द हो पर विकास की सही दिशा निर्धारित करने के लिए सभ्यता पर सस्कृति की यह रोक मानवीय हित म है, परिवार और समाज के लिए कल्याणकारी है। इसलिए शुभ है। जो लोग केवल सामा-

जिक परिवतन को ही प्रगति मान कर सामाजिक विकास की अवहेलना करते हैं या इस सामाजिक नियम की यथाथता को समझने म असमथ हो विकास की मन्द गति को पिछडेपन की निशानी मान लेत हैं वे एक भ्रम का शिकार होत हैं और समाज म फली अव्यवस्था को बढावा देने के भागी।

एक और सामाजिक यथाथ है—परिवतन पर तीव्र प्रतिक्रिया। जैस नदी के बाध को अचानक खोल देने से सारा पानी हरहरा कर वह निकलता है और अपनी इस तीव्र गति म तट के कगारो को, उपयोगी वनस्पतियो को भी सग बहा ले जाता है। लग भग वही स्थिति अचानक प्राप्त अधिकारो के बाद उत्पन्न होती है। जहा सास्कृतिक और वैयक्तिक विकास पहले से इस परिवतन के लिए तैयार होता है, वहा इसकी प्रति क्रिया शुभ होती है, समाज उससे लाभान्वित होता है। पर जहा सास्कृतिक दृष्टि से और वैयक्तिक विकास की दृष्टि से भी समय सापेक्ष पिछडापन होता है, वहा मिले वैधानिक अधिकार बाध के खुले पानी की तरह ही अपनी नैतिक मर्यादाओ और समद्ध परपराओ को तोड फोड कर स्वच्छन्दता, उच्छृ खलता, विघटन और होड जैसी कुप्रवत्तियो को बढावा दे प्रगति की धारा को गलत दिशा म मोड सकते हैं।

अधिकार-पात्रता, अधिकारो की माग नही

भारतीय नारी को मिले समानाधिकारो के साथ पुरुष से प्रतिद्वद्विता इसी विकृति की उपज कही जा सकती है। कही-कही तो इस होड का इतना प्रबल व सस्ता रूप देखने को मिलता है कि परिवार, समाज और स्वय अपने नारीत्व के प्रति भी प्रतिबद्धता को भूल नारी यौन-उच्छृ खलता तक मे पुरुष की होड पर उतरती दिखाई देती है। वह भूल गई है कि स्वय को 'भोग्या' रूप मे प्रस्तुत कर वह कभी भी स्वतत्र नही हो सकती, बल्कि और गुलाम, और शोषित हो जाएगी। पश्चिम का नारी-मुक्ति आन्दोलन इसी तथाकथित स्वतन्त्रता से जुडे शोषण का परिणाम है, जो अति से गुजरने के बाद उसकी एक स्वाभाविक प्रतिक्रिया है। इसी तरह पुरुष की बराबरी मे उतर कर भी नारी अपने निजी स्तर से नीचे उतरेगी। परिवार को विघटित कर अपनी सुरक्षा ही नही, अपनी मानसिक शाति भी खो देगी। तब केवल आर्थिक आत्म निर्भरता उस उसकी यह खोई शाति, अस्मिता और इज्जत लौटा नही पाएगी। आर्थिक निर्भरता के साथ उसे मानसिक बौद्धिक और नैतिक स्तर पर भी ऊचे उठना होगा कि अधिकार मागने न पडें, अर्जित किये जाए या अपने आप पास खिचे चले आए।

यह लिखते हुए मुझे वर्षों पुरानी अपनी एक कविता की दो पक्तिया याद आ रही है—

'आत्म का विश्वास और सम्मान हो नीति हमारी
माग मत अधिकार नारी।'

अधिकार के लिए पात्रता से ही अधिकार प्राप्ति का माग प्रशस्त होता है—इस सामाजिक यर्थाथ को भी समझ कर आगे बढना होगा। परिवतन और विकास के इस अन्तर को समझ कर इनकी दिशाओ का अध्ययन करना होगा और दोनो के बीच की

खाई को पाटने का प्रयत्न करना होगा। सभ्यता की इस अंधी दौड़, जिसमें पश्चिम की खूबियों को छोड़ कर केवल खामियों की नकल शामिल है, पर अपनी संस्कृति का कितना अंकुश स्वीकार किया जाए, तकनीकी प्रगति के साथ चलने के लिए सांस्कृतिक विकास की गति किस प्रकार, कितनी तेज की जाए इस पर भी विचार करना होगा महिला-समाजशास्त्रियों को इस दिशा में पहल करनी चाहिए।

सभ्यता पर संस्कृति का अंकुश जरूरी

सभ्यता को संस्कृति का आधार पूरी तरह नहीं दिया जा सकता, क्योंकि वह संस्कृति से सदा आगे चलती है—इस सामाजिक तथ्य को हम पूर्व स्वीकार कर चुके हैं लेकिन सभ्यता पर एक सीमा तक संस्कृति का अंकुश आवश्यक है। यह नियंत्रण जितना कम होगा, इसमें जितना विलम्ब होगा स्थितियां उतनी ही तेजी से हमारे हाथ में निकलती जाएगी। अधिक देर होने पर कहीं स्थितियां हमारे नियन्त्रण से इतनी बाहर न हो जाए, देश का मनोबल इतना न गिर जाए अच्छाई के मूल्यों पर से विश्वास इस कदर न हिल जाए कि अचानक एक बड़ी क्रांति की जरूरत आ पड़े! भारत जैसे एक बड़े देश में शनैः शनैः लाई गई विचार प्रेरित क्रान्ति ही श्रेयस्कर हो सकती है। स्थितियों के दबाव में आई आकस्मिक क्रांति के परिणाम बाद में कुछ भी हों, पहले वह विघटन और अराजकता ही लाएगी। किसी एक क्षेत्र के लिए शायद ऐसी स्थिति सुखद परिणाम भी ला सके, लेकिन विभिन्न जातियों, धर्मों सम्प्रदायों और विश्वासों वाले हमारे विशाल देश में प्रथम तो किसी बड़ी क्रान्ति की संभावना ही नहीं, यदि होगी भी तो वह सुसंगठित नहीं होगी। इसलिए उसके वांछित परिणाम सामने आएंगे, ऐसी आशा नहीं लगाई जा सकती। तो रचनात्मक दृष्टिकोण ही अपनाना होगा। परिवर्तन और प्रगति को विकास की राह ही देनी होगी।

एक राष्ट्रीय सांस्कृतिक नीति की आवश्यकता

सही विकास के लिए, सही दिशा में विकास के लिए राष्ट्र की एक सांस्कृतिक नीति, निर्माणाधीन नये भारतीय समाज के लिए एक मूल्य-नीति का निर्धारण करना होगा। यह निर्धारण आजादी के तुरंत बाद हमारी सभी विकास-योजनाओं के एक अंग के रूप में होना चाहिए था। पर यहां हम चूक गए। प्रगति की ठीक परिभाषा तय करने से पहले उसमें जुट गए। विकास (आन्तरिक, बाह्य दोनों) की उपेक्षा कर गए। फलस्वरूप परिमाणात्मक (आंकड़ात्मक) विकास ही हो पाया, गुणात्मक विकास की दर धीमी पड़ गई जो इधर के दस सालों में और धीमी पड़ती गई। किसी भी राष्ट्र का चरित्र इस गुणात्मक विकास से ही ऊंचा उठता है। प्रगति की दिशा यह राष्ट्रीय चरित्र ही निर्धारित किया करता है। यही संस्कृति का वह अंकुश है जो सभ्यता की सार्थक गति और दिशा के लिए आवश्यक है। अभी भी अधिक देर नहीं हुई है। यदि हम अपनी सामाजिक, आर्थिक व शैक्षणिक योजनाओं में नैतिक संहिताओं का यह अंकुश ले आएं और उसे डंडे के जोर से नहीं, समाज के ऊपरी लोगों के आदर्श और आम जनता में

सकल्प की सम्मिलित शक्ति के प्रभाव से लागू करें, तो कोई कारण नही कि वतमान समस्याओ का समाधान न निकले और एक सुविचारित क्रांति की राह न मिले।

अपना अवमूल्यन अस्वीकार करे

समाज के कर्ता धर्ता भी नारी को एक ओर शक्ति कहे, दूसरी ओर उसे अबला या बेचारी बना कर रखना चाहे, तो क्या यह विडबना नही ? उन्हे उसका मानवी रूप क्या स्वीकाय नही ? पुरुप मनुष्य है, मानव है, व्यक्ति है, तो नारी व्यक्ति क्यो नही है ? मानवी क्या नही है ? उसे मादा या भोग्या ही क्यो समझा जाए ? जब घरो से बाहर निकल कर कार्यालयो मे, फैक्टरियो म, अ य क्षेत्रा मे नारी पुरुप सहकर्मी के रूप मे साथ साथ काम करते है तो उनके बीच सहकर्मियो जैसे व्यवहार की आदान-प्रदान की सहज स्थिति क्यो न कायम की जाए ? स्त्री पुरुष के बीच मित्रवत सबधो को प्रोत्साहन देना तथा इसके लिए वातावरण निर्माण करना क्या उनकी जिम्मेदारी नही है ? मालिक कमचारी, अधीन अधीनस्थ, सवण-दलित, शक्तिशाली मजबूर के बीच सबधो मे, व्यवहार मे नारी पुरुप भेदभाव क्यो ? स्त्री पर से दबाव की इन स्थितियो और शक्ति निगाहो को हटाए बिना समस्या का समाधान किसी भी तरह सभव नही होगा—महिला अधिकारी, महिला पुलिस इस्पक्टर अधिक सख्या मे नियुक्त करके भी पूरी तरह नही।

राजपूती आनबान वाले हमारे देश के विचारको को—पुरुषो, महिलाओ को, सभी को—सोचना है कि आज हमारा कोई व्यक्ति धम, कोई पडोसी-धम कोई सामाजिक धम या राष्ट्रीय चरित्र क्यो नही रह गया है ? 'क्या सब चलता है' वाला *यथास्थितिवाद ओढकर जाने अनजाने हम निराशा के एक गहरे भवर म धसते जा रहे हैं ?*

भारतीय सस्कृति से यह बहुमूल्य 'सामाजिक सत्य' छिनते जाने से हम दुखी क्यो नही हो रहे हैं ? यदि हो रहे है तो इसके लिए कुछ कर क्यो नही रहे ? कब तक हम अपना यह अवमूल्यन होते चुपचाप देखते रहेंगे ? समाधान के लिए छिटपुट आदोलन नहीं, सामूहिक विचार क्रांति चाहिए। कुछ घ [illegible] , कुछ दिन शोर मचाने के बजाय यह सब क्यों और नि [illegible] जाने की ओर इस प्रश्न को मात्र वग-सघप या [illegible] रूप से आगे बढकर व्यापक सामाजिक सदभ मे दे [illegible]

उठती है। दोष जागरण का नहीं। जागरण तो सदैव श्रेयस्कर है स्वागत योग्य है। त्रुटि वहीं पैदा होती है, जब जागरण के साथ दिशा भ्रम आकर जुड़ जाता है। पुराने मूल्य नष्ट भ्रष्ट हो जाते हैं। तोड़ने की प्रक्रिया में अच्छा बुरा सब टूट जाता है और नये मूल्यों के निर्माण की कोई रूपरेखा ही नहीं बन पाती।

राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर महिलाओं द्वारा अधिकारों की मांग संबंधी बड़े-बड़े प्रस्ताव पास किए जाते हैं। वियतनाम जैसे प्रश्नों पर प्रतिनिधिमंडल भेजे जाते हैं। पुरुषों के लिए सुरक्षित समझे जाने वाले क्षेत्रों का उल्लंघन कर हर क्षेत्र में आगे बढ़ने, बड़े-से-बड़े पद तक पहुंचने के लिए लड़ाइयां लड़ी जाती हैं। विश्व में चार महिलाएं प्रधानमंत्री बनीं। हमारे देश को न केवल यह सम्मान प्राप्त हुआ प्रत्युत किसी भी क्षेत्र में भारतीय नारी ने आगे बढ़कर अपनी क्षमताओं का पूरा परिचय दिया। लेकिन इस सबके साथ यह भी सच है कि संवैधानिक स्वतंत्रता व समानता के बावजूद यह आजादी और यह सम्मान केवल मुट्ठी भर महिलाओं के लिए ही है। सामान्य नारी आज भी उतनी ही पिछड़ी व घुटी हुई है। और उतनी ही असुरक्षित है। हर संकट के समय, हर वर्ग संघर्ष में, हर दंगे के समय यह असुरक्षा सामूहिक स्तर पर बढ़ जाती है। और समानाधिकार संपन्न, स्वतंत्र कही जाने वाली नारी फिर सदियां पीछे धकेल दी जाती है।

नारी का संरक्षण समाज का दायित्व है। सरकार व समाज की अपनी प्रतिष्ठा का प्रश्न है। पर जब समाज इस दायित्व से पीछे हटता है तो उसे रूढ़िगत नैतिक मान्यताओं को भी बदलना होगा कि जबरन शीलभंग नारी का सतीत्वभंग नहीं होता। ऐसे शीलभंग के भय से भी अधिक बदनामी के भय से दुर्बल पड़ा नारी मन कभी भी पुरुष की पशाचिक कामना या बलात्कारी वृत्ति का मुकाबला करने में समर्थ नहीं हो सकता। नारी यह भय मन से निकाले और समाज उसके मन से यह भय निकालने में सहायक हो—यह बदली स्थितियों में परिवर्तित समाज नैतिक नियमों से ही संभव है। यौन शुचिता का नियम भंग उतना ही अनैतिक माना जाए जितना कि व्यक्तिगत आचारहीनता का अन्य कोई भी अपराध। इसे अलग से अधिक महत्त्व देकर हौवा खड़ा करने से ही बलात्कार जैसी सामाजिक व्याधियों और अन्य अनेक समस्याओं का जन्म हुआ है।

यह प्रश्न तेजी से आगे बढ़ी समस्या से पिछड़े एक रूढ़िगत सांस्कृतिक मूल्य का ही प्रश्न है कि अहंवादी पुरुष आज उसे इस अपमान की आड़ में फिर सदियों पीछे धकेलने की साजिश कर रहा है। (तू बलात्कार से खुद को बचाने के लिए घर में बंद हो जा या लड़ते हुए जान दे दे, ताकि एक पुरुष अपनी कायरता ढांक ले और एक अपनी बर्बरता पर गर्व कर सके—'दिनमान')आज हर प्रबुद्ध महिला चिंतित है। हर सामान्य नारी शंकित है कि आजादी के बाद हर क्षेत्र में नारी के बढ़ते हुए कदम क्या अब फिर पीछे लौटेंगे? क्या नारी का अपमान पुरुष की विजय है? या कि नारी को इस कदर असुरक्षा का भय दिखा कर उसे उच्च शिक्षा ऊंची सामाजिक स्थिति से वंचित करने, पुरुष के संरक्षण में लाने या उसे वापस घरों की चारदीवारी की घुटन भरी स्थितियों

सकल्प की सम्मिलित शक्ति के प्रभाव से लागू करें, तो कोई कारण नहीं कि वतमान समस्याओ का समाधान न निकले और एक सुविचारित क्राति को राह न मिल।

अपना अवमूल्यन अस्वीकार करे

समाज के कर्ता धर्ता भी नारी को एक ओर शक्ति कह, दूसरी ओर उसे अबला या बेचारी बना कर रखना चाह, तो क्या यह विडबना नही ? उ ह उसका मानवी रूप क्यो स्वीकाय नही ? पुरुष मनुष्य है, मानव है, व्यक्ति है, तो नारी व्यक्ति क्यो नही है ? मानवी क्या नही है ? उसे मादा या भोग्या ही क्या समझा जाए ? जब घरा से बाहर निकल कर कार्यालयो म, फक्टरियो म, अ य क्षेत्रों मे नारी पुरुप सहकर्मी के रूप में साथ साथ काम करते हैं तो उनके बीच सहकर्मियो जैस व्यवहार की, आदान प्रदान की सहज स्थिति क्यो न कायम की जाए ? स्त्री पुरुष के बीच मित्रवत सबधो को प्रोत्साहन देना तथा इसके लिए वातावरण निर्माण करना क्या उनकी जिम्मेदारी नही है ? मालिक कमचारी, अधीन अधीनस्थ, सवण-दलित, शक्तिशाली मजबूर के बीच सबधो मे, व्यवहार मे नारी पुरुप भेदभाव क्यो ? स्त्री पर से दबाव की इन स्थितियो और शक्ति निगाहो को हटाए बिना समस्या का समाधान किसी भी तरह सभव नही होगा—महिला अधिकारी, महिला पुलिस इ स्पेक्टर अधिक सख्या मे नियुक्त करके भी पूरी तरह नही।

राजपूती आनबान वाले हमारे देश के विचारका को—पुरुपा, महिलाओ को, सभी को—सोचना है कि आज हमारा कोई व्यक्ति धम, कोई पडोसी धम कोई सामाजिक धम या राष्ट्रीय चरित्र क्यो नही रह गया है ? 'क्या सब चलता है' वाला यथास्थितिवाद ओढकर जाने अनजाने हम निराशा के एक गहरे भवर मे धसते जा रहे है ?

भारतीय सस्कृति से यह बहुमूल्य 'सामाजिक सत्य' छिनते जाने से हम दुखी क्या नही हो रह हैं ? यदि हो रहे है तो इसके लिए कुछ कर क्यो नही रहे ? कब तक हम अपना यह अवमूल्यन होते चुपचाप देखते रहेंगे ? समाधान के लिए छिटपुट आदोलन नही सामूहिक विचार क्राति चाहिए। कुछ घट जाने पर जाच कमीशन बिठाने, कुछ दिन शोर मचाने के बजाय यह सब क्यो और निर तर क्यो घट रहा है, इसकी तह म जाने की और इस प्रश्न को मात्र वग सधष या शक्तिशाली कमजोर के शापक शोषित रूप से आगे बढकर व्यापक सामाजिक सदभ मे देखने की जरूरत है।

समाज की नियता शक्ति ?

लेकिन पहले अपनी बात—प्रश्न है कि हारती हुई मानवता का हौसला बुलद कर उसे आगे बढने के लिए जो शक्ति प्रेरित उत्साहित कर सकती है वह नारी शक्ति ही कुठित हो जाए तो इस स्थिति स पार कसे पाया जाए ? यह शक्ति सोई हुई रहे तो उसके सरक्षित रहने के कारण समाज का व स्वय उसका अधिक नुकसान नही होता। पर यह शक्ति जाग्रत होकर कुठित हो जाए तो यह स्थिति दोनो के लिए भयावह हो

उठती है। दोष जागरण का नही। जागरण तो सदैव श्रेयस्कर है, स्वागत योग्य है। त्रुटि वही पैदा होती है, जब जागरण के साथ दिशा भ्रम आकर जुड जाता है। पुराने मूल्य नष्ट भ्रष्ट हो जाते हैं। तोडने की प्रक्रिया म अच्छा बुरा सब टूट जाता है और नये मूल्यो के निर्माण की कोई रूपरेखा ही नही बन पाती।

राष्ट्रीय और अतर्राष्ट्रीय स्तर पर महिलाओ द्वारा अधिकारो की माग सबधी बडे-बडे प्रस्ताव पास किए जाते हैं। वियतनाम जैसे प्रश्नो पर प्रतिनिधिमडल भेजे जाते हैं। पुरुषो के लिए सुरक्षित समझे जाने वाले क्षेत्रो का उल्लघन कर हर क्षेत्र मे आगे बढने बडे से-बडे पद तक पहुचने के लिए लडाइया लडी जाती हैं। विश्व म चार महिलाए प्रधानमत्री बनी। हमारे देश को न केवल यह सम्मान प्राप्त हुआ प्रत्युत किसी भी क्षेत्र म भारतीय नारी ने आगे बढकर अपनी क्षमताओ का पूरा परिचय दिया। लेकिन इस सबके साथ यह भी सच है कि सवैधानिक स्वतत्रता व समानता के बावजूद यह आजादी और यह सम्मान केवल मुट्ठी भर महिलाओ के लिए ही है। सामान्य नारी आज भी उतनी ही पिछडी व घुटी हुई है। और उतनी ही असुरक्षित है। हर सकट के समय, हर वर्ग सघर्ष म, हर दगे के समय यह असुरक्षा सामूहिक स्तर पर बढ जाती है। और समानाधिकार सपन्न, स्वतत्र कही जाने वाली नारी फिर सदियो पीछे धकेल दी जाती है।

नारी का सरक्षण समाज का दायित्व है। सरकार व समाज की अपनी प्रतिष्ठा का प्रश्न है। पर जब समाज इस दायित्व से पीछे हटता है, तो उसे रूढिगत नैतिक मान्यताओ को भी बदलना होगा कि जबरन शीलभग नारी का सतीत्वभग नही होता। ऐसे शीलभग के भय से भी अधिक बदनामी के भय से दुबल पडा नारी मन कभी भी पुरुष की पैशाचिक कामना या बलात्कारी वृत्ति का मुकाबला करने मे समर्थ नही हो सकता। नारी यह भय मन से निकाले और समाज उसके मन से यह भय निकालने मे सहायक हो—यह बदली स्थितियो मे परिवर्तित समाज नैतिक नियमो से ही सभव है। यौन शुचिता का नियम भग उतना ही अनैतिक माना जाए, जितना कि व्यक्तिगत आचारहीनता या अन्य कोई भी अपराध। इसे अलग से अधिक महत्त्व देकर हौवा खडा करने से ही बलात्कार जैसी सामाजिक व्याधियो और अन्य अनेक समस्याओ का जन्म हुआ है।

यह प्रश्न तेजी से आगे बढी समस्या से पिछडे एक रूढिगत सास्कृतिक मूल्य का ही प्रश्न है कि *अहवादी पुरुष आज उसे इस अपमान की आड मे फिर सदियो पीछे* धकेलने की साजिश कर रहा है। (तू बलात्कार से खुद को बचाने के लिए घर मे बद हो जा या लडते हुए जान दे दे, ताकि एक पुरुष अपनी कायरता ढाक ले और एक अपनी बर्बरता पर गर्व कर सके—'दिनमान')आज हर प्रबुद्ध महिला चिंतित है। हर सामान्य नारी शकित है कि आजादी के बाद हर क्षेत्र म नारी के बढते हुए कदम क्या अब फिर पीछे लौटेंगे ? *क्या नारी का अपमान पुरुष की विजय है ?* या कि नारी को इस कदर असुरक्षा का भय दिखा कर उसे उच्च शिक्षा, ऊची सामाजिक स्थिति से वचित करने, पुरुष के सरक्षण मे लाने या उसे वापस घरो की चारदीवारी की घुटन भरी स्थितियो

मे फेंकने की कोई गभीर साजिश भरी कोशिश है ? यदि नही तो 'गल प्रड ये रूप म 'एडवास्ड लडकिया की कामना करने वाले युवक अपनी शादी का प्रश्न आने पर सही उम्र की शिक्षित समझदार प्रगतिशील पत्नी की चाह स उतरकर अब फिर न कुछ कम शिक्षित कुछ कम उम्र की 'घरलू टाइप' लडकी की माग क्यो करन लग है ? ऊपर मे प्रगतिशील, उदारवादी दिखने वाले शिक्षित युवक भीतर स वही परम्परावादी व रूढ़िवादी क्या हैं ?

दुविधा का दोगहा

स्वय लडकिया कहा जा रही है ? क्या सोच रही हैं ? कल तक आजादी और समानाधिकारो की बात करन वाली, इसकी माग उठान वाली तरुणिया आज छात्रावासो म छात्राओ को सरक्षण प्रदान करन की माग क्या उठा रही हैं ? सडको पर, गलियो म छेडखानी करने वाले मनचले लडको से बचने के लिए, बसो म सुरक्षित सफर के लिए पुलिस सरक्षण की गुहार क्या लग रही है ? आज स पाच छह साल पहले राजधानी के एक महिला कालेज की दीवारो पर भारतीय नारी का आदर्श सावित्री नही, द्रौपदी' 'हम मुक्त करो जसे नारे लिखने वाली क्या कालेज छात्राए नही थी ? विभिन्न कालेज सर्वेक्षणो मे छात्रो के बीच ही नही, छात्राओ के बीच भी बढत यौन रोगो के आकडो, नशाखोरी की आदतो और 'काल गत्स' की बढती प्रवत्ति की रिपोर्टों का क्या अथ है ? एक ओर शोषण से मुक्ति के लिए आन्दोलन, दूसरी ओर स्वय भोग्या रूप म इसके लिए प्रस्तुति स क्या और कसा समाधान निकलेगा ? क्या यही कारण नही कि जिस अपहरण या स्त्रीत्व-हरण के एक एक मामले पर इतना इतना हगामा होता था, आज चारो ओर से अमानुषिक अत्याचारो और सामूहिक बलात्कारो की खबरो को गभीरता स नही लिया जा रहा ? जो हगामा सडको से लेकर ससद तक उठता है, उसे भी राजनीतिक मुद्दा बना कर चिन्ता का नही, मात्र चर्चा का, तमाशे का विषय बना दिया जाता है ?

नारी शक्ति है, यह केवल अतीत का विषय नही, आज भी वह शक्ति है। नही है तो हो सकती है। केवल इस शक्ति को कुठित होने स बचाने की जरूरत है। नय और पुराने विचारो की दुविधा से निकल दोनो की अच्छाइया चुनने और उनमे तालमेल बठाने की जरूरत है। एक ओर सहते सहते तग आकर आत्महत्या कर लेने या दहेज की बलिवेदी अथवा पारिवारिक कलह की चिता पर जल मरने की कायरतापूर्ण घटनाए हैं दूसरी ओर मारने, जला दिए जाने की क्रूर प्रवत्तिया और आक्रामक व्यवहार यौन अपराध, सगीन अपराध भी महिलाओ मे कम नही बढ रह। यहा तक कि दहज को लेकर तग किए जाने के मामलो की छानबीन करें तो इनम से अधिकाश मामलो के पीछे भी कुछ और कहानिया मिलेंगी, जो चरित्रहीनता या किसी भी रजिश को लेकर बदले की भावना से उपजी होती है। अधिकारो की बढती माग बढती स्वार्थ लिप्सा और उसी अनुपात मे घटती हुई जिम्मेदारी की भावना, घटती हुई सहनशीलता और निरतर घटती हुई त्याग वृत्ति के कारण भी तथाकथित आजाद नारी की आज यह दुदशा है, जिसके लिए किसी हद तक वह स्वय भी जिम्मेदार है। पारिवारिक विघटन

और बढत तलाको की सख्या के पीछे यह बढती हुई अधिकार भावना और विवाह पूव या विवाहेतर अवैध यौन सबध ही मुख्य कारण हैं।

समाजशास्त्री कहते है, स्त्रियो के प्रति बढते अपराध विकृत समाज व्यवस्था के कारण ही हैं। व्यवस्था म आमूलचूल परिवतन किए बिना स्त्रियो की दशा म सुधार सभव नही। इसस सहमत होत हुए मैं यह भी कहना चाहती हू कि यह परिवतन कवल स्त्रिया ही ला सकती हैं। वे चाह तो समाज का नक्शा बदल कर रख सकती ह। पूरी व्यवस्था को पलट सकती हैं। केवल उन्हे चरित्रवान और अबला स सबला बनना होगा। मजबूर, लाचार या बचारी नही। चरित्रबल, आत्मबल ले फिर से दुर्गा का अवतार बन कर दिखाना होगा। स्त्री मात्र से उठ कर मानवी बन कर अपना हक मागने से पहले इस हक के लिए स्वय को अधिकारी सिद्ध करना होगा। पुरुप की शक्ति, पुरुप की प्रेरणा बनन के लिए स्वय को उसम बहुत ऊचे उठाना होगा। भोग्या बन कर प्रहारी पुरुप का मुकाबला वह नही कर सकेगी, उसके प्रहार को प्रोत्साहन ही देगी। राजनीति को, व्यवस्था को बीच मे लाकर भी समस्या का समाधान सभव नही। राजनीति उसे अपना मोहरा ही बनाएगी। और व्यवस्था को बीच मे लाकर व्यवस्था को बदलना कस सभव है? दलित वग की स्त्रिया की दशा भी स्त्रिया ही सुधार सकती है। नारी सगठन आखिर किसलिए हैं?

प्रतिद्वद्विता नही, सहकार

लेकिन इसका यह अथ नही कि हम पुरुषो के सहयोग बिना ही कुछ कर सकती हैं। या हमारी कोई लडाई है पुरुप जाति स। यहा भी भारतीय व पाश्चात्य सस्कृति के भेद को समझना है। वहा नारी को लबी अवधि तक अपनी आजादी के लिए पुरुषो से लोहा लेना पडा। हमारे यहा राष्ट्रीय स्वातन्त्र्य सग्राम स्त्री पुरुषो ने कधे से कधा लगा कर लडा। पुनर्जागरण काल म नारी जाग्रति व नारी स्वतन्त्रता की आवाज भी पुरुषो न ही उठाई। नारी स्थिति म सुधार लाने के आन्दोलन भी उन्होने चलाए। हमारी मूल भावना सहयोग की है, प्रतिद्वद्विता की नही। यह प्रतिद्वद्विता ही है जो आज बीच मे आ जाने से नारी को पुरुप के सहयोग और सरक्षण से वचित कर रही है। और समाज म आज व्याप्त भोग मूल्यो की प्रधानता ही है जो राखी बधवाने वाले हाथ पैशाचिक प्रहारी हाथो म परिवर्तित हो चले हैं। नारी के शक्ति बनन का अथ इन प्रहारी हाथो से निबटना ही है, सहयोगी हाथो को झटकना नही।

स्त्री पुरुषो के बीच सहज व्यवहार और अधिकाधिक सहयोग-सहकार ही आधुनिक समाज की सारी समस्याओ का हल है। यह सहकार बढाने के लिए, परस्पर नकालु निगाहो पर रोक लगाने के लिए सबधो को लिंग-आधारित दृष्टि पर टिकाए रखन वाले प्रचलित अस्वस्थ मूल्यो का विरोध करना है। स्वय को मात्र शरीर से ऊपर उठाना है। वातावरण को उत्तेजित व विकृत बनाने वाले सभी माध्यमो—सिनेमा, साहित्य, दृश्य-प्रचार सेवाए आदि—का परिष्कार करने के लिए जबरदस्त आन्दोलन चलाना है। और सबसे पहले घरो म बच्चो के पालन पोषण मे लडके लडकी के बीच भेदभाव कर

ओर अहम भाव व दूसरी ओर हीन भाव को प्रोत्साहन देने वाली उन प्रथाओ के निवारण का सकल्प लेना है, जो कि आगे चल कर अलग अलग स्त्री-पुरुष मनोविज्ञान का निर्माण करती हैं और उ हे प्रतिद्वद्वी बनाती हैं। झुकने और झुकाने की शिक्षाए अब नही चलेंगी। यही समाज का बुनियादी परिवतन होगा, जो नारी ही ला सकती है।

सबधी आदेशो निर्देशो स भरा पडा है। हिन्दू धम तो सतानोत्पत्ति को ही विवाह का प्रथम लक्ष्य मानता है और नि सतान व्यक्ति के लिए मोक्ष क द्वार वद रखता है। यद्यपि सामाजिक आचार सहिताओ मे स्त्री पुरुष सबधो की स्थिरता व मर्यादा के लिए विवाह को एक विधान के रूप म स्वीकारा गया है, पर किसी भी धम मे, किसी भी सस्कृति म मात्र दैहिक सबधो को ही विवाह की सना नही दी गई है। यदि ऐसा होता, तो इस ससकार के साथ इतनी धार्मिकता, इतनी नैतिकता, इतनी दाशनिकता और इतनी उत्सव धर्मिता न जुडी होती।

लेकिन मनुष्य तकशील भी है। उसकी बुद्धि के एक तक ने विवाह प्रथा चला कर जीवन और समाज मे एक व्यवस्था की स्थापना की तो दूसरे तक ने इस व्यवस्था म घुटन अनुभव कर इस अनुशासन को भग करने के सैकडा तरीके भी खोज निकाले। आदिम पुरुप ने शारीरिक वल द्वारा स्त्री पर अधिकार जताया। समुदाय जीवन म आक्रामक समूह ने पराजित समूह की स्त्रियो पर भी अय सपत्ति की तरह ही अधिकार प्राप्त किया। बाद म निजी स्वामित्व व्यवस्था म व्यक्तिगत विवाह प्रथा आई, तो भी स्त्री की स्थिति कमोवेश निजी सपत्ति सी ही रही।

दष्टि फिर पीछे की ओर

यहा यह बात ध्यान देने की है कि पश्चिम मे विवाह पूव प्रेम फ्री सेक्स' (मुक्त यौनाचार) सामूहिक दाम्पत्य आदि विभिन प्रयोगो के बाद भी विवाह पद्धति म कोई उपयोगी सशोधन अभी तक दिखाई नही दिया है। देर से विवाह के बाद, शीघ्र विवाह और 'डेटिंग के बाद फिर 'अरेंज्ड मैरिज' की ओर पश्चिम की वतमान दौड देखकर लगता है जैसे भारतीय विवाह पद्धति को विश्व मा यता मिलने जा रही है। शायद इसी लिए हमारे यहा भी लडके लडकिया का झुकाव अब फिर शीघ्र विवाह की ओर हो चला है। एक पत्रकार के नाते मैं सैकडो नवयुवको और नवयुवतियो के सम्पक मे आइ हू। मुझे देख सुनकर आश्चय होता है कि नवजागरण काल मे नारी स्वतत्रता और आत्म-निभरता के लिए किए गए हमारे सारे प्रयत्नो पर जैस पानी फिरने जा रहा है। आज की आजाद और उच्चशिक्षिता लडकी भी किसी मजबूरीवश ही देर से विवाह और नौकरी करना चाहती है अ यथा नही। अपनी मा क समय मे उसने दाम्पत्य जीवन और परिवार की जो टूटन देखी है, स्वय को जिस तरह अरक्षित अनुभव किया है उसे देखते हुए वह आगे जाने के बजाय दादी के युग मे पीछे लौटना चाहती है।

प्रेम की भूख और विवाह की ललक

इसी तरह ऊपर ऊपर देखने से लगता है जसे प्रेम और रोमास शब्द कही खा गए है और उनके स्थान पर शारीरिक माग और अथचेतना ही सजग सक्रिय है। लेकिन यहा भी कायक्षेत्र के मेरे अनुभव की दास्तान भिन है। मैंने पहले भी कहा है कि वर्षों से एक दजन पत्र पत्रिकाओ मे पाठको की समस्याओ के उत्तर लिखते लिखते मैं किशोर पीढी (कस्बाई मुख्य) के हजारो पत्रो के माध्यम से उनसे निकट सपर्कित हू। उनकी प्रेम

की भूख और विवाह की ललक तो देख ही रही हू, इस क्रमश परिवतन को भी गभीरता से लक्ष्य कर रही हू कि बदली स्थितिया म यह भूख और यह ललक अधिक जाग्रत है अधिक उत्तेजित है। आप इम सिनमा प्रभाव सहित चारो ओर के उत्तेजक वातावरण का असर कह सकते हैं। पर समस्या इतनी ही नही है।

एक ओर परपरा म बधे तरुण क सामने अभिव्यक्ति का सकट है, तो दूसरी ओर वतमान स्थितिया मे दबाव—जैसे शिक्षण प्रशिक्षण की अवधि मे वद्धि और आर्थिक स्वनिभरता की अनिवायता—म शीघ्र या कम आयु म विवाह म रुकावट उपस्थित है। और दिशा निर्देशन के अभाव म एक पूरी पीढी गुमराह हो रही है, मानसिक और यौन-विकृतियो की शिकार हो रही है। इस विसगति और विशृखलता के पीछे स्थितियो और सस्थाओ म तालमेल का अभाव है, पारम्परिक स्नेह की ऊष्मा का अभाव है और सुरक्षा का अभाव है। परिवार जितना विघटित होता जाएगा, विवाह जसी पूव सस्थाए वतमान स्थितिया स जितना पिछडती जाएगी, यह अभाव उतना ही गहराता जाएगा। साथ ही बढता जाएगा पीढियो म तनाव, मानसिक तनाव अकेलापन और सामाजिक विघटन।

विवाह की यह ललक कस्बाई किशोर पीढी म ही नही, शहरी शिक्षिता प्रौढ कुमारिया की कुठा म भी दखिए। आर्थिक मजबूरीवश एक कामकाजी युवती जब विवाह नही कर पाती, तो उसकी पीडा और टूटन को आधुनिक कथा साहित्य मे भी देखिए। 'माड' फैशन वाली अति आधुनिकाओ, जो 'फी सेक्स का खुला समथन करने म सकोच नही करती, से भी विवाह के प्रश्न पर बातचीत करके देखिए। विवाह का नकार कही नही मिलेगा। इसके कारण हैं—

प्यार, घर और बच्चे—एक भावात्मक आवश्यकता

प्यार, घर और बच्चे मनुष्य की एक बडी आवश्यकता है। यह आवश्यकता स्त्री-पुरुष दोनो की है, इसलिए समान होनी चाहिए। पर पुरुष की यह माग जहा उसकी अन्य मागो म से एक है, वहा नारी के लिए यह जैसे अनिवायता ही है। आर्थिक स्वतत्रता के बावजूद जब तक स्त्री पुरुष का सरक्षण खोजेगी, जब तक मातत्व को अदम्य इच्छा मान इसकी अनिवायता स्वीकारेगी, वह पुरुष के समक्ष अभ्यर्थिनी बनी रहेगी, क्योकि मा बनने के लिए उसे पहले पत्नी बनना होगा और पत्नी बनने के लिए विवाह का कोई-न कोई स्वरूप भी स्वीकारना होगा। यह मान कर चलना कि किसी गुमनाम पिता की सताना या निरबसिया से ही स्वस्थ समाज का निर्माण हो सकेगा एक भ्रामक धारणा है। व्यक्ति के स्वस्थ विकास के लिए बच्चे को पिता का अपनत्व भरा अनुशासन और माता की ममतामयी गोद दोनो समान रूप से चाहिए इस बात को विश्व भर क मना वैज्ञानिक व समाजशास्त्री एक मत से स्वीकार करते है।

अनिवार्यता बहुसख्यक वग के लिए ही

लेकिन विज्ञान की नवीन उपलब्धियो और 'सेक्डि जेनेसिस' की स्थापनाओ क अनुसार शायद निकट भविष्य म ही कुमारी मा का होना आम बात हो जाएगी। शुक्राणु

बैंको की स्थापना स मत व्यति भी सतान उत्पन्न करने म समथ होगे। भौगोलिक बाधाओ से परे विश्व के कुछ चुने हुए प्रतिभासपन्न और शक्तिसपन्न व्यक्ति भावी ससार के श्रेष्ठ मानवा का निर्माण करेंगे। आगे चलकर शायद गुणन पद्धति द्वारा नारी स्वय ही सतान को ज म देने मे समथ हो सकेगी। यही नही, टिश्यू कल्चर की सभावनाए यदि फलीभूत होती है ता नारी गर्भाधान स भी मुक्त हो सकेगी और सृष्टि की उत्पत्ति का पूरा आधार ही बदल जाएगा। लेकिन विश्व के समाजशास्त्री सभावित उपलब्धियो के अधेरे पक्षा को लेकर पहले से ही चिंता मे पड गए हैं। क्या मालूम कब, कौन तानाशाह अपन-जैसी सताना के लिए वैज्ञानिको को विवश कर दे?

खर, यह तो अभी भविष्य के गभ म छिपा है कि इन स्थितिया म मानव के स्वस्थ विकास के लिए वज्ञानिक और मनोवैज्ञानिक मिल कर किस समझौते पर पहुचेंगे? विवाह सस्था टूटेगी तो उसका विकल्प क्या चुना जाएगा? स्त्री पुरुप के स्वाभाविक आकपण और प्रेम की जगह कहा रहेगी? लेकिन जब तक एसा ही कुछ बुनियादी उलटफेर नही हो जाता, मेरी दष्टि मे, समाज के बहुसख्यक सामान्य लोगा के लिए विवाहसस्था किसी न किसी रूप म अवश्य बनी रहेगी। हा, यह अनिवायता मैं बहुसख्यक वग के लिए ही मानती हू।

सशोधन अपेक्षित

पर धार्मिकता से जुडी चिरतन दाम्पत्य की धारणा और इससे जरा विचलित होते ही इससे जुडी अपराध-चेतना से मुक्ति पाने के लिए विवाह सस्था को एक समाजवैज्ञानिक और मनोवैज्ञानिक सयुक्त आधार देन की जरूरत है। एक एसी लचीली व्यवस्था, जिसम स्त्री पुरुप की भावात्मक सतुष्टि और बच्चो की सुरक्षा की किसी लिखित अलिखित गारटी के साथ असह्य सहकार की दिशा में परस्पर सहमति स, सहजसरल ढग से अलग हो जाने की सुविधा भी निहित हो। वतमान विवाह और तलाक पद्धति इन दोना दष्टियो से अनुपयोगी सिद्ध हो चुकी है, जिसमें अनिवाय रूप स सुधार या सशोधन अपेक्षित है।

नारी-मुक्ति आन्दोलन और भारतीय नारी

मुक्ति आन्दोलन एक ऐसा आकर्षक नारा है जिससे हर महत्त्वाकांक्षी युवती का आकर्षित हो जाना स्वाभाविक है। प्रगति और मुक्ति कौन नहीं चाहता? लेकिन प्रगति की दिशा क्या हो? मुक्ति किससे? यह स्पष्टीकरण जरूरी है, अन्यथा दृष्टि भ्रामक रहेगी और दिशाएं धुंधली। पश्चिमी महिला आन्दोलन के संदर्भ में भारतीय भूमि पर मुक्ति का स्वरूप क्या हो? उसे कैसे सार्थक बनाया जाए? आदि सवाल भी स्पष्टीकरण मांगते हैं।

महिला-जागरण का युग

बीसवीं सदी को 'महिला-जागरण का युग' कहा जाता है। महिलाओं के संगठित आन्दोलन हर दिशा में हो रहे हैं। अपने नागरिक अधिकारों के लिए वे लड़ रही हैं। समाज और परिवार में सुरक्षित स्थिति के लिए, रोजगार और आत्मनिर्भरता के लिए, महिला कर्मचारियों की आर्थिक सुरक्षा के लिए कानून पास करवाए जा रहे हैं। घरों और बच्चों की सुरक्षा के लिए विनाशक युद्धों के खिलाफ और विश्वशांति के पक्ष में आवाज उठाई जा रही है। परिवार-कल्याण और बालकल्याण की योजनाएं चलाई जा रही हैं। पीड़ित नारियों के लिए संरक्षणात्मक उपाय काम में लाए जा रहे हैं। राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय समस्याओं के समाधान में स्त्रियों की भागीदारी बढ़े इसके लिए सन १९७५ का वर्ष 'अंतर्राष्ट्रीय महिला वर्ष' के रूप में मनाया गया और अब सन १९८५ तक महिला-उत्थान के विशेष कार्यक्रमों के लिए 'अंतर्राष्ट्रीय महिला दशक' मनाया जा रहा है।

एक लड़ाई जीती, एक शेष : एक ओर ये कार्यक्रम हैं दूसरी ओर समाज में महि[illegible] लाओं की स्थिति फिर से असुरक्षित होती जा रही है—न केवल भारत में [illegible]। क्यों? इसलिए कि महिलाओं ने अभी तक जो लड़ाई जीती है, [illegible] पर अधिकार प्राप्ति भर है। यों इस उपलब्धि के फलस्वरूप आज [illegible] शिक्षा, समाज-कल्याण, संस्कृति, उद्योग, व्यापार, [illegible] [illegible]

न केवल स्त्रियो की पहुच है, वे महत्वपूण और जिम्मदारीपूण पदो पर भी आसीन हैं और उन्होन इन सभी क्षेत्रो मे अपनी प्रतिभा-योग्यता का परिचय दे युगो पुरानी धारणाओ का भी बदल दिया है कि नारी पुरुष से हीन मानसिक स्तर की या दूसरे दर्जे की नागरिक मानी जाए। यह उपलब्धि अगली उपलब्धियो के द्वारा खोलन वाली है इसलिए अपने आप मे कम नही। पर यही कुछ गलत हो गया। एक ओर नारी एकाएक ये अधिकार पाकर अधिकार के साथ जुडे उत्तरदायित्व से भटक गई, दूसरी ओर परपरागत श्रेष्ठता की भावना को आघात लगने से पुरुष का अहम् नारी की इस प्रगति को एकाएक पचा नही पाया। इसलिए दूसरी लडाई अभी शेष है—वह है सामाजिक भेदभाव और सामाजिक अन्याय को दूर करने की लडाई। सयुक्त राष्ट्र सघ के प्रस्तावो और अन्तर्राष्ट्रीय श्रम सगठन के नियमानुसार स्त्रियो को सभी क्षेत्रो मे समानाधिकार प्राप्त हैं और भेदभाव सवत्र समाप्त कर दिया गया है। अब यदि व्यवहार मे यह भेदभाव उपस्थित है तो इसे दूर करना है स्थानीय सरकारो की मदद से और पुरुष सहकार से स्वय स्त्रिया और स्त्री-सगठनो को ही। यह काय स्त्री पुरुष सहयोग से ही सभव है प्रतिद्वद्विता या परस्पर दोषारोपण से नही। अपनी सामाजिक स्थिति मे सुधार के लिए पहल जब हमे ही करनी है तो पहले आत्म विश्लेषण स ही शुरुआत क्यो न की जाए!

मुक्ति आन्दोलन

पिछले दशक मे नारी मुक्ति आन्दोलन की चर्चा विश्व भर की प्रबुद्ध महिलाओ की जुबान पर रही। शायद ही कोई पत्र पत्रिका बची हो जिसने इस आन्दोलन के चित्र, समाचार व विवरण न छापे हो। पर पश्चिम और भारत की स्थितियो को मिलाकर नही अलग अलग करके देखना होगा। पश्चिम की नारी प्राचीन काल से शोषित रही है। वहा वह प्रेयसी व पत्नी पहले है, मा बाद मे और मा के रूप मे भी पूजित नही रही। पत्नी व प्रेयसी रूप मे भी वह भोग्या पहले है जिसे पुरुष को आकर्षित करने के लिए अपने शरीर को शरीर पर अत्याचार करके भी, सजाना सवारना है। इसीलिए वहा कृत्रिम विधियो से सौंदय साधना और सौदय प्रसाधनो का तकनीकी ढग से खब विस्तार हुआ इतना कि स्त्री का अपने ही शरीर पर अधिकार जैस समाप्त हो गया। देह साधना और देह भोग के इस अतिरेक के फलस्वरूप आई सामाजिक विकतियो के प्रति विद्रोह के रूप मे और अपने स्वतन्त्र अस्तित्व की मान्यता के लिए वहा नारी मुक्ति आन्दोलन ने जन्म लिया।

एक अतिवाद का उत्तर दूसरा अतिवाद? इस तरह 'अति सवत्र वजयत' के स्वाभाविक परिणाम के रूप मे उठे आन्दोलन का उद्देश्य अच्छा था। स्वरूप अच्छा था। प्रारभ अच्छा था। आन्दोलन मे लक्ष्य से भटकाव आया तो एक 'अति' से निकलने के बाद दूसरी 'अति' म प्रवेश करने का कारण। आन्दोलन ने आलोचनाओ, कुचर्चाओ का विषय बन हास्यास्पद रूप धारण किया और असफलता के साथ प्रतिक्रियावाद को भी आमन्त्रित किया तो अपने इसी अतिवाद के कारण। नारी की स्थिति मे सुधार लाने के लिए विभिन्न अध्ययनो, सर्वेक्षणा पर आधारित एक के बाद एक पुस्तकें निकलती रही।

वे खूब बिकी, खूब पढी गइ, और चर्चित हुई। पर नारी जहां थी, वही रही बल्कि पुरुष-प्रतिद्वद्विता म आ कर अलोकप्रिय और असुरक्षित भी हुई।

चर्चित पुस्तक जो आदोलन की प्रेरणा बनी

सिमेन द बुवा की 'द सेकिंड सेक्स' एक अच्छे स्तर की वैज्ञानिक पुस्तक आई, जिसने पाठका को काफी सोचने-समझने पर बाध्य किया। फिर आई बेट्टी फ्राइडन की 'द फेमिनिन मिस्टिक' या 'नारी रहस्य कथा'। बेट्टी फ्राइडन ने अपने व्यापक अध्ययन द्वारा सैकडा तथ्य और आकडे जुटा कर यह सिद्ध किया कि पुरुष प्रधान समाज ने मनोवैज्ञानिक दबाव डाल कर स्त्रिया को वासना पूर्ति का साधन बनने और मा, गृहिणी तथा रमणी की भूमिकाए ही स्वीकार करने के लिए विवश किया है। इसी स स्त्रिया की मौलिक प्रतिभा कुठित हुई है, समाज म उच्छृखलता और अस्थिरता बढी है तथा घर से बाहर काय क्षेत्र मे नारी के बढते कदम अपनी आधी मजिल से ही फिर पीछे लौटने लग हैं।

मनोवैज्ञानिक बेट्टी फ्राइडन ने स्वय पत्नी, गृहिणी और तीन बच्चो की मा के नाते यह सम्मिलित भूमिका निभाते निभाते साला तक निरतर यह अनुभव किया कि कहीं कुछ गलत है। क्या एक कामकाजी नारी घर म अधूरे मन मे काम करती है और बाहर जाते समय एक अपराधी की सी भावना म घिरी रहती है? अपनी योग्यताओ का व्यापक क्षेत्र म उपयोग मन मे अपराध-भावना क्यो जगाए? इस प्रश्न ने उन्हे इतना परेशान किया कि उत्तर खोजने के लिए एक प्रश्नावली बना कर उन्होने कालेज जीवन की अपनी पुरानी सहपाठिनियो और अन्य परिचिता अधेड उमर की स्त्रिया के पास भेजी। कुल दो सौ प्राप्त उत्तरो म यह बात स्पष्ट हुई कि भीतर कहीं गहरे म यह प्रश्न लगभग सभी महिलाआ को कचोट रहा था। उन्हान यह भी अनुभव किया कि स्कूल-कालेज की शिक्षा स इस प्रश्न का कोई सीधा सबध नही है, न ही पत्र पत्रिकाओ द्वारा स्त्रिया को दी जाने वाली दैनदिन सामान्य शिक्षा स। समाचार पत्रा के महिला कालम और महिला पत्रिकाए व्यापक विषया म हट कर पति, घर, बच्चे, वेशभूषा, सौंदय गृहसज्जा आदि घरेलू विषया पर ही स्त्री का ध्यान केन्द्रित रखती आ रही हैं। स्त्री शिक्षा के पाठ्यक्रम भी लडकियो को घरलू बनाने और उन्हे विवाह के लिए तैयार करने के उद्देश्य से ही तैयार किए जाते हैं कि उनम उच्च महत्वाकाक्षाएँ न पैदा हो और बौद्धिक उपलब्धिया के प्रति उनका आकषण न बढे। कुल मिला कर नारीत्व की ऐसी व्याख्या नारीत्व पर इतना जोर कि जैसे नारीत्व मौलिक प्रतिभा और उसकी उपलब्धिया की कोई विरोधी चीज हो।

यही मुखर आग्रह स्त्रियो को उच्च तकनीकी, वैज्ञानिक और व्यावसायिक क्षेत्रो से लौटा कर फिर घरा की ओर अभिमुख कर रहा है। आधुनिक औद्योगिक समाज मे विज्ञापनबाजी ने भी इस आग्रह को पुष्ट किया है। विज्ञापन-सर्वेक्षणा म ज्ञात हुआ है कि न तो अशिक्षित स्त्रिया अच्छी खरीदार होती हैं, न कामकाजी ही। घरेलू किस्म की शिक्षित नारिया ही अपने मानसिक खालीपन को भरने के लिए और अपना अकेलापन

काटने के लिए उपभोग की, फैशन की, सज्जा और सौंदय की विविध वस्तुआ की खरी दारी की ओर आकृष्ट होती हैं। घरो म विलासी जीवन विताने वाली ये फुरसतमद स्त्रिया ही सस्ते सेक्सी साहित्य के पठन व बिक्री को भी वढावा देती हैं।

इस सबके बीच हर प्रबुद्ध नारी सोचती है मैं कौन हू ?' समाज म मेरी स्थिति क्या है?' 'मेरी स्वतन्त्र सत्ता कहा है ? भीतर-भीतर सुलगत इस प्रश्न, निजी अस्तित्व, निजी अस्मिता की इस छिपी कामना, जो उन्ह अवसर कुठित कर असामान्य व्यवहारो के लिए प्रेरित करती है का कोई नाम नही दिया जा सकता। इसी गुत्थी या नारी मन के रहस्या को खोलने के लिए बेट्टी फ्राइडन न एक मिशन के रूप म निरन्तर अथक परिश्रम किया। मनोवैज्ञानिक से रिपोटर बन कर हर क्षेत्र की स्त्रिया मे, महिला-पत्रिकाआ के सपादको से विज्ञापन कपनियो के शोधकर्ताआ मे, नारी विषय विशेषना से, मन चिकित्सका समाजशास्त्रियो, परिवार जीवन सलाहकारो, नेताआ और नेत्रिया से तथा कालेज छात्राओ से भेंट कर यह निष्कप निकाला कि नारी जीवन की अधिकाश समस्याआ के मूल मे नारी का विभाजित मन है।

बेट्टी फ्राइडन की यह पुस्तक इतनी चर्चित व लोकप्रिय हुई कि कुछ दिना वाद इसने नारी मुक्ति आदोलन को जन्म दिया। अनेक महिला सगठन आदालन को बल देने के लिए सामने आए जिनमे नाऊ सगठन मुख्य था। २६ अगस्त १९७० को अमरिकी महिलाओ को मताधिकार मिलने की पचासवी वषगाठ पडती थी तो उस दिन न्यूयाक, फिलाडेल्फिया, वाशिंगटन बोस्टन पिटसबग लास एजिल्स की सडको पर स्त्रियो के जुलूसो, बडी बडी तख्तिया हाथो म लिए प्रदशनो भीड और भगदड का नजारा देखन लायक था। विवाहित अविवाहित बच्चो वाली, बिना बच्चो वाली, तरह तरह की पाशाका, केश सज्जा शैलियो से सजी १६ से ८० वप तक उम्र की हजारो महिलाए नारे लगा रही थी—'हमे आजाद करो हमे पुरषा के बराबर अधिकार दो हमारे साथ द्वितीय श्रेणी के नागरिका का व्यवहार बद करो पुरुषा के बरावर नौकरिया और समान काम के लिए समान वेतन दो हम अपने शरीर पर अपना अधिकार चाहती हैं मा बनने या न बनने गभ रखने या गभपात करान की हमे स्वतन्त्रता होनी चाहिए बच्चा की देखभाल के लिए २४ घटे सेवा वाले केन्द्र होने चाहिए सडको से ऐसे नाम हटा दो, जिनमें पुरुषो के साहस के चर्चे हो इतिहास से ऐसे नाम मिटा दो, जिनम केवल पुरुषो का ही बोलबाला हो। लगिक भेदभाव बन्द करो स्वाधीनता हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है आदि। इसके साथ ही महिलाआ ने प्रसाधन सामग्री स रद्दी की टोकरिया भर दी। भीतरी वस्त्रा की होलिया जलाइ। यह इस बात की प्रतीक थी कि पुरुषो न स्त्रियो पर कामुकता थोपी है और अब वे पुरुषो के लिए सजने सवरन से इन्कार करती हैं।

आदोलन की अग्रणी सस्था 'नेशनल आर्गेनाइजेशन आफ वीमेन (नाऊ) की स्थापना १९६६ मे बेट्टी फ्राइडन ने ही की थी। फ्राइडन की पुस्तक नारी रहस्य कथा मे विचारोत्तेजक मुद्दे उठाए गए थे और उस पर आधारित आदोलन बुनियादी मानवीय अधिकारो को लेकर चला था कि स्त्रियो को अपने बारे म निणय लेने की, अपने लिए कोई

जीवन पद्धति चुनने की स्वतन्त्रता हो। 'समान काम के लिए समान वेतन' जैसी भौतिक मांगों का स्थान उसमें गौण था और सड़कों पर सौंदर्य उपकरणों का बहिष्कार करने, सारे लगान,'ब्रा' की होलियां जलाने, धुआंधार भाषणों में पुरुषों के विरुद्ध जहर उगलने, उन्हें शर्मिंदा करने, नीचा दिखाने जैसी बातों के लिए कोई आह्वान न था। इसलिए इस उग्रवाद से दुखी हो बेट्टी फ्राइडन ने आंदोलन का नेतृत्व छोड़ दिया और उससे अपना हाथ खींच लिया।

आंदोलन में इस उग्रवाद का कारण थीं, बाद में आने वाली केट मिलेट की 'सेक्सुअल पालिटिक्स' और जर्मन ग्रीअर की 'फीमेल यूनक' जैसी पुस्तकें। केट मिलेट ने पुरुषप्रधान समाज के उग्र विरोध के साथ यौन क्रांति का आह्वान किया और 'फ्री सेक्स' तथा 'लेस्बियन' का समर्थन किया। जर्मन ग्रीअर ने अपनी पुस्तक का प्रारंभ नारी के शारीरिक सर्वेक्षण से करके नारी अवयव संबंधी मिथकों को तोड़ने का प्रयत्न किया और कहा, 'हमें क्रांति लानी है, कोई सुधारवादी आंदोलन नहीं चलाना है।'

आंदोलन की विफलता

इन पुस्तकों ने सारे अमेरिका में खलबली मचा दी और नारी मुक्ति आंदोलन को पुरुष विरोधी उग्र मोर्चे में बदल दिया, जिसने 'सोसायटी फार कटिंग अप मेन' जैसी संस्थाओं को भी जन्म दिया। आंदोलन की एक शाखा ने तो महिलाओं को केवल लड़कियां ही पैदा करने या जिंदा रखने तक की सलाह दे डाली जिसके लिए महिला वैज्ञानिकों का क्रोमोजोम संबंधी बदलाव में सहायता करने का आह्वान किया गया। आन्दोलन के जोश में स्त्रियों ने केट मिलेट को नारी मुक्ति आंदोलन की माओत्से तुंग कहा, तो पुरुषों ने उसे 'पुरुषों को बधिया करने वाली' की संज्ञा दी। और जर्मन ग्रीअर ने तो अपने उग्रवाद में केट मिलेट को भी मात कर दिया। स्वाभाविक था कि प्रतिक्रिया में विवेकशील व्यक्ति चिंतित होते, विरोधी आंदोलन उठ खड़े होते और इन विचारों की प्रतिरोधी पुस्तकें भी सामने आतीं।

सुप्रसिद्ध मानववंशशास्त्री डा० मार्गरेट मीड ने वाजिब मांगों से सहानुभूति रखते हुए भी आंदोलनकारी स्त्रियों को सलाह दी कि वे संयम व सावधानी बरतें। अभी ही पुरुष उत्तेजित हो बलात्कार पर उतर आए हैं। कहीं और उत्तेजित हो वे स्त्रियों का कत्लेआम ही न शुरू कर दें।

पत्रों के पाठकीय कालम स्त्री पुरुषों के परस्पर आरोपों प्रत्यारोपों (कहीं-कहीं फूहड़, अश्लील, भौंडे व बेढंगे भी) से भरे जाने लगे—मानो स्त्री पुरुष संबंधों में कोई शीतयुद्ध छिड़ गया हो। आंदोलनकारी महिलाओं ने मनोविश्लेषक फ्रायड, नृतत्वशास्त्री लाइनर टाइगर, उपन्यासकार डी० एच० लारेंस और नार्मन मेलर के साहित्य की कटु आलोचना की, तो मुकाबले में टाइगर और मेलर ने भी उनकी खूब खबर ली। टाइगर ने मुक्ति आंदोलन को 'पोर्नोग्राफी पर आधारित एक कल्पना' कह डाला। मेलर ने 'सेक्सुअल पालिटिक्स' और 'फीमेल यूनक' के विरुद्ध हारपर मैगजीन में धुआंधार धारावाहिक लेख छापे (ये लेख बाद में 'प्रिजनर आफ सेक्स' शीर्षक से पुस्तकाकार

प्रकाशित हुए)

मेलर के अनुसार, पुरुष नारी के सामने सदैव अपने को छोटा और तुच्छ पाता है। नारी के प्रति श्रद्धायुक्त विस्मय उस जन्म के साथ ही विरासत मे मिलता है। पत्नी के साथ सहवास के समय भी वह अपने जन्म की घटनास्थली को भूल नहीं पाता। शायद इसीलिए जीवन से दुखी पुरुष सहवास के समय नारी पर क्रूरतापूर्ण प्रहार करता है या अपनी ही प्यास बुझाकर हट जाता है।

ऐसे मे नामन मेलर ने इन दोनो लेखिकाओ को न्यूयार्क टाउनहाल म शास्त्राथ करने की चुनौती दी। केट मिलेट न आमत्रण अस्वीकार कर दिया। जमन ग्रीअर ने जवाब देने के लिए जम कर तैयारी की। लोग उत्सुक थे मेलर और ग्रीअर का वादविवाद सुनने के लिए। तो बढी दर के प्रवेश टिकटो पर भी उस शाम न्यूयार्क टाउन हाल मे दशको की भारी भीड जुटी। लोगो को लग रहा था आज कुछ होकर रहेगा। पर उन्हें निराशा ही हाथ लगी। मेलर चुप रहे। उनके इशारे पर एक व्यक्ति न जमन ग्रीअर से कहा, 'आप पुरुषो से बराबरी का दावा करती है अत यहा मलर पर हावी होकर उसके साथ बलात्कार करिए । ग्रीअर सुनकर सन्न रह गई। दूसरे दिन अखबारो म 'वैसा' होने की अटकलें और गप्पें छप गईं। ग्रीअर को बुरा लगा, पर क्या करती ! इसके बाद भी वह जहा जाती, उससे बेहूदा सवाल किए जाते और कई बार ग्रीअर पसीने पसीने हो जाती।

इस प्रकार अतिवाद प्रतिक्रियावाद व फूहड सेक्सी मोर्चे पर उतर आदोलन अपने मूल उद्देश्य से भटक गया। हास्यास्पद और घणास्पद बन विफलता की अधेरी गलियो मे उतरता चला गया, अन्यथा आधुनिक ससार पर फ्रायडवाद के दुष्प्रभाव के विश्लेषण से एक साथक बहस की शुरुआत की गई थी।

फ्रायडीय मनोविश्लेषण बनाम नारीवाद

बेटटी फ्राइडन न आधुनिक समाज पर फ्रायड के घातक प्रभाव की आलोचना करते हुए लिखा था, 'जहा पहले यौन जीवन के प्रति स्त्रियो की एक सहज अरुचि या कम रुचि अच्छी समझी जाती थी वहा इस प्रभाव के कारण आज उसे ही अत्यधिक महत्त्व दिया जाने लगा है। अब हर दष्टि से शिक्षा साहित्य पत्रकारिता मनोरजन के माध्यमो से नारी का एक ऐसा रूप उभारा जा रहा है जो यौन सुख के माध्यम से ही स्वय को पहचानता है और अपनी साथकता सिद्ध करता है, मानो जीवन का यही उद्देश्य हो। यह मनोविज्ञान का सदुपयोग नही, दुरुपयोग है। नारी जीवन की असुरक्षा और समाज में उच्छृखलता इसी से बढी है। मनोरोगो और मनोविकृतियो की बढती सख्या के पीछे भी यह एक ठोस कारण है।'

फ्रायड के मनोविश्लेषणवाद का नारी मुक्ति आदोलन की प्राय सभी नत्रियो ने जमकर विरोध किया। यो फ्रायड की इस सोच, कि स्त्रिया जविक दृष्टि स पुरुष स कमजोर प्राणी हैं', को पहले एडलर व अन्य कई मनोवैज्ञानिक भी चुनौती द चुक थ। लेकिन मुक्ति आदोलन म इस सोच की इतनी भत्सना की गई कि सन १९७४ में रूस

विषय पर दो पुस्तकें ही आ गइ जीन बेकर मिलर द्वारा सपादित 'मनोविश्लेषण और स्त्री तथा जूलिएट मिचेल द्वारा सपादित मनोविश्लेषण और नारीवाद । इनमें 'इडिपस काम्प्लेक्स' या मातृग्रथि की बुनियादी धारणाआ का खडन किया गया। फ्रायड को पुरातनपथी, दकियानूस, प्रतिक्रियावादी और स्त्री विरोधी की सना दी गई। इनक अनुसार फ्रायड ने बीसवी शताब्दी के प्रारभ में वियाना के बुजुआ समाज में स्त्री का जो कामुक रूप देखा और उसकी रुग्ण विकृत मानसिकता का जो विश्लेषण किया, उसे ही अपने मनोविश्लेषण का आधार बना लिया। इस प्रकार फ्रायड ने वैज्ञानिक युग में स्त्रियो की दशा में आए परिवतन को तथा इसमें आग और परिवतन की सभावना को नकार दिया। 'शरीर-रचना स्त्री की नियति है' कहकर फ्रायड का समथन करन वाली हलेन डयूस की भी खूब खबर ली गई, जिसन स्वय अपना जीवन मुक्त बिता कर नारी जीवन के बधनो की वकालत की।

बेटटी फ्राइडन ने भी मागरेट मीड का उदाहरण सामने रखत हुए युवतिया को सलाह दी कि वे उनके बौद्धिक उपलब्धिया वाले जीवन का भी अनुकरण करें, कवल उनके इस विचार कि 'स्त्री का प्रथम कायक्षेत्र घर है', का ही नही। एम एस मैगजीन की सहसपादिका और आदोलन की एक अय लेखिका नेत्री ग्लोरिया स्टेनम न स्त्रिया को अपने नाम के आगे कुमारी या श्रीमती न लिखने की सलाह दी और कहा 'महिलाए सिद्ध करें कि उनका स्वतत्र अस्तित्व है और इस स्थापित तथ्य स इन्कार करें कि वे पुरुषा के बिना कुछ नही हैं। एक सम्पूण सास्कृतिक क्राति नीचे स ऊपरी तबका तक आनी चाहिए, जिसमे स्त्री पुरुष हर व्यक्ति के लिए अपनी जीवन पद्धति के चुनाव के लिए अनेक विकल्प हो।'

अन्य चर्चित साहित्य

सन् १९७२ मे 'यू पोटगीज लैटस' नाम की पुस्तक लिख कर पुतगाल की तीन लेखिकाआ ने अपने देश म स्त्रिया की आर्थिक, सामाजिक राजनीतिक स्थिति का विवरण ससार के सामने रखा। पुस्तक को सरकार द्वारा गैरकानूनी घोषित किया गया और लेखिकाओ पर मुकद्दमा चला। उन्ह यातनाए सहनी पडी। पर बाहर प्रचलित होन पर जब पुस्तक ने अतर्राष्ट्रीय समथन प्राप्त किया तो सरकार को घबराहट हुई और मुकद्दमे का स्वरूप बदल गया।

ब्रिटेन की एना कूट ने 'गार्जियन म दो किस्तो मे लिखे अपने लेख म चीनी स्त्रिया की समाज मे (बहुप्रचारित) अच्छी स्थिति के बारे म कई तथ्य देकर प्रचलित भ्रमा को दूर किया। लेखिका एना कूट ने अपनी वकील मित्र टेस गिल के साथ मिल कर 'वीमेस राइट्स ए प्रेक्टीकल गाइड' पुस्तक भी लिखी, जिसम स्त्रियो को जगाने व सबद्ध आदोलनो म भाग लेने के लिए प्रेरित किया गया। यह पुस्तक ब्रिटेन मे बहुत लोकप्रिय हुई, क्याकि इसम पुरुषा पर कोई प्रहार किए बिना स्त्रिया को समय क साथ बदलने और परिस्थितिया को अपने अनुकूल ढालने के लिए स्वय को तैयार करने की प्रेरणा दी गई थी।

ली हालकोम्ब की पुस्तक 'विक्टोरियन लेडीज ऐट वर्क' ने फ्रांसीसी क्रांति के बाद स्त्रियों म जगी चेतना पर विस्तृत प्रकाश डालते हुए इस धारणा को प्रस्तुत किया कि स्त्रियों की जागृति से ही उन्नीसवीं शताब्दी का उदारवाद प्रारंभ हुआ।

सन १९७५ 'महिला वर्ष' म प्रकाशित सुसान ब्राउन मिलर की पुस्तक 'अगेंस्ट आवर विल या हमारी इच्छा के विरुद्ध' ने स्त्री को आतंकित रखने के हथियार 'बलात्कार' के इतिहास व उसके सभी पक्षों पर प्रकाश डाला। सनसनीखेज होने के कारण यह पुस्तक भी बहुत चर्चित हुई और इसकी धनघोर बिक्री हुई।

जवाबी साहित्य

इस तरह समाज म औरत के दर्जे संबंधी महत्त्वपूर्ण सवाल पर अनेक पुस्तकों म सार्थक बहसें उठाई गई। पर नारी मुक्ति आंदोलन के अतिवादी भटके रूप ने इस सवाल को किसी लक्ष्य प्राप्ति के पूर्व ही अनिश्चितता और अनिर्णय के अंधेरे म धकेल दिया। आंदोलन तो शिथिल हुआ ही उसके प्रतिरोध म कुछ वैसी ही चर्चित वैसी ही आर्थिक बिक्री के रिकार्ड बनाने वाली पुस्तकें भी सामने आ गई। इनम अमेरिका की एक गृहिणी मैराबेल मार्गन की पुस्तक 'द टोटल वूमेन' की स्थापनाएं और डा० डोरोथी तेनोव तथा डा० (श्रीमती) हेट फील्ड द्वारा 'लिमरेंस' की वकालत विशेष रूप स उल्लेखनीय हैं।

श्रीमती मार्गन को जब अपने विवाहित जीवन का अंत निकट लगा और इस प्रश्न पर उनके सामने संकट उपस्थित हुआ तो यह संकल्प लेकर आगे बढ़ीं कि वह किसी भी कीमत पर पति से अलग नहीं होंगी। उन्होंने अपना मन टटोला। साथ ही समाज के वातावरण का गहरा अध्ययन किया और अपने सोच के नतीजों को कागज पर उतारती चली गई। अपने इस लेखन कार्य मे उन्होंने अपनी सहेलियों व अन्य कई परिचित स्त्रियों स विचार विमर्श कर उनके अनुभवों को भी शामिल किया। परिणाम-स्वरूप 'द टोटल वूमन' सामने आई, जिससे उनके जैसी स्थिति मे फंसी हुई हजारों स्त्रियों को संदेह तनाव, विस्फोट और और उसके बाद टूटन से अपने वैवाहिक जीवन को बचाने के लिए एक दिशा मिलती है। श्रीमती मार्गन के अनुसार 'मैं स्त्री-मुक्ति के खिलाफ नहीं हूं। लेकिन स्त्री को एक पल के लिए भी यह नहीं भूलना चाहिए कि वह स्त्री है और सुखी दाम्पत्य जीवन बहुत हद तक उसके द्वारा अपने पति के साथ किए जाने वाले व्यवहार पर निर्भर है।

'द टोटल वूमेन' पुरुषों की तारीफों के पुल बांधती है। उनके बिना स्त्रियों को असहाय असुरक्षित दर्शाती है। मुक्ति आंदोलन की अनेक मांगों के विरोध मे आवाज उठाती है। घर से बाहर काम करने वाली स्त्रियों के लिए कोई संदेश नहीं देती। और पश्चिमी स्त्रियों म व्याप्त असुरक्षा की भावना पर दयनीय ढंग से प्रकाश डालती है।

स्वीडन की मेरिट पाउलसन ने भी सन १९७५ मे अपने दो सहयोगियों के साथ मिल कर पुरुषों विशेष रूप से पिछड़े हुए पुरुषों के बीच व्यापक शोध अध्ययन के बाद जो निष्कर्ष निकाला, उसकी रपट 'मानव होने का अधिकार' का सार है—स्त्रियां ही

नही, अनक क्षेत्रो मे, अनेक बातो मे पुरुष भी पिछडे हुए होते हैं। पुरुषो के पक्ष म विशेष सहानुभूति दर्शाते हुए पाउल्सन कहती है कि पुरुष अपने आप मे अधिक अकेले, अधिक भयग्रस्त और कुठाग्रस्त होते हैं। स्त्रिया एक-दूसरी स जल्दी परिचय पा लेती हैं घुल-मिल जाती हैं, आसानी से सीखती हैं और आसानी से परिस्थितियो के साथ अनुकूलन कर लेती हैं जबकि बहुतेरे पुरुषो के पास अभिव्यक्ति के लिए आवश्यक शब्द भी नही होते।

आदर्श स्थिति वह होगी जब स्त्रिया अपने बारे मे कम सोचें, कम बात करें और पुरुष अतर्मुखी से बहिर्मुखी हो। स्त्रिया राजनीतिक सामाजिक कार्यों म हिस्सेदारी बढाए और पुरुष परस्पर अतरग सबधो का अधिक विकास करें। इस तरह सामाजिक विकास पुरुष निर्णयो स प्रेरित होने की स्थिति टूटेगी। स्त्री पुरुष दोनो रोजगार मे लगें कमाए और जिम्मदारी व खुशी गम मिलकर बाटें। वतमान समाज मे स्त्रियो को सुविधा है, वे काम करें या नही। पर पुरुषो के सामने दूसरा विकल्प नही। इस दृष्टि स स्त्रियो की स्थिति पुरुषो से बेहतर है। पर पुरुष नही कहते कि हर स्त्री जरूर काम करे।

परपरा सामाजिक बदलाव म किस तरह बाधक है इसका उदाहरण देते हुए पाउल्सन लिखती है, 'नये समाज म पिता की नई भूमिका निर्धारित करने के लिए स्वीडन म एक कानून बना, जिसके अतगत प्रसवकालीन सवेतन छुट्टी पति पत्नी दोनो के लिए मिला कर कुल सात महीने की मजूर की गई। सात महीने की इस अवधि को अपनी सुविधा व जरूरत के अनुसार दोनो आपस म बाट सकते हैं। पर सर्वेक्षण से मालूम हुआ कि केवल दो प्रतिशत पतियो न इस छुट्टी का लाभ लिया, वह भी औसत २४ दिन। कारण वही—बदलाव स्वीकारा नही गया। सामाजिक बदलाव केवल कानून पास करने से नही सोच म बदलाव लाने से आता है। और बदलाव के लिए एकतरफा मुक्ति की बात गलत होगी। एकतरफा फैसला के नतीजे भ्रामक होते हैं।

ब्रितानी प्रोफेसर एच० जे० आइसेंक जो बुद्धिलब्धि परीक्षण विशेषज्ञ और मनोचिकित्सा सस्थान मे मनोविज्ञान विभाग के निदेशक हैं, ने सन १९७८ म वोग' पत्रिका मे बताया, 'एक स्त्री एक पुरुष के बराबर क्यो नही हो सकती ?' आइसेंक वातावरण और आनुवशिकता का अनुपात २०-८० का मानते हैं। इस तरह आनुवशिकता का प्रभाव अधिक सिद्ध करते हुए वह कहते है 'गोरा आदमी काले आदमी स अधिक बुद्धि रखता है।' स्त्री का स्थान भी समाजशास्त्रीय कारणो से नही, जीवशास्त्रीय कारणो से निर्धारित है—छोटी लडकिया गुडिया से क्यो खेलती हैं बल्ला स' सिपाही खिलौना से, बदूका मे क्यो नही ? इसके पीछे शक्तिशाली जीवशास्त्रीय आधार है। मातप्रधान समाज आईसेंक की दृष्टि मे एक मिथक है। स्त्री-पुरुष दोनो की भूमिका समाज मे अलग है। इनम अनुकूलन लाना ही सभ्यता का तकाजा है।

प्रेम की वापसी

पुरुष, पुरुष के प्रेम, पुरुष के सहारे को नकारने वाले और यौनक्रांति की गुहार लगाने वाले उग्र आदोलनकारी साहित्य के बाद डा० डोरोथी तेनोव और डा० हट

फील्ड ने आउट डेटेड कहे जाने वाले प्रेम पर रिसर्च कर उसे नया नाम दिया 'लिमरेंस'—वही रोमियो जूलिएट, हीरा रांझा वाला पुराना रोमानी प्रेम। वैसे ही लक्षण और उसके परिणाम। यानी प्रेम मरा नही, जिंदा है। सेक्स की अति से लौटकर लोग फिर इधर ही आएंगे। ऐसे रूहानी प्रेम की ओर भी जहां सेक्स की कतई जरूरत न रहे। केवल 'अच्छा लगने' की बात, गहरे लगाव की बात, एक आत्मविश्वास कि 'कोई है, जो हमे चाहता है।' यो भी यह एक सच्चाई है कि नारी मुक्ति आंदोलन के चलते और कुछ मनोवैज्ञानिकों की 'प्रेम मृत्यु' घोषणा के बावजूद ऐसे प्रेमी-युगलों की दुनिया मे कमी नहीं रही जो प्रेम मे पागल बने घूमते रहे, करवटें बदलते रातें बिताते रहे, बेचैनी से प्रतीक्षा की घडियां गिनते रहे और अप्राप्ति या असफलता मे आत्महत्या करने से भी नही चूके। कभी घरों मे, कभी पिकनिक स्थलों पर, तो कभी होटल के बिस्तरों पर प्रेमी प्रेमिका की सामूहिक आत्महत्या की खबरें भी छपती रही। इन प्रमाणो के आधार पर मात्र सेक्स या सेक्स तनाव मे जीने वाले और प्रेम की कब्र पर फूल चढाने वाले लोगों के लिए लिमरेंस या रोमानी प्रेम लौट की स्थितियां की घोषणा करता है। यही नही नारी मुक्ति आंदोलन की तीव्र प्रतिक्रिया मे 'बैक टु वूमेनहुड' आंदोलन भी अब वहां जोर पकडता जा रहा है।

औरत का मुकद्दमा

लेकिन उपरोक्त मतवादों और परस्पर विरोधी धारणाओं से अलग फ्रेंच वकील गिजेल हलीमी ने 'औरत का मुकद्दमा' नामक पुस्तक लिख कर आंदोलनकारी गुस्से, नफरत और इसके विरोधी तर्कों की धारा को जैसे विवेक की ओर मोडने का प्रयत्न किया। हलीमी के अनुसार, फ्रांस चर्च व्यवस्था की पहली संतान है। लैटिन मूल का देश है। इसलिए यहां वे सभी सवाल, जो औरत को निचला दर्जा देते हैं और उसके लिए दिक्कतें पेश करते हैं उपस्थित हैं। जैसे एक खास उमर मे विवाह जरूरी हो जाना चाहिए। बच्चे की मा बनना जरूरी है, अन्यथा स्त्रीत्व अपूर्ण है। स्त्री को स्वयं की नहीं दूसरों की खुशी जुटानी है। पुरुषों द्वारा बौद्धिक स्त्रियों की नापसंदगी और स्वयं से अधिक शिक्षित, बुद्धिमान स्त्री को बर्दाश्त न करना इसी परिवेश की देन है। स्त्री की मा के अलावा कोई भी महत्वपूर्ण भूमिका सम्माननीय नहीं मानी जाती, तो अपनी इस भूमिका के प्रति स्त्रियां भी अनुकूलन के बारे मे ही सोचती है। स्त्रियों को चाहिए कि इन मिथको को तोडें। स्वयं मे विश्वास पैदा करें। यह आत्मविश्वास और जिम्मेदारी की भावना बौद्धिक उत्थान से ही संभव है। इससे कतराए नहीं। देश, समाज को कुछ दे सकें तो शादी न करें। लेकिन स्वयं पर नियंत्रण पहले जरूरी है। वास्तव मे स्त्रियों की मुक्ति स्त्रियों से ही, स्वयं से ही संभव है।

भारत का भिन्न इतिहास भिन्न स्थितियां

गिजेल हलीमी के 'स्वयं से मुक्ति' वाले इस आह्वान का समर्थन करते हुए मैं भी कहना चाहूंगी कि मुक्ति आंदोलन को स्वयं के उत्थान की कसौटी पर कस कर ही

सफल बनाया जा सकता है, किसी प्रतिद्वद्विता की भावना से या होड मे खडे होकर नही। फिर पूव व पश्चिम की स्थितिया भिन्न है। भारतीय स्त्रिया और पश्चिमी स्त्रियो का अधिकार प्राप्ति का इतिहास भिन्न है। भारतीय स्त्रिया ने कभी किसी युग मे भी पुरुषो के विरुद्ध खडे होकर अधिकारा की लडाइ नही लडी। उन्हे इसकी आवश्यकता नही पडी।

यहा नारी शोषण का इतिहास मध्यकालीन विदेशी आक्रमणो की दन है। यहा नारी तभी परतन्त्र हुई जब हमारा सारा जातीय व सामाजिक सतुलन बिगडा। हमारे समाज म जो भी बन्धन नारी पर लगे, वे उन नियमो की देन थे जो भारतीय मनीषिया द्वारा नारी के दमन के लिए नही, उसकी तत्कालीन सुरक्षा के लिए बनाए गए थे। जिम्मेदारी की भावना उनम निहित थी। यह भावना आज भी भारतीय पुरुषा म कम नही देखी जाती। यह अलग बात है कि कालान्तर म व नियम शक्तिशाली पुरुषा क हाथ मे असीमित अधिकार केन्द्रित करत चले गए और घरो म बद अशिक्षित नारी इस ही अपनी नियति मान स्वीकारती चली गई। पर सुरक्षा के साथ सरक्षण और आजादी के साथ उत्तरदायित्व सहज ही जुडा होता है, यह नही भूलना चाहिए। भारतीय नारी की पूव, मध्यकालीन व वतमान स्थितिया को समय सदन म ही देखना समझना चाहिए।

सहयोगी व मागदशक की पुरुष भूमिका

पुरुष वग हमारे लिए कभी प्रतिद्वद्वी नही रहा तो आज उस क्या प्रतिद्वद्वी बनाया जाए? भारतीय नारी मुक्ति सघष मे पुरुष की भूमिका सहयोगी और मागदशक की ही कही जा सकती है। नारी जागरण का प्रश्न हो, नारी अधिकारो का या राष्ट्रीय कार्यो मे नारी की भागीदारी का पुरुषा ने आगे बढकर उसका आवाहन किया और दोना कधे से कधा मिलाकर आजादी की लडाई व समाज सुधार कार्यो म भाग लते रहे। पुनर्जागरणकाल म नारी जागृति और नारी-उत्थान के लिए आवाज उठान वाले राजा राममोहन राय, स्वामी दयानन्द ईश्वरचन्द्र विद्यासागर महात्मा गाधी, आचाय कर्वे जैसे महान नेता व सुधारक ही थे। नयी स्थितियो म भी समय समय पर महिला असतोष की आवाज उठती है तो सभी परिवतनकामी पुरुष—विचारक, नता और सपादक न केवल उसका स्वागत करत हैं अपन प्रयत्ना से उस बल भी प्रदान करत हैं।

मुक्ति आदोलन की पश्चिमी धारणा से तुलना नही

इगलड और भारत म नारी मताधिकार प्राप्ति सघष क इतिहास का तुलनात्मक अध्ययन करें तो मालूम होगा कि ब्रितानी स्त्रिया न बहुत कष्ट व अपमान सहकर मताधिकार की जो लडाई १८३२ से १९१८ तक ८६ वष तक लडी भारतीय स्त्रिया का उसी लक्ष्य को पान मे कुल पाच साल लग, वह भी विदेशी हुकूमत क कारण। इसलिए कि यहा महिला-मताधिकार की माग का पुरुषा की ओर स न केवल विरोध नही किया गया, उस समथन व बल प्रदान कर उसमे पूरा सहयोग भी दिया गया।

यही बात मुक्ति-आदोलन के बारे म भी लागू होती है। पश्चिमी देशा म

मुक्ति आदोलन का एक लबा इतिहास है

सवप्रथम अठारहवी शताब्दी म मेरी वाल स्टोन क्राफ्ट ने इग्लड मे नारी अधिकारा के लिए आवाज उठाई थी और उसे कटु आलोचनाआ तथा अपमानजनक उक्तिया के वार झेलन पडे थे। मेरी स्टोन क्राफ्ट 'स्त्रियो के अधिकारा का औचित्य' शीषक अपनी पुस्तक प्रकाशित करवाने के बाद अधिक दिन जीवित नही रही, १७६५ की एक तूफानी सध्या मे उसका शव टेम्स नदी से निकाला गया था। पर विपरीत स्थितियो म अदम्य साहस दिखाने के कारण आज भी उसे मुक्ति आदोलन की पितामही कहा जाता है।

इसके बाद १८४४ मे फ्रास मे फ्लोरा ट्रिस्टन ने महिलाओ की मागें प्रस्तुत करने के लिए एक महिला सगठन की स्थापना की थी। फिर इग्लड की कैरोलीन नाटन ने महिलाओ को पुरषा के समान अधिकार दिए जाने की माग लेकर एक आदोलन शुरू किया और वह भी कुचल दिया गया था। इसके लिए श्रीमती नाटन को भी बहुत अपमानित होना पडा था। सर जान स्टुअट ने स्त्रिया के पक्ष मे भाषण दिए तो उन्ह भी बहुत विरोध का सामना करना पडा।

८ माच १८५७ को न्यूयाक की सडको पर कपडा मिला की कामगर स्त्रियो ने अधिक वेतन और काम के घटे घटाने की माग लेकर एक असफल प्रदशन किया था, जिसे उस समय की ट्रेड यूनियनो ने भी पसद नही किया। पर इसके तीन साल बाद ही कपडा मिलो की महिला कमचारियो की अलग यूनियन बनाने म सफलता मिल गई थी। और अब उस सघष की याद म ८ माच का दिन सारे ससार म अतर्राष्ट्रीय महिला सघष दिवस के रूप म मनाया जाता है।

सन १८६५ मे लूसी स्टोन न अमेरिका मे महिला आदोलन शुरू किया। जमनी और फ्रास म भी लगभग इसी समय आदोलन शुरू हुए। इस तरह सघष प्रारभ हो चुका था। उसन गति पकडी प्रथम विश्वयुद्ध के बाद, जबकि महिलाओ ने जगह जगह युद्ध विरोधी प्रदशन किए। पर महिलाओ के अधिकारो की स्थिति मे महत्त्वपूण परिवतन तब आया, जब सयुक्त राष्ट्र सघ के मानव अधिकार आयोग ने 'मानवीय अधिकारो का घोषणा पत्र स्वीकार किया। इस घोषणा पत्र की स्वीकृति के बाद ससार भर की महिलाओ म नई आशा का सचार हुआ और वे अपनी भेदभावहीन वैधानिक स्थिति को सामाजिक स्थिति मे बदलने के लिए कटिबद्ध हो गइ। भारत म नारी अधिकारा का यह घोषणा पत्र प्रागैतिहासिक काल से ही स्वीकृत था। केवल समय के साथ उस पर जो धूल जम गई थी उसे ही पोछकर स्वतत्र भारत के सविधान मे पुन स्वीकृत या पुष्ट कराना था।

यहा अधिकारो के कार्यान्वयन की ही समस्या

भारत मे देश की गुलामी और स्त्रिया की गुलामी दो पृथक मुद्दे नही रहे। आजादी से पहले पुनर्जागरणकाल म ही चलाए गए सुधार आदोलनो के कारण राष्ट्र पिता महात्मा गाधी के आह्वान पर भारत की शिक्षित-अशिक्षित हजारा हजार स्त्रिया न आजादी की लडाई म भाग लिया। उनकी यह लडाई पुरुषा के खिलाफ अपनी आजादी

के लिए नहीं थी, पुरुषों के साथ मिलकर देश की आजादी के लिए थी। देश को आजाद कराने के बाद स्वाधीन भारत के विधान निर्माण में भी विदुषी स्त्रियों की भागीदारी रही। तो यह कैसे संभव था कि आजादी के बाद भारतीय संविधान में उन्हें समानाधिकारों से वंचित रखा जाता! भारतीय गणतंत्र की स्थापना के साथ ही भारतीय स्त्रियों ने वे सभी वैधानिक अधिकार प्राप्त कर लिए, जिनके लिए पश्चिमी स्त्रियों को इतिहास में एक लंबे समय तक लड़ाई लड़नी पड़ी थी। आज कोई बड़े से बड़ा पद ऐसा नहीं है जो स्त्री को न दिया जा सके अथवा वह उसे अपनी योग्यता से स्वयं न हासिल कर सके। केवल इसके लिए स्वयं को ही इस योग्य बनाना है कि अधिकार मांगने न पड़ें स्वयं ही अपने पास खिंचे चले आएं। प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी का उदाहरण सामने है।

जब भारतीय नारी राष्ट्र के सर्वोच्च पद प्रधानमंत्रित्व तक को हासिल कर सकती है, पुलिस अधिकारी, जज, पायलेट, इंजीनियर, चार्टर्ड एकाउंटेंट, बैंक मैनेजर, कलक्टर जैसे कार्य-क्षेत्रों में अपनी योग्यता और कार्य कुशलता की धाक जमा सकती है, ऊंची पहाड़ी चोटियों पर आरोहण कर कर सकती है, एवरेस्ट तक उसके जाने पर कोई रोक नहीं, तो सवाल उठता है कि मुक्ति कैसी? किस से? अधिकारों की लड़ाई किसलिए? प्रतियोगिता में आगे बढ़ने के लिए रुकावट कहां है?

जाहिर है कि बराबरी के वैधानिक अधिकार हमें प्राप्त हैं। लेकिन समाज क्षेत्र में उनका कार्यान्वयन अभी ठीक से नहीं हो पाया है। सामाजिक मान्यता उन्हें नहीं मिली है। इसलिए पद सुविधा से सम्पन्न मुट्ठी-भर महिलाओं को छोड़ कर औसत स्त्री के साथ सामाजिक भेदभाव और सामाजिक अन्याय अभी बरकरार हैं। कानूनी अधिकारों को सामाजिक अधिकारों में बदलने के लिए समय लगता है। शीघ्र लक्ष्य प्राप्ति के लिए कालावधि को सुविचारित सुनियोजित प्रयत्नों से छोटा करना होगा। प्रगति को एक दिशा देनी होगी। हमारी राष्ट्रीय सामाजिक नीतियों में कमी नहीं है लेकिन प्रश्न है कि हम महिलाओं ने उसके लिए क्या किया? आजादी के इतने वर्षों बाद भी क्या हमने स्वयं को इसके लिए तैयार किया?

नहीं। हमने अधिकारों की मांग के साथ जिम्मेदारियों का तालमेल नहीं बैठाया। बराबरी की धुन में स्त्री की पुरुष से ऊंची स्थिति को भुला दिया। आजादी के नशे में, अधिकारों की होड़ में परस्पर निर्भरता व पूरकता की बात हमारे ध्यान से ओझल हो गई। आकर्षण व आदान प्रदान के लिए विषमता और पूरकता ही चाहिए। प्राकृतिक वैषम्य को किसी समता के सिद्धान्त से मिटाया नहीं जा सकता। केवल मानवीय आधार पर और सभ्यता के तकाजे से अनुकूलन की, सहयोग की स्थितियां पैदा कर समाधान की राह दी जा सकती है। भारत में नारी-मुक्ति आंदोलन की दिशा यही हो सकती है—कानूनी अधिकारों का समझदारीपूर्ण सदुपयोग और सामाजिक धरातल पर उनका कार्यान्वयन। घर से बाहर कर्मक्षेत्र में स्त्री-पुरुषों के बीच सहज मानवीय संबंधों का विकास। मित्र, सहपाठी और सहकर्मी भावना का उन्नयन और नारी की मानवी रूप में मान्यता (दासी बनाम देवी अथवा भोग्या बनाम पूज्या की बात [illegible] हो चुकी)। इस तरह आपसी समझदारी और परस्पर सम्मान की [illegible] बने।

करन से न पुरुष को आक्रामक रुख अख्तियार करने की जरूरत होगी, न स्त्री को अपन बढते कदम पीछे लौटाने की।

हमारा मुक्ति आदोलन

भारतीय सस्कारिता और स्त्री मानसिकता पुरुष प्रतिद्वद्विता म नही, उसके कधे स कधा मिलाकर सहकार सहयोग म ही सतुष्ट होती है ज यथा छटपटी कलपती रहती है। स्त्रियो को चाहिए कि पुरुषा म हीन भाव पैदा कर उन्ह पुरुषत्वहीन बनाने के बजाय अपना हीन भाव दूर करें। ये स्थितिया विकसित करने की जिम्मेदारी स्त्रिया पर ही है कि उन्ह पुरुष का साथ और सहारा मिले, उसके पैर की ठोकर नही। यदि किसी कारण यह सहारा न मिल सके या छिन जाए ता उसे अपन हाथा-पैरो का सहारा मिले और समाज की शकित निगाहो कुचर्चाओ से मुक्ति। यही हमारा मुक्ति आदालन हो पश्चिम के किसी 'वीमेन लिब' की नकल नही।

लेकिन स्वय पर से शक्की, ईर्ष्यालु निगाहें हटवाने और कुचर्चाओ स मुक्ति पाने का अर्थ है स्वय की कमजोरियो स मुक्ति और अपनी ही दूसरी बहनो पर स अपनी शक्की, ईर्ष्यालु निगाहे हटाना। यह एक कटु सत्य है कि नारी ही नारी के रास्त की रोडा है वह एक दूसरी के प्रति ईर्ष्यालु हो अपनी प्रगति म रुकावट न डाले, अपना सकुचित दृष्टिकोण बदले और एक दूसरी को बाट तो कोई कारण नही कि वह समाज म अपना सम्मानीय स्थान न बना सके। 'नीर भरी दुख की बदली' या 'अबला जीवन हाय' वाले मूल्य बदलने हैं तो नारी को अपने आप मे भी शक्ति बनना होगा और पुरुष की शक्ति बनकर भी दिखाना होगा। समय के साथ न बदलना एक प्रकार से अपने पैर पीछे लौटाना होता है लेकिन सफलता तभी मिलती है, जबकि समय को बदलने का सकल्प लेकर चलें।

मध्यकालीन मिथको को तोडे सस्ते रोमास को समर्पित न हो

हमे स्वतत्र भारत की स्वतत्रचेता नारी की पहचान बनानी है अपनी खोई शक्ति फिर स प्राप्त करनी है तो जरूरी है कि मध्यकालीन मिथको को तोडें और सस्त रोमास को समर्पित न हो। आधुनिक बहुपठित कहानी उपन्यास या सिनेमा का रोमास एक झूठी जिंदगी की झूठी तसल्ली है—जिंदगी का यथार्थ नही। यह विक्टोरियन काल के पश्चिमी सामतवाद की देन है। अग्रेजी साहित्य की देन है, जो शिक्षा माध्यम से और नक्ल की प्रवृत्ति से हमारे यहा आई है। इसकी जडें हमारी परपरा म नही। यह ठीक है कि कालिदास से लेकर शरतचद्रीय परपरा तक भारतीय साहित्य रोमास से भरा है। पर वह रोमास दूसरे ढग का है जिसम त्याग भावना है। हमारे प्राचीन साहित्य की नायिकाए भी बहादुरी को समर्पित रही हैं। लेकिन वह बहादुरी योद्धा की बहादुरी है, जिसमे कुलीन सस्कारिता के गुणा स युक्त सम्मानित और प्रशसित व्यक्तित्व भी जुडा है। लेकिन आज के इस तथाकथित लोकप्रिय साहित्य का रोमास दूसरे ढग का है, जिसम नायक कठोर हिंसक बबर, स्वार्थी और घमडी आदिम गुरिल्ला जैसा भयानक रूप स

शक्तिशाली है। यह विपक्षी को ठोकर लगाकर ढेर कर सकता है। अनेक गुडो को धराशायी कर, सभी बाधाए पार कर नायिका की रक्षा करने म समथ है। यानी वास्तविक जीवन मे जो असभव है उसे भी सभव बनाने वाला।

और नायिकाए इसके विपरीत वसी ही छुईमुई, कोमल और कमनीय। हर अत्याचार पर चुपचाप आसू बहाने वाली या भीगी आखें लिए प्रतीक्षारत। सुबकती, विसूरती हुईं, तिल तिल घुलती और गम खाती हुइ। जाहिरा हर तरह के पति को समर्पित और चुपके चुपके उस 'बहादुर पुरुष' के चरणो म समर्पित। आश्चय होता है, जब सिनमा मे नारी का यही रूप हमारी गृहलक्ष्मियो द्वारा भी पसद किया जाता है और टिकट खिडकियो पर भीड इन आसू डूबी आदश कहानियो या शोले जैसी हिंसक बबर नायको वाली, मारकाट स भरी फिल्मो पर ही जुटती है। इन कहानियो म सुखात का अथ है—उसी आदिम किस्म के हीरो की बाहो म पहुचकर सुख पाना, अत म नाटकीय ढग से बुरे लोगो की धर-पकड या उनके हृदय परिवतन के साथ 'अत भला सो सब भला'। दुखात का अथ है—हीरो का न मिलना, भोगी हुई हीरोइन का रोते, बिसूरते अयत्र विवाह और फिर उसी पति को समपण, जो इन कहानियो म अक्सर भला आदमी नही होता। और परिणति है—विवाह पूव अपना सब कुछ लुटा देने वाली हीरोइन का विवाह के बाद फिर म सती सावित्री बन जाना। फिल्मो पर फिर भी ससर है। धडल्ले से पढा जाने वाला यह ससर मुक्त सस्ता सक्सी साहित्य बहुपठित होने से फिल्मो से भी ज्यादा खतरनाक है।

जेम्स बाड हीरो और बिसूरती नायिकाए हीरो प्रधान जेम्स बाडीय' सनसनीपूण साहित्य की नकल म हमारी सत्य कथाओ और फुटपाथो पर रोटी गोश्त के ढाबो की तरह हर जगह छोटे-छोटे स्टालो पर बिकने वाले गुलशन नन्दा एण्ड कम्पनी' (रानू, राजवश, कनल रजीत आदि न जाने कितने ही छदम लेखको व 'ट्रेडमाक इस म जुड गए हैं) के साहित्य की देन हैं—आज गली गली म गले म चेन डाले या रूमाल बाधे, कमीज के बटन खोले, छाती तानकर, झूम कर चलते दादा और गुडे तथा घरो म उनम ठुकराई, उनकी भोगी, रोती बिसूरती, असहाय युवतिया। हमारे समाज म प्रतिशोधी, खूखार हत्यारे हीरो तथा बलात्कारी यही से निकल कर आ रहे है। सिनेमा और इस सिनमाई साहित्य की ही देन हैं—बनावटी सौन्दय के लिए गली-गली खुलने वाले *'ब्यूटी क्लीनिक' शाम्ब-बेढगे फशन, सस्ते सेक्सी मेकअप अश्लील गाने, कैबरे, नग्नता के* विज्ञापन और वैसे सावजनिक प्रदशन, अयथा शृगार फैशन या सौन्दय साधना अपने आप म कोई बुरी चीज नही। नवीनता, ताजगी और आकषण के लिए यह भी एक कला है, जिसके लिए कलात्मक साधना की ही आवश्यकता होती है।

अकल्पनीय जिन्दगी की भटकन

दुर्भाग्य मे ऐसे साहित्य का विरोध करने के बजाय इसे ही बहुतायत मे पढा जा रहा है। मध्य व निम्नमध्य वर्गों की निठल्ली महिलाए (जिन्हे अखबार पढने या किसी, सभा सोसायटी मे भाग लेने के लिए 'बच्चो से व घर के काम स फुसत ही नही मिलती

दोपहरी भर नेट कर इन्ही उपन्यासो, फिल्मी पत्रिकाओ और सत्यकथाओ म तल्लीन रहती है। रेल म, बस मे सफर करते यात्री, छात्र छात्राए और कार्यालय कर्मचारी—सभी इस 'खोभी खो जाए' वाले वावी दशन म मग्न रहते हैं और एक अजीब, अकल्पनीय जिन्दगी की भटकन म जीते है।

यहा हीरोइन सुन्दरी है तो हीरो, विलेन दोना के लिए मुसीबता की जड। कामकाजी है तो रोमास जैसे उसकी कामकाजी स्थिति के साथ जुडा है। त्यागमयी है तो इस तरह कि बीमार बूढे बाप की दवा के लिए देह सौंपकर पैसे लाती है। अमीर बाप की बेटी है ता उसका काम केवल घूमना फिरना, प्रेम करना और गरीब हीरो की पैसे म मदद करना है। और हीरो का आदर्श ! समाज को बदलना नही, समाज स ठुकराई या गर्भवती हीरोइन को अपनाना। हीरोइन की गुडा मे रक्षा कर अथवा उसकी थाडी आर्थिक मदद कर उसे अपने जाल म फसाना। सताई स्त्रिया स सस्ती भावुकता व सहानुभूति दिखाना, फिर उन्ही का शोषण करना। ये हीरो हीरोइनें वास्तविक जिन्दगी के पात्र नही लेखक की कलम की कठपुतलिया हैं, जो फिल्मी डायलाग बोलती हैं। परस्पर टकराते ही प्रेम करने लगती हैं। इनकी नजर बस प्रेमी प्रेमिका के अग प्रत्यग पर या बटुए पर रहती है। प्रेम इनके लिए प्राय पवित्र भावना नही, औपचारिकता या प्रदर्शन की वस्तु होती है जिसे पाने के लिए छल बल, चोरी गुडागर्दी सब जायज हैं। जीवन व सघर्ष का इस साहित्य मे कही दूर-दूर तक पता नही चलता। नारी के मानवीय रूप की इसमे कही मान्यता नही मिलती। इस सिनेमाई साहित्य की लोकप्रियता ही आजाद देश के आजाद नारी-पुरुष म परपरागत हीनता और श्रेष्ठता ग्रथियो का पृष्ठपोषण कर रही है। यह एक ओर मध्यवर्गीय सामती शक्ति को पुन उभरने व दबाव डालने के लिए उकसाती है दूसरी ओर नारी के परपरागत अबला रूप को उभार उसे इस दबाव का सहने के लिए मजबूर बनाती है।

सामाजिक स्वास्थ्य पर घातक असर जो साहित्य केवल मनोरजन के लिए पढा जाए या जिसम पाठक घटा-दो घटा जी बहला ले उसस किसे आपत्ति हो सकती है! लेकिन इस कथित मनोरजक साहित्य न तो हमारे सामाजिक स्वास्थ्य पर घातक रूप से असर डाला है। जो जिन्दगी का यथार्थ नही, यथार्थ जिन्दगी म उसकी ही नकल म आज जिन्दगी इस कदर उथली और खोखली हो गई है। हमारे युवक वैसे हीरो, देह-मुमुक्षु बनने की कोशिश करें और न बन पाने पर कुठा, हताशा व निकार हो जिन्दगी की दौड म पिछड जाए तथा युवतिया पढ लिख कर भी वही गुडिया, कठपुतली जगी बनी रहें या हीन आचरण, विवश लाचार सामाजिक अन्याया के सम्मुख घुटन टक, सुरक्षा की भीख मागती (अब तो सुरक्षा की माग लेकर सडकों पर नारे लगाने की भी नौबत आ गई है) दिखाई दें तो इस सामाजिक माहौल म मूल्या के बदलाव या किसी मुक्ति आन्दोलन की बात हास्यास्पद ही लगती है।

कला बनाम नग्नता

कुछ वर्ष पहले पश्चिमी साहित्य म नग्नता का चित्रण परपरा विरोध के रूप म

शुरू हुआ और बाद मे वहा की जिन्दगी म प्रवेश कर गया। पिछले दो दशको म हमारे यहा भी इसे आयात कर लिया गया। कथित भूखी', 'नगी पीढी के कविया और 'अ कहानी के कथाकारा ने भी 'जाघा के जगल' कम नही उगाए। पारिवारिक साहित्यिक पत्र पत्रिकाआ म भी सनसनीपूण चीजें अधिक बिकती है इसलिए एक अनुपात मे छपती है। उपरोक्त वर्णित सस्ते पटरी साहित्य से इनका अतर प्रस्तुति के स्तर या ढग का ही अतर है। और परिणामस्वरूप न्यूड 'पोर्नोग्राफी' ब्लू फिल्मो' की भी हमारे समाज मे पर्याप्त पैठ हो गई है। यो पोर्नोग्राफी कोई नई चीज नही दुनिया भर का इतिहास और पुरातत्व इससे भरा पडा है। भारतीय वास्तुकला मे तो इसका चरम विकसित रूप मिलता है। अन्तर दष्टि और कला तकनीक मे विकास से ही आया है। इधर दष्टि कला से अधिक कला के व्यवसाय पर, नग्नता के सौन्दय से अधिक नग्नता के भोग पर है तो कला से इसके लोप हो जाने के आसार भी प्रकट होने लगे हैं।

लौट के सकेत आधार की खोज

समाज मे भी इसी तरह अतिरेक से विकृति का जन्म होता है और विकृति से ही फिर लौट की स्थितिया प्रारभ होती है। आज चक्र इसी आवतन के बाद प्रत्यावतन पर घूमता दिखाई देता है। धीरे धीरे वे शक्तिया उभर रही है जो भारतीय सस्कृति को नए वैज्ञानिक सदम म पुनर्जीवित करेंगी। इसके लक्षण स्पष्ट दिखाई देने लग हैं। भारतीय नारी डॉली, रोजी हनी, लवली के बाद फिर से स्वाति, स्मिता, गरिमा, दिव्या के रूप मे अपनी पहचान बनाने लगी है। हाथा म महदी और घरा म अल्पना सजने लगी है। भले ही अभी ओरिएटल फैशन' के नाम पर आयातित और ओरिएटल की खिचडी सस्कृति ही देखने को मिलती हो पर लौट क सकेत इसमे निश्चित रूप से निहित हैं। यह एक शुभ सकेत है। पर यही सावधानी भी अपक्षित है। लौट का अथ समय के चक्र को पीछे घुमाना या प्रगति के पैरा को पीछे लौटाना हरगिज नही है। लौट का अथ है अपने छूटे 'आधार को खोजना और उसकी ओर लौटना। धुरीविहीनता से आई विसगतियो का निराकरण कर ज्ञान विज्ञान की अगली प्रगति को इस धुरी या आधार पर टिका कर भविष्य का पथ निर्धारित करना और फिर सुस्पष्ट लक्ष्य नजर आगे बढना।

खिचडी सस्कृति अधकचरी आधुनिकता

खिचडी सस्कृति और अधकचरी आधुनिकता के नमून हैं—स्लीवलेस, नाभि दशना साडी या जीन्स टाप और पेंसिल हील के साथ पैरा म पाजेब गले म साईं बाबा, तिरुपति या वैष्णो देवी का लाकेट पहनना। सीमा-मुक्त दोस्तिया के बाद, डिस्कोथक मे पॉप सगीत और साइकेडेलिक रोशनियो के बीच हाउ एक्समाइटिंग नाच नाचन, प्राय हर शनिवार-रविवार को 'ब्वाय फ्रेंड्स के साथ फैंटास्टिक टाइम बिताने के बाद इस इतजार म रहना कि माता पिता उनके लिए इज्जत, शोहरत, पस वाला ... तलाश करें, लडके वाले बाकायदा बारात व घोडी चढा दूल्हा लेकर ...

और वे उसी तरह मेहदी वाले हाथो, गोटे-जरीवाले वस्त्रा और आभूपणो स लदी फन्नी, घूघट निकाले सकुचाती शरमाती विदा हो ससुराल गृह म प्रवेश करें। यहा तक भी ठीक, पर विवाह की सारी रस्मे एक अच्छी कुलवधू की तरह पूरी कर 'हनीमून' स लौटते ही ससुराल मे एक पति को छोड शेप सभी को आखें दिखाने लगें, एक झटके स ही पति व पति गृह पर पूरा अधिकार जता घर के अन्य लोगा को अपमानित करने और पति को उसके परिवार से काटने के लिए आधुनिका बन जाए, तो दायित्व भूल केवल अधिकार पहचानने वाली यह कौन सी आधुनिकता है ? आधुनिकता का अथ 'ब्वाय कट' के साथ माग म ढेर सा सिंदूर भरना, स्लीवलेस के साथ चूडिया से बाहें भरना और इस तरह का अधकचरा ओढना नही, अधिकारो के नाम पर स्वार्थी होना नही, वैज्ञानिक प्रगति-शील दृष्टिकोण अपना कर परपरा को रूढियो मे काट आगे बढाना है। स्वतन्त्रता का अथ पुरुप के लिए सस्ते ढग से प्राप्य होना नही बल्कि उसे यह एहसास कराना है कि स्वतन्त्रता नारी की दोस्ती इतनी आसानी से उपलब्ध नही होती।

आधुनिकता का अर्थ अपनी पहचान

आधुनिकता का अथ है अपनी पहचान। अपने बारे मे एक स्पष्ट अभिमत और उसी अनुसार स्वय का व्यक्तित्व विकास। क्षमता, सामथ्य, कमठता निर्भीकता और आत्मविश्वास कि पुरुष उस नारीत्व का सम्मान करे, उसकी शक्ति को पहचाने उसस प्रेरणा प्राप्त करे और उसे पाने के लिए प्रयत्न करे, त्याग करे और कुछ बन कर दिखाए। उसके लिए चाहिए अपनी कमजोरियो पर विजय, चरित्र शक्ति और सकल्प शक्ति। बौद्धिक विकास और वैज्ञानिक तक सम्मत दृष्टिकोण जिसमे मतभेद और सुधार-परिष्कार की गुजाइश हो, सकुचित सीमाओ का विस्तार हो, कमियो और हीनताओ का उदात्त रूपान्तरण हो और हो विचार सप्रेषण की शक्ति। ऐसा खुला खुला सा, हीन-ताओ से ऊपर, कुठारहित उदारचेता व्यक्तित्व ही सही माने मे आधुनिक हो सकता है फिर चाहे जीवन का ध्येय कुछ भी हो।

माड' कपडे पहनना और फ्री सेक्स' स्वतन्त्रता नही। नारी यदि वास्तव मे स्वतन्त्र या मुक्त होगी तो वासना से मुक्ति पाने के बाद ही। जब तक वह कामिनी है उसकी मुक्ति या मुक्ति आदोलन का कोई अथ नही। कामिनी भाव से मुक्ति पाने के बाद स्वत ही सारे बधन कट जाते है किसी मुक्ति आन्दोलन की आवश्यकता ही नही रह जाती। यदि आधुनिक नारी यह त्याग, यह साधना नही कर सकती तो मुक्ति या स्वतन्त्रता की बात करना व्यथ है।

स्वतन्त्रता या सुरक्षा बनाम स्वतन्त्रता के साथ सुरक्षा—चुनाव जरूरी

समस्या की जड दरअसल नारी के भीतर छुपी असुरक्षा की भावना म है। शिक्षित अधिकार सम्पन्न नारी की भी स्थिति वही है, समस्या वही है तो इसका कारण भी वही है कि नारी स्वय को असुरक्षित समझती है। जिन्दगी जीने के लिए उस पुरुप

का साथ नही, सहारा चाहिए। यही वह पुरुष से दुबल पड जाती है। सहारा खोजने वाले हाथ बराबरी कैसे हासिल कर सकते हैं? सहारा देने और लेने वाले में अन्तर तभी मिट सकता है जब यह सहारे की तलाश एकतरफा नही दोनो ओर समान हो। नारी को जानना और समझना है कि पुरुष भी नारी का सहारा चाहता है पर वह उसकी मैत्री और साथ भी चाहता है। नारी केवल सहारा न मांगे साथ और मैत्री भी जुटाए तो रूढियो के बंधन कट सकते है। वह स्वतन्त्रता या सुरक्षा में से एक न चुने स्वतन्त्रता के साथ सुरक्षित हो सकती है। इसके लिए उसे स्वयं को भी बदलना है और पूरे सामाजिक ढांचे को बदलने के लिए भी जम कर काम करना है। कुछ थोडी सी प्रबुद्ध महिलाए और चंद नारियां भी यह करके दिखा सकें तो लाखों लाख स्त्रियों को अपने पीछे चला सकती है और आम नारी की स्थिति में सुधार ला सकती हैं।

यह हो सके, नारी फिल्मों विज्ञापनो पीत पत्रकारिता में विकृत और 'सेक्स सिम्बल' बनने से इनकार करे, स्त्री-पुरुष परस्पर संबंधों में (चाहे वे विवाह पूर्व हो या विवाहेतर) नारीत्व के आधार या आग्रह को बीच से हटा सहज मैत्री भाव का विकास कर तो नारी की अलग से कोई समस्या नही रहेगी। जो भी समस्याए होगी, सारे समाज की साझी होगी और दोनो उसी तरह उनके समाधान में साथ-साथ जुट सकेंगे जैसे कि आजादी के संघर्ष में पहले साथ-साथ जुट जूझे थे।

समाज को आधुनिक बनाने के साथ उसे भारतीयता के साथ जोडे रखने की सबसे अधिक जिम्मेदारी नारी पर ही है, क्योंकि आधुनिकता हो या राष्ट्रीयता या मानवीयता, उसकी नींव घरो की शिक्षा और संस्कारिता में ही रखी जाती है। आगे बढता हुआ समाज हमेशा आधुनिक रहता है। परम्परा का अर्थ रूढि नही होता, परंपरा ही आगे बढती हुई आधुनिकता कहलाती है। आधुनिकता न ऊपर से टपकती है, न बाहर से लाई जाती है। लाई जाती है तो देशीय मानसिकता उसे स्वीकारती नही। विभाजित मन और कुंठाओं-समस्याओं को जन्म देती है। यह कथित आधुनिक पिछडी संस्कृति इसी विभाजित मन की उपज है।

नारी की असुरक्षा और अधिकांश समस्याएं इसी से उपजी हैं। तो सबसे पहले इसका उपाय करना है। इस विभाजित मन को जोडना है। बिखरी शक्तियों को बटोरना है। लक्ष्य निर्धारित करना है। राह और दिशा स्पष्ट करनी है। तब आगे बढना है। इस तरह अपनी पहचान और दिशा-पहचान कर चलने से प्रगति के पगों को पीछे लौटाने का प्रश्न ही नही उठता। चलिए उठिए आपको निर्माण ही नही [illegible] भी करना है। लडाई देखिए पुरुषो के खिलाफ नही उस वातावरण के खिलाफ [illegible] की जरूरत है।

प्रमुख मुद्दे

इस प्रकार भारतीय नारी की स्थिति, उसके [illegible] और मुक्ति-[illegible] के प्रमुख मुद्दे हैं

—किसी भी समस्या के लिए, कठिनाई या [illegible] के लिए [illegible]

कारण या कोई एक पक्ष नही होता। समाज की सारी स्थितिया, जो समय सापक्ष होती हैं, इसके लिए मुख्यत जिम्मदार होती ह। भारतीय नारी के सामाजिक दर्जे के पीछे भी यही तथ्य है। इसलिए केवल पुरुषा को दोष देना व्यथ है। भारतीय पुरुष किसी भी दश क पुरुष से अधिक जिम्मेदार पति है। भारतीय माता पिता लडकिया पर कुछ बधन लगाते है तो उनकी सुरक्षा की जिम्मदारी भी लेते है। आजादी के नाम पर पश्चिमी किशोरिया की तरह बाहरी असुरक्षित स्थितिया म भटकने व उनस जूझन के लिए उन्हे अकेला नही छोड देत।

—पश्चिम मे प्रारम्भ पुरुष विरुद्ध नारी मुक्ति आन्दोलन के लिए यहा कोई आधारभूमि नही है। मानवीय भावभूमि और सोच के धरातल पर एक जातीय समानता के बावजूद भारतीय नारी का अधिकार प्राप्ति का इतिहास सवथा भिन्न है। यहा नारी प्राचीन काल से शोषित नहीं रही। यह वदिक काल के इतिहास से स्पष्ट है। मध्यकालीन बधनो को भी शोषण न कह कर तत्कालीन स्थितियो की उपज कहना ही ठीक होगा। जब विदेशी आक्रमणो से हमारा पूरा जातीय व सामाजिक सतुलन गडबडाया, नारी भी तभी बधनों के घेरे मे आई। देश की गुलामी और नारी की गुलामी, उसके साथ जुडी जौहर प्रथा और सती प्रथा, देश के पिछडपन और नारी के पिछडेपन को अलग अलग करके देखना भारतीय सास्कृतिक इतिहास को झुठलाना है। आधुनिक प्रमाण है राष्ट्रीय आजादी और स्त्रियो की आजादी के सघष मे स्त्री पुरुषो की समान भागीदारी, समानता के स्तर पर भागीदारी और देश की आजादी के साथ ही भारतीय स्त्रियो का मिले समानाधिकार। देश निर्माण का काय भी इसी तरह समान भागीदारी से ही सभव है।

—भारतीय नारी की समस्याओ को किसी एक पहलू से भी नहीं देखा जा सकता। न ही सभी स्त्रियो की स्थिति समान है। यहा महानगरीय अति आधुनिकता से लेकर आचलिक आदिवासी स्त्री तक स्थितियों के अनेक स्तर हैं। कुछ आदिम समुदायो मे आज भी मातृसत्तात्मक परिवार व्यवस्था है। कुछ अत्यन्त पिछडी कही जाने वाली आदिम जातियो (जैसे कूकी) म परिवीक्षा विवाह' जैसी प्रथाए भी मौजूद हैं जो भावी वनानिक युग के निकट लगती हैं और हमारे उज्ज्वल अतीत की निशानिया हैं। आदिम समाजा स हट कर दखें ता हमारे समाज म तीन स्पष्ट वग मिलेंगे—थोड स्थानीय भेद के साथ लगभग सभी निम्न वर्गो म पारिवारिक विघटन और तलाक जसी समस्याए नही है। वहा एक पति छोड दूसरा कर लेन स कोई सामाजिक अपवाद नही बनता। किसी ताडना या यातना के बिना, कही थोडा आर्थिक दड देकर कही बिना दड ही असफल विवाह से मुक्ति आसानी स पाई जा सकती है। ऊपर का वग साधन सम्पन्न सफेदपोशा का है जहा सब कुछ हो सकता है सुविधा से मूल्य बनाए और बदले जाते हैं और बदनामी का खतरा मोल लिए बिना पसे व सपर्को के बल पर सम्मान व सुविधाए जुटाई जा सकती हैं। स्त्री का खरीदार व शोषक हर युग मे प्राय यही वग रहा है। समस्या है और शामत है तो केवल मध्य और निम्न मध्य वग की, जहा न निम्न वर्गों जैसी दोटूकता, बेबाकी और खुलापन है, न ऊपरी वर्गों जैसी सुविधा सम्पन्नता।

इसलिए अधिकतर समस्याए इसी वग के साथ जुडी हैं। ऊपरी वग की नकल के माध्यम से पश्चिमी मूल्यो की नकल यहा है पर वैसी मानसिकता नही, इसलिए भीतरी स्वीकृति नही। विभाजित मन इसी का परिणाम है। दुहरे मूल्यो की मार इसी से यह वग अधिक सहता है। तो इस स्थिति से मुक्ति के लिए पहल भी इसी वग स होनी चाहिए।

—निम्न वर्गों की स्त्रिया आत्मनिभर होने और कहीं-कहीं पति से अधिक कमाने के बावजूद उनसे पिटती हैं इसलिए स्त्री की समस्या को केवल आर्थिक प्रश्न से साथ जोड कर नहीं देखा जा सकता। वहा गरीबी के साथ अशिक्षा, पिछडा मानसिक स्तर और ढीले नतिक मूल्यो का दुरुपयोग भी इसके पीछे हैं। दलित वग की स्त्रिया का हर काल म शोषण भी इन तीनो मिली जुली स्थितियो का परिणाम है, केवल गरीबी के कारण नही। अन्यथा मध्यकाल की दन 'नारी पुरुष की सम्पत्ति' वाली धारणा समाज के सभी वर्गों मे मौजूद है ! हर वग मे स्त्री-सुरक्षा की जिम्मेदारी स्वय नारी से अधिक पुरुष पर है। अपनी सस्कृति से कट कर और पश्चिमीयत मे रग कर सुविधासपन्न उच्च वग भी भीतर से अस्थिर और दुविधाग्रस्त है। नय भगवानो और बाबाओ के पीछे दौड, तान्त्रिकों और ज्योतिषियो का फिर स बढता महत्व इसी भीतरी अपराध चेतना के कारण है और इस वग म 'योगा', 'अवर ग्रेट इडियन कल्चर' और 'ओरिएटल फैशन' के नाम पर खिचडी सस्कृति के 'क्रेज' के पीछे यही दुविधाग्रस्त मन स्थिति है जिसमे लौट के सकेत निहित हैं। फिर मध्य वग तो इस नक्ल मे कही का नही रहता। पूरी तरह विभाजित मन का शिकार हो हीनताओ कुठाओ को पाल यदि टूटता नही ता बेहद अस्थिर, उद्विग्न हो एक बनावटी और खोखली जिन्दगी जीने लगता है। भारतीय नारी की स्थितिया को इस पूरे सामाजिक सदम म ही देखना चाहिए। मध्यकालीन स्थितिया के अवशेष रूप म बची रूढिया गरीबी अशिक्षा अधविश्वास, शिक्षा के साथ जुडे विभाजित मन, पुरानी पड कर अथ खो चुकी परपराओ से मोह, भीतरी असुरक्षा के कारण पहले से भी अधिक पुरुष की पिछलग्गू होना नय मूल्या या आधुनिकता के नाम पर वासना की अधिक गुलामी के कारण शिक्षित प्रशिक्षित आजाद होकर भी पुरुषो की पहले से अधिक गुलामी जैसी अनेक स्थितिया और एक नारी के द्वारा दूसरी नारी के प्रति क्रूर व ईर्ष्यालु हो उसके माग मे रोडे अटकाने वाली अपनी ही कमजोरिया नारी की वर्तमान स्थिति के लिए उत्तरदायी हैं।

—महिलाए मानव जाति से अलग नहीं हैं। समाज से अलग नहीं हैं। मनुष्य जाति के, समाज के विकास के साथ ही उनकी स्थितियो मे सुधार होता है। इसे देश काल के सदर्भ मे और स्थानीय परम्पराओं के साथ जोड कर ही देखना-समझना चाहिए। किसी देश की सस्कृति के आधार से भी इस विकास को अलग नहीं किया जा सकता। भारतीय नारी को समझ लेना चाहिए कि हमारा समाज उस स्त्री के प्रति बेहद क्रूर है जो पुरुष विरुद्ध मोर्चा बनाती है और उत्तरदायित्वहीन आजादी चाहती है। यहा पश्चिम की तरह, जहा हर चीज के साथ प्यार का भी जब उद्योगीकरण हो गया है, प्यार को भावनाओ से अलग कर सौदेबाजी का रूप नही दिया जा 'थ्रिल' या सनसनी की तलाश मे यहा केवल निराशा और टूटन ही हाथ लगेगी

की लडाई केवल अपनी मुक्ति के लिए नही, पूरे समाज के वातावरण म सुधार लाने के लिए होनी चाहिए, अन्यथा प्रगति की ओर बढे उनके कदमो के फिर पीछे लौटने का अदेशा और खतरा उपस्थित है।

—प्राकृतिक भिन्नता के बावजूद नारी पुरुष से कमजोर है, यह धारणा गलत है। भारतीय मनीषियों के अनुसार, शारीरिक बल के ऊपर नतिक बल लेकर और पुरुष का मातृ पद पाकर नारी पुरुष से ऊची व श्रेष्ठ ठहरती ही है, आधुनिक मेडिकल सर्वेक्षणो ने तो उसे शारीरिक रूप से भी पुरुष से अधिक सशक्त सिद्ध कर दिया है। गभपात के मामलो मे सौ शिशु-बालिकाओ के मुकाबले १६० शिशु बालक गिरते हैं। जुडवा बच्चे होने की स्थिति में लडकिया अपेक्षाकृत अधिक जिंदा रहती ह। इसका अथ है, लडकिया गभ काल से ही लडको की अपेक्षा अधिक मजबूत व सुदृढ होती हैं। प्रकृति ने उन्हे 'फीमेल सेक्स हार्मोन्स मे अधिक शक्ति देकर दिल की बीमारी, कसर जैसी जानलेवा बीमारियो से लडने के लिए पुरुष स अधिक सशक्त बनाया है। इसीलिए तो वे बीमारी में भी प्राय काम करती रहती हैं और प्रसव वेदना जसे जीवन-मौत के सघष को झेल कर भी हसते मुस्कराते नव शिशु का स्वागत करती हैं। प्रकृति न पुरुष को अधिक शारीरिक बल देकर और नारी को मासिक धम व गर्भाधान, प्रसव शिशु-पालन की स्थितियो स बाध कर उसके साथ भेदभाव किया है यह मानकर इसस दुखित होने की जरूरत नही। ऐसे तो पुरुष भी कह सकते ह कि प्रकृति न नारी को अधिक सौंदय देकर पुरुषो के साथ भेदभाव किया है। अत नारी पुरुष से शारीरिक मानसिक स्तर पर हीन है, इस भावना को मन से निकाल देना चाहिए। अधिकतर यह भेदभाव सामाजिक मनोवैज्ञानिक स्थितिया की देन है जो लडके लडकी मे वशानुगत कारणा से और जन्म से पालन पोषण के भिन्न तरीको से उभर कर आता है। प्राकृतिक विभिन्नता को पूरकता के रूप मे ग्रहण करने और लडके-लडकी के पालन पोषण मे भेदभाव को कम करने से आगे फिर इस सामाजिक वैषम्य को कम किया जा सकता है। महिषासुर मर्दिनी के पौराणिक देवी रूप को छोड दें, तो भी दोनो हाथों मे खडग लेकर युद्ध क्षेत्र मे कूदने वाली रानी दुर्गावती स्वय सना का सचालन कर अपने सनिको मे नया उत्साह भरने वाली रानी चेन्नम्मा 'अपनी झासी नही दूगी' का उदघोष कर अग्रेज सना को ललकारने वाली लक्ष्मीबाई के उदाहरण अधिक प्राचीन नही हे। नारी को फिर से अपनी खोई शक्ति को जगाना पहचानना है और शक्ति रूप मे पुरुष की प्रेरणा बनना है।

—कुल मिला कर प्राय प्रत्येक परिस्थिति मे नारी की स्वभावगत दुबलता ही उसे समस्याग्रस्त और पतनो मुख बनाती है। सर्वेक्षणो से सिद्ध है कि पूण स्वतत्रता किसी नारी को सतुष्ट नहीं कर पाई। भय और असुरक्षा की भावना लिए जब तक वह पुरुष से सहारा मागती रहेगी, इस श्रेष्ठत्व और हीनत्व भावना से मुक्ति असभव है। सहारा देने और लेने के अतर को मिटाया नहीं जा सकता। नारी का कामिनी भाव जब तक उसमे विद्यमान है, मुक्ति आदोलन का कोई अथ नहीं। जब वह अपनी कमजोरियो से, अपनी अनियत्रित वासना स अपन कामिनी रूप म अपनी अभ्यर्थिनी वृत्ति

से भी अपनी अन्य बहनों के प्रति अपनी ईर्ष्या से मुक्ति पाने में सफल होगी तभी सारे बंधन स्वतः ही कट जाएंगे। नारी-मुक्ति एक स्थिति है कोई नारा नहीं। और स्थिति को धीरे-धीरे प्रयत्न से तर्कसिद्ध स्वैच्छिक और आचरण-आदान से आत्म-निरीक्षण और सुधार-परिष्कार से त्याग और साधना से ही लाया जा सकता है।

—नारी ने मानवी होने के लिए बौद्धिक स्तरपर विकास भी करना होगा। तर्कशील वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाना होगा। अपने नारीत्व के आग्रहों से ऊपर उठ कर एक स्वतंत्रचेता, उदारचेता व्यक्तित्व लेकर नारी-पुरुष संबंधों में सहज मैत्री भाव विकसित करना होगा। अधिकारों के साथ जिम्मेदारी भी वहन करनी होगी। और राष्ट्रीय जनजीवन में सार्थक भागीदारी बढ़ाने के लिए स्वयं को तैयार भी करना होगा। किसी होड़, प्रतिद्वंद्विता या नारेबाजी से नहीं, वैचारिक शक्ति का संबल लेकर सुनियोजित ढंग से सामाजिक बदलाव के लिए निरंतर प्रयत्नशील रहना होगा।

परिशिष्ट १

वरिष्ठ लेखको चिन्तको की सम्मतिया

नारी शोषण का प्रश्न आज न किसी एक वग का है, न वग-सघप का। धीरे धीरे पक्ती स्थितियो का यह विस्फोट पूरे सामाजिक परिवेश की उपज है—अपने इस मत पर सम्मति व सहमति प्राप्त करने के लिए तथा उनके उपयोगी सुझाव जानने क लिए मैंने एक प्रश्नावली भेज कर विभिन्न क्षेत्रा के अधिकारी विद्वानो, विशेषज्ञो और प्रमुख महिला सगठनों के विचार भी आमन्त्रित किए थे। विस्तृत प्रश्नो पर समय व आकार की सीमा के भीतर सक्षिप्त उत्तर भेजना आसान न था। पर मुझे सतोष है कि अधिकाश विद्वानो ने इसमे रुचि ली और सहयोगी रुख अपनाते हुए अपने अमूल्य विचार दिए। उनम से चुनकर प्रमुख सम्मतियो को परिशिष्ट मे सकलित किया जा रहा है।

इनम से कुछ टिप्पणिया पूरक लगती है तो कुछ पुस्तक की मुरय 'थीम को दुहराती सी भी। दुहराव से बचने के लिए मैंने सबधित सदर्भों को अपने आलेख म से निकाल दिया है या सक्षिप्त कर दिया है। जैसे प्राचीन भारतीय सस्कृति मे काम भावना का स्वरूप स्पष्ट करते हुए मैंने मदिरा के साथ उसके जुडने की पष्ठभूमि तो दी है, व्यारया नही, क्योकि डा० लक्ष्मीनारायण लाल न मदिरो की निर्माण प्रक्रिया और गभ-गृह से लेकर ऊपरी कलश तक की वास्तुकला के अथ को अपने उत्तरो मे पर्याप्त स्पष्ट किया है—यह अलग बात है कि इस प्रश्न पर अनेक विद्वानो की अनेक व्याख्याए है और आगे और भी व्यारयाए किए जाने की सभावना है। पर मूल बात का कही विरोध नही है कि इसे मदिर की पवित्रता के साथ क्यो जोडा गया है।

अब प्रस्तुत हैं पहले भेजी गई प्रश्नावली और फिर उस पर प्राप्त सक्षिप्त उत्तर

प्रश्नावली

१ नारी शोषण और उसकी सुरक्षा का प्रश्न एक शाश्वत प्रश्न है। फिर भी इधर उसे एक आदोलन के रूप मे उठाया गया है तो इसके पीछे कुछ ठोस व गभीर कारण

होती है, इस पूजा भाव के प्रति विद्रोह का रूप ले लेती है। दूसरे पक्ष के परिवार की स्त्रियों को अपमानित करके मताप पाने वाली यह मानसिकता हमारे समाज म कम म कम आठ नो सौ वर्षों स पनपती आई है।

नई राजनीतिक शिक्षा भी नारी के प्रति पूरे समाज म अत्याचार का आर्थिक शोषण के साथ जोडकर और भ्रम पदा कर रही है—यह भी कि इस देश मे नारी हमेशा से दलित शोषित और पीडित थी। यह बात बिल्कुल झूठ है। प्राचीन साहित्य अथवा प्राचीन इतिहास का थोडा सा भी ज्ञान इस झूठ को स्पष्ट कर देगा। वास्तव मे समाज मे स्त्री की अवनति प्राचीन काल अथवा प्राचीन जाति-सगठन की विशेषता नहीं रही, बल्कि सवत्र मध्य युग के उदय के साथ जुडी रही है। बाद म जात पात की जडित भावना से आदमी आदमी के वैर ने जातिगत वैर का रूप ले लिया और प्रतिशोध रूप म दूसरे की जाति की स्त्री लपेट ली गई। मूल मनोभाव वही—गुस्सा चाह किसी पर हो, नजला गिरगा तो स्त्री पर।

आजकल पढे लिखो का नारी आदोलन भी यही समझता है और पश्चिमी शिक्षा न भी हम यही सिखाया है। नये युवावर्ग मे यही मूल भाव परपरा के प्रति विद्रोह करते हुए नारी अपमान मे प्रकट होता है। तब छेडछाड स लेकर बलात्कार तक यह कृत्य जघन्य अपराध नही विद्रोह का एक रूप या बहादुरी' मान लिया जाता है, जब कि पश्चिम समाज म नारी के प्रति ऐसा भाव न था, न है, न वहा इस तरह की गालियो का चलन है। भारतीय समाज व्यवहार मे मा बहन की गालियो का जो स्थान है पश्चिम के व्यव हार और मुहावरे म वही स्थान मल मूत्र सबधी गालियो और फिकरा का है। इसलिए कि वहा बच्चे की शिक्षा मे सर्वाधिक जोर नारी के प्रति सम्मान पर नही, उस चीज पर दिया जाता है, जिसे सभ्य भाषा म टायलेट ट्रेनिंग' कहते हैं। तो पश्चिम म युवा विद्रोह की विकृति भी उसी रूप म प्रकट होती है।

उद्योगीकरण और आधुनिकीकरण का ससारव्यापी अभियान हिंसा क साथ जुडकर उसी के सहारे आगे बढ रहा है। कम विकसित देशो मे इसका और भी विकृत रूप इसलिए दिखाई देता है कि यहा सामना करन की सामर्थ्य कम होने से यह प्रवत्ति इन देशो के समाज सगठन को स्थायित्व देने वाली मूल व्यवस्था को बडी तेजी से उखाड फेंकती है। भारत म तो आज लगभग यह स्थिति हो गई है कि अगर आप मे किसी तरह का कोई मूल्य बोध बाकी है तो आप न आधुनिक है न वैज्ञानिक, न सभ्य। और यह हिंसा यह मूल्यहीनता की छूत शहरो स चलकर कस्बो और गावो म तेजी से फल रही है। उस पर रोज अखबारो म राजनीतिक उखाड पछाड व हिंसा की दारुण स दारुणतर खबरें पढकर चेतना पर छायी हिंसा कुछ और बल पकडने लगती है।

उपाय? जब तक हम मूल्यहीनता के साथ बधे हुए हिंसा भाव को नहीं देखते, जब तक विद्रोह के विकृत चित्र का सुधार नहीं करते, तब तक कोई सगठन, सस्थान—पुलिस, सरकार, सेना या ससद इसका कारगर इलाज नहीं कर सकते। ये सगठन और व्यवस्थाए आखिर उसी समाजव्यापी मूल्यहीनता की उपज हैं और उसी का प्रतिनिधित्व करती है। पुलिस का भरोसा—उसका परिणाम हम देख ही रहे हैं। सरकार का भरोसा—उसका

दिमाग कैसा चलता है, यह बागपत वाली घटना में देखा जा सकता है।

मूल्यों की समस्या उठाए बिना केवल अपराधों की चर्चा करना अपने-आप में अपराध है। जिस समाज में ऐसे मूल्य नहीं बचे जिनके लिए जिया जाए और जिनके लिए मरा भी जा सके, वह समाज अपने मन के साथ बलात्कार की स्थिति को स्वीकार कर चुका है। उसे न पुलिस बचाएगी, न संसद न सरकार। *उसे अपने मूल्यों की शक्ति ही* बचा सकती है। ग्लानि, क्षोभ और गुस्से के अलावा हमें इसकी भी चिंता होनी चाहिए।

मूल्यों के संदर्भ में ही एक बात और—'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते' में भी जो एक मूल्य निहित है, वैसे मूल्य आज सार्थक नहीं रह गए हैं। छोटी बिरादरियों में समाज का हर व्यक्ति एक-दूसरे को जानता था उनमें इस रिश्ते का महत्व था, तब उनमें आचरण को नियंत्रित करने वाला एक बल भी होता था। गांव का रिश्ता उस समाज में सार्थक था, जिसमें मानसिकता भी गांव की थी। मूल्य दृष्टि उसमें नियामक थी सो जाति विचार से ऊपर उठकर छोटी जाति की स्त्री भी केवल नारी होने के नाते अपनी मां, बहन, बहू, बेटी हो जाती थी। आज यह पहचान अनिवार्य हो गई है कि स्त्री को हम ।। रिश्ते के किसी पुरुष के माध्यम में देखना समाज को पुरुष-संचालित मानने का ही एक विस्तार है क्योंकि इस तरह पुरुष समाज बड़ी आसानी से नारी के स्वतंत्र व्यक्तित्व को ही नकार जाता है। जिस समाज में नारी को उसका व्यक्तित्व ही नहीं दिया जाता उसमें कथित 'पूजा भाव' कोई अर्थ नहीं रखता। इसलिए हमारे समाज को अपना सामना ही करना है और मूल्यों की चुनौती को स्वीकारना है।

भारतीय दृष्टि 'काम' के प्रति खुली हुई थी—
समस्या की जड़ तीसरे प्रश्न में ही है

डा० प्रभाकर माचवे (सुप्रसिद्ध कवि, लेखक विचारक)

१ मेरी दृष्टि में इस आंदोलन का प्रधान कारण एक नारी का अपने देश की प्रधान सत्ताधारिणी होना है। यद्यपि इंदिरा जी बार बार यह चुकी हैं कि वे स्त्री या पुरुष के ढंग से नहीं, 'पर्सन' के ढंग से सोचती हैं यानी देश का सर्वोच्च पद ढा [illegible] में परे होता है। फिर भी दोनों पक्षों में—सनातनी लोग सह नहीं कर सकते कि एक नारी पुरुष में इतनी उच्चता क्या पा गई।

दूसरा प्रधान कारण वोट की राजनीति में है—अल्पसंख्यकों के मत [illegible] मिलते हैं—मुसलमानों के, आदिवासियों के अनुसूचित जातियों के। पर ही [illegible] दुनिया भी अब अधिक जागृत होने लगी है—अपने अधिकारों के बारे में। रेडियो टी० वी०, सिनेमा (डाक्यूमेंटरी) आदि प्रचार माध्यमों अखबारों के गांव-गांव तक प्रसार स्त्री-वर्ग में बढ़ती हुई साक्षरता के कारण राजनीतिक चेतना भी बढ़ती जा रही है। फलतः नारी मुक्ति आंदोलन, नारी संगठनों की सक्रियता आदि बातें बड़े शहरों से कस्बों और छोटे शहरों तक फैलती चली गई है। इन सबका असर है कि नारी-शोषण और नारी सुरक्षा का प्रश्न बहुत अर्थपूर्ण हो उठा है। एक बात को बार-बार कहने में [illegible] पड़ता ही है।

२ वर्ग संघर्ष या मार्क्सवादी नजरिया हर चीज को अपने चश्मे से देखता है। हां, समाज में गरीबी है विषमता है, इसीलिए मजबूरी में कई स्त्रियां बहुत सा ऐसा काम करती है जो उनकी अनिच्छा से होता है। पापी पेट में आगे पाप पुण्य के विचार नही ठहरते—सारे समाजवादी, साम्यवादी या मानते हैं। इससे ठीक उलटे, पेट से ऊपर या अलग कोई 'मूल्य' होते हैं जिनके लिए मनुष्य आत्म-बलिदान भी करता है ऐसा मानने वाले लोग इस देश में हैं। हिंदू मर जाएगा, गो मांस नही खाएगा। या चित्तौड का 'जौहर'। या गांधी ने 'हरिजन' में आष्टी, चिमूर में ब्रिटिश सोल्जरों द्वारा भारतीय स्त्रियों पर अत्याचार के समय कहा 'बलात्कार से पहले स्त्री आत्महत्या कर ले'—यह अहिंसक समाधान उन्होंने सुझाया। सारे गांधीवादी हिंदुत्व निष्ठ पक्ष या मानते हैं।

आजकल हर बौद्धिक बात को पलायन कह देने का फैशन है। हम लोग यह परिचर्चा कर रहे हैं, आप पुस्तक तैयार कर रही हैं। क्या यह पलायन है?

आपके प्रश्न मे ध्वनि है कि हम अपने देश मे 'आख मूदकर तमाम स्थितियां ले आए है और उनसे उपजा पूरा परिवेश उत्तरदायी है। मैं आपसे अंशत सहमत हू। हमने आधुनिकीकरण के नाम पर पश्चिम की अंधी नकल उतारी है। पूरे पश्चिमी भी नहीं बन सके, उसका यह परिणाम है।

३ आपने सारी समस्या की जड इस प्रश्न मे पकडी है। टकराहट भारतीय और पश्चिमी दृष्टि की ही है। 'काम' या यौन (सेक्स) के प्रति वात्स्यायन ने जब 'कामसूत्र' लिखा था या हमारे साहित्य में कालिदास ने 'कुमार संभव' या राधा कृष्ण के नाम पर उत्तान शृंगार पद लिखे गए नाचे खेले गए—तब तक भारतीय दृष्टि काम के प्रति काफी खुली थी। यदि कोई स्त्री गलती करती भी थी तो उसके प्रति करुणा अधिक थी क्रोध कम था। आजकल अरब देशों मे 'डेथ आफ ए प्रिंसेस' नामक डाक्यूमेंटरी लंदन टी० वी० पर दिखाई जाने से कैसी क्रोध की लहर उठ खडी हुई है? सीता को निष्कासन अहल्या को शाप या तत्सम घटनाएं नारी को लेकर पुराणेतिहासिक अनेक हैं—पर ऐसी भी गणिकाएं देवदासियां, अंबपालियां और नर्तांगनाएं हैं जिनके उदात्त चरित्र को मान्यता दी गई है।

सारी समस्या मुस्लिम आक्रमणों के बाद पर्दा प्रथा और एक दूसरे प्रकार के पुरुष प्रधान सांस्कृतिक मूल्य संरचना के समाज से आमना सामना होने पर पैदा हुई जो और भी तीव्र बनी ईसाई ब्रिटिश राजसत्ता के १९वी सदी में जडें जमाने पर। हमने इन बाहर से आए समाज विचारों को ज्यों का त्यों अपनाना चाहा, अन्यथा काम और यौन संबंधी भारतीय एक विचार नहीं रहा—जाति जाति और प्रदेश प्रदेश वह भिन्न होता चला गया। केरल के मातसत्ता समाज के स्त्री पुरुष, नागालैंड के आदिवासियों के संबंध और राजस्थान व हरियाणा के स्त्री पुरुष संबंध एक से नही है फिर हम भारतीय दृष्टि किस को कहें? उत्तर प्रदेश और पंजाब पडोसी हैं हिमाचल प्रदेश और कश्मीर पडोसी हैं मैसूर और महाराष्ट्र पडोसी हैं आसाम और बंगाल पडोसी हैं—और वहां भी स्त्री पुरुष संबंधों की सामाजिक मान्यताओं के बारे में सहिष्णुता असहिष्णुता के स्तर अलग अलग हैं। ऋषि दयानंद और गांधी जी ने ब्रह्मचर्य पर बल देकर, विक्टोरिया रानी

पूरक माना जाना चाहिए परस्पर विरोधी नहीं। हमारे यहा तो 'अर्धनारीश्वर' का आदर्श था। विष्णु मोहिनी बन थे।

४ आपका अंतिम और चौथा प्रश्न है, कि नारी स्वय कितनी दोषी है ? फैशन-परस्ती का रोग नारियो म है ही। मुक्त यौनाचार की ललक केवल पुरुष म ही होती है, ऐसा भी नही है। पर स्त्री मे मातत्व की सभावना होती है। अत यह प्रकृति और स्वभाव स ही आत्म रक्षात्मिका अधिक रहती है। उसका परिणाम पुरुष अधिक उद्दत बना है। स्त्री सगठन चाहे तो इस दिशा म बहुत कुछ कर सकते है।

देश के नेताओ को तो अपनी कुर्सी सभालने से ही फुर्सत नहा है। वे हमारे सुझाव क्या पढने या मानने लगे ! चितक वग देश म अत्यल्प है—इसीलिए हम पशुवत अधिक होते जा रहे है। 'चिंता' होती तो यह समस्या इस तरह उभरकर हमारे सामने नहीं आती। अभी तो ऐसा लगता है जसे देश मरभुक्खो का देश है, जो पैसे के लिए कुछ भी करने को तयार हैं और पेट भरते ही उनकी दूसरी 'चिंता' (?) सक्स हो जाती है। बाकी और दिमागी बातों को तो मानो लकवा मार गया है। आदमी वहशी बनता जा रहा है। उसकी पाशवी प्रवत्तियो की आग मे हमारे लेखक, फिल्मकार, रेडियो, टी० वी० के लोग—सब अपनी-अपनी ओर से इधन डाल रहे हैं।

ऐस समय इस परिचर्चा की प्रश्न करने वाली या उसके उत्तर देने वाल हम जसे इक्का दुक्का लोगो के दो बूद पानी से क्या होना है ! आग को रोकने के लिए चिनगारी को रोकना चाहिए, उस हवा' को रोकना चाहिए, जो उस दहकाती है।

यौन-शुचिता के भूत से मुक्ति सही चिंतन द्वारा ही

श्री विष्णु प्रभाकर (वरिष्ठ लेखक, कथाकार, नाटककार)

१ नाना रूप भ्रष्टाचार के बावजूद वतमान युग प्रगति और समानता के लिए छटपटाहट का युग है। औद्योगिक क्राति के कारण मानसिकता बदली हो या किसी और कारण से, सत्य यही है। नारी मुक्ति आदोलन उसी छटपटाहट का अग है।

२ निश्चय ही यौन शोषण और यौन हिंसा के प्रश्न को वग-सघर्ष या ऐसे ही किसी एक सघर्ष से जोडकर देखना सही नहीं होगा। इस पर समग्र दृष्टि से विचार करना होगा। पूरा परिवेश इसके लिए उत्तरदायी है। वस्तुत समग्र दृष्टि के अभाव मे बहुत सी समस्याए सुलझने के स्थान पर उलझ जाती हैं। पुरुष प्रधान समाज म चूकि शोषक और चिंतक दोनो पुरुष ही रहा है इसीलिए एकागी दृष्टि पनपती रही।

३ काम और यौन के प्रति भारतीय दृष्टिकोण सदा बदलता रहा है। प्रारभ म आय बहुत उदार और सतुलित विचारो के थ, परन्तु बाद मे भारतीय मानस कई कारणों स नारिया के प्रति अनुदार होता चला गया। पुरुष के सभी पाप क्षम्य थे पर नारी से आशा की जाती रही यौन शुचिता की और सतीत्व की। सतीत्व की इस कठोर होती गई धारणा ने नारीत्व का ही नष्ट कर दिया। यह सब पुरुष प्रधान समाज के कारण था, जो एक ओर तो नारी को भोग्या मानता रहा, दूसरी ओर उससे आशा करता

रहा सतीत्व भी, और इन दो परस्पर विरोधी धारणा के बीच नारीत्व कराहता रहा। औद्योगिक उपभोक्ता संस्कृति के कारण हो या पश्चिमी प्रभाव के कारण, नारी आज पूर्ण मुक्ति चाहती है। पूर्णता की ओर बढ़ने की इस प्रक्रिया में संघर्ष के कारण उच्छृंखलता स्वाभाविक है। पर यह उसका स्थायी भाव नहीं है। इसलिए कठमुल्लापन हमारी सहायता नहीं कर सकता। हम संतुलित और समग्र दृष्टिकोण अपनाना होगा। हर युग और हर समाज में जीवन के मूल्य बदलते आए हैं। यही गतिमयता जीवन की शर्त है। ठहराव तो मृत्यु है।

४ नारी समाज से बाहर नहीं है। नारी पर सबसे अधिक अत्याचार नारी ही करती है। बेशक यह सब यह संस्कारों के सम्मोहन के कारण करती है। उसी सम्मोहन से उसे मुक्ति पानी है। लेकिन मुक्ति का अर्थ हरजाईपन नहीं, स्वयं जीने का अधिकार पाना है। यह अधिकार अधिक दायित्व की अपेक्षा करता है। यानी मुक्ति का अर्थ दायित्वपूर्ण जीवन ही है। समग्र दृष्टि का अर्थ है कि एक दोष के कारण समग्र मनुष्यत्व नष्ट नहीं हो जाता और यह भी कि किसी दोष के पीछे कोई एक व्यक्ति या एक कारण नहीं होता। वह सापेक्ष होता है। चिंतक वर्ग ही इस बात को नहीं समझेगा तो और कौन समझेगा! इसी दृष्टिकोण के अभाव में यौन शुचिता कितनी भयानक हो उठी है। बलात्कार की न जाने कितनी घटनाएं दिखाई जाती हैं। कितनी वेश्याएं प्रतिदिन जन्म लेती हैं। यौन-शुचिता के भूत से मुक्ति चिंतक का सही चिंतन ही दिला सकता है। हम समझेंगे तो नेता भी समझेंगे। आज के भ्रष्ट नेता हमारी भ्रष्टता का ही प्रभाव हैं।

नर-नारी समता की सतत जागरूक कोशिश ही सही मानसिकता

श्री रघुवीर सहाय (प्रतिष्ठित कवि, कथाकार, पत्रकार)

१ आंदोलन के रूप में उठान के पीछे कारण हैं

दलित वर्गों की सहानुभूति पर सत्तासीन होने की मजबूरी औरतों के प्रदर्शन आयोजित कराती है दुर्भाग्य से इन आंदोलनों के पीछे सिवाय शिकायत उठाने और अपने को शोषित कहाने के और कोई वैचारिक शक्ति नहीं होती। जिस दिन स्त्रियों के आंदोलन में यह वैचारिक शक्ति होगी, उस दिन वे केवल नारी शोषण का आंदोलन नहीं रह जाएंगे।

२ यौन शोषण और यौन हिंसा का प्रश्न वर्ग संघर्ष से परे कोई प्रश्न नहीं हो सकता। यौन अत्याचार आज की राजनीति में शक्ति का प्रतीक बन गया है। यह केवल वासना प्रेरित घटना नहीं है।

३ काम और यौन के प्रति कोई भारतीय और विदेशी दृष्टि अलग अलग होती है ऐसा मैं नहीं मानता। भारतीय मानसिकता नाम की कोई अलग चीज नहीं हो सकती। नर नारी समता की सतत जागरूक कोशिश ही एकमात्र सही मानसिकता है।

४ स्वयं नारी कितनी दोषी है इसका निर्णय करने बैठना भी मुझे गलत मालूम पड़ता है। नारी का जिस प्रकार से शोषण किया गया है, उसे देखते हुए नारी का अपने

शोषण के चक्रमे फसने का आकर्षण हो तो वह नारी का दोष नही है। पुरुष भी इसतरह के गुलाम बनाए जाते है। उस चक्र म फसकर उन्हे गुलामी सुखद मालूम पडने लगती है।

पहले अपनी पहचान प्राप्त करे

डा० लक्ष्मीनारायण लाल (लेखक, चिंतक, सुप्रसिद्ध नाटककार)

जी हा यह प्रश्न शाश्वत ही है। शोषण का प्रश्न निबलता और निर्भरता के साथ जुडा है। हमेशा से निबल का शोषण होता आया है। नारी शोषण को भी इसी सदभ मे देखा जाना चाहिए। **पुरुष के सामने नारी के दो मुख्य रूप रहे हैं—*मा या* भोग्या। मा भी बच्चे से दूर हटे तो बच्चा रोने लगता है। इसी तरह भोग्या पर प्रतिबध की प्रतिक्रिया होती है** हा आपका यह कहना ठीक है कि पहले प्रतिबध ज्यादा थे। लेकिन तब सामाजिक मर्यादाओ का व्यक्तिगत इच्छाओ कामनाओं पर नियत्रण था। परिवेश से, वश परपरा से और बचपन के पालन पोषण से यह नियन्त्रण बाहरी दबाव के रूप मे कम, आत्म अनुशासन के रूप मे अधिक था। भीतर का यह अनुशासन टूटने से भीतर खोखलापन बढा है और दौड बाहर की ओर अधिक हो गई है। *अहम की तप्ति के लिए यह तरीका आसान और 'शाट कट' का तरीका है और 'शाट कट' से प्राप्ति के* परिणाम सामने हैं—बाहर उत्पीडन और भीतर अपराध चेतना। लेकिन आदोलन वास्तविक समाधान नही है।

समस्या को वग-सघष के साथ जोडना स्पष्ट पलायन है, समस्या की विराटता से कतराना है। स्त्री पुरुष दो भाव है, दो धाराए हैं। परस्पर पूरक हैं, अलग वग नहीं। वग सघष के रूप मे आजकल हर समस्या का राजनीतीकरण कर दिया जाता है। यहा भी वही राजनीतीकरण और सरलीकरण की प्रवत्ति दिखाई देती है। मैं आपकी इस *बात से पूरी तरह सहमत हू कि ये स्थितिया अचानक नही पैदा हुई न ही मात्र किसी* वग सघष का परिणाम है। केवल निबल निभर के शोषण वाला सामाजिक सत्य ही शोषित वर्गो पर लागू होता है। इसलिए वहा शोषण की मार भी आभिजात्य वर्गो की अपेक्षा अधिक और गहरी होती है। अत इस पर भी जरूर विचार होना चाहिए। लेकिन वह आशिक समस्या पर विचार ही होगा। पूरी समस्या को तो पूरे परिवेश के साथ जोडकर ही देखना होगा। हमारे राष्ट्रीय चरित्र म वतमान गिरावट का ही अग है यह परिणाम उससे अलग नही। आदोलन के रूप मे आवाज उठाने या लडने की स्थिति मे *आने के पीछे दोनो पक्षो म व्यक्तिगत और सामाजिक स्तर पर व्यक्तित्व की कमी है,* ऐसा मानना चाहिए।

काम और यौन के प्रति भारतीय दष्टि तो मेरा विशेष विषय रहा है। इसलिए आपके पास स्थान की कमी हो तो भी मुझे आवटित स्थान से कुछ अधिक स्थान मैं लेना चाहूगा। यद्यपि मेरी कोशिश रहेगी, इसे सक्षेप मे ही समझाने की। भारतीय दृष्टि मे **'काम' का व्यापक अथ है वह यौन तक सीमित नहीं। यौन उसका एक अग मात्र है। और भारतीय सस्कृति मे उसे भी बहिष्कृत नहीं, परिष्कृत किया गया है। काम हमारे**

खंडित सत्य को ही सत्य मान अपने ढंग से उसकी पुष्टि चाहता है।

वर्तमान सदी शोषण के खिलाफ उठी हुई सदी है। इसीलिए संघर्ष है। असंतोष और अशांति है। पुराने मूल्यों को तोड़ने की प्रवृत्ति है, क्योंकि तोड़ना आसान है, नए मूल्य गढ़ना कठिन। वह काम विरले ही करते हैं। सारी दुनिया में यह असंतोष समान है, पश्चिम में कुछ अधिक तीव्र हो। लेकिन वहां जो लोग करते हैं, उसे छिपाते नहीं। उसका 'जस्टीफिकेशन' नहीं देते। हम मन से स्वीकारते नहीं, इसलिए रौ में बहते हुए जो करते हैं उसे छिपाते हैं। इसी से यौन प्रश्न पर हम पहले की तरह सहज नहीं रहे। भीतर में कहीं अपराध भाव में घिर आए हैं। एक अनिश्चितता एक भ्रम के शिकार हो चौराहे पर खड़े हैं। कहां जाना है क्या करना है, नहीं जानते। नई पीढ़ी को घर से, स्कूल से, समाज से, कहीं से निर्देश नहीं। चारों ओर से विखंडित परिवेश से उसे जिम्मेदारी से भागने 'शार्ट कट' का रास्ता अपनाने की ओर प्रेरित कर रहा है।

समाधान ? व्यक्तिगत धरातल पर वर्तमान स्थितियों को अपरिहार्य न मान, मैं उन्हें अस्वीकार करता हूं और लेखक रूप में अपनी जगह यह लड़ाई लड़ रहा हूं। कोई बीच का सुधारवादी रास्ता नहीं सूझा सकता। दो ही रास्ते हैं व्यक्ति के धरातल पर लड़ाई और व्यवस्था के खिलाफ लड़ाई। स्वयं में शक्ति, तेज पैदा करें या टूटें। प्रकृति भी तो यही करती है। या बनाती है या तोड़ती है। हम पहले अपनी पहचान जगानी है, फिर विश्व व्यवस्था से लड़ना है और उसे बताना है कि सही स्थिति यह है।

आचार्य रजनीश वाले समाधान से भी मेरी पूरी असहमति है। वहां भारतीय दृष्टि नहीं, उसका व्यवसायीकरण है। और वह सब मात्र पश्चिमी लोगों को आकर्षित करने के लिए है। **बुनियादी परिवर्तन नीचे से सामाजिक शिक्षण द्वारा और ऊपर से नेताओं के चारित्रिक परिष्कार द्वारा ही लाया जा सकेगा। पहला काम मां और शिक्षक करें, दूसरा नेता वर्ग, तो बीच का सारा कार्य सामाजिक स्तर पर सुधारक और विशेषज्ञ मिलकर संभाल लेंगे।** मुख्य बदलाव प्रेरणा और निर्देशन पर ही निर्भर करता है।

रही स्त्री की बात। स्त्री पृथ्वी है आधार है। जड़ में से रस न दे तो पौधा सूख जाएगा। पुरुष आधार में से रस लेकर अभिव्यक्त है तो उसे आभारी होना चाहिए। लेकिन वह आधार छोड़, कृतज्ञता छोड़, केवल पौधा होना चाहता है। इसलिए अहं-वादी है। स्त्री इस अहम की बराबरी छोड़ उसके माध्यम (अपने ही पौधे) में अभिव्यक्त हो तो समाज में ठीक व्यवस्था और शांति बनी रहती है। आपको 'माध्यम से अभि-व्यक्त होने की बात नागवार लग सकती है, लेकिन यह एक सच्चाई है स्त्री की नियति है। वह पुरुष के स्तर तक उतरेगी तो अपने स्थान से नीचे उतरेगी। इसी अहम और स्तरहीनता की होड़ से वह भी आज भीतर से खोखली हो गई है, तभी तो प्रदर्शनप्रिय है और सामग्री के रूप में पुरुष के सम्मुख प्रस्तुत है।

राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर समस्या का हल खोजने के लिए प्रचार-माध्यमों और नारी संगठनों की भूमिका भी महत्वपूर्ण हो सकती है लेकिन उनका स्थान दूसरा है। पहले तो व्यक्ति परिवार, मुहल्ला नगर और देश के स्तर पर सामाजिक

शिक्षण ही चाहिए। चरित्र निर्माण और चरित्र स्खलन का प्रश्न सीधा इस स्तर पर जुड़ा है तो आंदोलन में पहले इसी दिशा मे सोचना ठीक होगा।

नारी के दुखो का मूल पुरुष ?

श्रीमती कमला रत्नम (विदुषी लेखिका)

दहेज के लिए स्त्री को सताना, सिनेमा पोस्टरो पर नारी शरीर का नग्न प्रदर्शन, अशिक्षा कुशिक्षा, पति और घर के पुरुषों के शासन में उसकी अधीनता, आर्थिक स्वत्वहीनता पशुवत संतान प्रजनन, जाने बेजान कभी अपरिचित पुरुष की कामलिप्सा का शिकार होना, आत्मा के हनन और व्यक्तित्व के रौंदे जाने के बाद भी जीवित रहने को विवश होना आदि सहस्रो प्रश्न स्त्री के जीवन को लेकर आज हमारे सामने मुह बाये खड़े हैं। इनका उत्तर हम कहा खोजें ? वेदो मे, स्मृतियो म, इस देश के लबे हजारो वर्ष पुराने इतिहास म, या स्वय अपने मन के भीतर ? सक्षेप म सही उत्तर एक ही है नारी के दुखो का मूल तीन चौथाई पुरुष के स्वभाव मे, तथा एक चौथाई स्वय उसकी अपनी कमजोरी और सकल्पहीनता के भीतर छिपा है। पुरुष ने अपने प्रकृति प्रदत्त शरीर बल तथा गर्भ धारण करने की विवशता से विमुक्ति, इन दो मूलभूत विशेषताओ मे अपने को मनुष्य जाति के अर्धभाग 'स्त्री' का स्वामी बनाया है। धीरे धीरे जैसे स्वार्थ और स्वत्व की भावना बढ़ी, पुरुष की पकड़ स्त्री पर और अधिक गहरी और कड़ी होती गई। पुरुष जानता था कि आदर्श गृहस्थ जीवन मे स्त्री स्वामिनी ही नही, सम्राज्ञी है।

> सम्राज्ञी श्वशुरे भव, सम्राज्ञी श्वश्रवा भव।
> ननान्दरि सम्राज्ञी भव, सम्राज्ञी अधि देवृषु ॥
>
> —ऋग्वेद १० ८५-४८

इस मंत्र के साथ पिता पुत्री को पति के घर भेजता था। पति सामवेद के इन शब्दो मे उसका स्वागत करता था, "मैं सामवेद हू, तो तुम (मुझसे ऊंची और प्रथम) ऋग्वेद हो। हम दोनो परस्पर प्रिय हो, हमारे मन एक दूसरे के प्रति औदार्य बरतें, हम दोनो साथ साथ सौ वर्ष जीए। और तुम पत्थर की भाति दृढ बनो।"

कई सहस्र वर्ष बीत गए हैं। समय ने बहुत से पलटे खाए हैं। आज बदले हुए परिवेश म अपनी स्वतंत्रता के अपहरण मे स्त्री का जो अपना एक चौथाई योगदान है वह उसके मन की कमजोरी, आलस्य, अकर्मण्यता तथा भौतिक सुख सुविधाओ के आकर्षण के कारण है। यही उसे पत्थर के समान दृढ नही होने देता। ससार मे जो नारियां पत्थर के समान दृढ रही हैं, वे ही मनुष्य योनि मे आने का सुख भोग सकी। उन्होंने राज्य किया, लडाइया लडी, कविता लिखी, पति का प्रेम पाया, संतान का सुख भी देखा और जी चाहा तो स्वय प्रेम भी किया। इतिहास मे ये देवियां आज भी स्मरणीय हैं। कालातर मे गुलामी विदेशी आक्रमण उनसे उत्पन्न मूल्यो के विघटन, अशिक्षा अज्ञान रूढियो और अंधविश्वासो के कारण स्त्री की स्थिति लगातार गिरती गई, और वह पुरुष की भोग्या, दासी मात्र होकर रह गई। स्थिति यहा तक बिगडी कि पुत्री स्वय अपनी जन्मदात्री माता द्वारा भी हीन मानी जाने लगी और बचपन म ही उसके मन म कूट-कूटकर यह भावना

भर दी गई कि उसका स्थान लडका से नीचा है। शैशव के भेदभाव से लडकी का मनोबल मारा जाता है और वह बडी होकर अपनी सभावनाओ की कल्पना भी नही कर सकती, उन्हे साकार करना तो दूर रहा।

तो फिर समाज मे स्त्री की समस्याओ का समाधान क्या है? प्रकृति प्रदत्त कामेच्छा, एक-दूसरे की सगति सहवास का सुख ही नर नारी को परस्पर आकर्षित करता है। यौन ससग काम और उसके विविध आयाम सतान का आगमन यही स्त्री पुरुष की अतरगता के मौलिक स्रोत हैं। यदि काम की दुदम शक्ति को सतुलित नियत्रित किया जा सके तो बहुत सी विपमताओ का स्वत समाधान हो सकता है। सृष्टि की सजक प्रवत्ति के रूप मे काम मानवीय मन और शरीर मे व्याप्त है। यह इतना प्रबल है कि इसके बल पर मनुष्य चाहे तो आकाशकुसुम तोड ले, अथवा नरक के द्वार पर पडा रहे। सुखी जीवन की सरचना काम भावना के अनुशासित एव सोद्देश्य समाज हितकारी सयोजन से ही हो सकती है। काम भावना का कामुकता के रूप मे स्खलन, अथवा उसकी अति या विकृति समाज को असतुलित बना देती है। स्त्री की स्थिति ऐसे समाज मे कुछ अधिक दयनीय हो जाती है।

काम के प्रति विशुद्ध भारतीय दष्टि सदा से ही बहुत स्वस्थ और उदार रही है। काम ही सृष्टि का मूल है। आरभ म व्यक्ति अकेला था, उसने साथी की कामना की। अद्वैत के आनद के लिए द्वैत की शरण लेनी पडी। हमारे धार्मिक कार्यों मदिरो, देवी देवताओ मे कामयुक्त युग्मो को स्थान दिया गया। काम के रहस्य को समझने के लिए मदिर बनाए गए, मिथुन मूर्तिया उत्कीण की गईं ग्रथ लिखे गए, मदनोत्सवो, वसतोत्सवो का आयोजन हुआ। काम को ईश्वर प्राप्ति का साधन माना गया। उसी काम के दिग्भ्रमित हो जाने के कारण जीवन मे क्या क्या दुख भोगने पडते हैं इसका सकेत भी विस्तार से हमारे इतिहास पुराण ग्रथो मे किया गया। काम हमारे लिए अत्यत मूल्यवान और पवित्र भावना थी। परतु कालातर मे इस्लाम के आक्रमण तथा अग्रेजो के साथ आई ईसाई विचारधारा ने काम को घृणित, पापमय और गिराने वाला घोषित किया। गुलामी की स्थिति मे पुरुष तो शोषित था ही, उस शोषित के द्वारा पुन शोषित होकर स्त्री की स्थिति और भी दयनीय हो गई।

आज का युग विशेष रूप से पैसे का युग है। अत आज स्त्री की आर्थिक और बौद्धिक स्वतत्रता जिससे वह पैसे का उपाजन और उसका सरक्षण कर सके, ही उसकी सामाजिक और राजनीतिक (कानूनी) स्वतत्रता का आधार स्तभ हो सकती है। इसके लिए देश के नेताओ चितको लेखको और स्त्री सगठनो को मिलकर स्थिति मे परिवतन लाने की ओर ध्यान देना होगा। माता लडका लडकी म भेद न करे पढने लिखने, घूमने, धनोपाजन के समान अवसर हो, छोटी आयु मे विवाह न हो, विवाह लडकी की स्वेच्छा से दी गई सहमति स हो, दहज का प्रश्न न उठे पैतक सपत्ति मे लडकी का भी समान अधिकार हो। कानून और समाज दोनो स्त्री की सुरक्षा के लिए जागरूक रहे। स्त्री स्वय भी अपने को पराधीन न होने दे। सिनेमा नाटक पोस्टर इश्तहार किसी भी रूप मे अपनी नग्नता को व्यवसाय का साधन न बनाए। पुरुष के दुर्व्यवहार के प्रति उसका मुकाबला

नारी अत्याचार की घटना और प्रश्न नहीं दम तोड़ती

डॉ० शशिप्रभा शास्त्री (सुप्रसिद्ध कथाकार)

विभिन्न रूपों में नारी शोषण और सुरक्षा का प्रश्न एक शाश्वत तथा व्यापक प्रश्न है—नारी सदा से पुरुषों की वासना और आततायीपन का शिकार होती रही है। पर चिन्ता की बात है कि आज के जमाने में इसका रूप अधिक भयंकर और वीभत्स हो उठा है। पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव, नैतिकता के बदलते हुए मापदंड, उद्योगीकरण का तेजी से विकास इत्यादि कारण इस परिवर्तित स्थिति के लिए उत्तरदायी हैं। इस प्रश्न ने जो आज एक आंदोलन का रूप ले लिया है, इसका मूल कारण है—स्थिति की भयंकरता, दुघटनाओं का आधिक्य, शिक्षा का प्रचार प्रसार तथा फलस्वरूप अपने अधिकारों के प्रति सजग किए गए अत्याचारों के प्रति नारी का अत्यधिक सजग हो जाना। इस नारी जागरूकता ने एक विशेष प्रकार की मानसिकता और संवेदनशीलता को जन्म दिया है, जिसके कारण नारी स्वयं को अब उस प्रकार से ध्वस्त तथा त्रस्त होते हुए नहीं देखना चाहती।

जागरूकता की इस चेतना का दायरा भी आज विस्तृत होता जा रहा है—शिक्षित तथा अशिक्षित संपूर्ण नारी-समुदाय इससे प्रभावित हुआ है। नारी संगठन, बुद्धिजीवियों का हस्तक्षेप, प्रचार माध्यमों का उपयोग इत्यादि नारी जागरण की इस सफल परिणति के रूप में ही अस्तित्व में आए हैं।

यौन शोषण अथवा यौन हिंसा का प्रश्न भी एक वर्ग विशेष तक सीमित नहीं है। समाचार-पत्रों में आए दिन के समाचार इस तथ्य की पुष्टि करते हैं कि मध्य तथा उच्चवर्गीय नारी भी आज अपनी सुरक्षा के प्रति आश्वस्त नहीं हैं। उपर्युक्त मूलभूत कारणों के अतिरिक्त नारी की प्रदर्शनकारी वृत्ति भी पुरुष की उद्दाम वासनात्मक प्रवृत्ति को उद्दीप्त करने के लिए उत्तरदायी है। पारिवारिक टूटन, उसका इकाइयों में बट जाना और मानसिक रूप से व्यक्ति का नग्न होते जाना इत्यादि परिस्थितियाँ भी इस वातावरण को जन्म देने में सहायक बनी हैं। बहरहाल स्थिति शोचनीय है, नारी का इस प्रकार का शोषण किस सीमा तक पहुंचेगा—कहना कठिन है।

भारतीय संस्कृति के अनुसार, काम का उपयोग मात्र आनंद प्राप्ति से हट कर आनंदपूर्वक कृत्य से श्रेष्ठ संतान की उपलब्धि माना गया है—जब कि आज इसका लक्ष्य केवल क्षणिक आनंद तथा विलासिता से जुड़ कर रह गया है। पाश्चात्य संस्कृति सभ्यता और साहित्य का प्रभाव, दोहरी नैतिकता, औद्योगिक उपभोक्ता संस्कृति के प्रभाव

अतिरिक्त देश की निधनता भी इसका कारण है।

स्थिति मे सुधार लाने के लिए बुद्धिजीवी चितका तथा देश के नेताओ को समस्या की तह तक जाना होग । नारेबाजी और भाषण मात्र ही पर्याप्त नही हैं। अभीमिप्त लक्ष्य प्राप्ति हेतु चलचित्रो विज्ञापनो तथा पत्र पत्रिकाओ की सामग्री को नयी दिशा मे एक रोचक ढग से प्रस्तुत किया जाना, समस्या उन्मूलन के लिए, मेरे विचार म एक सशक्त हल हो सकता है। जन मानस को आदोलित करने म ये माध्यम एक महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकते हैं, क्योकि सपूर्ण जन मानस अभी भी पूर्णरूपण आदोलित नही हो पाया है। पर यह सच है कि सपूर्ण समाज इस प्रश्न की विभीषिका को महसूस कर रहा है।

इन सबके अतिरिक्त सामाजिक सगठनो व सस्थाना का निर्माण, प्रशासन की ओर से महिला पुलिस की बढोतरी तथा इस प्रकार के अपराधा के लिए कठोर दड व्यवस्था लागू किया जाना भी अत्यत आवश्यक है।

सामती दृष्टिकोण पर पश्चिमी सभ्यता और सिनेमा का विकृत ग्लैमर

श्रीमती मृणाल पांडे (बहुचर्चित युवा कथाकार)

१ नारी शोषण और सुरक्षा के प्रश्न ऊपरी तौर से शाश्वत प्रतीत होते हैं पर दरअसल बात इतनी सरल नही है। पहले स्त्री का शोषित या असुरक्षित होना एक सहज तथा अकाटय स्थिति के रूप मे लिया जाता था। मनु से लेकर ठीक राजा राममोहन राय तक—यानी उसको अपने शोषण से सुरक्षा के लिए हर समाज सुधारक पहले से ही अन्याश्रित परमुखापेक्षी ममझता था। गत दो-तीन दशको म हमारे यहा इस स्थिति के सत्य को चुनौती दी गई है कि नारी प्रकृत्या, शोषण या असुरक्षा की स्वाभाविक पात्र नही है, बल्कि उसे सामाजिक व्यवस्था ऐसा बनाती आई है। इस के लिए मूल रूप से स्त्रियो मे शिक्षा का प्रसार उत्तरदायी है जिसने स्त्री को काफी हद तक आर्थिक और इसी स राजनीतिक व सामाजिक रूप स अपना रोल स्वय चुनन का मौका पहली बार दिया है। प्रचार माध्यमा से उसे बडी सहायता मिली है। उदाहरणा र्थ 'मथुरा बलात्कार काड' को लेकर उठाए गए मुद्दो का ही फल है कि आज बलात्कार सबधी कानून की फिर पड-ताल कर उसे स्त्रियो के प्रति अधिक सहानुभूतिपूर्ण बनाया जा रहा है। यह एक बहुत अच्छी शुरुआत है।

२ यह सच है कि यौन हिंसा एक विकृत परिवेश की ही उपज होती है पर हमारे यहा चूकि प्राय स्त्री पुरुष की निजी सपत्ति क रूप म देखी जाती है तो पुरुष की मूछ नीची करने की नीयत से पिपरा व बेलछी जैसे काड होते है जहा वग सघप की मार बेचारी औरत पर सीधे पडती है। हरिजन स्त्रियो पर खास तौर से ऐसे सामूहिक बलात्कार हमारे यहा किसी सहसा उठे उद्दाम आवेग से नही एक सुनियोजित षडयत्र व बदले की भावना से उपजते है। हा पश्चिम मे जरूर बलात्कार एक निजी आवेग का प्रतिफल प्राय होता है।

३ काम और यौन के प्रति विगत म हिंदोस्तानियो का क्या रवया था इसस हम सरोकार नही, क्योकि वह समय वह समाज व्यवस्था अब आमूलचूल बदल चुके हैं। आज हमारे यहा एक सामती दृष्टिकोण पर पश्चिमी यौन पत्रिकाओ और सिनेमा का एक विकृत ग्लमर और चढ़ गया है—पर मामती सस्कारो की जो एक पुरानी धम सापेक्ष नतिकता थी, वह खत्म हो गई है।—इसी से एक ऐसा वक्यूम' उपजा है, जिसमे नगी हिंसा व प्रतिहिंसा सेक्स से आ जुडी है। स्त्री पुरुप सबधा म प्राय कोमल भावनाओ या सामाजिक जिम्मेदारी के लिए कोई जगह नही, उत्तेजना और क्षणजीवी आनद ही सर्वोपरि है। ऊपर से चाहे हम कितने ही कमकाडी बनें, असली बात यही है।

४ स्त्रिया अपन नक्की और स्त्री विरोधी रवैय स अपन पक्ष का कमजार करती हैं, यह मैं मानती हू। पर यहा उन्ह शिक्षित करने तथा वस्तुस्थिति का सही परिचय देन का काम स्त्री सगठना का है। राजनीतिज्ञा या चिनका से नेक सलाह लेने की इच्छा बेवकूफी है। स्त्रिया की दशा अतत स्त्रिया ही सगठित होकर सुधारेंगी।

सतही आदोलन से बात नही बनेगी
श्रीमती सूयबाला (प्रसिद्ध युवा कथाकार)

आज हर चीज को नारेबाजी का रूप द देना एक फैशन सा हो गया है। यही हाल नारी शोषण के विरुद्ध उठनवाली आवाजा का भी है। आदोलन चलाना या आवाज उठाना नावाजिब नहीं, पर सवाल यह है कि इस आदोलन की वैचारिक भूमि कितनी ठोस है? इसके पीछे कितनी लगन या निष्ठा है? वह लगन या निष्ठा मुझे तो कही दिखाई नही देती। लगता है, हम किसी चीज की तह तक जाना ही नहीं चाहत। हम जो भी आदोलन या आवाज उठाते हैं, वह हमारे लिए 'कुछ और' हासिल करने का माध्यम बन जाती है। प्रत्यक्ष नही तो अप्रत्यक्ष। कही महत्त्वाकाक्षा की अति, कही कूटनीति की हद तक स्वार्थपरता। ऐसे माहौल म कोई लगन, कोई निष्ठा जी ही नही सकती।

इस आदोलन के मूल मे सारे वैचारिक धरातल मौजूद हैं—दलित वर्गो की जाग्रत चेतना भी है, बुद्धिजीवियो की पहल भी, नारी सगठना की सक्रियता भी, पर वही सतह पर ही हाथ पाव मार कर कुछ इधर उधर का हासिल कर सतुष्ट हो जाने की प्रवृत्ति हमारा राष्ट्रीय चरित्र बन गई है।

नारी शोषण को वर्ग सघर्ष स जोडना इसी कुत्सित मनोवृत्ति या कूटनीति का ही तो उदाहरण है—समस्या विशेष को अपने स्वार्थी हितो के हिसाब स अलग-अलग फ्रेमा मे फिट करते चले जाने की साजिश। यौन हिंसा भी ऐसा ही एक माध्यम बन गया है।

हमारी मूल भारतीय मानसिकता और दृष्टि बाहरी प्रभावा और सस्कृतिया स इतनी ज्यादा ढक गई है कि उसका मूल रूप खोज पाना भी कभी-कभी मुश्किल हो जाता है। पर काम और यौन के प्रति तो मूल भारतीय दृष्टि की अपनी स्वच्छता और परिपक्वता स्पष्ट रही है। इसे एक स्वस्थ धरातल मिला था—पौराणिक आख्याना से लेकर साहित्य तक म लेकिन आज की हमारी स्वच्छद यौन वृत्ति को हम ज्यादा पश्चिमी ही

यह सकते हैं। यो 'आज' की बात करें तो समूचे विश्व की स्थितिया इतनी तेजी से बदल रही ह और साथ साथ एक दूसरी से प्रभावित भी हो रही हैं कि किसी एक देश की अपनी अलग सस्कृति बचाए रखना असभव है। इस लहर या बहाव को न नकारा जा सकता है न बुद्धिजीवी सोच के माध्यम से बदला जा सकता है। सामाजिक रीतिया-नीतिया की भी एक 'साइकल' सी होती है। यह निरतर धुरी पर घूमती हुई नये से पुराने और पुरान से नये की ओर आती जाती रहती है। चरम बिंदु पर आन के बाद ही यह वापस लौटती है। अत आज की स्थिति चरम परिणति अति स्वच्छदता म ही होनी है। हम आप इस नही रोक सकते, न भारतीय मानसिकता की ओर मोड सकते है। हा, अपवादस्वरूप यह घटित हो सकता है कि कोई राजनीतिक शक्ति जबरजात कानूनी शक्ति का अकुश लगा कर इस नियत्रित कर दे। या इसके प्रतिक्रियास्वरूप यह कहा जा सकता है कि कोई भी वृत्ति दबाव से और भडकती ही है।

नारी को मैं अवश्य दोषी मानती हू, क्योकि वह स्वय अपन दुरुपयोग के लिए एक हद तक जिम्मेदार है। नारी के जिस 'भोग्या' रूप के खिलाफ नारी मुक्ति आदोलन चला, क्या नारी स्वय उसी भोग्या रूप को सबसे ज्यादा अहमियत नहीं देती ? सब के लिए न सही, बहुतो के लिए यह सही है। मेरा तो यही अनुभव है कि इस सदी की नारी फैशन के प्रति जितनी जागरूक हुई है, उतनी अन्य किसी क्षेत्र मे नही। मैं तो कहूगी कि तुलनात्मक दृष्टि से, व्यापक परिप्रेक्ष्य मे स्वातन्त्र्य पूव की नारी आज से ज्यादा जागरूक थी। मेरा मतलब शिक्षित वग से है। आज की शिक्षित नारी सतही उपलब्धि से ही सतुष्ट दिखती है। यह जागरूकता नही, मानसिक अस्वस्थता के लक्षण है। स्त्री सगठनो को भी अपनी इस दासता स मुक्ति पाना आवश्यक है।

नेतृत्व और चितक वग के लिए सुझावो और समाधानो की कमी नही। कूटनीति और स्वाथपरता से अलग-थलग काय की निष्ठा पहली शत है। जान बूझ कर ही अगर वाजिब समाधानो से कतराया जाए तो उसका क्या इलाज है ?

सहिष्णुता की सीमा टूटी, अहसास की प्रक्रिया प्रारभ हुई

डा० कृष्णा अग्निहोत्री (प्राध्यापिका, लेखिका, कथाकार)

१ सदियो से नारी शोषित है और आधुनिक युग इस शोषण की प्रक्रिया से अलग नही। आदोलन, हडतालें, नारे—ये सब आतरिक भावनाओ के प्रतीक नही दिखत। नौकरी करते समय, कला आराधना के समय कही भी तो नारी अपने नारीत्व को पूण सुरक्षित एव सदेहो से विलग नही पाती। अनाथालय, विधवाश्रम, महिला-आश्रमो मे भी सरक्षण के नाम पर उसका क्रय होता है। और अब तो 'कालगर्ल्स' की सख्या घटने की जगह बढती जा रही है। दहेज और शादी की मान्यताआ ने कुमारी लडकियो का शोषण किया है और वे समाज मे न तो शादी के बाद सुरक्षित है न ही शादी के पूव।

इस सब का अहसास होने की प्रक्रिया अब प्रारभ हो चुकी है। कारण केवल मात्र महिलाआ की सहिष्णुता की सीमा टूटना है। बुद्धिजीविया की पहल ने नारिया की

इस पीडा को खुल कर व्यक्त किया है।

२ यौन हिंसा, यौन शोषण समस्त वर्गो का अभिशाप है। यह बात अलग है कि गरीबीवश दलित नारी उसका दुष्परिणाम अधिक भोगती है। लेकिन इस गई गुजरी स्थिति के लिए सारा परिवेश दोषी है।

३ काम और यौन सबधो का भारतीय दृष्टि मे बहुत महत्त्व रहा है। उसकी शिक्षा प्रमुख मानी गई है, परतु हिंसा, बलात्कार, अपहरण को इतिहास म कभी मान्यता नही मिली। मुक्त सबधो मे भी आपसी समझौता को ही अधिक मान्यता प्रदान हुई है।

पाश्चात्य सभ्यता ने एक ओर नारी की औपचारिक प्रतिष्ठा बढाई, दूसरी ओर उसे सस्ता बना दिया। आज नारी न बहन है, न बेटी, न पत्नी, न प्रेयसी —वह केवल भोग्या है। समाधान तो कानूनी व्यवस्था और सामाजिक चेतना के माध्यम से ही ढूढा जा सकता है।

४ अपने आपको यदि स्वय हम सस्ता और असुरक्षित बना लें तो हमारी कौन मदद कर सकता है? विडबना है कि आज के प्रगतिशील युग मे भारतीय नारी ने भी अपना रूप भोग्या का ही बढाया है। यह निश्चय ही हमारे लिए शोचनीय स्थिति है। बढता हुआ जिस्मानी फशन और जिस्म के आधार पर जीवन पा लेने की आकाक्षा ने नारी को शोषित होने मे सहयोग दिया है।

नारी पुरुष पर भोग्या दिख कर हावी नही हो सकती, उसके बराबर मानसिक, सामाजिक उन्नति करके ही वह अपना शोषण समाप्त कर सकती है।

स्त्री सगठनो म यदि एकता हो व सही नारी जागरण की भावना हो तो वे नारी को शोषण मुक्त कर सकते है। देश के नेतवग और चिंतक वग पर ही वातावरण म सुधार लाने की जिम्मेदारी है। पर अपना निर्माण करने की जिम्मेदारी तो हमे स्वय ही लेनी होगी।

वर्तमान प्रयत्न नाकाफी, इसे ज्वलत समस्या मान समूचा समाज आगे आए

श्री पृथ्वीनाथ शास्त्री
(वरिष्ठ लेखक-पत्रकार)

१ नारी शोषण के खिलाफ या नारी व्यक्तित्व एव उसके तन मन की सुरक्षा के लिए जो वतमान प्रयत्न हो रहे हैं, वे सवथा उचित है लेकिन नाकाफी है। कारण जो आपने लिखे हैं, वे तो हैं ही, उनके अतिरिक्त यह भी एक वजह हो सकती है कि एशिया और अफ्रीका म उग्र राष्ट्रीय चेतना के बावजूद जो सामाजिक पिछडापन अभी तक मौजूद है और वास्तविक उन्नति नही हो पा रही, उसके मूल म नारी की दुदशा ही है। स्त्री पुरुष जब तक पूरी तरह हर दिशा म, हर क्षेत्र म कदम मिलाकर नही चलेंगे सारा जीवन लुज पुज ही बना रहेगा।

२ वग सघष से जोडकर इस 'मुल्तवी' किया जा रहा है। इसे तो एकदम वतमान ज्वलत समस्या मानकर समूचे समाज को तुरत आगे आना चाहिए। दुग

यही है कि अभी तक कुछ खास नही हुआ, क्योकि निर्णायक स्थिति मे (उच्चतम स्थिति मे) मौजूद एक महिला अपने को 'नारी' नही 'व्यक्ति' मानने पर ही तुली हुई है, यद्यपि वह मा पहले है, 'राष्ट्र पुरुष' पीछे—यह कितनी बार साबित हो चुका है। उस उकसाना है।

३ काम और यौन को हमारे यहा काम्य, भोग्य, रमणीय, उपास्य, आवश्यक, अनिवार्य जीवन का एक अग सभी कुछ समझा गया है। मेरे खयाल से नयी पीढ़ी को यह पूरी तरह स्पष्ट होना चाहिए—शुरू से ही—प्राइमरी कक्षा से स्नातकोत्तर एव शोध कक्षाओ तक—और यो भी कि केवल 'परम्परा' का ढोल या 'प्रथा' की पीपनी बजाने वाले तो घोर स्वार्थी और प्रमोदी ही हैं। जीवन की साथकता और सरसता को उनके चगुल से मुक्त किए बिना हमारा समाज दिना दिन पिछडता जायगा। नर नारी की समानता—'अनु' की जगह 'सह' का प्रयोग, 'पत्नी' की जगह 'साथी' का प्राधान्य हुए बिना कुछ ठोस काम नही होगा। तुलसीदास ने सीता की वदना इन शब्दो म की थी

उद्भव स्थिति सहार-कारिणी क्लेश-हारिणीम्।
सवश्रेयस्करी सीता नतोह रामवल्लभाम ॥

और शकर पावती की

भवानीशकरो वन्दे श्रद्धा विश्वासरूपिणौ।
याभ्या बिना न पश्यन्ति सिद्धय स्वान्तस्थमीश्वरम ॥

कालीदास ने और भी अधिक गहरी बात कही थी

वागर्थाविव सम्पृक्तौ वागथप्रतिपत्तये।
जगत पितरौ वन्दे पावती परमेश्वरौ ॥

इसी से समझ सकते है कि नर नारी की वास्तविक स्थिति क्या होनी चाहिए। एक व्यावहारिक बात यह है कि ससद और विधानसभाओ मे स्त्रियो का प्रतिशत कम से कम ४५ प्रतिशत होना चाहिए। अभी तो २५ प्रतिशत भी नही है। यह दुर्भाग्य है।

४ महिला-सगठनो को दिन रात काम करना है। नेत वग को स्त्रियो की मर्यादा महिला शब्द की साथकता से व्यवहारत करनी है शब्दो के भुलावे मे नही। वह छलना तो बहुत हो चुकी है। शिक्षित स्त्रियो को अपने काय सक्षम जीवन के ५ वष (कम मे कम) अपनी अशिक्षिता, असमुन्नता, असगठिता बहनो बेटियो के लिए देने चाहिए। चितक वग तो 'वग' वग के दृष्टि से 'नपुसक' है। अधिकाशत शिखडी बना है वह। उसे अपनी केंचुल छोडने को बाध्य करें पहले।

परिशिष्ट २

प्रमुख सस्थाओ की महिला प्रतिनिधियो के बयान

स्त्री-पुरुष सबधो का सहज समाजीकरण हो

श्रीमती सरोजिनी वरदप्पन (अध्यक्षा 'अखिल भारतीय महिला परिषद')

यह ठीक है कि समस्या सदिया पुरानी है। लेकिन इधर यदि आदोलन के रूप म इसे उठाना पडा है, तो इसके पीछे इन सारे कारणो के अलावा मुख्य कारण है आम महिला जागति। और यह परिणाम है स्वतत्रता के दुरुपयोग और जनतत्र की गलत व्याख्या का। सामाजिक अनुशासन और आत्म अनुशासन के बिना किसी भी देश की स्वतत्रता बेमानी है। हमारे यहा सयुक्त परिवार प्रणाली अनुशासन सिखाने की दष्टि से बहुत अच्छी व्यवस्था थी। वह भावना, वह सुरक्षा और उसस प्राप्त वह मर्यादा अब समाप्त हो गई है जो व्यक्ति को आत्म अनुशासन और मानवीय सवदना के साथ जोड उसके चरित्र को ऊचा उठाती थी।

अब हमारा समाज अपने उस सास्कृतिक आधार स हट गया है। चारा आर स निरतर आने वाले प्रभाव हमारा दष्टिकोण बदल रह है। इन प्रभावा मे केवल पश्चिमी प्रभाव की बात करना ठीक नही होगा। विज्ञान, तकनीक, उद्याग की प्रगति क साथ हर कही जीवन मूल्य बदलते हैं। नतिक मूल्या पर व्यक्तिगत स्वाथ और अथ सत्ता के मूल्य हावी हो गए ह। जीवन की जटिलता व्यस्तता और भाग दौड म शायद हमारे पास बैठ कर सोचने, बच्चो पर पूरा ध्यान दने और नयी पीढी को एक निश्चित दिशा दन के लिए समय भी नही रह गया है। उस पर हिंसा और यौन हिंसा बढाने वाली, गलत रास्त पर चलकर जल्दी धनवान बनने या सफलता पाने के 'शाट कट' सिखाने वाली सस्ती फिल्मा और ऐसे ही सस्ते साहित्य ने तो रही सही कसर पूरी कर दी है। यह नहीं कि पटरी साहित्य ही ऐसा हो। यहा व्यावसायिक उद्देश्य से गिरावट आई है, तो तथाकथित अच्छी साहित्यिक कृतियों मे 'न्यू वेव' के नाम पर। इन सारी याता का सम्मिलित परिणाम हैं ये आज की स्थितिया।

'लेकिन आप तो फिल्म सेंसर बोड म भी रही हैं। तो अपन मुह स फिल्मो की इस शिकायत पर आप क्या कहना चाहेगी ?'—मेरे इस प्रश्न के उत्तर म श्रीमती वरदप्पन का कहना था—पहली बात यह कि सेंसर बोड म महिलाओ का प्रतिनिधित्व कितना है ? है, तो सचमुच म अभीष्ट परिवतन लाने की समझ रखने वाली महिलाओ का कितना ? फिर 'सेंसर कोड' से भी हमारे हाथ बधे होते है। जस जो आपत्तिजनक दृश्य पोस्टरो पर दिखाए जाते हैं जरूरी नही कि फिल्म म ठीक वस ही 'सीन' हो। होते भी है तो पोस्टरो पर केवल उन चुने हुए उत्तजक दृश्यो का ही प्रदशन क्या हो, इसे रोकन का अधिकार सेंसर बोड के पास नही है। वह पुलिस के अधिकार क्षेत्र की बात हो जाती है। और इन अधिकारो म समन्वय के अभाव म ही बोड के अधिकार सीमित हो जाते है। फिर बोड द्वारा लगाई पाबदियो का उल्लघन भी कम नही होता। कई बार सेंसर बोड द्वारा निकाले गए कुछ दृश्य राजधानियो और महानगरो मे दिखाई जान वाली फिल्मो मे से तो निकाल दिए जाते है लेकिन जिलो मे, छोटे शहरो म और कस्बो म तब तक दिखाए जाते है, जब तक कि कोई कानूनी कायवाही न हो।

जी हा, मै इससे पूरी तरह सहमत हू कि समस्या को वग सघष के साथ जोडकर देखना उसे आशिक रूप म दखना या छोटा करना है। इसमे सदेह नही कि दलित वग की महिलाए पुरुष की पाशविक वृत्ति की अधिक शिकार होती है, लेकिन वास्तव मे यह न शक्तिशाली आर्थिक वर्गों और अभावग्रस्त दलित वर्गों के बीच वग सघष की बात है न प्रकृति से शक्तिशाली पुरुषो और कमजोर स्त्रियो के बीच। एक ओर इसका कारण समस्या का राजनीतीकरण है (स्वार्थी राजनीतिज्ञ ही इस सघष को बढाने के दोषी है। वे पहले समस्या और सघष को बढाते फैलाते है और फिर उसे भुनाकर उससे वगगत लाभ उठाते है।) दूसरी ओर स्त्री पुरुष सबधो म सहज मत्रीभाव, सहकर्मी भाव जागत करन और उनका सहज समाजीकरण करने के बजाय मात्र उनके विपरीत लगिक आकषण को उभारने बढाने वाली वतमान सामाजिक परिस्थितिया ही इसके लिए दोषी हैं।

धम निरपेक्षता के भी इधर हमने गलत अथ लिए है। इसका अथ धम से कटना नहीं। धम तो एक बुनियादी सामाजिक मूल्य है, एक पूरक शक्ति है, जो मनुष्य को अपने क्तव्य पालन की ओर प्रेरित करती है। धम किसी साप्रदायिकता से नहीं जुडा है, लेकिन हम साप्रदायिकता से तटस्थता की बात करते-करते धम से ही तटस्थ हो चले हैं। तटस्थता नहीं, सभी धर्मों के प्रति समान आदर चाहिए। धम प्रेरित नतिक शिक्षण भी जरूरी है। घर, स्कूल से लेकर समाज के हर स्तर तक। बचपन म घर से सस्कार मिलें, किशोरावस्था म स्कूल से नैतिक शिक्षा और सही ढग की यौन शिक्षा तो सुधार की आशा की जा सकती है। इसके साथ ही माताए बेटे बेटी का समान स्तर पर पालन पोषण करें और भाई को बहन पर हावी न होने दें, तो आगे चलकर पुरुष के आहत अहम से प्रेरित इस समस्या का मनोवैज्ञानिक स्तर पर भी समाधान सभव है।

'आख मूदकर लाई गई स्थितिया' न कहें तो भी इस ओर बढती गई लापरवाही व गर जिम्मेदारी की बात तो माननी ही होगी। जी हा, अखिल भारतीय महिला परिषद' भी इस जिम्मेदारी से मुक्त नही हो सकती। बेशक पहले स्वाधीनता प्राप्ति का एक

मुख्य उद्देश्य, एक समान लक्ष्य हम सब के सामने था। और यह एक बहुत बडा प्रेरक तथ्य था—सबको साथ रखने और आगे बढाने के लिए। फिर भी मानती हू कि पहले थोडी सी सदस्याओ के साथ भी परिषद् राष्ट्रीय स्तर पर प्रभावी चिंतन निर्देशन करती थी। उसके पास समर्पित सदस्याओ की एक अच्छी 'टीम' थी। इसलिए इस चिंतन का सभी क्षेत्रो पर प्रभाव पडता था। समर्पित कार्यकर्ता तैयार करके वैसा एक 'प्रेशर ग्रुप' बनाने की बात मेरे दिमाग म अभी भी उठती है। पर अब लगभग एक लाख सदस्याओ और पाच सौ शाखाओ के साथ परिषद के काय का विकेंद्रीकरण हो चुका है। अब शाखाओ द्वारा सस्थागत प्रवत्तियो पर अधिक जोर है और कारणवश या अनुदान बद होने के भय से विरोधी स्वर दब सा गया है। इस प्रवृत्ति म परिवतन के लिए सोचना चाहिए।—आपके इस सुझाव से भी सहमत हू कि परिषद के अतगत एसा एक 'सेल' या विभाग हो जो राष्ट्रीय व अतर्राष्ट्रीय स्तर पर बडे पैमाने पर होने वाली सामूहिक यौन हिंसा के विरुद्ध आवाज उठाए और लडे। या हम एसे सल के बिना भी समय समय पर यह लडाई लडती हैं। बहुत बार हमारी सगठित, सशक्त आवाज के असर से बदलाव लाए भी जाते हैं। 'मथुरा केस' म सुप्रीम कोट को अपने फैसले पर पुनर्विचार करने की माग उठाने के लिए हमने अपनी कानूनी सलाहकार के साथ अ य तीन सदस्याओ की कमेटी बनाई। इस विषय पर जन जागति लाने के लिए देश भर म फैली अपनी सारी शाखाओ को गोष्ठिया, सेमिनार आदि आयोजित कर नारी के यौन शोषण के विरुद्ध जनमत बनाने का निर्देश दिया। २ मई १६८० को परिषद के तत्वावधान मे विभिन्न सामाजिक सगठनो और राष्ट्रीय अतर्राष्ट्रीय महिला सगठनो के प्रतिनिधियो, वरिष्ठ वकीलो और सबधित विभागो के अधिकारियो को आमत्रित कर एक राष्ट्रीय 'सेमिनार' का आयोजन किया। इसमे स्वीकृत प्रस्तावो के आधार पर वतमान स्थितियो और कानूनो मे आवश्यक बदलाव के लिए शासन को उपयोगी सुझाव भेजे। हमे खुशी है कि उनम से अधिकाश सुझाव विधि आयोग की सिफारिशो म शामिल कर लिए गए ह।

पर एक सुझाव या अनुरोध प्रेस के लिए भी—सामाजिक बुराइयो को प्रकाश म लाना व उनका पर्दाफाश करना अच्छी बात है, जागृति म सहायक है। लेकिन जहा जो कुछ अच्छा काम हो रहा है, सही कदम उठाए जा रहे ह, यह दूसरा उज्ज्वल पक्ष भी सामने लाया जाना चाहिए कि लोगो को प्रेरणा मिले और समाज को एक सतुलन।

सस्थाए और चितक जागृत चेतना को दिशा दे

श्रीमती निर्मला बुच (सयुक्त सचिव शिक्षा व समाज कल्याण मत्रालय)

१ ये सभी कारण तो है। लेकिन मैं समझती हू, मुख्य कारण है, अति क्रम सहन स इन्कार। आम तौर पर स्त्रियो ने यह समझ लिया था कि स्त्री होन क नाते यह सब सहना ही पडेगा। लेकिन अब चेतना इतनी जागत है कि इस तरह की घटनाए चारो ओर बढ जाए तो न केवल सहने स इनकार किया जाय, उसका सगठित विरोध भी किया जाय। यह नही कि 'मथुरा केस' स पहले ऐसी ज्यादतिया नही था। बात सिफ इन्हें सामने लाने की है। निश्चय ही वतमान आदोलन के पीछे बुद्धिजीवियो की पहल और

प्रचार माध्यमो के सहयोग की महत्वपूर्ण भूमिका है। यह मानने म कोई हिचक नही कि पहल अखिल भारतीय नारी सगठनो को ही करनी चाहिए थी। लेकिन यह भी मानना होगा कि व्यापक चेतना जगाने मे और महिला कल्याण कानून बनवाने व उन्हे सशोधित करने म इन सगठनो की सशक्त आवाज की अहम भूमिका है। यह निश्चित है कि स्त्रिया की दशा सुधारने म स्वय स्त्रिया की और स्त्री सगठनो की भूमिका ही निर्णायक रहेगी।

जहा तक हमारे विभाग से सचालित 'नारी दशक' कायक्रम का सबध है, हमारा मुख्य लक्ष्य महिला शिक्षा, स्वास्थ्य आत्मनिभरता के कायक्रमो को बढावा देना है, क्योकि सारी भावी प्रगति के आधार मे ये तीन मूल आवश्यकताए ह। हमने इसके लिए अल्पकालीन व दीघकालीन दो प्रकार की योजनाए अपनाई है। सुरक्षा का प्रश्न शिक्षा स्वास्थ्य व आर्थिक स्वय निभरता तीनो के साथ जुडा है, जिसे दीघकालीन योजनाओ द्वारा ही सफलता से हल किया जा सकता है। लेकिन तब तक प्रतीक्षा भी नही की जा सकती। इसलिए अल्पकालीन योजनाओ म शारीरिक व भौतिक सुरक्षा के लिए महिला होस्टल, रक्षा सदन, 'शाट स्टे होम मैरिज काउसलिंग', शारीरिक प्रशिक्षण केंद्र (जिसम जूडो, कराटे आदि आत्मरक्षा के प्रशिक्षण भी शामिल है), बस स्टडा व रेलवे स्टेशनो पर सूचना केंद्र आदि खोलने और पूव स्थापित सस्थाओ को अनुदान देने की योजना बनाई गई है। सूचनाए प्रसारित करने, जनमत जागृत करने और पुलिस प्रशिक्षण मे महिलाओ की सख्या बढाने का प्रयत्न भी किया जा रहा है।

२ वग सघष को दबाव के हथियार के रूप म इस्तमाल किया जा रहा है। लेकिन निश्चय ही यह अकेला कारण नही है। मूल्य बदले हैं। सीमाए टूटी हैं। परिवार विघटित हुए है। आज की यह स्थिति इन अनेक कारणो की उपज है।

३ हमारे यहा काम और यौन को लेकर कुठाए नही थी। जीवन क्रम के सहज अग के रूप मे उनकी मान्यता थी। आध्यात्मिक अथ म कतव्य और पवित्रता के सम्मिश्रण स स्वाभाविक ही सुखद परिणाम सामने थे, यद्यपि अपवाद प्राचीन काल म भी मिलेंगे। लेकिन मध्यकाल म यौन उच्छ खलता निषेधो की प्रतिक्रिया म और आधुनिक काल म आजादी के बाद आजादी का गलत अथ लिए जान स आई। गतिशीलता बढने, सबधो का दायरा फैलने, अतर्राष्ट्रीय प्रभावो को आत्मसात करने और पश्चिमोन्मुख औद्योगिक उपभोक्ता सस्कृति, जिसने तीव्र गति से सस्कारहीन नवधनिको का एक वग खडा कर दिया है के सम्मिलित प्रभावो परिणामो की देन है, आज की यह स्थिति।

४ जी हा, सबसे पहले तो हम स्त्रियो को ही अथवा आत्मनिरीक्षण करना चाहिए, कि प्रगति-यात्रा म कदम कहा भटक ? इन्ह कस सही दिशा मे प्रेरित किया जाए ? पुराने कानूनो की अपर्याप्तता म समय अनुसार सशोधन कराने व स्थितियो म सुधार लाने का काम महिला सगठनो को ही करना चाहिए। शिक्षण प्रशिक्षण की सस्थाए और पुनर्वास के लिए सुरक्षा-गृह आदि तो सरकार भी चला सकती है। समाज शास्त्री, चितक, लेखक, पत्रकार तथा नारी-सगठन मिलकर वातावरण निर्माण का मुख्य काम हाथ मे लें और सरकार को भी सही कदम उठाने की दिशा दें, तभी कुछ हो सकता है, अन्यथा राजनीतिज्ञ और प्रशासक तो अपने ढग से ही काय करेंगे।

लडके-लडकी मे भेद-भाव कम करने से समस्या हल होगी

श्रीमती सरला गोपालन (सचिव, 'केन्द्रीय समाज कल्याण बोर्ड')

ये सभी कारण मिले जुले हैं। पर मैं समझती हू सन '७५ म महिलाओ के दर्जे पर राष्ट्रीय कमेटी की जो रिपोर्ट आई और महिला वर्ष मे जो चेतना जगाई गई यह अधिकार चेतना, यह सतर्कता यह आदोलन बहुत कुछ उसी का परिणाम है। जहा तक नारी सुरक्षा का प्रश्न है दक्षिण मे स्थितिया उत्तर से बेहतर हैं। बल्कि कुछ वर्ष पूर्व वहा यह कोई प्रश्न ही नहीं था। मेरी दादी गाव की थी जो अपने अनुभव मे कुछ सुरक्षा आदेश दिया करती थी। घरो मे लडकियो को अपनी रक्षा आप करने का पूरा प्रशिक्षण मिलता था और पूरी सुरक्षा भी। इक्का दुक्का मामला को छोड कोई सामूहिक सामाजिक समस्या न थी। पर इधर सिनेमा व कुछ बाहरी प्रभावो से थोडी समस्या उठी है, तो इस पर सोचा भी जाने लगा है।

हा, इन समस्याओ को स्थानीय पृष्ठभूमि मे रखकर देखना ही ठीक होगा। जैसे दहेज प्रथा पहले दक्षिण म कोई समस्या न थी। लेकिन शिक्षा और शिक्षित लडकियो की बेरोजगारी बढने के साथ नौकरीशुदा लडकी की माग बढती गई। इधर एक दशक से उत्तर की देखादेखी दक्षिण म दहेज की माग भी होने लगी है लेकिन जरा शालीन ढग से। फ्रिज, टी० वी०, स्कूटर अभी वहा नही माग जाते केवल यह देखा जाता है कि लडकी की नौकरी कैसी है, या उसके नाम कितना कश जमा है? सवर्ण और दलित वर्ग सघर्ष की समस्या भी वहा नही है। केरल म तो बिल्कुल नही। अनुसूचित जाति के लोग केवल एक प्रतिशत है। पिछडा वर्ग वहा आर्थिक या सास्कृतिक दृष्टि से पिछडा ही होता है। इसलिए वर्गों के दबाव रूप म नारी शोषण की समस्या वहा कम है। रोजगार म लगी होने स लडकियो का महत्व भी ज्यादा है और रोजगार के कारण ही लडकियो को अधिकतर बाहर जाना पडता है तो शोषण की स्थितिया जो हैं जितनी है, यही स पैदा होती हैं। केरल की नर्सों के विदेश या अरब देशो मे जाने के पीछे भी यही रोजगार समस्या व आर्थिक कारण है।

दक्षिणी घरेलू जीवन पर धार्मिक परपराओ का प्रभाव भी ज्यादा है। परिवार म बच्चो को अपने सामाजिक पारिवारिक रीति रिवाज और धार्मिक अनुष्ठानो की पूरी जानकारी व्यवहार मे मिलती है। हर लडकी के पति से विवाह के पूर्व देवता या ईश्वर मे विवाह की रीति भी उन्हे नैतिक रूप म निभाव की जिम्मेदारी सौपती है। आगे स्थितिया कैसी भी आए, उनका सामना करने के लिए इन सस्कारो से शक्ति तो मिलती ही है न!

दक्षिण की फिल्म भी ज्यादा सामाजिक हैं। पारिवारिक कहानिया ही अधिक ली जाती है। फिर भी हम जितनी शिकायत फिल्मो स है उतनी पश्चिमी प्रभाव स नही। पारस्परिक समर्पण और दूसरे क्षेत्रो म नतिकता व ईमानदारी पश्चिमी लोगो म ज्यादा है। हम केवल उनका मुक्त-यौन का पक्ष ही क्यो देखते हैं? हमारे यहा भी अब स्थितिया बदल रही है। प्रेम विवाह को शिक्षित परिवारो मे मान्यता मिलती जा रही है। बच्चे

रम होने से लडके लडकियो के पालन पोषण म भेदभाव भी कम होता जा रहा है। मैं समझती हू, माता पिता और बच्चो मे परस्पर समझ और सामजस्य की भावना बढने पर स्थितिया धीरे धीरे सुधरेंगी।

'केंद्रीय समाज कल्याण बोड' अब अनुदान देने वाली सस्था की ही भूमिका न निभा, महिला प्रगति व परिवार कल्याण के सभी रचनात्मक क्षेत्रो म एक प्रेरक शक्ति के रूप म भी सक्रिय है।

पर सबसे अधिक जिम्मेदारी महिलाओं पर ही है। अपने अपने स्तर पर सभी माताए लडके लडकी के बीच भेदभाव कम करें, हर महिला एक दूसरी पिछडी महिला को सामाजिक रूप से शिक्षित करे और प्रतिद्वंद्विता मे आकर नारी ही नारी की दुश्मन न बने, तो आगे चलकर समस्या का समाधान मिल सकता है। महिला सस्थाओ की अपनी सीमाए हैं। फिर भी इन प्रश्नो को राजनेताओ पर न छोड, राजनीति म न उलझा, महिलाए स्वय ही उठाए और हल करें तो अधिक अच्छा होगा। शोषण की स्थितियो म जरूरी हो तो आदोलन भी करें, पर उसका रूप रचनात्मक हो। कवल नारेबाजी स कुछ नही होगा।

पारिवारिक शिक्षण द्वारा वातावरण निर्माण जरूरी

श्रीमती शकुतला लाल (मुख्य सचिव, भारतीय सामाजिक स्वास्थ्य सघ)

१ आपके पहले प्रश्न के उत्तर म सबसे अधिक श्रेय प्रचार माध्यमो या प्रेस को देना चाहूगी। यह ठीक है कि महिला सस्थाए समय समय पर आवाज उठाकर वातावरण तैयार करती रहती हैं, और इधर दलित वर्गों म भी अधिकार चेतना जगी है। वतमान आदोलन की शुरुआत भी बुद्धिजीवियो द्वारा मथुरा केस म निम्न वग की नारी के साथ हुए अन्याय की ओर समाज का ध्यान आकर्षित करन से हुई। लेकिन आदोलन उठाने मे सबसे अधिक सहयोग इस मामले म प्रेस का रहा। प्रेस सहयोग न देता तो बात सीमित क्षेत्र मे उठती और दब जाती।

जहा तक हमारी सस्था भारतीय सामाजिक स्वास्थ्य सघ' के कायक्षेत्र का प्रश्न है, हम ऐसे मामलो म पहल नही कर सकते। हा, कोई विशेष मामला हमारे 'नोटिस मे लाया जाय तो हम उस पर कायवाही जरूर करते हैं। प्राथमिक स्तर पर हमारी सस्था का मुख्य काय असामाजिक कृत्यो की रोकथाम है। दूसरे स्तर पर इनस प्रभावित लोगो की शारीरिक मानसिक चिकित्सा तथा उनका पुनर्वास है। चूकि चिकित्सा और पुनर्वास की बात बाद मे सामने आती है सामाजिक स्वास्थ्य' की पहले, हम यह काय स्वस्थ परिवार जीवन की शिक्षा के रूप म प्रारभ करते हैं। अपनी २२ राज्यीय और १३० जिला शाखाओ द्वारा स्कूलो, कालेजो, सामुदायिक केंद्रो, पुलिस प्रशिक्षण केन्द्रो श्रमिक कल्याण केन्द्रो सुरक्षा सदनो, नेत्रहीन और शारीरिक बाधित लोगो के प्रशिक्षण केंद्रो, शहरी और ग्रामीण महिला केंद्रो या क्लबो म परिवार जीवन की शिक्षा के अनेक कायक्रम चलाते हैं। इसके साथ हम यौन शिक्षा की व्यवस्था भी करते हैं और यौन रोगो की रोकथाम व चिकित्सा के लिए 'क्लीनिक' भी चलाते हैं। मुझे यह बताते हुए प्रसन्नता है

कि 'वन्यावृत्ति उन्मलन अधिनियम' म व्यावहारिक कठिनाइया व कमिया को दूर करन क लिए हमारी सस्था द्वारा दिए गए सुझाव इस कानून म आवश्यक सशोधन करने म सहायक हुए हैं। और अब १९७८ का सशोधित कानून हमारे सामने है।

२ वग-सघष हमेशा रहा है, लेकिन इस प्रश्न को निश्चय ही उसके साथ जोड़-कर नही देखा जा सकता। यौन शोषण शक्तिशाली वर्गों द्वारा निम्न वर्गों पर दबाव के रूप मे ही नहीं, निम्न वर्गों मे ढीले नतिक नियमों के सदभ मे भी देखा जाना चाहिए। फर्क पड़ता है मध्य वग को। उच्च वग समाज की अधिक परवाह नहीं करता। निम्न वग मे नतिक बधन कड़े नहीं हैं। लेकिन मध्य वग मे समस्या अधिक जटिल रूप मे सामने आती है। वातावरण भी इन सारी स्थितिया के लिए जिम्मेदार है। शक्तिशाली और निम्न वर्गों के बीच सघष के सदभ म बहुत बार वास्तविक समस्या पष्ठभूमि म डाल दी जाती है और वग सघष अधिकतर राजनीतिक दलीय सघष के रूप म उभरकर सामने आ जाता है।

समाधान तो अच्छी सामाजिक शिक्षा और परिवार सस्था की मजबूती स ही निकल सकता है। यद्यपि बाहरी प्रभावा, उत्तेजक प्रसार माध्यमो और बाह्य सगति के असर को नकारा नही जा सकता, फिर भी मेरी मान्यता है, कि अच्छे घरेलू सस्कार किसी भी बच्चे, किशोर, लड़की या महिला को, बाहरी कैसे भी वातावरण का सामना करने और उसम से अपनी राह निकालने म समथ बना सकते हैं। इसलिए प्राथमिक आवश्यकता स्वस्थ पारिवारिक जीवन की ही है।

३ यौन एक प्राकृतिक आवश्यकता है। प्राचीन काल म हमारे यहा इसे स्वस्थ रूप प्रदान किया गया था। अब भी यदि हम अपने बच्चा को वनानिक ढग से स्वस्थ यौन जीवन की शिक्षा नही देंगे और समाज मे अगुआ कह जाने वाले लोग उनके सामने अपना कोई आदश नही रखेंगे तो भटकाव और दुरुपयोग स्वाभाविक है।

जहा तक पश्चिमी प्रभाव की बात है। हमने देखा, जब अंग्रेज यहा रहते थे और अपनी भाषा के माध्यम से अपनी सस्कृति इरादतन हम पर लादना चाहते थे, तब न इतनी अंग्रेजी देखने मे आई, न ऐसी 'ड्रेसेज', न ये 'डिस्को डास'। लेकिन बाद मे हमने इन चीजो को अपनी मानसिक गुलामी की इन्तहा तक विरासत की तरह ओढ लिया। शिक्षा की प्रगति से अंग्रेजी भाषा का अधिक प्रचार मान भी लें तो उनके 'कामिक्स और सस्ते सेक्सी उपन्यासो की आयातित सस्कृति ओढने मे क्या तुक है? उनकी श्रम-निष्ठा, अनुसधानीय वृत्ति, उनकी स्वच्छता सफाई की सराहनीय आदतो तथा उनके चारित्रिक खुलेपन का अनुकरण हमने क्यो नहीं किया? इस दिशा म आजादी के बाद से ही गरजिम्मेदारी का परिचय देन, इधर नतिक मूल्या पर पैसे के मूल्यो को हावी होने देन, नेताओ के बीच कुर्सी मोह या सत्ता मोह और भ्रष्ट आचार की खबरो का दैनिक प्रसारण— वतमान स्थिति इन सबका सम्मिलित परिणाम है।

गनीमत है कि परिवार सगठन के रूप म हमारे यहा अभी स्थितिया पश्चिम से ठीक हैं इसलिए नियत्रण से बाहर नही मानी जा सकती। अभी भी बहुत देर नही हो गई है। यदि हम घर मे, स्कूल स नैतिक शिक्षा और अनुशासन को पाने के प्रयत्न प्रारभ

कर दें तो सफलता हाथ लग सकती है। इसके लिए न केवल शिक्षा मे आमूलचूल परिवर्तन चाहिए, अभिभावक शिक्षण को भी व्यापक सामाजिक शिक्षण म शामिल करना होगा। पहल मध्यम वग को ही करनी चाहिए, क्योंकि स्थितियो से सर्वाधिक पीडित भी यही वग है और सामाजिक परिवतन की आशा भी यही वग है।

४ स्त्री के लिए आत्मनिभरता भी जरूरी है आत्मविश्वास भी। और उससे भी जरूरी है परिवार मे सहयोगी वृत्ति। अपवाद छोड दें तो पति पुरुष का अहम अहम होकर भी एक सरल अहम होता है, जिसे सरलता से सतुष्ट किया जा सकता है। स्त्री की ओर से पहल उसे अधिक वफादार, अधिक जिम्मेदार बनायेगी। पति पत्नी म परस्पर इज्जत की नजर और परिवार के अ य लोगो के साथ मधुर सबधो की भावना इसी म स निकलेगी।

जहा तक नारी सगठनो का प्रश्न है, उनकी भूमिका सामाजिक स्वास्थ्य के लिए वातावरण तैयार करने म होनी चाहिए। क्षेत्रीय राष्ट्रीय और अतर्राष्ट्रीय स्तर पर सामूहिक यौन हिंसा क बडे मामला पर सरकारो की ओर से ही बडे कदम उठाए जा सकते हैं। उन सकटकालीन स्थितियो मे सस्थाए सरकार के काम म मदद करें। इसके लिए *साधन सप न बडी सस्थाओ मे* विशेषज्ञो की एक समिति लेकर विशेष विभाग बनाए जा सकते हैं। कानून निर्माण मे सहायता या समय समय पर उनम सशोधन की माग उठाने मे सस्थाओ की भूमिका रही ही है। जरूरत है पहले ऐसे वातावरण निर्माण की, जिसमे कानूनो की सफल कार्यान्विति हो सके, अ यथा कानून केवल ऊपरी तौर पर ही प्रभावी होते हैं।

राजाओ के जीवन व चरित्र से भारतीय जन जीवन के चरित्र की माप गलत होगी

श्रीमती सुशीला जमनीदास (सामाजिक कायकर्त्री)

सारे ससार म महिलाए अपने सौदय और कोमलता के कारण पुरुषो के लिए आकषण के द्र है। महिला मन भी उसके शरीर की तरह ही कोमल माना जाता है। दक्षिण भारत मे छोटी बच्चियो को भी मा शब्द से सबोधित किया जाता है। उत्तर व *मध्य भारत मे क याए 'लक्ष्मी' कहलाती है। नारी अपनी मूल प्रकृति मे मा और देवी ही* है। नि स्वाथ बलिदान के बिना मा बनना सभव ही नही है और अच्छे गुणो के बिना देवी कहलाना भी असभव है। फिर यह देवी रूप लक्ष्मी हो या दुर्गा या सरस्वती।

इसी तरह प्रेम स सराबोर हृदय लेकर ही पत्नी पावती या प्रेमिका राधा बन सकती है। *नारी चाहे तो एक पशुवत मनुष्य को विद्वान और सत पुरुष बना दे,* जैसे कि रत्नावली और विद्योत्तमा न तुलसीदास कालिदास जैस सत व विद्वान लेखको का निर्माण किया। दुर्भाग्य से आज महिलाओ मे ये गुण दिखाई नही देते। या तो परिस्थिति की मार से वे स्वय इ ह भूल गई है, या सदियो से पुरुषो की गुलामी व उनके द्वारा शोषण ने उ ह उनके वतमान रूप के लिए बाध्य किया है।

पुरुषो द्वारा महिलाओं का शोषण आदि काल से चला आया है। कहीं कहीं तो देवता भी इससे बच नहीं सके। गौतम पत्नी अहल्या इसका उदाहरण है। रावण द्वारा सीता का अपहरण, पाडवो द्वारा अपनी पत्नी द्रौपदी को जुए के दाव पर लगाना और दुर्योधन द्वारा कौरवो की भरी सभा मे द्रौपदी का चीर हरण, रामायण व महाभारत कालीन घटनाए हैं। भारत मे मुसलमानो के आक्रमण के बाद की सती व जौहर कथाए इतिहास मे पुरुषों के नाम पर कलक धब्बो के रूप मे सुरक्षित हैं।

हमारे देशी राजे महाराजे अभी स्वतत्रता पूव तक विलासी जीवन ही जी रहे थे। पटियाला के महाराजा सर भूपे द्र सिंह बहादुर ने अपने महल मे एक विलासी 'लीला-भवन' ही बना रखा था, जिस म एक विशेष कमरा 'लव चैम्बर' कहलाता था। इसकी दीवारा पर मिथुन मुद्राआ की अमरूय तस्वीरें लगी थी। कमरा बेशकीमती ऐश्वय सामग्री, फर्नीचर, और हीरे मोती जडे कालीना से सजा था। सारा माहौल ही यौन-उत्तेजना के अनुकूल बनाया गया था। उच्च वग की देशी विदेशी सुदरिया इस 'लीला भवन' म आने के लिए लालायित रहती थी या उन्हे लालच देकर, फुसलाकर वहा लाया जाता था। महाराजा के रनिवास म ही तीन सौ के लगभग महिलाए थी। महाराजा की कई रखैलो न उसके खिलाफ इगलड की प्रिवी कौसिल मे अपने मुकद्दमे भी दायर किए थे। अपनी इसी विलासी प्रवत्ति के कारण महाराजा का उच्च रक्तचाप के के कारण ४८ वष की अल्पायु मे निधन हो गया।

पाठका को यह जानकर आश्चय होगा कि अपना साम्राज्य कायम रखने के लिए भारत के वाइसराय और ब्रिटिश सिविल अधिकारी हमारे राजा महाराजाओ की इस कमजोरी का लाभ उठाने के लिए स्वय आगे होकर उनकी मित्रता अनेक देशी रानियों, राजकुमारियो, उच्च वग की सुदरियो और विदेशी महिलाओ से कराते थे। इस काम के लिए उन्होने अनेक ब्रिटिश महिलाओ का उपयोग करने मे भी हिचकिचाहट महसूस नहीं की। राजाओ के अनेक बाहरी महिलाओ से सबधो के कारण उनके महलो के भीतर रहने वाली रानिया और रखना म भी निराशा और बदले की भावना से इस प्रवृत्ति को प्रोत्साहन मिला और चोरी छुप सबध व 'स्कडल्स' चलते रहे।

लेकिन जहा तक प्रजा का सवाल है, उस पर राजाओ का एक रोब व भय मिश्रित प्रभाव था। आम जनता मे राजाओ की इन हरकतो पर कानाफूसी चलते हुए भी लोग बडे लोगो के शौक समझकर इन मामलो की उपेक्षा कर देते थे। वे अपने जीवन प्रवाह मे सामान्य ढग से चलते रहते थे। हमारा सामा य जन जीवन धम और लोक-परपराओ के नियत्रण मे होने के कारण सात्विक ही रहा, जिस पर इक्का-दुक्का घटनाओ को छोड पारिवारिक निष्ठा, सहभागिता व पति पत्नी की परस्पर वफादारी की पूरी छाप थी। इस परस्पर दुख बाट स्थिति मे गरीबी व सामती शोषण तक को सहन कर लिया जाता था। मध्य वग की लडकिया व महिलाए तो पूरी तरह घरो की सुरक्षा मे इज्जत से रहती थीं।

लकिन आज एक ओर अत्यधिक गरीबी, दूसरी ओर अतिरिक्त धन की विसगति के बीच महिलाओ की तथाकथित आजादी ने स्थितिया पूरी तरह बदल दी हैं।

दलित वर्गों म नयी जाग्रत अधिकार चेतना और शहरी शिक्षित महिलाओ म समानाधिकारा की माग न अमीर गरीब, सवण व दलित के बीच ही नहो, स्त्री पुरुष के बीच भी सघप की स्थिति पैदा कर दी है। माता पिता, ससुराल या खानदान की इज्जत के, समाज के, सरकार के, ईश्वर तक के भय से मुक्त आज के लडके लडकियों स्त्री पुरुषों ने नतिक नियमों को उठाकर ताक पर रख दिया है। ऐसे मे कुछ उच्च वर्गों की सुशिक्षित व अधिकारसपन्न महिलाओ को छोडकर शेष सभी की सुरक्षा खतरे मे पड जाए तो इस पर अचम्भा नहीं होना चाहिए।

प्रचार माध्यमो न इस स्थिति को उजागर करके आधुनिक समाज के सामने एक चुनौती प्रस्तुत कर दी है। अब हमारे नताओ सामाजिक कायकर्ताओ और बुद्धिजीवियो को मिलकर इसका उत्तर देना है और प्रचार माध्यमो को ही इसम सहयोग करना है। महिला सगठनो पर भी यह जिम्मदारी है कि वे नारी शोषण के खिलाफ सुरक्षा का माहौल बनाने, शोषित, दलित स्त्रियो की सहायता कर उनक जीवन-स्तर को ऊचा उठाने और नतिक पतन के खिलाफ सारी नारी जाति को प्रशिक्षित कर खडा करन म अपनी महत्वपूण भूमिका निभाए।

परिशिष्ट ३

सहायक पुस्तकों की सूची

१ फ्रायड मनोविश्लेषण अनुवादक देवेन्द्र कुमार वेदालंकार
२ प्रोस्टीटयूटस एंड प्रोस्टीटयूशन ए० एस० माथुर, रीडर आगरा यूनिवर्सिटी
३ कौटिल्यीय अर्थशास्त्रम पांडे रामतेज शास्त्री
४ वैदिक विचारधारा का वैज्ञानिक आधार प्रो० सत्यव्रत सिद्धांतालंकार
५ भारतीय इतिहास का परिचय पी० एस० त्रिपाठी
६ समाजशास्त्रीय विश्वकोश शंभूरत्न त्रिपाठी
७ भारतीय समाज, संस्कृति और संस्थाएं कैलाशनाथ शर्मा शास्त्री
८ पारस्परिक समाजशास्त्र कैलाशनाथ शर्मा
९ सांस्कृतिक मानव शास्त्र ले० मैलविल जे० हसकोविल्स
१० निबंध और निबंध डॉ० विश्वनाथ प्रसाद
११ समाजशास्त्रीय निबंध रवीन्द्रनाथ मुखर्जी
१२ सामाजिक विघटन और अपराध शास्त्र के उपादान अजीत कुमार माथुर
१३ भारत में विदेशी यात्री के० सी० खन्ना
१४ तरुण विद्रोह सुरेश पांडे
१५ भारतीय चलचित्र का इतिहास फिरोज रंगूनवाला
१६ इंडियन वूमेन देवकी जैन
१७ कामकाजी भारतीय नारी डॉ० प्रमिला कपूर
१८ द काल गर्ल्स प्रमिला कपूर
१९ द गर्ल्स फ्राम ओवरसीज नरगिस दलाल
२० राष्ट्र-सेविका सौ० कुसुमताई साठे
२१ हिंदू धर्म में सनातन जीवन की खोज विद्यानिवास मिश्र
२२ समाज और संस्कृति पंडित राजाराम शास्त्री

२३ 'भारतीय सामाजिक स्वास्थ्य सघ' की १९७८ ७९ की रिपोट
२४ 'अखिल भारतीय महिला परिषद' की १९८० की स्मारिका—'फार द सर्विस आफ द नेशन'
२५ भारतीय महिलाओ की सामाजिक स्थिति पर राष्ट्रीय जाच आयोग की रिपोट
२६ इडियन पेनल कोड की धारा ३७५
२७ वात्स्यायन कृत कामसूत्र
२८ वूमैन इन इडिया श्रीमती मिथान जे० लाम
२९ ला रिलेटिंग टू वूमन सुश्री ज्योत्स्ना त्रिभुवन
३० समाजशास्त्र के मूल तत्त्व श्री सत्यव्रत सिद्धातालकार
३१ राष्ट्रीयता श्री गुलाब राय
३२ वेद दयानद सस्थान द्वारा प्रस्तुत
३३ विभिन्न पत्र पत्रिकाए

श्रीमती आशा रानी व्होरा (जन्म ६ अप्रैल, १९२१) हिंदी की सुपरिचित लेखिका और पत्रकार हैं। आपकी रचनाएं एक लंबी अवधि से हिंदी की लगभग सभी प्रतिष्ठित पत्र पत्रिकाओं में निरंतर छपती रही हैं। समाजशास्त्र में एम० ए० श्रीमती व्होरा १९४६ से १९६८ तक महिला शिक्षा और समाज कल्याण के विभिन्न क्षेत्रों में सक्रिय रहने के बाद तब से आज तक नियमित रूप से स्वतंत्र लेखन कर रही हैं। निजी रचनात्मक लेखन के अलावा, 'घरेलू स्तर पर महिलाओं का शिक्षण प्रशिक्षण' श्रीमती व्होरा का लेखकीय व्यवसाय रहा है और 'महिला उपलब्धियां' और 'व्यावहारिक शास्त्र' के क्षेत्र में खोजपूर्ण लेखन उनका लेखकीय मिशन। श्रीमती व्होरा ने अब तक पचास से अधिक पुस्तकें लिखी हैं।